आई.एस.एस.एन. : 2322-0708
ई.आई.एस.एस.एन. : 2350-0123

# अनुसंधान विज्ञान शोध पत्रिका

(प्रिंट प्रति)

खण्ड-13, अंक-1

क्रियेटिव कॉमन्स(सी.सी.) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत

हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियर रिव्यूड/रेफ्रीड, वार्षिक, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका

वर्ष 2025

ResearchGATE | J-Gate | INNO SPACE SJIF Scientific Journal Impact Factor SJIF(2025): 8.749 | DOAJ DIRECTORY OF OPEN ACCESS JOURNALS | crossref | INDEX COPERNICUS INTERNATIONAL (ICV 2022: 95.83)

बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद
बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय(के0के0वी0)
(लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)
स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ-226001, उ0प्र0, भारत
https://bsnvpgcollege.ac.in/VigyanParishad.aspx
www.anushandhan.in

## सार संक्षेप एवं अनुक्रमण (एब्स्ट्रेक्टिंग एण्ड इंडेक्सिंग)

ResearchGATE scientific network

crossref

INDEX COPERNICUS INTERNATIONAL
(ICV 2022: 55.83)

ROAD DIRECTORY OF OPEN ACCESS SCHOLARLY RESOURCES

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
SJIF(2025): 8.749

DOAJ DIRECTORY OF OPEN ACCESS JOURNALS

ISSN INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA CENTER

PKP|INDEX
PKP-Public Knowledge Portal, USA

OPEN ARCHIVES
OAI-Open Archive Initiatives

J-Gate

MRJ

# बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय(के0के0वी0)
## (लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)
## स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

# बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

**https://bsnvpgcollege.ac.in/vp/VigyanParishad.aspx**
**www.anushandhan.in**

## संवैधानिक संरचना

| | |
|---|---|
| **प्रधान संरक्षक** | श्री टी0 एन0 मिश्र, अध्यक्ष, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ |
| **मुख्य संरक्षक** | श्री संजीव शर्मा, मंत्री / प्रबंधक, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ |
| **संरक्षक** | प्रो0 संजय मिश्र, प्राचार्य (पदेन) |
| **अध्यक्ष** | प्रो0 सुधीश चन्द्र, पूर्व अध्यक्ष–प्राणि विज्ञान विभाग एवं पूर्व प्राचार्य |
| **उपाध्यक्ष** | प्रो0 संजय शुक्ल, पूर्व अध्यक्ष, भूगर्भ विज्ञान विभाग |
| **उपाध्यक्ष** | प्रो0 के0 के0 बाजपेई, अध्यक्ष, गणित विभाग |
| **सचिव** | प्रो0 दीपक कुमार श्रीवास्तव, गणित विभाग |
| **संयुक्त सचिव** | प्रो0 वीना पी0 स्वामी, अध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग |
| **संयुक्त सचिव** | प्रो0 गोविंद कृष्ण मिश्र, रसायन विज्ञान विभाग |

## संस्थापक मंडल

श्री बृजेन्द्र सिंह(प्राणि विज्ञान)
प्रो0 सुधीश चन्द्र(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 जी0 सी0 मिश्र(अरब कल्चर)
प्रो0 संजीव शुक्ल(प्राणि विज्ञान)
प्रो0 संजय शुक्ल(भूगर्भ विज्ञान)
डॉ0 यू0 एस0 अवस्थी(वनस्पति विज्ञान)
प्रो0 के0 के0 बाजपेई(गणित)
प्रो0 राम कुमार(भौतिक विज्ञान)
डॉ0 ए0 पी0 वर्मा(वनस्पति विज्ञान)
प्रो0 दीपक कुमार श्रीवास्तव(गणित)
प्रो0 वीना पी0 स्वामी(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 राजेश राम(रसायन विज्ञान)

# सम्पादक-मंडल


**प्रधान सम्पादक**

प्रो० सुधीश चन्द्र
पूर्व प्राचार्य(से०नि०)
बी० एस० ए-न० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
sudhish1953@gmail.com

**सम्पादक**

प्रो० दीपक कुमार श्रीवास्तव
गणित विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
dksflow@hotmail.com

**सह-सम्पादक**

प्रो० संजीव शुक्ल
प्राणि विज्ञान विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
sanjiveshukla@gmail.com

प्रो० संजय शुक्ल
पूर्व अध्यक्ष, भूगर्भ विज्ञान विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
drsanjaygeo@gmail.com

प्रो० अर्चना राजन
प्राचार्या (से०नि०)
डी.डी.यू.राजकीय स्ना० महा०, लखनऊ
rajanarchana2512@gmail.com

प्रो० ऋचा शुक्ला
अध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग
नवयुग कन्या महाविद्यालय, लखनऊ
sanjiveshukla@gmail.com

प्रो० सुधीर मेहरोत्रा
अध्यक्ष, जैव रसायन विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
sudhirankush@yahoo.com

प्रो० ज्योति काला
अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
jyotikala2010@gmail.com

प्रो० राम कुमार
अध्यक्ष, भौतिक विज्ञान विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
rktshri@yahoo.co.in

प्रो० वीना पी० स्वामी
अध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
vcnapswami@gmail.com

डॉ० राजेश राम
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ
rajesh_ram_2006@yahoo.co.in

डॉ० अल्का मिश्रा
एसोसिएट प्रोफेसर, गणित एवं खगोल शास्त्र विभाग
लखनऊ वि० वि०, लखनऊ
misra_alka@lkouniv.ac.in

इं० मनोज कुमार वार्ष्णेय
वरिष्ठ प्रवक्ता एवं अध्यक्ष, सिविल इंजीनियरिंग
डी०एन० पॉलीटेक्निक, परतापुर, मेरठ
manojvarshney17@rediffmail.com

डॉ० आलोक मिश्र
वनस्पति विज्ञान विभाग (से०नि०),
श्री जे० एन० पी०जी० कॉलेज, लखनऊ
alok.1953.m@gmail.com

प्रो० अर्चना रानी
शरीर रचना विभाग
के०जी०एम०यू० लखनऊ
archana71gupta@yahoo.co.in

डॉ० रेनू सिंह
प्रधान वैज्ञानिक, पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु-समुत्थानशील कृषि केन्द्र
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
renu_singh@yahoo.com

डॉ० मोहित कुमार तिवारी
प्रवक्ता (से.नि.), जीव विज्ञान विभाग
क्रिश्चियन कॉलेज, लखनऊ
drmohit2010@gmail.com

डॉ० यू० एस० अवस्थी (से.नि.)
वनस्पति विज्ञान विभाग
बी०एस०एन०वी० पी०जी० कॉलेज, लखनऊ
udai9839awasthi@gmail.com

डॉ० बी० डी० सुतेरी
सेवानिवृत्त उपाचार्य, वनस्पति विज्ञान विभाग
एल०एस०एम० रा० स्ना० महा०, पिथौरागढ़, उत्तराखण्ड
bdsutcri@gmail.com

डॉ० राकेश कुमार सिंह
वैज्ञानिक-ई, गोविंद बल्लभ पंत राष्ट्रीय
हिमालयी पर्यावरण एवं सतत् विकास संस्थान,
कोसी-कटारमल, अल्मोड़ा, उत्तराखंड
rksingh@gbpihed.nic.in

प्रो० देवेन्द्र कुमार
रसायन विज्ञान विभाग
बी०एस०एन०वी० पी०जी० कॉलेज, लखनऊ
drdgupta65@gmail.com

डॉ० महेन्द्र प्रताप सिंह
उप वन संरक्षक (से०नि०), कार्यालय प्रमुख वन संरक्षक
17, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ
mahendrapratapsingh1960@gmail.com

डॉ० दीना नाथ गुप्ता
सॉफ्टवेयर इंजीनियर, सीडैक, मुम्बई-400049
(कार्यरत-मिनिस्ट्री ऑफ इलेक्ट्रॉनिक्स एण्ड आई.टी., नई दिल्ली)
prof.dcv.csc@gmail.com

# सलाहकार मंडल

## प्रमुख सलाहकार

श्री टी0 एन0 मिश्र
अध्यक्ष, बी0 एस0 एन0 वी0 इंस्टीट्यूट, लखनऊ

## अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार मंडल

प्रो0 एच0 एम0 श्रीवास्तव (कनाडा)
डॉ0 मनमोहन देव शर्मा (यू0के0)
डॉ0 पंकज कुमार तिवारी (कनाडा)
डॉ0 विनोद कुमार पाण्डेय (जाम्बिया)
प्रो0 संजय कुमार श्रीवास्तव (यू0एस0ए0)
प्रो0 प्रीति बाजपेई (यू0ए0ई0)
प्रो0 एम0 जी0 प्रसाद (यू0एस0ए0)

## राष्ट्रीय सलाहकार मंडल

प्रो0 भूमित्र देव(लखनऊ)
प्रो0 पी0 के0 जैन(दिल्ली)
प्रो0 आर0 सी0 श्रीवास्तव(गोरखपुर)
प्रो0 ए0 के0 चोपड़ा(हरिद्वार)
प्रो0 वाई0 के0 शर्मा(लखनऊ)
प्रो0 मोनोवर आलम खालिद (लखनऊ)
प्रो0 एस0 पी0 त्रिवेदी(लखनऊ)
प्रो0 पीयूष चन्द्रा(कानपुर)
प्रो0 आनंद कुमार श्रीवास्तव(लखनऊ)
प्रो0 एस0 के0 कुलश्रेष्ठ(चण्डीगढ़)
प्रो0 मधु त्रिपाठी(लखनऊ)
प्रो0 अबसार अहमद (अलीगढ़)
डॉ0 बी0 के0 द्विवेदी(लखनऊ)
डॉ0 मु0 अयूब अंसारी (झांसी)
डॉ0 एस0 सी0 शुक्ल(लखनऊ)
प्रो0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय(सतना)
प्रो0 यतीश अग्रवाल(दिल्ली)
डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव(लखनऊ)
डॉ0 शंकर लाल(कानपुर)
प्रो0 प्रदीप कु0 प्रजापति(जोधपुर)
प्रो0 कैलाश डी0 सिंह(लखनऊ)
डॉ0 कृष्ण दत्त(लखनऊ)
डॉ0 डी0 सी0 श्रीवास्तव(रूड़की)
डॉ0 सुनील बाजपेई(लखनऊ)
डॉ0 संतोष कुमार पाण्डेय(नई दिल्ली)
डॉ0 योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव(भोपाल)
डॉ0 वृंदा अग्रवाल(हैदराबाद)
डॉ0 अनूप अग्रवाल (हैदराबाद)

# सम्पादकीय

भाषा विचारों की जननी के साथ–साथ राष्ट्रचेतना की संवाहिका भी होती है। हिन्दी में शोध वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं पुरातन ज्ञान संपदा को जोड़ने में सहायक सिद्ध हो सकता है। किसी राष्ट्र की प्रगति में भाषा का विशेष महत्व है। भाषा हमारे विचारों का परिधान होती है। अपनी भाषा में कार्य करने से व्यापक प्रचार, प्रसार तथा त्वरित सफलता प्राप्त होती है। वर्तमान में अनेक राष्ट्र अपनी भाषा का प्रयोग करते हुए विश्व में तेजी के साथ उन्नति कर रहे हैं। वर्तमान में हिन्दी अपनाकर अनेक शोधार्थी, शिक्षक व वैज्ञानिक तीव्रता से अपनी विशेषज्ञता स्थापित कर रहे हैं। राजभाषा हिन्दी के संवैधानिक दायित्व की पूर्ति में बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद विभिन्न शोध व तकनीकी प्रस्तुतियों को अनुसंधान विज्ञान शोध पत्रिका में पिछले 12 वर्षों से निरंतर प्रकाशित कर रहा है। इस शोध पत्रिका का प्रकाशन हार्ड कॉपी व ऑनलाइन दोनों माध्यमों में उपलब्ध है। अनुसंधान विज्ञान शोध पत्रिका इस संदर्भ में महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। यह जहाँ एक ओर नये शोधार्थियों को मातृभाषा में शोध का मंच उपलब्ध कराती है वहीं उत्कृष्ट शोध करने की प्रेरणा भी देती है। अधिकाधिक शोधार्थियों, शिक्षकों एवं छात्रों का इससे जुड़ना इसका स्वयंसिद्ध प्रमाण है।

बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद का अनुसंधान के माध्यम से प्रयास रहा है कि शोध की जटिलतम जानकारी को जनसामान्य तक सहज रूप से मातृभाषा में पहुँचाया जाय। पत्रिका का ऑनलाइन प्रकाशन व डी0ओ0आई संख्या(डिजिटल ऑब्जेक्ट आईडेन्टीफायर नम्बर, क्रॉसरेफ, यू0एस0ए0) इसकी उत्तरोत्तर प्रगति के सूचक हैं। पत्रिका का अनुक्रमण विभिन्न अनुक्रमण सेवाओं यथा आई.सी.वी. (इंडेक्स कोपरनिकस वैल्यू), क्रॉसरेफ, यू0एस0ए0, आई0एस0एस0एन0 इण्डिया, आर0ओ0ए0डी0(रोड), रिसर्चगेट, जे–गेट, एस.जे.आई.पी. में होना इस अंक से प्रारम्भ किया जा रहा है। वर्तमान में पत्रिका "प्रभाव कारक(इम्पैक्ट फैक्टर)" क्षेत्र में प्रवेश कर चुकी है तथा वर्ष 2025 हेतु साइंटिफिक जर्नल इम्पैक्ट फैक्टर 8.749 प्राप्त हुआ है। पत्रिका स्कोपस तथा वेब ऑफ साइंस में इंडेक्सिंग हेतु प्रयासरत है।

आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि अनुसंधान विज्ञान शोध पत्रिका का प्रस्तुत अंक समस्त जनमानस के लिए ज्ञान वर्धक व उपयोगी सिद्ध होगा। पत्रिका के उत्कृष्ट व त्रुटिरहित प्रकाशन हेतु भरसक प्रयास किया गया है। अपितु सुधी पाठकों द्वारा किन्हीं त्रुटियों को संज्ञान में लाना आमंत्रित है। उन्हें भविष्य में सुधारने हेतु संपादक मंडल प्रयत्नशील होगा।

**डॉ0 सुधीश चन्द्र**
प्रधान सम्पादक
**"अनुसंधान (विज्ञान शोध पत्रिका)"**
एवं
अध्यक्ष, बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद

स्थापना वर्ष–2013

आई0एस0एस0एन0(प्रिंट): 2322–0708
आई0एस0एस0एन0(ऑनलाइन): 2350–0123

# अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)

क्रियेटिव कॉमन्स(सी.सी.) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत

हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियर रिव्यूड/रेफ्रीड, वार्षिक, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका

खण्ड–13, अंक–01 वर्ष–2025

मुख्य आवरण पृष्ठ
एब्स्ट्रैक्टिंग एण्ड इंडेक्सिंग(मुख्य अंत: आवरण पृष्ठ)
संवैधानिक संरचना एवं संस्थापक मंडल
सम्पादक मंडल
सलाहकार मंडल
सम्पादकीय लेख

## अनुक्रमणिका



| भाग/वर्ग | क्र0सं0 | शीर्षक व लेखक | मु0पृ0 |
|---|---|---|---|
| 1<br>शोध पत्र | 1.1 | लोक–भूगोल एवं संबंधित शब्दावली : राजस्थान के विशेष सन्दर्भ में<br>सतीश कुमार शर्मा<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.1 | 1–6 |
| | 1.2 | उत्तर पश्चिमी हिमालय में शिवालिक श्रंखला का भूवैज्ञानिक एवं विवर्तिकीय विश्लेषण<br>हेमंत कुमार एवं राजिंदर कुमार<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.2 | 7–14 |
| | 1.3 | बुंदेलखंड ग्रैनिटॉइड काम्प्लेक्स की चट्टानों का भूवैज्ञानिक एवं रासायनिक वर्गीकरण<br>अपूर्व भारद्वाज, प्रियंका चम्याल राणा, धर्मेन्द्र भारती एवं हेमंत कुमार<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.3 | 15–19 |
| | 1.4 | ओसीममसैंक्टम एल.–प्रकृति का बहुऔषधीय कवच: पादपरसायन, जैवसक्रियता और जैवचिकित्सा क्षमता की एक व्यापक समीक्षा<br>खुशनुमा नाज एवं प्रमिला पांडे<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.4 | 20–26 |
| | 1.5 | राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में प्राथमिक शिक्षकों की सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता: एक अवधारणात्मक विश्लेषण<br>पूजा सिंह<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.5 | 27–31 |
| | 1.6 | डिजिटल युग में मूल्य–आधारित शिक्षा की प्रासंगिकता: एक अवधारणात्मक अध्ययन<br>मुकेश कुमार भारती<br>D.O.I.:https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.6 | 32–36 |

| भाग / वर्ग | क्र0सं0 | शीर्षक व लेखक | मु0पृ0 |
|---|---|---|---|
| | 1.7 | सायनोबैक्टेरिया और उनके उपयोग<br>प्रतिभा गुप्ता, मोहित कुमार तिवारी एवं सोनालिका मिश्रा<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.7 | 37–42 |
| | 1.8 | महिला निर्माण श्रमिकों के बीच मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों तक पहुंच: एक अध्ययन<br>के. एम. चमन एवं विजय कुमार<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.8 | 43–49 |
| 2<br>शोध समीक्षा | 2.1 | मृदा प्रदूषण : मानव स्वास्थ्य एवं खाद्य सुरक्षा<br>रश्मि तिवारी<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.9 | 50–53 |
| | 2.2 | तीन आघूर्ण प्रमेय बनाम आघूर्ण वितरण विधि–एक व्यावहारिक दृष्टिकोण<br>मनोज कुमार वार्ष्णेय<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.10 | 54–60 |
| | 2.3 | खाद्य योजक और परिरक्षक: प्रगति, अनुप्रयोग और स्वास्थ्य निहितार्थ<br>रीतू सांगवान<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.11 | 61–71 |
| | 2.4 | सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस: कारण, लक्षण, उपचार<br>डी0के0 अवस्थी, एन0के0 अवस्थी एवं जी0के0 मिश्र<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.12 | 72–81 |
| | 2.5 | राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में देखभाल की शिक्षा<br>रश्मि त्रिपाठी एवं मंजुल त्रिवेदी<br>D.O.I.:https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.13 | 82–85 |
| | 2.6 | नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान(वर्ष 2025) एवं उनका शोध–एक समीक्षा<br>दीपक कुमार श्रीवास्तव<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.14 | 86–97 |
| | 2.7 | भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण में देश की पहली अंटार्कटिका दीर्घा स्थापित<br>प्रतिभा गुप्ता<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.15 | 98–102 |
| | 2.8 | बरसात में बहती योजनायें : नमामि गंगे एवं राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना का आलोचनात्मक अध्ययन<br>अनिल कुमार मौर्य एवं स्वतंत्र कुमार<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.16 | 103–107 |
| | 2.9 | नई शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता और डिजिटल तकनीक एकीकरण एक अवधारणात्मक विश्लेषण<br>श्वेता कुमारी सिन्हा<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.17 | 108–112 |
| | 2.10 | डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता की चुनौतियाँ: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन<br>रोजी वार्ष्णेय<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.18 | 113–117 |

| भाग / वर्ग | क्र0सं0 | शीर्षक व लेखक | मु0पृ0 |
|---|---|---|---|
| | 2.11 | शिक्षकों में सतत् विकास लक्ष्यों के प्रति समझ और उनके शिक्षण व्यवहार में उसका प्रतिबिंब: एक वैचारिक विश्लेषण<br>रिंकू कुमार<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.19 | 118–122 |
| | 2.12 | सर्प विष एवं इसका महत्व<br>रिचा शुक्ला एवं संजीव शुक्ल<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.20 | 123–128 |
| 3<br>वैज्ञानिक<br>ज्ञानवर्धक आलेख | 3.1 | घराली की विनाशलीला असंतुलित विकास का दुष्परिणाम<br>दीपक कोहली<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.21 | 129–131 |
| | 3.2 | अंतरिक्ष में वैज्ञानिक अनुसंधान का महत्व<br>दीपक कोहली<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.22 | 132–135 |
| | 3.3 | भारत में हरित नौकरियाँ<br>दीपक कोहली<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.23 | 136–138 |
| | 3.4 | कृत्रिम बुद्धिमत्ता से स्वास्थ्य सेवाओं में क्रांतिकारी परिवर्तन<br>दीपक कोहली<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.24 | 139–142 |
| | 3.5 | माइक्रोग्रीन खेती–भारत में हरित क्रांति (2025)<br>सोनी सिंह एवं अंजली साहू<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.25 | 143–145 |
| | 3.6 | हरित हाइड्रोजन पृथ्वी के संतुलित भविष्य की कुंजी<br>दीपक कोहली<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.26 | 146–148 |
| | 3.7 | भारत में आदिवासी महिलाओं की शैक्षिक स्थिति, चुनौतियाँ और सशक्तिकरण<br>आभा शर्मा<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.27 | 149–155 |
| | 3.8 | ज़िज़िफस जुजुबा का चिकित्सकीय संकेत<br>तरन्नुम फातिमा एवं प्रमिला पाण्डे<br>D.O.I.:https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.28 | 156–160 |
| | 3.9 | विथानिया सोम्नीफेरा और इसके गुण<br>दिव्यांशी रावतऔर प्रमिला पांडे<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.29 | 161–163 |
| | 3.10 | प्राचीन भारत की पाटीगणिता एवं अंकगणितीय संक्रियाएँ<br>प्रीति बाजपेई<br>D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.30 | 164–169 |

विज्ञान परिषद नियमावली

आजीवन सदस्यता प्रारूप

आजीवन संस्था/पुस्तकालय सदस्यता प्रारूप

लेखक सहमति पत्र/कॉपीराइट फॉर्म

नोबेल पुरस्कार विजेताओं के

फोटोग्राफ्स (अंत आवरण पृष्ठ)

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 1-6
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avspv13i1.1
SJIF (2025) : 8.749

**शोध पत्र**

# Folk-Geography and related terminology: with special reference to Rajasthan

Satish Kumar Sharma
Rajasthan Forest Service (Retd.)
14-15, Chakriya Amba, Rampura Circle, Jhadol Road
Post- Nai, Udaipur -313 031, Rajasthan, India
sksharma56@gmail.com

**Received: 30-09-2025, Accepted: 10-10-2025**

**Abstract-** Folk-geographical knowledge of tribals, forest dwellers and rurals of Rajasthan is very rich. Various aspects of Folk-geography of the state have been described and discussed in the present paper. The rich terminology of Folk-geography of Rajasthan related to rains, water flow and storage system, mountain chain and rocks, forest and vegetation and wells and other man-made water storing structures is collected and presented in this paper.

**Key words-** Folk-geography, terminology, Rajasthan

# लोक-भूगोल एवं संबंधित शब्दावली : राजस्थान के विशेष सन्दर्भ में

सतीश कुमार शर्मा
राजस्थान वन सेवा (सेवा निवृत्त)
14–15, चकरिया आम्बा, रामपुरा चौराहा, झाडोल रोड
पोस्ट–नाई, उदयपुर– 313031, राजस्थान, भारत
sksharma56@gmail.com

**सार**– राजस्थान आदिवासियों, वनवासियों एवं ग्रमीणों की लोक–भूगोल संबंधी ज्ञान में बहुत धनी है। प्रस्तुत पत्र में राज्य के लोक–भूगोल संबंधी विभिन्न पक्षों का वर्णन एवं व्याख्या प्रस्तुत की गई है। वर्षा, जल प्रवाह एवं भराव तंत्र, पर्वत एवं चट्टानें, वन एवं वनस्पतियाँ तथा कुआँ एवं अन्य मानव निर्मित जल स्रोतों की उन्नत लोक – भूगोल शब्दावली का प्रस्तुतीकरण किया गया है।

**बीज शब्द**– लोक–भूगोल, शब्दावली, राजस्थान

1. **परिचय**– विज्ञान की किसी शाखा का जब स्थानीय समुदायों खासकर आदिवासियों के संबंध के संदर्भ में अध्ययन किया जाता है तो उसे विज्ञान की एक अलग शाखा के रूप में पहचाना जाता है जैसे वनस्पतियों का जब आदिवासियों से संबंध प्रदर्शित करने हेतु अध्ययन किया जाता है तो वह नृवनस्पति विज्ञान (Ethnobotany) कहलाता है। "एथनोबोटनी" शब्द का पहली बार उपयोग 1895 में हार्शबर्गर द्वारा किया गया था। वन अधिकारी दीप नारायण पाण्डे ने वन विज्ञान का आदिवासी समुदाय के साथ संबंध को "एथनोफॉरेस्ट्री" के रूप में 1998 में परिचित कराया।[1] यदि आदिवासियों, वनवासियों, एवं अन्य ग्राम समुदायों का किसी विज्ञान की शाखा से संबंध जोड़ना हो तो "लोक" शब्द का उपसर्ग की तरह उपयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार 1998 में राजस्थान में प्राणि .विज्ञान का स्थानीय समुदायों वि ेशकर आदिवासियों के संबंध के अध्ययन को "लोक प्राणि–विज्ञान" नाम दिया गया।[2] इसी तरह भूगोल का अध्ययन स्थानीय समुदाय के संदर्भ में किया जाये तो लोगों के परम्परागत ज्ञान के इस विज्ञान को "लोक–भूगोल" कहा जा सकता है।

2. **अध्ययन का उद्देश्य**– भूगोल मुख्य रूप से पृथ्वी की सतह का विज्ञान है। इस विज्ञान की स्थानीय समुदायों की, स्थानीय परिवेश में ज्ञान व समझ हमें एक अलग ही आयाम के दर्शन कराती है। राजस्थान के आदिवासी, वनवासी एवं ग्रामीण क्षेत्रों के समुदायों के परंपरागत भूगोल के ज्ञान को जानना न केवल एक रूचिकर कार्य है अपितु इस ज्ञान का लोक जीवन में अपना अलग ही महत्व है। लोक–भूगोल के स्थानीय पहलुओं की जानकारी होने पर वन विभाग, भूसंरक्षण विभाग, जलदाय विभाग एवं अन्य राजकीय विभाग क्षेत्र में कार्य करने के समय इस लोक ज्ञान का न केवल उपयोग कर सकते हैं बल्कि स्थानीय शब्दावली के अर्थ को अच्छी तरह समझकर लोगों की राय व भावना को भी जान सकते हैं। इससे विकास कार्य में अधिक सफलता मिलती है साथ ही हमारे लोक ज्ञान के संरक्षण व उपयोग का मार्ग भी प्रशस्त होता है।

3. **प्रयोगात्मक अध्ययन विधि**– अध्ययनकर्ता ने वन विभाग में राजकीय सेवा अवधि 1980 से 2016 तक राजस्थान के अलवर, भरतपुर, जयपुर, उदयपुर आदि जिलों में कार्य किया एवं सम्पूर्ण राज्य में भ्रमण किया। दक्षिणी राजस्थान के आदिवासी बहुल अंचल में भील, भील मीणा, गरासिया, डामोर एवं कथौडी निवास करते हैं।[3] इस अंचल के लोकज्ञान को बहुत गहनता से समझा गया। यहाँ के खेतों, कुओं,

खदानों, चारागाहों, जलाशयों आदि को स्थानीय गुणीजनों के साथ हर दृष्टि से देखा गया। राजस्थान के ग्रामीण अंचल के लोगों से संपर्क किया गया तथा उनके साथ वनों, चारागाहों, ओरणों, नदियों, पहाड़ों, बाघों आदि विविध क्षेत्रों का लोक–भूगोल जानने हेतु अध्ययन व भ्रमण किया गया।

4. **प्रेक्षण**– अध्ययन की अवधि में लोक–भूगोल के अनेक महत्वपूर्ण पहलू एवं शब्दावली से परिचय हुआ। उस विशेष शब्दावली का किस रचना, क्षेत्र, घटना या परिघटना (Phenomenon) से संबंध हैं, यह जाना गया। प्रमाण स्वरूप फोटोग्राफ भी लिये गये। अनेक विषयों से संबंधित शब्दावली संग्रह की गई लेकिन उनमें से वर्षा, वन एवं वनस्पति, पर्वत एवं चट्टान, जल प्रवाह एवं जल भराव तथा कुओं एवं अन्य मानव निर्मित जलस्रोतों से संबंधित शब्दावली जो लोगों के जीवन में कहीं अधिक महत्व रखती है, उस पर विशेष ध्यान दिया गया। संग्रहीत शब्दावली नीचे **सारिणी–1** में प्रस्तुत है:–

**सारिणी–1:** लोक–भूगोल से संबंधित राजस्थान में प्रचलित लोक शब्दावली

| क्र.सं. | ज्ञान का क्षेत्र या मुख्य विषय | महत्वपूर्ण शब्दावली |
|---|---|---|
| 1 | वर्षा | दौंगडा (देंगड़ा), भुरभुरिया, भजाट या सौंटा या सूँटा या सराड़ा, छाटा – छिड़का, झड़, बूँदा– बाँदी, खण्ड वर्षा, आल–में–आल |
| 2 | जल प्रवाह एवं जल भराव | खादरा या दरा या धरा (river bed pool), वाला, नाला, नदी, झर, जेर, झरना, भडक,पेटा, डोक, हैं जुआं, पड़वाफूटना, ढिया |
| 3 | पर्वत व चट्टानें | चाट, पूँछडी, कराई या कराड, ऊपरमाल, टेकरी, मथारा, थाग, बरखण्डी, टूस, टोडा, काकेडिया, भाकर, मगरा, मगरी, तोरणा , घाटी, कुण्ड, कदम कुण्ड, कुण्डी, खरड़, हाल, नाल, खाल, खोह, खोला, कातली |
| 4 | वन एवं वनस्पतियाँ | रूँध (बाल बणी), काँकड़ बणी, रखत बणी, देव बणी या ओरण /ओरण (ओण), छींड, उछींड, अंधेरी, रोई |
| 5 | कुएँ एवं अन्य मानव निर्मित जल स्त्रोत | ढीमड़ी, ढीमड़ा, भगड़, बावड़ी, केवड़ी, खड़ीन, जोहड, नाड़ी, कदमा तालाब, चव्वा |

5. **विश्लेषण**

5.1 **वर्षा**– वर्षा एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक कारक है जो खेती, पशुपालन, सिंचाई, पेयजल, वानिकी, उद्योग विकास आदि में अति आवश्यक है। वर्षा के कई रूप हैं तथा हर प्रकार की वर्षा हेतु एक अलग लोक शब्द है। यदि बहुत बारीक फुँवारें बरसती हैं तो उस वर्षा को "भुरभुरिया" कहा जाता है। यदि सामान्य आकार की बूँदे अल्प समय गिरती हैं तो उस वर्षा को "बूँदा–बाँदी" कहा जाता है। मोटी बूंदों की बूँदा–बाँदी जो अपेक्षाकृत कुछ अधिक देर हो जाये लेकिन जरूरत से कम ही बरस कर रूक जावे तो उसे छाटा–छिड़का कहा जाता हैं। अप्रैल– मई में गर्मी के समय अचानक अल्पकालिक हुई वर्षा "दौंगडा या देंगड़ा" कहलाती है। तेज हवा या आँधी के साथ वर्षा कुछ देर तक हो कर रूक जावे तो इसे भजाट या सूँटा या सौंटा या सराडा कहा जाता है। यदि कई दिन निरंतर वर्षा होती रहे एवं सूर्य के दर्शन नहीं हों तो ऐसी वर्षा को "झड़" कहा जाता है। झड़ लगने पर बाढ़ की स्थिति बनती है तथा नदियाँ उफान पर आ जाती हैं। पूरे संभाग में कहीं – कहीं वर्षा हो जाये, लेकिन हर जगह वर्षा न हो तो इसे खण्ड वर्षा कहा जाता है। भूमि में नमी को "आल" कहा जाता है। वर्षा होने पर भूमि की ऊपरी सूखी पर्तो में गीलापन बढ़ता हुआ नीचे की पर्तों के गीले क्षेत्र के छू जाने पर "आल–में–आल" होना बताया जाता है। मानसून आगमन पर यदि पहली एक–दो वर्षा से "आल–में–आल" मिलने की स्थिति बन जाती है तो कृषक बीज बुवाई प्रारंभ कर देते हैं। इस स्थिति में वृक्षारोपण क्षेत्रों में पौध लगाने का कार्य भी प्रारंभ हो जाता है।

5.2 **जल प्रवाह एवं जल भराव**– राजस्थान के ग्रामीण परिवेश में ढालू क्षेत्र में द्वितीय चरण की धाराएँ (Second order streams) "वाला", तृतीय चरण की "नाला" एवं चतुर्थ चरण की "नदी" कहलाती हैं। नदी के मिट्टी तट (soft bank) "ढीया" कहलाते हैं। नदी व बाँध का पैंदा "पेटा" कहलाता हैं। पेटा शब्द पेट से आया है। जिस तरह हमारे पेट में खाना व पानी भरता है उसी तरह बाँधों, तालाबों व नदियों के पेटे में पानी भरता / बहता है। पानी सूखने पर पेटा क्षेत्र में की जाने वाली खेती को "पेटा काश्त" कहा जाता है।

अलवर जिले में पहाड़ों से उतर कर दूर समतल क्षेत्र में नदी के पेटे में पाये जाने वाले पानी भरे गड्ढे "डोक" कहलाते हैं। दक्षिणी राजस्थान में नदी के पहाड़ी मार्ग एवं पहाड़ से आगे के मार्ग में पानी भरे बड़े गड्ढे "दरा या धरा या खादरा" कहे जाते हैं। उदयपुर जिले में फुलवारी अभयारण्य में वाकल नदी बीरोठी गाँव के पास वन क्षेत्र में प्रवेश करती है तथा गऊपीपला–पाथरपाड़ी क्षेत्र में अभयारण्य से बाहर निकल

जाती हैं। यह नदी कोटड़ा गाँव के पास साबरमती नदी में मिल जाती है। अभयारण्य क्षेत्र में गर्मी के मौसम में भी वाकल नदी में पानी भरे 36 खादरे गिने जा सकते हैं जिनके सभी के स्थानीय नाम अलग–अलग हैं।[5]

पहाडों में ऊँचाई से गिरते पानी के झरने स्थानीय बोल–चाल में झर या जेर या भड़क या धोरोड़ा कहलाते हैं जैसे "कटावली जेर" जो फुलवारी अभयारण्य में एक महत्वपूर्ण झरना हैं। प्रतापगढ़ जिलें में पीपलखूँट तहसील के खेमपुरीया गाँव में भुखी भड़क नामक झरना प्रसिद्ध है। विंध्याचल पर्वतमाला क्षेत्र की खोहों (gorges) में झरनों की प्रचुरता है। झरनों की शब्दावली भी बहुत विशद है। गिरते पानी की धारा को "भड़क" तथा उसके नीचे पानी संग्राहक गढ्ढे को "कुण्डी" कहा जाता है। खोह के भडक क्षेत्र के आस–पास के भाग को "हाल" तथा बाद के क्षेत्र को "नाल" तथा नाल में बहते पानी की धारा को "खाल कहते हैं(**चित्र–1**)। प्रायः "हाल" क्षेत्र मे चट्टानो पर भमर नामक मधुमक्खी (rock bee, *Apis dorsata*) के छत्ते देखने को मिलते हैं। फुलवारी अभयारण्य में "कानी हाल" क्षेत्र मधुमक्खियों के लिए प्रसिद्व है।

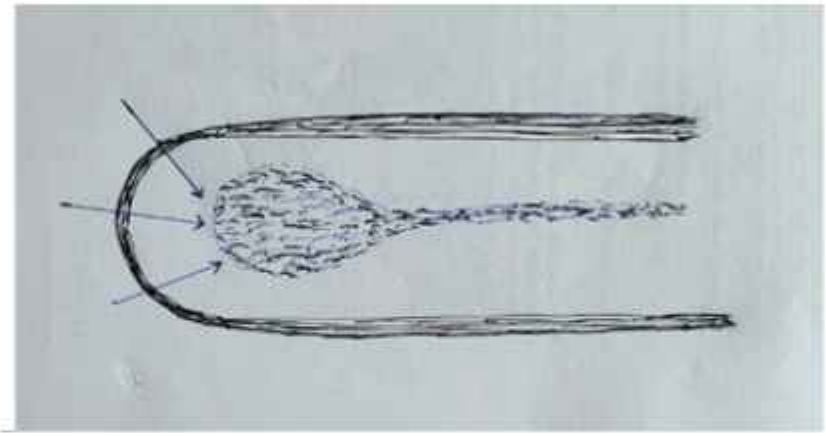

चित्र–1: खोह के विभिन्न भाग (1= भडक, 2=कुण्डी, 3= हाल, 4=नाल, 5= खाल, 6= कराई)

ऊँचाई से गिरते पानी के विपरीत सामान्य भूमि से भी कई जगह पानी उगलता मिलता है। जमीन से निरंतर उगलते पानी को "हँजूआ" कहते हैं जबकि अधिक बरसात के दिनों में सीमित अवधि के लिए भूमि से पानी उगलने लगे तो उसे "पड़वा फूटना" कहते हैं। वर्षा समाप्ति पर पड़वे बन्द हो जाते हैं जबकि हँजूआ पानी उगलते रहते हैं। सज्जनगढ़ वन्यजीव अभयारण्य के उत्तरी छोर पर एक विशाल रायण वृक्ष के पास 24 घण्टे बहने वाला एक सुन्दर हँजूआ विद्यमान था जो गत दशक में अज्ञात कारणों से समाप्त हो गया।

5.3 **पर्वत व चट्टानें**– किसी पहाड़ की ऊँची चोटी जिसमे कुछ पैनापन सा प्रतीत हो, उसे मेवाड क्षेत्र में "मथारा" या "टूस" कहा जाता है। यदि मथारा कुछ नुकीला सा न होकर चपटा पठारी हो तो उसे "थाग" कहा जाता है। मथारा शब्द माथा यानी सिर के समकक्ष भाव प्रकट करता है। अलवर जिले में पहाड़ी की चोटी को "टोडा" कहा जाता है। कोई पहाड़ यदि अपनी ऊँचाई कम करता हुआ धीरे–धीरे समाप्त हो जाता है तब उसके इस अन्तिम छोर को उत्तर–पूर्वी राजस्थान में "पूँछड़ी" कहा जाता है जैसे रेणागिरि पहाड की पूँछड़ी, गोर्वधन पर्वत की पूँछड़ी आदि। यदि पहाड़ों में ऊँचाई पर पठार स्थित हो तो उसे "माल या माला या ऊपरमाल" कहा जाता है। भीलवाड़ा जिले में बिजोलिया कस्बे के पास का ऊपरमाल क्षेत्र खनन के लिए राजस्थान ही नही देश भर में प्रसिद्व है।

पश्चिमी राजस्थान व शेखावटी क्षेत्र में बड़े पर्वत "भाकर" तो दक्षिणी राजस्थान में "मगरा" कहलाते हैं। छोटे पहाड़ "मगरी" शब्द से जाने जाते हैं। जैसे उदयपुर शहर में हरिदास जी की मगरी, हिरण मगरी, तीरा मगरी, मोती मगरी आदि छोटे व कम ऊँचाई के होते हुऐ भी बहुत प्रसिद्व हैं। बडे पहाड़ों के उस पार जाने वाले चढ़ाईदार रास्ते को "घाटा" तथा छोटे पहाड़ों के चढाई वाले रास्तों को "घाटी" कहा जाता है जैसे चीरवा घाटा (उदयपुर के पास), जिन्दोली घाटी (अलवर जिले में जिन्दोली गाँव के पास), कोलान घाटी (अलवर जिले मे ततारपुर गाँव के पास) आदि। वस्तुतः पहाड़ी भागों में ऊँचाई एवं चढाई के मार्गों को आकार अनुसार घाटा या घाटी के नाम से जाना जाता है। जिन पहाड़ी स्थलों में पूर्व में घाट मार्ग थे। वहाँ अब पहाडों में सुरंगें बनाने का कार्य प्रारंभ हो गया है। वे ऊँचे पहाड जिन पर वर्षा ऋतु में घुमड़ते बादल टकराते हैं तथा पहाडों के ऊपरी भाग बादलों से ढक जाने से नजर नही आते, उन पहाड़ों को शेखावाटी क्षेत्र (झुनझुनू, सीकर एवं चूरू जिला) में "बरखण्डी" कहा जाता हैं जैसे लोहार्गल बरखण्डी।[6] भरतपुर जिले में पहाड़ों व वनों से दूर यदि कोई छोटा सा वृक्षों–झाड़ियों से हरा–भरा क्षेत्र विद्यमान हो तो उसे बरखण्ड कहा जाता है। जो "वन का एक खण्ड" होने का अर्थ प्रकट करता है। यदि किसी बरखण्ड में कोई मन्दिर स्थित हो तो उसे बरखण्डी मन्दिर कहा जाता है। वस्तुतः बरखण्ड एक तरह की देवबणी (sacred grove) का ही स्वरुप है।

अरावली पर्वतमाला के पहाड़ आधार पर चौड़े तथा शीर्ष की तरफ संकरे होते हैं। कई जगह पर्वतों के उपरी भागो में आर–पार प्राकृतिक रूप से बने छिद्र पाये जाते हैं जिन्हें दक्षिणी राजस्थान में "तोरणा" कहा जाता है जो तोरणद्वार शब्द से उत्पन्न हुआ शब्द है। यानि तोरणा पहाड़ों में बने प्राकृतिक तोरणद्वार हैं जैसे उदयपुर जिले की ओगणा रैंज में एक आरक्षित वन खण्ड का नाम ही राजकीय दस्तावेजों में तोरणा वन खण्ड है। इस वन खण्ड में एक पहाड़ी के शीर्ष पर सदियों पुराना एक छिद्र है जो लोगों के आकर्षण का केन्द्र बना रहता है। उदयपुर जिले के मगवास गाँव के पास भी पहाड़ में एक तोरणा विद्यमान है। फुलवारी अभयारण्य में आड़ा हल्दू वन खण्ड में सुरा गाँव के पास एक तोरणा है तथा डैया वन खण्ड में डैया गाँव के पास "कानापारा" नामक तोरणा भी प्रसिद्व है। तोरणा के समकक्ष अलवर जिले में "पोल" शब्द का चलन है जो पोला या खोखला शब्द से बना है। बाघ परियोजना सरिस्का में पांण्डूपोल नामक स्थान पर पहाड़ में एक द्वारनुमा बड़ा छिद्र विद्यमान है। कहते हैं यह छिद्र पाण्डुओं ने अपने वनवास के दौरान बनाया था इसीलिए इसका नाम पाण्डुपोल पड़ा। "तोरणा व पोल" परिस्थतिकी पर्यटन को बढावा देने में उपयोगी हो सकते हैं।

स्थानीय लोगों का लोक भूगर्भ विज्ञान का ज्ञान भी बहुत अच्छा होता है। राज्य के प्रतापगढ जिले एवं आस–पास के क्षेत्र में बेसाल्ट चट्टानें पाई जाती हैं। ये काले रंग की होकर काफी कठोर व भारी होती हैं। इन चट्टानों को प्रतापगढ जिले में "चाट" नाम से जाना जाता है। ये चट्टानें जगह–जगह चपटी अवस्था में क्षैतिज फैलाव लिए मिलती हैं। संभवतः चपटेपन के कारण इन्हें चाट नाम मिला है। पहाडों में दूर से देखने पर यदि कोई चट्टान भिन्न रंग की नजर आती है तो उसे भी "चाट" नाम से जाना जाता है। पहाडों में कम मोटाई के चपटे पत्थरों को "कातली" कहा जाता है। चिनाई के दौरान बडे पत्थरों के बीच छोटे स्थान की भराई हेतु कातली बहुत उपयोगी मानी जाती हैं। सफेद पत्थर यानी क्वार्ट्ज को "चकमक का पत्थर" कहा जाता है। इस पत्थर पर सेमल (*Bombax ceiba*) वृक्ष के सूखे फल की रूई को रखकर दो चकमक पत्थरों को रगड़कर कथौड़ी आदिवासी आग पैदा कर देते हैं। नदी प्रवाहों मे लुढ़ककर गोल हुऐ पत्थर को "लोढ़ी" कहा जाता है जो घरों में चटनी पीसने हेतु लोगों द्वारा उपयोग लिए जाते हैं।

अरावली पर्वतमाला पर ढालों पर लम्बवत चट्टानों के टुकडों का एक रेखीय प्रवाह देखने को मिलता है जिसे लोक शब्दावली में "खरड़" कहा जाता है (चित्र–2)। भूविज्ञान में खरड़ हेतु टालस क्रीप शब्द उपयोग होता है। पहाड़ों में पाए जाने वाले खरड़ प्राकृतिक अग्नि पट्टी (fire lines) की भूमिका निभाते हैं तथा दावानल को रोककर पहाड़ी वनों को सुरक्षा प्रदान करते हैं।[5]

चित्र–2: पहाड़ी ढाल पर स्पष्ट नजर आते हुए 4 खरड़

अरावली पर्वतमाला मे दो समानान्तर पहाडियों के बीच की अपेक्षाकृत लम्बी व संकरी घाटी को "नाल" कहा जाता है। संभवतः यह शब्द नली से बना होगा। अरावली की अधिकतर नाल प्रायः "V" आकार की होती हैं। नाल में कोई न कोई नदी–नाला अवश्य रहता है। राजस्थान में अनेक नाल बहुत प्रसिद्व हैं जैसे केवड़ा की नाल, फुलवारी की नाल, भीलड़ी माता की नाल, जामुनिया की नाल, खोखरिया की नाल आदि। यदि किसी पर्वत के ढाल में छोटी नाल नुमा कोई खाँच हो या कोई नाल बहुत छोटी हो तो उसे "खोला" कहा जाता है। विंध्याचल पर्वत में नाल जैसी ही रचनाऐं होती हैं लेकिन प्रायः ये "U" आकार के खड़े तटो युक्त होती हैं जिन्हें खोह (gorge) कहते हैं। खड़े तट टूट–टूट कर कालांतर में ढालू हो जाते हैं एवं तब खोह "V" आकार या U व V आकार का मिश्रित रूप नजर आती हैं। खोहों के खडे पथरीले तटों को "कराई" या "कराड़" कहते हैं।

पहाड़ों में जगह–जगह खोखले गड्ढेनुमा या गुफानुमा स्थान मिलते हैं जिन्हें "कुण्ड" कहा जाता है। कुण्डों में वर्ष पर्यन्त या वर्षा एवं सर्दी में पानी पाया जाता है। अजमेर जिले में पुष्कर में पास पंचकुण्ड, अलवर जिले में रेणागिरि गाँव के पास परशुराम कुण्ड, बड़ा बेरा कुण्ड, हनुमान कुण्ड; झुंझुनू जिले में लोहार्गल कुण्ड, चिराणा गाँव के "तातीकुण्ड" व "ठण्डाकुण्ड" आदि प्रसिद्व हैं। यदि किसी कुण्ड के पास कदम (*Mitragyna parvifolia*) का वृक्ष उगा हो तो उसे कदम कुण्ड कहा जाता है। सीकर जिले में नीम का थाना कस्बे के पास छापोली गाँव में एक कदम कुण्ड बहुत प्रसिद्व है। स्थानीय जनों द्वारा सामान्य कुण्डों की तुलना में कदम कुण्ड में धार्मिक अनुष्ठान करने को प्राथमिकता दी जाती है।[6]

5.4 **वन एवं वनस्पति**– प्राचीन काल में वनों के कई विभेद लोगों को ज्ञात थे। तत्कालीन शासकों द्वारा संरक्षित वनों को "रूँध" कहा जाता था जैसे बर्डोद की रूँध, ईंटाराणा की रूँध, सीरावास की रूँध आदि। घने जंगल हेतु "छींड" शब्द का उपयोग होता था जैसे रामपुर की छींड जो बाघ परियोजना सरिस्का का एक भाग है। छींडों में बाघ व तेंदुए मिलना आम बात है। छींड का विपरीत "उछींड" क्षेत्र होता है। मानवीय दखल से वृक्ष सघनता कम होने से उछींड पनपने लगते हैं। यदि जंगल अत्यंत गहरा हो जावे तो वनतल पर लगातार छाया या अंधेरा सा रहता है, उस जंगल को "अंधेरी" या "अंधेरी जंगल" कहा जाता है। अलवर शहर से सटे जंगल में जब बाला किला की तरफ जाते हैं तो वहाँ के आस–पास के जंगल को अंधेरी जंगल कहा जाता है। छींड, उछींड़ एवं अंधेरी शब्दों का उपयोग अलवर जिले में आमतौर पर सुनने को मिल जाता है।

राजस्थान में जंगल के छोटे–बड़े टुकड़ों को "बणी या रूँध" कहा जाता है। राजस्थान में चार तरह की बणीया प्रसिद्ध हैं। दो या अधिक गाँव की जहाँ सीमाएँ मिलती है उस जगह को "सीम संधा" या "काँकड कहा जाता है। काँकड पर स्थित बणी को "काँकड बणी" कहा जाता है। काँकड पर जितने गाँवों की सीमा का मिलन होता है वे सभी गाँव काँकड बणी में उपयोग का हक रखते हैं। यदि किसी बणी का संपूर्ण क्षेत्र एक ही गाँव की सीमा में समाहित होता हैं तो उसे "रखत बणी" कहा जाता है। रखत बणी में केवल एक ही गाँव के हक–हकूक होते हैं। रखत बणी एक तरह का ग्राम्य रक्षित वन होते हैं। कुछ बणियाँ किसी देवस्थान के चारों तरफ या सटकर होती हैं जिन्हें "देवबणी" या "ओरण" कहा जाता हैं। इन बणियों का उपयोग धार्मिक कार्यों एवं सीमित व्यक्तिगत उपयोग तक स्वीकृत होता है। ओरण में हरे वृक्षों को काटना मना होता है। ओरण शब्द का प्रचलन पश्चिमी राजस्थान में अधिक होता है। इस क्षेत्र में देगराय ओरण, डुगरपीर ओरण, अभाये फकीर की ओरण, करणीमाता ओरण, रातीमाता ओरण, पाबुजी की ओरण, टेमडाराय ओरण, हिमाक की ओरण, तनोटराय ओरण, हड़बू की ओरण, पनोधरराय ओरण, आईमाता ओरण, ओलाजी ओरण, पनाराय जी की ओरण आदि प्रसिद्ध हैं। ओरणों ने सूखाग्रस्त पश्चिमी राजस्थान को जीवनयापन में बहुत योगदान दिया है। ओरण की तरह ही राजस्थान के रेगिस्तानी थार संभाग में गाँवों के आस–पास वृक्ष बाहुल्य सामान्य क्षेत्र भी पाये जाते थे जिन्हें "रोई" कहा जाता था। कई जगह ओरण को भी रोई नाम दिया जाता है। प्राचीन भारत में सिंध से लेकर राजस्थान तक गाँव–गाँव में रोई पाई जाती थी।

रूँध या बाल बणी प्राचीन काल में स्थानीय राजा–महाराजाओं व जमीदारों के निजी शिकारगाहों के रूप में संरक्षित एवं प्रबंधित होते थे। इनका आकार अपेक्षाकृत बहुत बड़ा होता था एवं लोकजन को इनमें उपयोग के सीमित अधिकार मिलते थे। नदी के पाट में यदि कोई चट्टान उभरी हुई नजर आती है तो उनको कई क्षेत्रों में "काकड़िया" नाम से जाना जाता है। नदी में जल प्रवाह होने पर काकड़िया चट्टानी द्वीप से नजर आते हैं। फुलवारी अभयारण्य में खाँचन क्षेत्र में वाकल नदी के बहाव क्षेत्र के बीच में लंगोटिया भाटा नामक काकड़िया बहुत प्रसिद्ध है। नदी की चौड़ाई जिसमें पानी बहता है उसे पेटा या पाट कहते हैं। यदि नदी अपना नया रास्ता बना लेती है तो पुराना रास्ता भी सावधानी से निरिक्षण करने पर पहचाना जा सकता है। नदी के पुराने रास्ते को "पुराना पाट" या "छोड़ा पाट" कहा जाता है। उदयपुर की खैरवाड़ा तहसील में खेड़ा घाटी गाँव में सेवा मंदिर संस्था के एक प्लान्टेशन से सट कर बहने वाली एक जलधारा का पुराना पाट दर्शनीय है। यह एक कटा हुआ पुराना नदी घुमाव (meander) है।

5.5 **मानव निर्मित जल स्रोत**– मानव निर्मित जल स्रोतों का भूगोल एवं उनको समझने के लिए लोक तकनीकी शब्दों को समझना भी एक रूचिकर कार्य है। राजस्थान के कई भागों में छोटे कुए को ढीमड़ी का कुई कहा जाता है लेकिन आकार में बड़े कुऐ को ढीनड़ा कहा जाता है। यदि कुआँ कच्चा है तो उसे "झेरा" कहा जाता है। कुएं की आन्तरिक दीवार में क्षैतिज दिशा में कोई गुहा हो तो उसे "भगड़" कहते हैं। बिना मुण्डेर के कुओं में यदि दुर्घटनावश वन्यप्राणी गिर जाते हैं तो कई बार वे छुपे हुये भगड़ में घुसे मिलते हैं। कुऐ की खुदाई करते समय जिस गहराई पर पानी निकलना प्रारंभ होता है उसे "चळ्वे की गहराई" कहा जाता है। कुओं से काफी बड़ी व गहरी, प्रायः वर्गाकार गहराई को "चळ्वे की गहराई" कहते हैं। भूमि तल से नीचे वर्गाकार या आयताकार, खुदाई कर बनाई गई रचनाऐं बावड़ी कहलाती हैं। पूरे राजस्थान में बावडियाँ मिल जाती हैं। उदयपुर, बूँदी, दौसा, जैसलमेर, कोटा आदि जिलों की बावडियाँ प्रसिद्ध हैं। बावडियों की चारों दीवारें पक्की होती हैं तथा प्रायः एक से तीन तरफ या कभी–कभी चारों तरफ पानी तक पहुँचने हेतु सीढ़ियाँ होती हैं। दौसा जिले की चाँद बावड़ी में चारों तरफ सीढ़ियाँ बनाई गई हैं। बावड़ियाँ एक मंजिल से लेकर कई मंजिल गहरी भी हो सकती हैं।

एक विशेष रचना "केवड़ी" के बारे में भी जानना रूचिकर रहेगा। बावड़ियों में कबूतरों का बसेरा होने पर उनकी बींट, पंख व उनके पानी में सड़ते शव पानी की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। कई बार कबूतरों के कारण पानी पीने लायक नहीं रहता। केवड़ी पानी की गुणवत्ता को बचाये रखने व उसे पीने लायक बनाये रखने में मदद करती हैं। किसी भी बावड़ी से थोड़ा सा दूर हट कर, बावड़ी की गहराई के समकक्ष एक कुआ बनाया जाता है। कुऐ के मुँह पर लोहे का जाल ढका जाता है ताकि कबूतरों व दूसरे प्राणियों को प्रवेश लेने से रोका जा सके। बावड़ी का पानी बावड़ी व केवड़ी के बीच की भूमि से छन–छन कर केवड़ी में जमा होता रहता है जिसका तल वहीं होता जितना बावड़ी के जल का होता है। केवड़ी के मुँह पर लगे जाल में पानी निकलने का द्वार होता है जिसको उपयोग के समय खोल लिया जता है तथा उपयोग बाद बंद कर दिया जाता है। जिला कोटा की कनवास तहसील की, सांगोद पंचायत समिति की खुराड़ पंचायत के बृजनगर गाँव में "केवड़ी" दर्शनीय है। यहाँ एक महल, बावड़ी तथा हनुमान मंदिर पास–पास हैं तथा मंदिर के पास केवड़ी विद्यमान है।

राजस्थान में दैनिक उपयोग के जल संग्रहण हेतु तालाब या जोहड़ गाँव में आस–पास बनाये जाते हैं। इनके तट (पाल) मिट्टी के बने होते हैं। कुछ बहु उपयोगी वृक्ष एवं कई धार्मिक स्थल भी पाल पर होते हैं। जोहड़ प्यालेनुमा एवं उथले जलाशय होते हैं जिनमें पानी का वाष्पीकरण अधिक होता है। पानी के वाष्पीकरण को रोकने हेतु कई बार जोहड़ के पैंदे में सँकरी कच्ची एक या अधिक कुई बनाई जाती हैं जिनको "नाड़ी" कहते हैं जिनमें वाष्पोत्सर्जन अपेक्षाकृत कम होता है। तालाबों में पानी के बीच में मिट्टी का टीला सा बनाकर एक या अधिक द्वीप बनाये जाते हैं जिन्हें "लाखेटिया" कहते हैं। लाखेटिया पर पक्षी व दूसरे जीव विश्राम करते हैं व दूसरी जैविक क्रियाओं का संपादन करते हैं। अलवर जिले व हरियाणा के पड़ोसी महेन्द्रगढ व रेवाड़ी जिलों में "कदमा तालाब" भी होते हैं। ये ऐसे तालाब हैं जिनकी पाल पर एक या अनेक कदम अर्थात् कदम (Mitragyna parvilolia) के वृक्ष हों, कदमा तालाब कहलाते हैं। ये वृक्ष पाल पर रोपित किये जाते हैं। गाँव की महिलाऐं कई धार्मिक कार्यक्रम तालाब के कदम वृक्ष / वृक्षों के नीचे संपन्न करती हैं।

6. **निष्कर्ष**– राजस्थान के आदिवासियों, वनवासियों एवं ग्राम्य समुदायों की लोक भूगोल की जानकारी बहुत श्रेष्ठ है। वन एवं वनस्पति, जल स्त्रोतों व प्रवाह तंत्र, वर्षा, पर्वत एवं चट्टानें, कुए एवं अन्य मानव निर्मित जल स्रोतों के छोटे – बडे विशिष्ट विभेदों को स्पष्टता एवं सटीकता से समझाने हेतु पृथक–पृथक शब्दावली उपलब्ध है। यह लोक ज्ञान की बारीकी, वैज्ञानिकता गहनता व विशालता को प्रकट करता है। लोक–ज्ञान का यह खजाना गत सदियों की लम्बी अवधि में मानव समाज द्वारा सृजित, संग्रहीत व सुरक्षित किया है। आधुनिकता के युग में परंपरागत ज्ञान को भी बचाये रखने की आवश्यकता हैं ताकि जन कल्याण एवं विकास में उसका उपयोग हो सके।

7. **आभार**– लेखक अध्ययन में सहयोग देने हेतु वन विभाग, राजस्थान का बहुत आभारी है।

**References**

1. Joshi, P. (1995) Ethnobotany of the primitive tribes in Rajasthan. Print well and Rupa books Pvt. Ltd. Jaipur. pp. 1-254 + plates.
2. Sharma, S.K. (1998) Ethno-zoology (Hindi). Himanshu Publications, Udaipur & New Delhi. pp. 1-147.
3. Sharma, S.K. (2007) study of Biodiversity and Ethnobiology of Phulwari Wildlife Sanctuary, Udaipur (Rajasthan). Ph.D. Thesis. Deptt. of Botany, MLSU University, Udaipur. pp. 1-660.
4. Sharma, S.K. (2020) Forest Development and Ecology (Hindi).Himanshu Publications, Udaipur & New Delhi. pp. 1-570.
5. Sharma, S.K. (2021): Wild Animal Rescue and rehabilitation. Himanshu Publications, Udaipur & New Delhi. pp. 1-237.
6. Sharma, S.K. (2025): Fire management in Forest Areas (Hindi). Himanshu Publications, Udaipur & New Delhi. pp. 1-237.
7. Pandey, D.N. (1998) Ethnoforestry - local knowledge for sustainable forestry and livelihood security. Himanshu Publications, Udaipur & New Delhi. pp. 1-91.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 7-14
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.2
SJIF (2025) : 8.749

शोध पत्र

# Geological and Tectonic analysis of Shivalik range of northwestern Himalayas

Hemant Kumar and Rajinder Kumar
Geological Survey of India, Lucknow-226 024, UP, India
hemant.kumar@gsi.gov.in

**Received: 10-10-2025, Accepted: 25-10-2025**

**Abstract-** The fluvial sedimentary rocks deposited in the basins located to the south, facing the Himalayan orogenic chain, are known as the Siwalik Group. The study area of the present work, located in the foothills of the northwestern Himalayan region, villages Saketi and Kala Amb, Sirmaur district, Himachal Pradesh, exposes rocks from various units of the Lower, Middle, and Upper Siwalik subgroups. Based on the environmental conditions of deposition, these sediments are interpreted as continental deposits, characterized by fluvial deposits, alluvial fan deposits, and lake-borne deposits. Since the early nineteenth century, the rocks of the Siwalik Group have also been recognized for their rich and diverse fossil collection of fauna, especially vertebrates. Based on the study of the biological evolution of these fossils, the rocks of this age have been placed in the Middle Miocene-Pliocene-Pleistocene period. Signs of tectonic and neo-tectonic activity are also visible in the rocks of these Shivalik ranges at many places, the main ones being the Himalayan Frontal Thrust/Fault (HF T/F) in the south and the Nahan Thrust (NT) along with the Main Boundary Thrust/Fault (MBF) in the north.

**Key words-** Geological and tectonic analysis, Shivalik range, northwestern Himalayas

# उत्तर पश्चिमी हिमालय में शिवालिक श्रंखला का भूवैज्ञानिक एवं विवर्तिकीय विश्लेषण

हेमंत कुमार एवं राजिंदर कुमार
भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्र, लखनऊ–226 024, उ0प्र0, भारत
hemant.kumar@gsi.gov.in

**सार**– हिमालय ओरोजेनिक श्रंखला के सामने, दक्षिण में स्थित बेसिन में जमा नदीय तलछट की चट्टानों को शिवालिक समूह के रूप में जाना जाता है। वर्तमान कार्य का अध्ययन क्षेत्र, उत्तर–पश्चिमी हिमालय क्षेत्र की तलहटी में स्थित ग्राम सकेती और काला अम्ब, हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले में स्थित है, जहाँ निम्न, मध्य और ऊपरी शिवालिक उपसमूहों की विभिन्न इकाइयों की चट्टानें उजागर हैं। इन तलछटों के निक्षेपण की पर्यावरणीय दशाओं के आधार पर इसकी व्याख्या महाद्वीपीय निक्षेपों के रूप में की जाती है, जो नदीय प्रणाली के निक्षेपों, जलोढ़ फैन निक्षेपों और झील प्राणाली जनित निक्षेपों द्वारा दर्शित होते हैं। उन्नीसवीं सदी की शुरुआत से ही शिवालिक समूह की चट्टानों को जीव–जंतुओं, विशेषकर कशेरुकी जीवों के समृद्ध और विविध जीवाश्म संग्रह के लिए भी पहचाना जाता रहा है। इन जीवाश्मों के जैविक विकास क्रम के अध्ययन के आधार पर इस काल की चट्टानों को मध्य मायोसीन–प्लियोसीन–प्लीस्टोसीन काल में रखा गया है। इन शिवालिक श्रृंखला की चट्टानों में विवर्तिकीय एवं नव–विवर्तिकीय गतिविधियों के चिन्ह भी कई स्थानों पर स्पष्ट है जिनमें दक्षिण में स्थित हिमालयन फ्रंटल थ्रस्ट/भ्रंश (एचएफ टी/एफ) एवं उत्तर में स्थित मुख्य सीमा थ्रस्ट/भ्रंश (एमबीएफ) के साथ नाहन थ्रस्ट (एन टी) मुख्य है।

**बीज शब्द**– उत्तर पश्चिमी हिमालय, शिवालिक श्रंखला, विवर्तिकीय विश्लेषण

1. **परिचय**– हिमालय, विश्व की सबसे ऊंची पर्वत श्रृंखला, भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी छोर पर एक धनुषाकार पर्वत बेल्ट बनाती है और इसमें विभिन्न भू–विवर्तनिक क्षेत्रों के साथ पृथ्वी की सबसे बड़ी पर्वत श्रृंखला शामिल है। यह एशियाई प्लेट की ओर भारतीय प्लेट के अभिसरण संचलन के कारण महाद्वीप–महाद्वीप टकराव का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रदर्शित करता है। यद्यपि एक पर्वत के रूप में हिमालय लगभग 40 मिलियन वर्ष पहले उभरना शुरू हुआ था, लेकिन इसे बनाने वाली चट्टानों का अपना एक महान इतिहास है जो दो अरब वर्षों अर्थात् पैलियोप्रोटेरोजोइक के बाद से भी अधिक समय से फैला हुआ है। हिमालय की चट्टानें एक समुद्री बेसिन में रखी गई थीं, जैसा कि इसकी चट्टानों में संरक्षित समुद्री मूल के कई जीवाश्मों से पता चलता है। प्रारंभ में, भारत, जिसे प्लेट टेक्टोनिक मॉडल में भारतीय प्लेट के रूप में वर्णित किया गया था, अफ्रीका के पूर्वी तट के साथ जुड़ा हुआ था।

2. **शिवालिक समूह का भूविज्ञान**– हिमालय पर्वतमाला की दक्षिणी परिधि पर मोटी, अबाधित, निओजीन फोरडीप भराव तलछट, जो कि इंडो–गंगा मैदान से उत्तर की ओर बढ़ने पर शिवालिक पर्वत श्रृंखला की पहाड़ियाँ पायी जाती है। यह पर्वत श्रृंखला, मुख्य हिमालय पहाड़ियों की एक बाहरी पर्वतमाला है, जो भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी भाग में पश्चिम में पोटवार पठार (पाकिस्तान), सिन्धु नदी से लेकर

पूर्व में अरुणाचल प्रदेश में ब्रह्मपुत्र नदी तक लगभग 2,400 किलोमीटर तक आच्छादित है। इसे दक्षिण में हिमालयन फ्रंटल थ्रस्ट/भ्रंश (एचएफ टी/एफ) द्वारा और उत्तर में मुख्य सीमा थ्रस्ट/भ्रंश (एमबीएफ) द्वारा सीमांकित किया गया है। टेक्टोनो–स्ट्रैटिग्राफिक डोमेन में शिवालिक समूह के निओजीन–क्वाटरनरी मोलैसिक तलछट सम्मिलित हैं। ये चट्टानें निचली पहाड़ियों की सबसे दक्षिणी हिमालय श्रृंखला को परिभाषित करती हैं। साथ ही यह पर्वत श्रृंखला अपनी समृद्ध कशेरुकी जीवाश्म सामग्री के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं और वास्तव में भारत में कशेरुकी जीवाश्मों का सबसे बड़ा भंडार हैं। पाकिस्तान स्थित पोटवार पठार में शिवालिक अनुक्रम को सबसे पहले पिलग्रिम[3] एवं इसके बाद बेरी एवं अन्य[1] द्वारा ऊपरी, मध्य और निचली इकाइयों में विभाजित किया गया था। ये उपविभाजन लिथोलॉजिकल और पैलियोन्टोलॉजिकल दोनों मानदंडों पर आधारित थे। वर्तमान कार्यों के आधार पर पूर्व में निर्धारित इकाइयों को उत्तर–पश्चिमी हिमालय में व्यापक लिथोस्ट्रेटीग्राफिक सहसंबंध निम्नवत है–

| समूह / उपसमूह | पोटवार पठार | जम्मू और कश्मीर | हिमाचल प्रदेश एवं हरियाणा | आयु / काल |
|---|---|---|---|---|
| चतुर्कल्पीय तलछट | ऊपरी बोल्डर कांग्लोमरेट फार्मेशन | टैरेस T1-T5 | टैरेस T1-T5 | आधुनिक काल |
| ऊपरी शिवालिक उप समूह | निम्न बोल्डर कांग्लोमरेट फार्मेशन | डुगहोर फार्मेशन | बोल्डर कांग्लोमरेट / कालर फार्मेशन | मध्य प्लियोसीन से ऊपरी प्लेइस्टोसीन तक |
| | पिंजोर फार्मेशन | उत्तरबानी फार्मेशन | पिंजोर फार्मेशन | |
| | तट्रोट फार्मेशन | .. | तट्रोट सकेती फार्मेशन | |
| मध्य शिवालिक उप समूह | ढोक पठान फार्मेशन | मोहरगढ़ फार्मेशन | अपरिभाषित मध्य शिवालिक उप समूह | निचला प्लियोसीन |
| | नागरी फार्मेशन | देवल फार्मेशन | | |
| निम्न शिवालिक उपसमूह | कमलियाल फार्मेशन | मानसर फार्मेशन | अपरिभाषित निम्न शिवालिक उप समूह / नाहन फार्मेशन | ऊपरी मियोसीन |
| | चिन्जी फार्मेशन | | | |

शिवालिक समूह, 5000 मीटर से अधिक की मोटाई के साथ, नदीय तलछट, हिमालय के विस्तार के समानांतर पूर्व–पश्चिम विस्तारित फोरलैंड बेसिन में जमा हुआ है। इस, शिवालिक काल की कई नदियाँ हिमालय की ओर अनुप्रस्थ दिशा में बहते हुए मेगाफैन के रूप में अवसादी अनुक्रम जमा करती थीं और पूर्व दिशा में बहती हुई एक मुख्य नदी में मिलकर अंततः बंगाल की खाड़ी की तरफ गिर जाती थीं। हिमालय पर्वत के ऊपर उठने के साथ, नदियों द्वारा लाया गया नदीय तलछट, शिवालिक समूह की चट्टानों के रूप में जमा हो गया। पैलियोजीन सागर के विनाश के बाद हिमालय के उदय ने, कम से कम, थोड़े समय के लिए, क्षेत्रीय रूप से प्रायद्वीपीय नदियों को प्रभावित किया, जो कि पूर्व में टेथियन भाग की ओर बहती थीं। इस विशाल झील जैसे बेसिन में, निचले शिवालिक (नाहन फॉर्मेशन) का हिस्सा जमा किया गया था। मध्य शिवालिक निक्षेपण के समय, हिमालय ने कुछ स्थायित्व प्राप्त कर लिया होगा परंतु नदियाँ अधिक अशांत हो गईं और मोटे कणों को लाने लगी। अंततः ऊपरी शिवालिक अवसादन के दौरान, डायमिक्टन सहित महीन, मध्यम और मोटे तलछटीय अवसादों को लाने के लिए पैलियोजीन तलछट (सिरमुर समूह) को क्षेत्र में अवस्थित नाहन थ्रस्ट द्वारा बड़े पैमाने पर ऊपर उठाया गया, जिसमें अशांत धाराओं द्वारा अवसादों का अनियंत्रित जमाव किया गया। मूल रूप से शिवालिक टेक्टोनो स्ट्रैटिग्राफिक डोमेन की उत्तर पश्चिम से उत्तर पूर्व तक की पूरी लंबाई पर एक एकीकृत लिथोस्ट्रेटिग्राफिक वर्गीकरण बनाना कठिन है, परंतु उस काल की पर्वतजनीय अवस्था के अनुसार एवं उद्गम क्षेत्र में प्रचलित जलवायु/हाइड्रोडायनेमिक स्थितियों के अनुरूप एक विस्तृत क्षेत्र में फैले नदीय प्रणाली में एकत्रित हुए इन अवसादों को एक ही समूह में वर्गीकृत किया गया है। साथ ही अध्ययन क्षेत्र में किए गए कार्यों के आधार पर काला अंब – धनौरा – कालर क्षेत्र में उजागर शिवालिक समूह की चट्टानों को मानक मानते हुए लिथोस्ट्रेटीग्राफी को निम्न तालिका में संक्षेपित किया गया है।[4]

| समूह | उप समूह | फार्मेशन | लिथोलॉजी |
|---|---|---|---|
| | | बोल्डर कांग्लोमरेट/कालर फार्मेशन | असंगठित संगुटिकाश्म में बलुआ पत्थर (सुबाथु/दगशाई/कसौली/नाहन फार्मेशन), जैस्पर, डोलोमाइट, चूना पत्थर (सुबाथु फार्मेशन का कोक्विना चूना पत्थर भी), क्वार्टजाइट और मिट्टी से लेकर गाददार मैट्रिक्स में रखे गए दुर्लभ ग्रेनाइट–नाइस के कंकड़, पत्थर और बोल्डर माप के गुटिकाश्म शामिल; पीले, नारंगी रंजकता और क्लेस्टोन के लेंटिकुलर परत के साथ |

| | | | |
|---|---|---|---|
| शिवालिक समूह | ऊपरी शिवालिक उप समूह | पिंजोर फार्मेशन | कॉम्पैक्ट, अच्छी तरह से सीमेंटेड (कैल्केरियस), क्लास्ट समर्थित समूह, जिसमें बलुआ पत्थर (सुबाथू/दगशाई / कसौली संरचनाएं), क्वार्टजाइट, जैस्पर और कभी–कभी डोलोमाइट/चूना पत्थर के टुकड़े शामिल होते हैं, जो एक एरेनेसियस मैट्रिक्स में रखे जाते हैं, (क्लास्ट–मैट्रिक्स अनुपात 70: 30 या अधिक) भूरे से बफ, मध्यम दाने वाले बलुआ पत्थर के 20 सेमी से 2 मीटर मोटे परतों के साथ जुड़े हुए हैं।मिट्टी के रंग की बालू जैसा भूरा, बारीक दाने वाला, सूक्ष्म, स्थानीय रूप से किरकिराध्कंकड़युक्त बलुआ पत्थर और विभिन्न प्रकार का मिट्टी का पत्थर |
| | | तट्रोट फार्मेशन | भूरे, मध्यम दानेदार, सूक्ष्म, स्थानीय रूप से कंकड़ वाले बलुआ पत्थर और विभिन्न प्रकार के सिल्टस्टोन – क्लेस्टोन के 1 से 2 मीटर मोटे परतों का वैकल्पिक क्रम। बलुआ पत्थर में कैलकेरियस बलुआ पत्थर के असंबद्ध परत होते हैं जो बाल और पिलो संरचनाओं के साथ |
| | मध्य शिवालिक उप समूह | ढोक पठान फार्मेशन | विशाल, बहुमंजिला, धूसर, मध्यम से मोटा, भुरभुरा, नमक और काली मिर्च की बनावट वाला बलुआ पत्थर जिसमें विभिन्न प्रकार के सिल्टस्टोन – क्लेस्टोन की पतली परते |
| | | नागरी फार्मेशन | भूरे, महीन से मध्यम दाने वाले बलुआ पत्थर और भूरे मिट्टी के पत्थर की 1 से 2 मीटर मोटी परतों का वैकल्पिक अनुक्रम |
| | निम्न शिवालिक उप समूह | नाहन फार्मेशन | भूरा सफेद – बफ, कठोर, बफ के पतले अंतर परत के साथ बलुआ पत्थर,मिट्टी जैसा भूरा, लाल और बैंगनी क्लेस्टोन, सिल्टस्टोन और इंट्राफॉर्मेशनल गुटिकाश्म |
| इओसीन – ओलिगोसीन काल की सिरमौर/धर्मशाला समूह (उप हिमालय) | | | |

3. **निम्न शिवालिक उपसमूह (नाहन फार्मेशन)**– मुख्यतः, निम्न शिवालिक स्तर में महीन से मध्यम दाने वाले, कभी–कभी कंकड़युक्त और लाल भूरे, गांठदार मिट्टी के पत्थर और सिल्टस्टोन के विकल्प हैं। मध्य शिवालिक में मध्यम से मोटे दाने वाले बलुआ पत्थर, कंकड़ युक्त अधीनस्थ क्लेस्टोन और शीर्ष की ओर छोटे समूहीकृत बैंड शामिल हैं, जबकि ऊपरी शिवालिक अनुक्रम मुख्य रूप से छोटे बलुआ पत्थर और मिट्टी के बफ और भूरे मिट्टी के पत्थर[7] के साथ समूहित हैं। इसमें भूरे रंग का, ठोस और सघन, महीन दाने वाला, सूक्ष्म, पतले से लेकर मोटे परत वाला, ढीला, लेमिनेटेड (**चित्र–1**) और कभी–कभार इंट्राफॉर्मेशनल कॉन्ग्लोमरेट लेंस के साथ क्रॉस परत दार बलुआ पत्थर शामिल है। यह सिल्टस्टोन चॉकलेट रंग का, पतले परतों वाला एवं रिपल क्रॉस लैमिनेटेड है। इनके साथ के मडस्टोन भुरभुरा, धब्बेदार, गांठदार होता है, इसमें कंक्रिशन, नोड्यूल और कैल्केरेट्स होते हैं और बायोटर्बेशन को भी दर्शाता है। इस उपसमूह के बलुआ पत्थरों में छिटपुट क्वार्टजाइट कंकड़ भी पाए गए है जिनके आधार पर वर्तमान अध्ययन क्षेत्र की बेसिन परिधि से निकटता भी दर्शित होती है।

4. **मध्य शिवालिक उप–समूहः** इस उप समूह को मुख्यता दो फार्मेशन में बांटा गया है जो कि निम्नवत है–

4.1 **नागरी फार्मेशन ≡ देवल फार्मेशन :**

चित्र–1: निम्न शिवालिक के नाहन फार्मेशन का बलुआ पत्थर

मध्य शिवालिक उप–समूह की निचली इकाई विशिष्ट दोहरावदार परिष्करण चक्रों (चित्र–2) को प्रदर्शित करती है जहाँ प्रत्येक चक्र इंट्राफॉर्मेशनल समूह से प्रारम्भ होता है जिसके बाद बलुआ पत्थर, सिल्टस्टोन और क्लेस्टोन के साथ समाप्त होता है। इसमें घनी परत वाले, मध्यम से मोटे दाने वाले, भूरे, मध्यम कॉम्पेक्ट बलुआ पत्थर शामिल हैं, जिनके आधार पर स्पष्ट इंट्राफॉर्मेशनल कांग्लोमरेट (आईएफसी) लेंटिकुलर बैंड हैं और ईंट के रंग के सिल्टस्टोन और भुरभुरे लाल–भूरे रंग के गांठदार क्लेस्टोन से ढके हुए हैं।

4.2 **ढोक पठान फार्मेशन ≡ मोहरगढ़ फार्मेशन**– नागरी संरचना के साथ एक स्तरित जुड़ाव के साथ ढोक पठान फार्मेशन की बलुआ पत्थर की चट्टानें मौजूद है। यह चट्टानें तुलनात्मक रूप से कम टिकाऊ, मुख्य रूप से बहुमंजिला (चित्र–3) मध्यम से मोटे दाने वाले, हरे से राख भूरे रंग के, मोटे आधार वाले अभ्रक बलुआ पत्थर और अपेक्षाकृत कम मात्रा में पतले परत दार बैंगनी/खाकी अभ्रक कठोर कैल्केरीकृत सिल्टस्टोन और हल्के खाकी–हरे मिट्टी के पत्थर शामिल हैं। इन बलुआ पत्थर में मुख्य रूप से क्वार्टजाइट के एक्स्ट्राबेसिनल क्लास्ट अधिक पाए जाते हैं।

चित्र–2: नागरी फार्मेशन में बलुआ पत्थर, सिल्टस्टोन और क्लेस्टोन की चक्रीय संरचना

चित्र–3: ढोक पठान फार्मेशन का बहुमंजिला बलुआ पत्थर

5. **ऊपरी शिवालिक उप–समूह:** इस उप समूह को मुख्यतया तीन फार्मेशन में बांटा गया है जो कि निम्नवत है–

5.1 **तट्रोट फॉर्मेशन**– इस वर्ग में मुख्य रूप से बलुआ पत्थर के साथ स्तरित वैकल्पिक क्रम में मडस्टोन (सिल्टमिट्टी) की चट्टानें पायी गई है। यहाँ विभिन्न प्रकार के ग्रे–धूसर अभ्रक मिश्रित बलुआ पत्थर (कंक्रीशन के साथ) के साथ धूसर से लेकर लाल मिट्टी के रंग की लगभग समान मोटाई का पॉलीराइक्लिक क्रम में मड/सिल्ट स्टोन (चित्र–4) की चट्टानें है। इसके प्रत्येक चक्र के शुरुआती क्रम में मध्यम दाने वाले बलुआ पत्थर से शुरू होकर गाद और अंततः चिकनी मिट्टी (क्लेस्टोन) की विभिन्न रंग की चट्टानें है। इस क्ले स्टोन की ऊपरी परत का क्षितिज शीर्ष पर अपरदन सतह (erosional surface) को दर्शाता है जिसके ऊपर अगला चक्र जमा होता है। कुछ स्थानों पर यह अंतराल क्षेत्र लेटराइटिक पैलियोसोल का विकास भी दर्शाता है। इस वर्ग के कुछ स्थानों पर बाल एवं पिलो संरचना (चित्र–5) पायी जाती है।

चित्र–4: ग्रे बलुआ पत्थर और विभिन्न प्रकार के क्लेस्टोन/सिल्टस्टोन के 1 से 2 मीटर परतों का वैकल्पिक क्रम – तट्रोट फार्मेशन

चित्र–5: बाल एवं पिलो संरचना, तट्रोट फार्मेशन

5.2 **पिंजोर फार्मेशन**– इस वर्ग की चट्टानें कॉम्पैक्ट, अच्छी तरह से सीमेंटेड (कैल्केरियस), क्लास्ट समर्थित गुटिकाश्म (कांगलोमेरेट), (**चित्र–6, अ एवं ब**) जिसमें बलुआ पत्थर (सुबाथू / दगशाई / कसौली फॉर्मेशन), क्वार्टजाइट, जैस्पर और कभी–कभी डोलोमाइट / चूना पत्थर (शाली समूह) के टुकडे शामिल होते हैं, जो एक एरेनेसियस मैट्रिक्स में के साथ पाए जाते हैं। इनका क्लास्ट–मैट्रिक्स अनुपात 70:30 या अधिक होता है। जिनमे भूरे से धूसर रंग के, मध्यम दाने वाले बलुआ पत्थर के 20 सेमी से 2 मीटर मोटे परतों के साथ जुड़े हुए हैं। इन परतों के बीच बीच में मिट्टी जैसा भूरा, बारीक दाने वाला, सूक्ष्म, स्थानीय रूप से किरकिरा / कंकड़युक्त बलुआ पत्थर और विभिन्न प्रकार का क्ले स्टोन भी पाया जाता है।

**चित्र–6 अ एवं ब:** पिंजौर फार्मेशन का सीमेंटेड क्लास्ट समर्थित गुटिकाश्म (कांगलोमेरेट), एवं किरकिरा/कंकड़ युक्त बलुआ पत्थर

5.3 **बोल्डर कांगलोमेरेट फार्मेशन**– इन चट्टानों में मुख्य रूप से क्वार्टजाइट युक्त बैंगनी बलुआ पत्थर और असंगठित बोल्डर कांगलोमेरेट जिसमे आर्गिलेसियस मैट्रिक्स के साथ नारंगी मडस्टोन के लेंसोइड्स पाए जाते है। इसके बीच–बीच में भी भूरे अभ्रक मिश्रित बलुआ पत्थर (क्षेत्रीय मैट्रिक्स) के संगुटिकाश्म होते हैं। इनके बीच में किरकिरा बलुआ पत्थर: कभी–कभी क्वार्टजाइट कंकड़ के साथ बलुआ पत्थर (**चित्र–7**) जोकि मिट्टी जैसा भूरा–धूसर मडस्टोन: (गादमिट्टी) और मुख्य रूप से: बैंगनी और खाकी बलुआ पत्थर के उप–गोल, लगभग 1 मीटर तक के खंड बोल्डर (**चित्र–8**) के रूप में पाए जाते है। कुछ स्थानों पर इसमें भी कोक्विना चूना पत्थर, ग्रे अभ्रक बलुआ पत्थर और इंट्राफॉर्मेशनल समूह और कभी–कभी क्वार्टजाइट के क्लासट भी दर्शित होते है।

**चित्र–7:** आर्गिलेसियस मैट्रिक्स के साथ नारंगी मडरटोन एवं कांगलोमेरेट

**चित्र–8:** लगभग 1 मीटर माप के खंड बोल्डर के साथ बोल्डर कांगलोमेरेट फार्मेशन

6. **शिवालिक समूह की जलीय प्रणाली की व्याख्या और प्रवाह व्यवस्था**– उपरोक्त विवर्णीत विभिन्न वर्गों में देखी गई विभिन्नताएँ और उनकी व्याख्याओं के अनुसार इनके जलीय प्रणाली की व्याख्या और प्रवाह व्यवस्था को समझने एवं इनके वर्गीकरण[7] का प्रयास किया गया, जो कि निम्नानुसार है–

| क्रम संख्या | प्रमुख चट्टानी इकाइयाँ | लिथो–फेसीज | विवरण | जलीय प्रणाली की व्याख्या और प्रवाह व्यवस्था | उपसमूह / फार्मेशन |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 | Conglomerate | Gms, Gm | Massive Gravels, Crude-bedded Gravel | Debris flow deposits | Conglomerate |
| 2 | Pebbly conglomerate-2 | Gp | Matrix supported Gravel | Minor deltaic growth, | Pinjore Formation |
| 3 | Gritty sandstone with pebbles-2 | sp,st | Planar and Trough cross-stratified sandstone | Lower flow regime in fluvial system | Pinjore Formation |
| 4 | Massive sandstone without pebbles | sh | Planar beds without cross stratification. | Upper flow regime in fluvial system, | Pinjore Formation |
| 5 | Pebble bed/gravel bed-1 | Gp | Matrix supported gravels | Lower flow regime in fluvial system | Pinjore Formation |
| 6 | Alternate sandstone& mudstone-2 | Sh and Fm | Sh-plane beds, Fm-Massive mud/silt-stone | Sh(<1.2 m/sec) And Fm (over bank deposits) | Tatrot Formation |
| 7 | Gritty sandstone with pebbles-1 | sp, st | Stratified sand beds | Upper flow regime in fluvial system | Tatrot Formation |
| 8 | Alternate very thick sandstone & thin mudstone-1 | Sh and Fl | Sh-plane beds, Fl-laminated mud/silt-stone | Upper flow regime in fluvial system | Dhok Pathan Formation |
| 9 | Massive sandstone with few pebbles and minor mudstone | Sh | Stratified sand sheets | Upper flow regime in fluvial system | Nagri Formation |
| 10 | Alternate sandstone with minor mudstone | Sh and Fl | Stratified sand laminated mudstone | Upper flow regime in fluvial system | Nahan Formation |

7. **शिवालिक श्रृंखला का विवर्तिकी–स्तरीकृत (टेक्टोनो स्ट्रैटिग्राफिक) वितरण**– भारतीय और यूरेशियन प्लेटों के उत्तर की ओर चल रहे अभिसरण (4–5 सेमी/वर्ष) और, हिमालय के साथ विरूपण मोर्चों के उत्तरोत्तर दक्षिण की ओर खिसकने के कारण, मुख्य सीमा जोर के बीच ललाट/उप–हिमालय की तह–थ्रस्ट बेल्ट (एमबीटी) और हिमालयन फ्रंटल थ्रस्ट (एचएफटी) नियोटेक्टोनिक या सक्रिय टेक्टॉनिक अध्ययन के लिए आदर्श भूभाग है। कई वैज्ञानिकों ने फ्रंटल हिमालय बेल्ट को पार करने वाले इन क्षेत्रीय, अनुदैर्ध्य और अनुप्रस्थ / क्रॉस दोषों के साथ नियोटेक्टोनिक गतिविधियों के अप्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष प्रमाणों की अपने–अपने प्रकार से व्याख्या की है।

हरियाणा राज्य के काल अम्ब एवं निकटवर्ती क्षेत्रों में दक्षिण में इंडो–गंगा जलोढ़ तलछट के नदीय मैदानों से उत्तर की ओर शिवालिक श्रृंखला से होते हुए मुख्य सीमा भ्रंश (एमबीएफ) एवं उसके आगे सिरमौर / धर्मशाला समूह की चट्टानी इकाइयों का विवर्तिकी–स्तरीकृत (टेक्टोनो स्ट्रेटिग्राफिक) वितरण निम्नवत है–

| | | | |
|---|---|---|---|
| सिरमौर धर्मशाला समूह | सुबाथु फार्मेशन | भूरा, हरा, खाकी, स्प्लिंटरी शेल और अधीनस्थ चूना पत्थर के साथ बलुआ पत्थर | इओसीन |
| मुख्य सीमा भ्रंश (एमबीएफ) | | | |
| निम्न शिवालिक उप समूह | नाहन फार्मेशन | लाल से चमकीला भूरा, मध्यम से बारीक दाने वाला, विशाल, सूक्ष्म बलुआ पत्थर और सिल्टस्टोन जो लाल और बैंगनी मिट्टी से जुड़े हुए हैं। | निम्न मायोसीन से मध्य मायोसीन |
| नाहन थ्रस्ट (एन टी) | | | |
| ऊपरी शिवालिक उप समूह | बोल्डर कांग्लोमरेट/कालर फार्मेशन | मिट्टी से लेकर नारंगी रंग के सिल्टस्टोन और क्लेस्टोन से घिरा हुआ समूह। | प्लीस्टोसीन |
| | पिंजोर फार्मेशन | अधीनस्थ बलुआ पत्थर, सिल्टस्टोन और गुलाबी से हल्के भूरे रंग के क्लेस्टोन के साथ कंकड़ समूह। | ऊपरी प्लायोसीन से निम्न प्लीस्टोसीन |
| | तट्रोट फार्मेशन | भूरे, चमचमाते सफेद और लाल भूरे बलुआ पत्थर और विभिन्न प्रकार के सिल्टस्टोन और/या क्लेस्टोन बैंड का वैकल्पिक क्रम | मध्य प्लायोसीन |
| मध्य शिवालिक उप समूह | ढोक पठान फार्मेशन | हरा भूरा से भूरा मध्यम दानेदार, विशाल, पीला और खाकी बलुआ पत्थर, नमक और काली मिर्च की बनावट को दर्शाता है। | निम्न प्लायोसीन |
| | नागरी फार्मेशन | भूरे से भूरे रंग का, मध्यम दाने वाला बलुआ पत्थर जिसमें भूरे–काले रंग का सिल्टस्टोन और मडस्टोन लगभग बराबर अनुपात में होता है। | ऊपरी मायोसीन |
| हिमालयन फ्रंटल थ्रस्ट भ्रंश (एचएफ टी /एफ) | | | |
| इंडो – गंगा जलोढ़ तलछट | | | अभिनव युग |

इसके अतिरिक्त कार्य क्षेत्र में नव–विवर्तिकीय गतिविधियों को पोवलगढ़, रामनगर और उसके आसपास एचएफटी प्रणाली और संबंधित थ्रस्ट (जैसे कोसी टीयर, गंगा टीयर, यमुना टीयर, काला–अंब टीयर, घग्गर टीयर, रोपड़ टीयर आदि) के साथ कालागढ़, मोहंड, पंचकुला, रोपड़, सहन खड्ड, और इंदपुर–डमटाल क्षेत्र में भी रिपोर्ट किया गया है। कुछ अन्य स्थानों सहित इन स्थानों पर, पुरानी चट्टानें नवविवर्तनिक रूप से सक्रिय भ्रंश खंडों के साथ नई चट्टानों या चतुर्धातुक तलछटों पर चढ़ी हुई पायी गई हैं। इसी क्रम में अध्ययन क्षेत्र में अवस्थित खेतपुराली गाँव के पास में हिमालयन फ्रंटल थ्रस्ट (चित्र–**9 अ एवं ब**) भी नाले के अंदर उजागर है। यह क्षेत्र, हरियाणा के पंचकुला की ओर काला अंब से लगभग 20 किमी पश्चिम में स्थित है। यहाँ पर ऊपरी शिवालिक (टैट्रोट फार्मेशन की चट्टानें विवर्तनिक रूप से इंडो–गंगा जलोढ़ तलछट के ऊपर चढ़ी हुई है, जो कि हिमालयी फ्रंटल थ्रस्ट (एचएफटी) के साथ नियोटेक्टोनिक गतिविधि का प्रमाण देता है।

चित्र–9 अ एवं ब: हरियाणा के पंचकुला जनपद के खेतपुराली गाँव के पास हिमालयी फ्रंटल थ्रस्ट (एचएफटी) में नव–विवर्तनिकी के प्रमाण

**References**


1. Barry, J.C., Lindsay, E.H., Jacobs, L.L. (1982) A biostratigraphic zonation of the middle and upper Siwaliks of the Potwar Plateau of northern Pakistan. Palaeogeogr. Palaeoclimatol. Palaeoecol. 37, pp. 95–130.
2. Karunakaran, C. and Ranga Rao, A. (1976) Status of exploration for hydrocarbons in the Himalayan region – contributions to stratigraphy and structure: Him. Geol. Seminar, Geol. Surv. India, Misc. Publ., v. 41, pp. 1–67.
3. Kumar, Rajinder, Hemant Kumar and Wahi, S. (2010) Delineation of the lithostratigraphic units of Siwalik belt in parts of Haryana, Punjab and Himachal Pradesh. Unpub. Rep. Geol. Surv. India. (F.S. 2008-09 & 2009-10).
4. Kumar, Rajinder, Hemant Kumar, Vineeta Rawat, and Reenu Joshi (2012) Delineation of lithostratigraphic units of Siwalik Belt in North-western Haryana and adjoining parts of Punjab and Himachal Pradesh (Toposheet Nos. 53B/9, B/13, B/14, 53F/1 and F/2) Unpublish Report, Geol. Surv. India, (F.S. 2010-12).
5. Miall, A. D. (2006) The Geology of Fluvial Deposits Deposits, Sedimentary Facies, Basin Analysis, and Petroleum Geology, 4th Edition, Springer, p. 582.
6. Pilgrim, G.E. (1910) Preliminary note on a revised classification of the Tertiary freshwater deposits of India. Rec. Geol. Surv. India, v. 40, pp. 165 – 209.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 15-19
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.3
SJIF (2025) : 8.749

शोध पत्र

# Geological and Chemical Classification of the rocks of the Bundelkhand Granitoid Complex

Apoorve Bhardwaj, Priyanka Chamyal Rana, Dharmendra Bharti and Hemant Kumar
Geological Survey of India, Lucknow-226 024, UP, India
apoorve.bhardwaj@gsi.gov.in

**Received: 10-09-2025, Accepted: 28-10-2025**

**Abstract**- The Bundelkhand Granitoid Complex exposes three variants of the granites namely, pink, porphyritic granite, pink medium grained granite and greyish-white, medium to coarse grained granite. Based on modal distribution of specific minerals (K-feldspar, plagioclase feldspar and quartz) they all fall in the category of syenogranites as per IUGS nomenclature. Detailed petrological and chemical examination of these rocks has been attempted to understand their origin, the nature of the parent magma and the associated mineralization process.

**Key words**- Geological(IUGS) and chemical classification of the rocks, Bundelkhand Granitoid Complex (BGC)

# बुंदेलखंड ग्रैनिटाइड काम्प्लेक्स की चट्टानों का भूवैज्ञानिक एवं रासायनिक वर्गीकरण

अपूर्व भारद्वाज, प्रियंका चम्याल राणा, धर्मेन्द्र भारती एवं हेमंत कुमार
भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण, लखनऊ–226 024, उ0प्र0, भारत
apoorve.bhardwaj@gsi.gov.in

**सार**– बुंदेलखंड ग्रेनाइटॉइड कॉम्प्लेक्स में मुख्यतः तीन प्रकार के ग्रेनाइट पाए जाते हैं– गुलाबी, पोर्फिरीटिक ग्रेनाइट, गुलाबी, मध्यम दाने वाला ग्रेनाइट और धूसर–सफेद, मध्यम से मोटे दाने वाला ग्रेनाइट। विशिष्ट खनिजों (K–फेल्डस्पार, प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार और क्वार्ट्ज) के मॉडल वितरण के आधार पर, ये सभी IUGS वर्गीकरण के अनुसार साइनोग्रेनाइट की श्रेणी में आते हैं। वर्तमान अध्ययन में इन चट्टानों की विस्तृत शैल वैज्ञानिक और रासायनिक जांच करके उनकी उत्पत्ति, मूल मैग्मा की प्रकृति और संबंधित खनिजीकरण प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया गया है।

**बीज शब्द**– चट्टानों का भूवैज्ञानिक (IUGS) एवं रासायनिक वर्गीकरण, बुंदेलखंड ग्रैनिटॉइड काम्प्लेक्स(बी.सी.जी.)

**1. परिचय**– उत्तर–मध्य भारत में स्थित बुंदेलखंड ग्रेनाइटॉइड कॉम्प्लेक्स (BGC), भारतीय कवच (shield) का एक प्रमुख भाग है जो आर्कियन–पैलियोप्रोटेरोजोइक युग से संबंधित भारतीय उपमहाद्वीप के सबसे पुराने महाद्वीपीय नाभिकों में से एक का प्रतिनिधित्व करता है। यह भूभाग मध्य भारत में लगभग 26,000 वर्ग किमी क्षेत्र में फैला है और 24°11' उत्तर – 26°27' उत्तर और 78°10' पूर्व – 81°24' पूर्व के निर्देशांकों के बीच स्थित है। क्रेटन अपने पश्चिमी, पूर्वी और दक्षिणी किनारों को पैलियोप्रोटेरोजोइक (2.2 -1.8 Ga) युग, विंध्य तलछटी अनुक्रमों के साथ साझा करता है, जबकि इसका उत्तरी किनारा सिंधु–गंगा के मैदानों से घिरा है। क्रेटन पश्चिम में ग्रेट बाउंड्री फॉल्ट (GBF) द्वारा अरावली–राजस्थान बेल्ट से अलग होता है।[1-3] भौगोलिक दृष्टि से, बुंदेलखंड पर्वतमाला का अधिकांश क्षेत्र ग्रेनाइट की विभिन्न रूपों से आच्छादित है। यह अम्लीय मैग्माटिज्म ने पूर्ववर्ती भूवैज्ञानिक अभिलेखों को लगभग नष्ट कर दिया है। ये ग्रेनाइट पुरा–आर्कियन से लेकर मध्य–आर्कियन युग के, अत्यधिक विकृत TTG नीस और सुपराक्रस्टल इकाइयों में भी परिलक्षित हैं। इन सुपराक्रस्टल चट्टानों में मुख्यतः बैंडेड आयरन फॉर्मेशन (BIF), इंटर–बेडेड क्वार्टजाइट्स, कैल्क–सिलिकेट नीस, कोमाटाइटिक से मिलती–जुलती अल्ट्रामैफिक चट्टानें, एम्फीबोलाइट्स, पिलो बेसाल्ट और ज्वालामुखीय तलछटों का प्रभुत्व है।

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण की मानचित्रण परियोजना द्वारा अध्ययन क्षेत्र ललितपुर जनपद, उत्तर प्रदेश तथा टीकमगढ़ जनपद, मध्य प्रदेश के कुछ स्थानों जैसे सोजना नचनवारा, समर्रा करमारई मडूमार तथा गुदनवारा के आसपास अनावृत ग्रेनाइट चट्टानों को अध्ययन किया गया (**चित्र–1**)। वर्तमान कार्य ग्रेनाइटों के IUGS वर्गीकरण के अध्ययन पर केंद्रित जो पूर्णतः एक मात्रात्मक खनिज वर्गीकरण है, जिन्हें पहले ग्रेनाइट के रंग और बनावट के आधार पर वर्गीकृत किया गया था। IUGS वर्गीकरण मुख्य रूप से आग्नेय चट्टानों के खनिज पर आधारित है, विशेष रूप से ग्रेनाइट चट्टानों में पाए जाने वाले K–फेल्डस्पार, प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार और क्वार्ट्ज खनिजों के बहुलिकी वितरण (modal distribution) से सम्बंधित है। आग्नेय चट्टानों को उनके वास्तविक खनिज अंशों (आयतन प्रतिशत में मापी गई) के आधार पर वर्गीकृत और नामित किया जाता है।

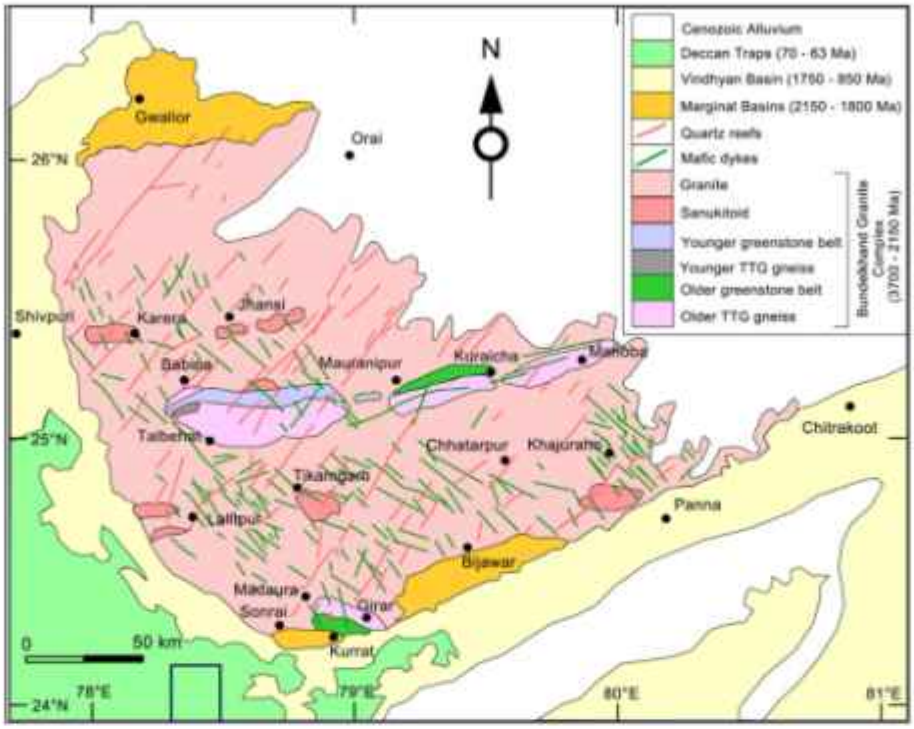


चित्र–1: बुंदेलखंड ग्रेनाइटॉइड कॉम्प्लेक्स का मानचित्र, कई स्रोतों से संकलित एवं संशोधित, अध्ययन क्षेत्र को काले बॉक्स से दर्शाया हुआ है।[1,*]

2. **अध्ययन क्षेत्र का भूविज्ञान**– अध्ययन क्षेत्र उत्तर प्रदेश के झांसी एवं ललितपुर जनपदों के पूर्वी भाग और टीकमगढ़ जिले के दक्षिणी–पश्चिमी भाग में स्थित है। बुंदेलखंड ग्रेनाइटॉइड कॉम्प्लेक्स में नीस, शिस्ट, क्वार्टजाइट, ग्रेनोडायोराइट, ग्रेनाइट, क्वार्ट्ज रीफ और मैफिक डाइक का एक समूह है। अध्ययन क्षेत्र का अधिकांश भाग ग्रेनाइट की विभिन्न प्रकारों से आच्छादित है।[1,3,4,8,9] अध्ययन क्षेत्र में, तीन प्रकार के ग्रेनाइटॉइड, छोटे–छोटे पृथक टीलों और चादरनुमा चट्टानों के रूप में मौजूद है– 1. गुलाबी, पोर्फिरीटिक ग्रेनाइट, जो सोजना क्षेत्र के पास विस्तारित है एवं असमान कणिकामय, >50 mm आकार वाले K–फेल्डस्पार के फिनोक्रिस्ट से सम्बद्ध हैं। 2. गुलाबी, मध्यम दाने वाला ग्रेनाइट, जिसके दानों का आकार 1-5 mm के बीच है और 3. धूसर–सफेद, मध्यम से मोटे दाने वाला ग्रेनाइट है (**चित्र–2 से 4**)। सभी प्रकार के ग्रेनाइट, में K–फेल्डस्पार, प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार और क्वार्ट्ज मुख्यः खनिजों के अतिरिक्त क्लोराइट, एपिडोट, तथा सल्फाइड के रूप में पाइराइट खनिज भी पाए जाते है। अध्ययन क्षेत्र की सामान्यीकृत स्तरिकी **तालिका**–1 में प्रस्तुत है।

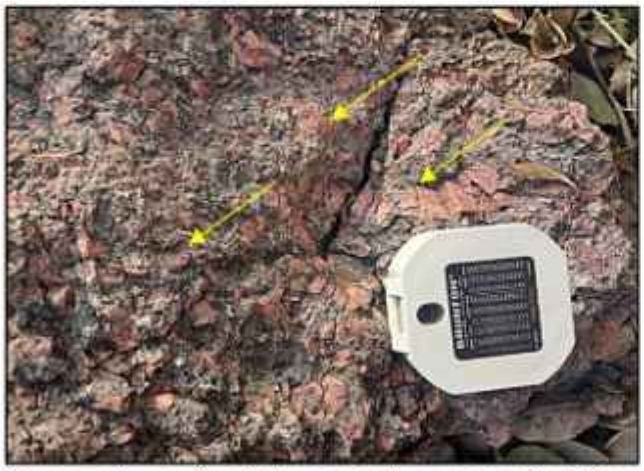

चित्र–2: सोजना गाँव के निकट K–फेल्डस्पार का फिनोक्रिस्ट दर्शाता गुलाबी, पोर्फिरीटिक ग्रेनाइट।

चित्र–3: मडूमार गाँव के निकट पर गुलाबी, मध्यम दाने वाला ग्रेनाइट का दृश्यांश।

चित्र–4: करमारई गाँव के निकट धूसर–सफेद, मध्यम से मोटे दाने वाले ग्रेनाइट का दृश्यांश

| तालिका–1: अध्ययन क्षेत्र के बुंदेलखंड ग्रेनाइटॉइड कॉम्प्लेक्स की सामान्यीकृत स्तरिकी | | |
|---|---|---|
| पैलियोप्रोटेरोजोइक–आर्कियन | बुंदेलखंड ग्रेनाइटॉइड कॉम्प्लेक्स | मैफिक डाइक |
| | | क्वार्ट्ज रीफ |
| | | ग्रेनाइट (गुलाबी, पोर्फिरीटिक ग्रेनाइट, गुलाबी, मध्यम दाने वाला ग्रेनाइट एवं धूसर–सफेद, मध्यम से मोटे दाने वाला ग्रेनाइट) |
| आर्कियन | सुप्राक्रस्टल्स | नीस, शिस्ट, क्वार्टजाइट, अन्य |

3. **कार्य प्रणाली**– अध्ययन क्षेत्र के ग्रेनाइट की स्पष्ट सतह पर प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार और K–फेल्डस्पार के विभेदन के लिए रासायनिक अभिरंजन विधि का उपयोग किया गया। अभिरंजन के लिए आवश्यक अभिकर्मकों में 52% HF, संतृप्त कोबाल्टिनाईट्रेट विलयन, 5% W/V बेरियम क्लोराइड और ऐमरैंथ डाई का उपयोग किया गया है। इस विधि में ग्रेनाइट की साफ उजागर सतह पर सर्वप्रथम 52% HF से सतह में उपस्थित खनिजो को खरोंच देते है, फिर जल से धोते है, तत्पश्चात् इस सतह पर संतृप्त कोबाल्टिनाईट्रेट विलयन का उपयोग करते है, जो K–फेल्डस्पार को पीला रंग प्रदान करता है, कुछ क्षणों बाद इस सतह को पुनः जल से साफ करते है। अब इस सतह पर 5% W/V बेरियम क्लोराइड का उपयोग करते है ताकि अतिरिक्त कोबाल्टिनाईट्रेट को सतह से हटाया जाये तथा सतह को पुनः जल से साफ करके ऐमरैंथ डाई डालते हैं ताकि सतह पर विद्यमान प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार, लाल से गुलाबी रंग प्राप्त कर ले एवं सतह को फिर जल से साफ करके सूखने हेतु छोड़ देते हैं। ग्रेनाइट सतह पर रासायनिक अभिरंजन के उपयोग के बाद, K–फेल्डस्पार पर पीले धब्बे दिखाई देते हैं, प्लेजियोक्लेज पर गुलाबी से लाल धब्बे दिखाई देते हैं, जबकि क्वार्ट्ज पर कोई धब्बे नहीं पड़ते। सतह की प्रत्येक पीले, गुलाबी से लाल और बिना धब्बे वाले कण को क्रमशः K–फेल्डस्पार, प्लेजियोक्लेज और क्वार्ट्ज के कणों को 10 cm X 10 cm ट्रेसिंग शीट की सहायता आरेखित करके गिना जाता है (चित्र–5)।

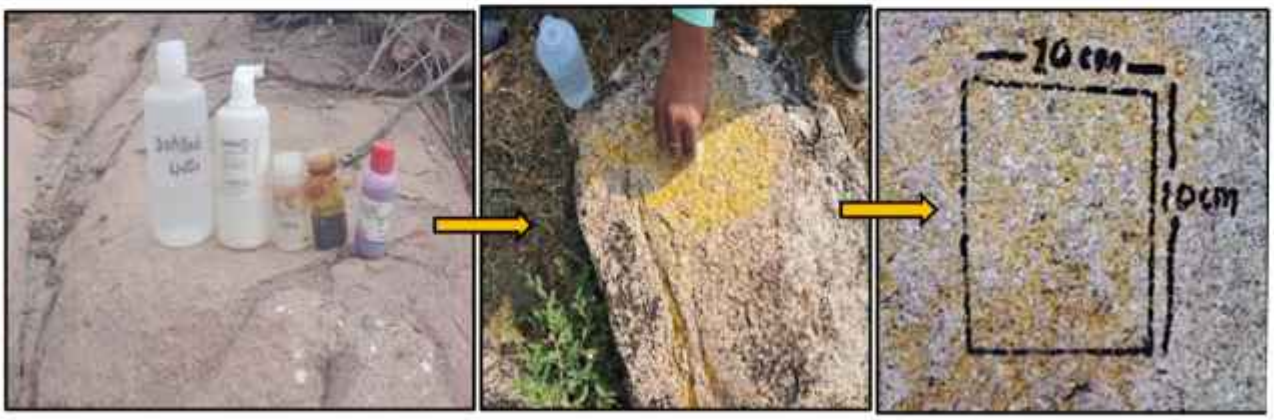

चित्र–5: अध्ययन क्षेत्र में ग्रेनाइट का बहुलिकी विश्लेषण सायनिक अभिरंजन विधि द्वारा

4. **विचार और निष्कर्ष**– अध्ययन क्षेत्र में गुलाबी, मध्यम दाने वाला ग्रेनाइट में कुल 401 कणों में से, K–फेल्डस्पार के 218 कण (52%), प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार के 78 कण (19%) और क्वार्ट्ज के 105 कण (29%) गिने गए। इसी प्रकार से धूसर–सफेद, मध्यम से मोटे दाने वाला ग्रेनाइट में कुल 524 कणों में से K–फेल्डस्पार के 310 कण (59%), प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार के 88 कण (16%) और क्वार्ट्ज के 126 कण (25%) एवं गुलाबी, पोर्फिरीटिक ग्रेनाइट के 59 कणों में से K–फेल्डस्पार के 31 कण (52%), प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार के 11 कण (18 %) और क्वार्ट्ज के 17 कण (27%) गिने गए। IUGS वर्गीकरण में क्वार्ट्ज % को Q, K–फेल्डस्पार % को A तथा प्लेजियोक्लेज फेल्डस्पार % को P से दर्शाया जाता है तथा अभिरंजन द्वारा प्राप्त A, P तथा Q, कणों के प्रतिशतो को IUGS वर्गीकरण आरेख में दर्शाते हैं।

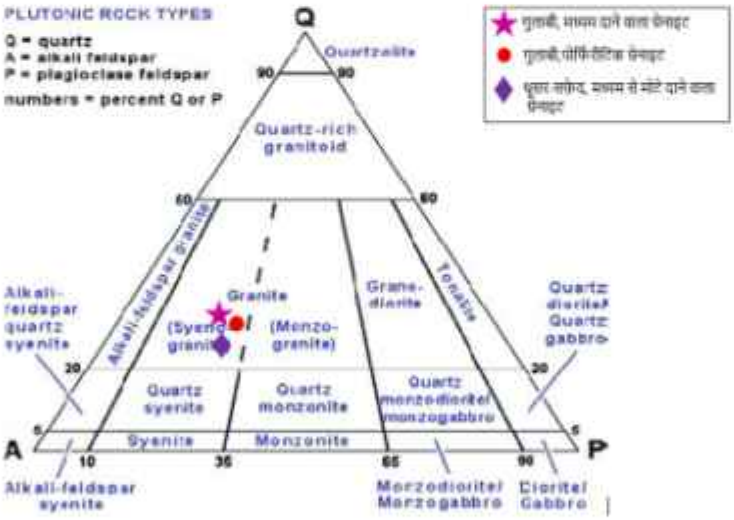


चित्र–6: अध्ययन क्षेत्र के ग्रेनाइटो का IUGS वर्गीकरण[19]

इन ग्रेनाइट की चट्टानों में IUGS वर्गीकरण के अनुसार K–फेल्डस्पार (A) प्लेजियोक्लेज (P), तथा सिलिका (Q) कणों का प्रतिशत अंकित किया गया है, जिससे पता चलता है कि अध्ययन क्षेत्र में उपस्थित तीनो प्रकार के अनावृत ग्रेनाइट साइनोग्रेनाइट्स के अंतर्गत आते हैं। इसी प्रकार से अध्ययन क्षेत्र की चट्टानों के व्यवहार को समझने के लिए विभिन्न भू–रासायनिक आरेखों का उपयोग करके फेल्सिक प्रकृति की सभी मैग्मैटिक चट्टानों का अध्ययन किया गया एवं इनके भू–रासायनिक परिणामों को आलेखित किया गया। द्विचर आरेख, फेल्सिक चट्टानों का स्थान और समय में आनुवंशिक मैग्मा संबंध दर्शाते हैं। $SiO_2$ में वृद्धि के साथ MgO और FeO में कमी, शीतलन द्रव से प्रारंभिक रूप से बनने वाले मैफिक खनिजों और प्लेजियोक्लेज के निष्कासन के अनुरूप है। A/CNK&A/NK आरेख (चित्र-7) दर्शाता है कि क्षेत्र की चट्टानें धात्विक से परालुमिनस में परिवर्तित हो रही हैं। नमूनों के रासायनिक विश्लेषण से Na, Sr, Nd के प्रतिशत में वृद्धि

और Cr व Ni के निम्न मानों से संकेत मिलता है कि वे I–प्रकार के ग्रेनाइट हैं। इसी प्रकार, दुर्बल परात्युमिनस में परिवर्तन के कारण चट्टानों के कुछ नमूनों में $SiO_2$, K, Ga, Y और Ce की मात्रा सामान्यतः अधिक है, जो उन्हें A–प्रकार के ग्रेनाइटॉइड होने का संकेत देता है, जो गैर–ओरोजेनिक स्थितियों intrusion का संकेत देता है।

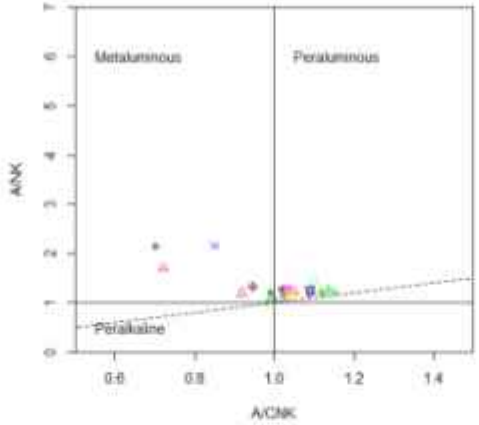


चित्र–7: फेल्सिक चट्टानों के A/CNK बनाम A/NK का भू–रासायनिक आरेख[7]

इस प्रकार ग्रेनाइट में, कणो के आकार, आकृति, वितरण और रासायनिक संरचना के अतिरिक्त अन्य मापदंडों जैसे दुर्लभ पृथ्वी तत्वों की उपस्थिति के आधार पर ग्रेनाइट के वर्गीकरण से संबंधित रासायनिक परिणामों के आधार पर मुख्य रूप से दुर्लभ मृदा खनिजों (REE) लैंथेनम, सेरियम और लैंथेनाइड श्रृंखला के नियोडिनियम की उच्च सांद्रता की उपस्थिति को दर्शाता है। इसी प्रकार, बेरियम, रुबिडियम, स्ट्रोंटियम और जिरकोनियम जैसे तत्वों की उपस्थिति, महाद्वीपीय क्रस्ट क्षेत्र के भीतर होने वाली मैग्मैटिक उत्पत्ति का प्रतिनिधित्व करती है। K–फेल्डस्पार समृद्ध ग्रेनाइट तथा साइनोग्रेनाइट्स द्वारा बनी हुई मृदा में दुर्लभ मृदा तत्वों का संकेन्द्रण पाया जाता है जो की आर्थिक एवं तकनीकी द्रष्टिकोण से अत्यंत महत्त्व रखते है।

**References**


1. Basu, A.K. (1986) Geology of parts of Bundelkhand Granite Massif, Central India, Rec. Geol. Surv. Ind, Vol. 117, Pt-2, pp 86-124.
2. Kumar, G., Kumar,S and Keewook, Yi (2020): Three distinct Archean crustal growth events as recorded from 3.48 Ga migmatite, 2.70 Ga leucogranite, and 2.54 Ga alkali granite in the Bundelkhand Craton, Central India. Journal of Asian Earth Sciences. Volume 219
4. Mondal, M.E.A., Goswami, J.N., Deomurari, M.P. and Sharma, K.K. (2002) Ion microprobe 207Pb/206Pb ages of zircons from the Bundelkhand massif, northern India: implications for crustal evolution of the Bundelkhnad-Aravalli Protocontinent. Precambrian Res., v.117, pp.85-100.
5. Pati, et al., 2007, Geology and geochemistry of giant quartz veins from the Bundelkhand Craton, central India and their implications. Journal of Earth System Sciences, v. 116, pp. 497 510.
6. Pati, J.K. and Singh, A.K. 2020. Bundelkhand Craton.Proc. Indian Natl. Sci. Acad., 86 (2020), pp. 55-65
7. Sarkar A, Trivedi J R, Gopalan K, Singh P N, Das A K and Paul D K 1984 Rb–Sr geochronology of Bundelkhandgranitic complex in the Jhansi–Babina–Talbehat sector, UP, India; Indian J. Earth Sci., CEISM Seminar Volume,64–72.
8. Shand, S.J. (1943) Eruptive Rocks, Wiley, New York, 488p.
9. Sharma, K.K. (1998) Geological evolution and crustal growth ofthe Bundelkhand craton and its relicts in the surroundingregions, western Indian Shield. In: B.S. Paliwal (Ed.), Indian Precambrian. Scientific Publishers, Jodhpur, pp.33-43.
10. Singh, S.P., Singh, M.M., Srivastava, G.S. and Basu, A.K., 2007, Crustal evolution in Bundelkhand area, Central India. Journal of Himalayan Geology, v. 28, pp. 79-101.
11. Streckeisen A (1976) To each plutonic rock its proper name. Earth Sci Rev 12: 1–33.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 20-26
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.4
SJIF (2025) : 8.749

शोध पत्र

# *Ocimum sanctum L.*-Nature's Polypharmacological Shield: A Comprehensive Review of Phytochemistry, Bioactivity, and Biomedical Potential

Khushnuma Naz[1] and Pramila Pandey[2]
[1]Department of Botany, University of Lucknow-226 007, UP, India
[2]Department of Botany, B.S.N.V.P.G. College, Charbagh, Lucknow-226 001, UP, India
pramila28@gmail.com

**Received: 27-10-2025, Accepted: 10-12-2025**

**Abstract-** *Ocimum sanctum L.* (Tulsi) has gained significant scientific attention as a versatile medicinal plant with exceptional therapeutic breadth, integrating traditional ethnomedicinal wisdom with modern biomedical potential. This review provides a comprehensive synthesis of its phytochemical diversity, pharmacological activities, and mechanistic insights, emphasizing its relevance as a natural, polypharmacological defense system against contemporary diseases. Tulsi exhibits an extraordinary phytochemical repertoire comprising terpenoids, flavonoids, phenolics, alkaloids, sterols, fatty acids, and vitamins, many of which are responsible for its potent antioxidant, antimicrobial, and anti-inflammatory actions. The essential oil fraction-rich in eugenol, β-caryophyllene, and methyl eugenol-imparts remarkable pharmacodynamic efficacy through free-radical scavenging, enzyme modulation, and immune regulation. Experimental findings demonstrate strong hepatoprotective, hypolipidemic, antidiabetic, and neuroprotective effects, mediated by improved oxidative homeostasis and metabolic balance. The immunomodulatory and anticancer potential of Tulsi extracts further underscores its role in cellular protection and apoptosis regulation. Environmental and extraction-related factors, including solvent polarity and post-harvest conditions, significantly influence the metabolite profile, necessitating process standardization for reproducible outcomes. Collectively, the diverse biochemical interactions of *Ocimum sanctum* position it as a model medicinal plant for developing phytotherapeutics that complement synthetic drugs in managing oxidative, inflammatory, and degenerative disorders. Future translational research should focus on clinical validation, nanocarrier formulations, and molecular docking studies to unlock its full therapeutic potential.

**Keywords-** *Ocimum sanctum L.*; Tulsi; phytochemistry; antioxidant activity; immunomodulatory; hepatoprotective; anti-inflammatory; anticancer; bioactive metabolites; traditional medicine; drug discovery.

# ओसीमम सैंक्टम एल.- प्रकृति का बहुऔषधीय कवचः पादप रसायन, जैवसक्रियता और जैवचिकित्सा क्षमता की एक व्यापक समीक्षा

खुशनुमा नाज[1] एवं प्रमिला पांडे[2]
[1]वनस्पति विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
[2]वनस्पति विज्ञान विभाग, बी.एस.एन.वी. पी.जी. कॉलेज, लखनऊ–226 001, उ0प्र0, भारत
pramila28@gmail.com

**सार**– ओसीमम सैंक्टम एल. (तुलसी) ने असाधारण चिकित्सीय व्यापकता वाले एक बहुमुखी औषधीय पौधे के रूप में महत्वपूर्ण वैज्ञानिक ध्यान आकर्षित किया है, जो पारंपरिक नृजातीय औषधीय ज्ञान को आधुनिक जैवचिकित्सा क्षमता के साथ एकीकृत करता है। यह समीक्षा इसकी पादप रासायनिक विविधता, औषधीय गतिविधियों और यांत्रिक अंतर्दृष्टि का एक व्यापक संश्लेषण प्रदान करती है, जो समकालीन रोगों के विरुद्ध एक प्राकृतिक, बहुऔषधीय रक्षा प्रणाली के रूप में इसकी प्रासंगिकता पर बल देती है। तुलसी में टेरपेनॉइड्स, फ्लेवोनॉइड्स, फेनोलिक्स, एल्कलॉइड्स, स्टेरोल्स, फैटी एसिड्स और विटामिन्स का एक असाधारण फाइटोकेमिकल संग्रह होता है, जिनमें से कई इसके शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट, एंटीमाइक्रोबियल और सूजन–रोधी गुणों के लिए प्रभावी हैं। यूजेनॉल, β–कैरियोफिलीन और मिथाइल यूजेनॉल से भरपूर इसका आवश्यक तेल अंश, मुक्त–मूलक अपमार्जन, एंजाइम मॉड्यूलेशन और प्रतिरक्षा विनियमन के माध्यम से उल्लेखनीय औषधीय प्रभावकारिता प्रदान करता है। प्रायोगिक निष्कर्ष श्रेष्ठतर ऑक्सीडेटिव होमियोस्टेसिस और चयापचय संतुलन द्वारा मध्यस्थता वाले मजबूत यकृत–सुरक्षात्मक, लिपिड–कम करने वाले, मधुमेह–रोधी और तंत्रिका–सुरक्षात्मक प्रभावों को प्रदर्शित करते हैं। तुलसी के अर्क की प्रतिरक्षा–नियंत्रक और कैंसर–रोधी क्षमता कोशिकीय सुरक्षा और एपोप्टोसिस विनियमन में इसकी भूमिका को और भी रेखांकित करती है। पर्यावरणीय और निष्कर्षण–संबंधी कारक, जिनमें विलायक ध्रुवता और कटाई–पश्चात की स्थितियाँ सम्मिलित हैं, मेटाबोलाइट प्रोफाइल को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं, जिससे पुनरुत्पादित परिणामों के लिए प्रक्रिया मानकीकरण आवश्यक हो जाता है। कुल मिलाकर, ओसीमम सैंक्टम की विविध जैव–रासायनिक अंतःक्रियाएँ इसे ऑक्सीडेटिव, सूजन और अपक्षयी विकारों के प्रबंधन में सिंथेटिक दवाओं के पूरक फाइटोथेरेप्यूटिक्स विकसित करने के लिए एक आदर्श औषधीय पौधे के रूप में स्थापित करती हैं। भविष्य के अनुवादात्मक अनुसंधान को इसकी पूर्ण चिकित्सीय क्षमता को उजागर करने के लिए नैदानिक सत्यापन,

नैनोकैरियर फॉर्मूलेशन और आणविक डॉकिंग अध्ययनों पर केंद्रित होना चाहिए।

**बीज शब्द**– ओसीमम सैंक्टम एल., तुलसी, फाइटोकेमिस्ट्री, एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि, इम्यूनोमॉड्यूलेटरी, हेपेटोप्रोटेक्टिव, सूजनरोधी, कैंसररोधी, जैवसक्रिय मेटाबोलाइट्स, पारंपरिक चिकित्सा, औषधि खोज

1. **परिचय**– इक्कीसवीं सदी में चिकित्सा विज्ञान में हुई विशिष्ट प्रगति के बावजूद, समकालीन रोग उपचार के प्रति प्रायः असंगत दृष्टिकोण, समकालीन समाज को ग्रसित करने वाले रोगाणुओं के अत्यधिक तेजी से होने वाले उत्परिवर्तन के कारण, लगातार बढ़ रहे बहुऔषधि प्रतिरोध और अप्रभावी चिकित्सा के समूह को नियंत्रित करने में विफल रहा है।[1] दुनिया भर में स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के समाधान के लिए, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने पारंपरिक चिकित्सा और पारंपरिक स्वास्थ्य प्रणालियों को समकालीन चिकित्सा उपचारों के साथ एकीकृत करने की सलाह दी है।[2] ओसीमम सैंक्टम एल. (OS), जिसे पवित्र तुलसी या तुलसी भी कहा जाता है, को लंबे समय से हर्बल चिकित्सा के पारंपरिक उपयोग के मुख्य आधारों में से एक माना जाता है। यह एशिया, अफ्रीका और मध्य व दक्षिण अमेरिका के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों का मूल निवासी है।[3] 30 से 60 सेमी की ऊँचाई तक बढ़ने वाला, यह सुगंधित पौधा सीधा, बारहमासी होता है और इसका तना लाल या बैंगनी रंग का उप–चतुर्भुजाकार रोएँदार होता है। प्रजातियों के आधार पर, पत्तियों के आकार और आकृतियाँ अलग–अलग होती हैं। पत्तियों के किनारे पूरे या दाँतेदार, दाँतेदार और नुकीले होते हैं और ये सरल, विपरीत, अण्डाकार, आयताकार, कुंद या नुकीले हो सकते हैं। हरी पत्तियों में हल्का तीखा और सुगंधित स्वाद होता है और ये 5 सेमी तक ऊँची हो सकती हैं। छोटे फूल एक ही बेलनाकार स्पाइक के घने गुच्छों में समूहित होते हैं और गुलाबी से बैंगनी रंग के होते हैं। काष्ठीय, शाखाओं वाले, रोएँदार, शाकीय, सीधे और चतुर्भुजाकार सूखे तने होते हैं। जड़ मुलायम, रेशेदार, शाखाओं वाली, रोएँदार, बाहर से हरे–भूरे रंग की और अंदर से हल्के काले रंग की होती है। गोल से अंडाकार आकार के, बीज 0.1 सेमी लंबे, भूरे रंग के, तीखे स्वाद वाले और गंधहीन होते हैं।[4] विभिन्न प्रकार की बीमारियों, जैसे खांसी, अस्थमा, अतिसार, बुखार, पेचिश, गठिया, नेत्र रोग, ओटिटिस, अपच, हिचकी, उल्टी, जठरीय, हृदय और जननांग संबंधी विकार, पीठ दर्द, त्वचा रोग, दाद, कीड़े, सांप और बिच्छू के काटने और मलेरिया के लिए तुलसी के पत्तों, तने, फूल, जड़, बीज और यहां तक कि पूरे पौधे का उपयोग करके उपचार करने की सलाह दी गई है।[7,12,21]

| Taxonomic Position of *Ocimum sanctum* (Tulsi) |
|---|
| Kingdom: Plantae |
| Subkingdom: Trascobionta |
| Superdivision: Spermatophyta |
| Division: Magnoliophyta |
| Class: Magnoliopsida |
| Subclass: Asteridae |
| Order: Lamiales |
| Family: Lamiaceae |
| Genus: *Ocimum* |
| Species: sanctum |

2. **पादप रसायन**– ओसीमम सैंक्टम (तुलसी) पादप की रासायनिक मानावली उल्लेखनीय रूप से विविध है, जिसमें चिकित्सीय और पोषण संबंधी महत्व वाले जैवसक्रिय उपापचयजों की एक विस्तृत श्रृंखला निहित है। इन घटकों की सांद्रता और संरचना कई पर्यावरणीय और कृषि संबंधी कारकों से अत्यधिक प्रभावित होती है, जिनमें मिट्टी की विशेषताएँ, वर्षा, आर्द्रता, तापमान, कटाई की अवधि और कटाई के बाद की देखभाल और भंडारण की स्थितियाँ शामिल हैं।'प्रारंभिक पादप रासायनिक वि लेशणों से प्राथमिक और द्वितीयक उपापचयजों की एक विस्तृत श्रृंखला की उपस्थिति स्पष्ट हुई है, जैसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, लिपिड, टेरपेनोइड्स (विशेष रूप से वाष्पशील तेल), एल्कलॉइड्स, ग्लाइकोसाइड्स, फ्लेवोनोइड्स, सैपोनिन्स और टैनिन।[4] तुलसी अपनी पोषण संरचना के लिए भी प्रसिद्ध है, जिसमें इसकी ताजी पत्तियों में लगभग 37% प्रोटीन और अमीनो एसिड, 25% लिपिड और फैटी एसिड, 27% कार्बोहाइड्रेट, 10% खनिज और 1% विटामिन शामिल हैं।[3,18] पत्तियों के तत्व विश्लेषण से कार्बन (42%), हाइड्रोजन (9.4%), ऑक्सीजन (51%), नाइट्रोजन (7.4%), और सल्फर (0.7%) जैसे आवश्यक तत्वों की उपस्थिति का संकेत मिलता है।[19] तुलसी के सबसे महत्वपूर्ण पादप अवयवों(फाइटोकॉन्स्टिट्यूएंट्स) में से एक इसका वाष्पशील (आवश्यक) तेल है, जो इसकी विशिष्ट सुगंध में योगदान देता है। पत्तियों से लगभग 0.7% (v/w) तेल प्राप्त होता है, जिसमें कई टेरपेनोइड्स और फेनोलिक यौगिक शामिल होते हैं, जिनमें (E)–β–ओसीमीन, β–कैरियोफिलीन, β–पिनीन और यूजेनॉल (67.4–72. 8%)प्रमुख घटक होते हैं, साथ ही 1,8–सिनेओल, एस्ट्रागोल, β–बिसाबोलीन, (Z)–α–बिसाबोलीन, कैम्फेन, (E)–α–बर्गमोटीन, जर्मेक्रीन डी, चौविकोल, α–कैरियोफिलीन और मिथाइल यूजेनॉल भी होते हैं।[20]आवश्यक तेल अंश में कई अतिरिक्त यौगिकों की भी पहचान की गई है, जिनमें रोजमैरिनिक एसिड, मिथाइल सिनामेट, बोर्नियोल एसीटेट, फार्नेसिल अल्कोहल, β–यूडेसमेन, फाइटोल, β–एलेमीन, α–बिसाबोलोल, ह्यूमुलीन ऑक्साइड और मिरिस्टैल्डिहाइड आदि शामिल हैं[4,17,27,28]। ये यौगिक मुख्य रूप से पौधे की रोगाणुरोधी,

एंटीऑक्सीडेंट और सूजनरोधी गतिविधियों के लिए प्रभावी हैं।

तुलसी के पत्ते कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम, फास्फोरस, पोटेशियम, सोडियम और जिंक जैसे आवश्यक खनिजों का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं, यद्यपि ताजे और सूखे रूपों में इनकी सांद्रता भिन्न होती है।[31] मैंगनीज, तांबा, मोलिब्डेनम, निकल, लिथियम, क्रोमियम, सीसा, आर्सेनिक और पारा जैसी भारी धातुओं की भी सूक्ष्म मात्रा पाई गई है।[13] ओ. सैंक्टम के बीजों से निकाले गए स्थिर तेल में मुख्य रूप से असंतृप्त वसा अम्ल होते हैं, जिनमें (9Z,12Z)–ऑक्टाडेका–9,12–डायनोइक एसिड (लिनोलिक एसिड), (9Z,12Z,15Z)–ऑक्टाडेका–9,12,15–ट्राइएनोइक एसिड (लिनोलेनिक एसिड), एलेडिक एसिड, ओलिक एसिड, पामिटिक एसिड और स्टीयरिडोनिक एसिड शामिल हैं। लिनोलिक और लिनोलेनिक एसिड से प्राप्त ओमेगा–6 (द–6) और ओमेगा–3 (द–3) फैटी एसिड कोशिका झिल्ली के रखरखाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और प्रोस्टाग्लैंडीन, थ्रोम्बोक्सेन और ल्यूकोट्रिएन के अग्रदूत के रूप में कार्य करते हैं, जिससे कई शारीरिक मार्ग प्रभावित होते हैं।[5] ओसीमम सैंक्टम विटामिनों का भी एक समृद्ध भंडार है, जिनमें रेटिनॉल (A), एस्कॉर्बिक एसिड (C), थायमिन ($B_1$), राइबोफ्लेविन ($B_2$), नियासिन ($B_3$), पाइरिडोक्सिन ($B_6$), फोलिक एसिड, सायनोकोबालामिन ($B_{12}$), टोकोफेरोल (E), कैल्सिफेरोल (D), और फाइलोक्विनोन (K) निहित हैं।[22] ये सूक्ष्म पोषक तत्व सामूहिक रूप से प्रतिरक्षा विनियमन, एंटीऑक्सीडेंट रक्षा और कार्सिनोजेनिक क्षति के विरुद्ध कोशिकीय सुरक्षा में योगदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, तुलसी के पत्ते फेनोलिक यौगिकों और फ्लेवोनोइड्स से समृद्ध होते हैं, जैसे ओरिएंटिन, विसेनिन, वैनिलिन, उर्सोलिक एसिड, गैलिक एसिड, वैनिलिक एसिड, एपिजेनिन, ल्यूटोलिन, मोलडिस्टिन, और कई ग्लाइकोसिलेटेड डेरिवेटिव जिनमें 4–एलिल–1–O–β–D–ग्लूकोपाइरानोसिल–2– हाइड्रॉक्सीबेन्जीन और 4–एलिल–1–O–β–D–ग्लूकोपाइरानोसिल मेथॉक्सीबेन्जीन सम्मिलित हैं।[34] तुलसी के पत्तों और हवाई भागों के अल्कोहलिक अर्क में अतिरिक्त फाइटोकेमिकल्स जैसे रिटग्मारट्रोल, ट्रायकोन्टानॉल फेरुलेट, आइसोओरिएंटिन, विटेक्सिन, आइसोविटेक्सिन, एरक्युलेक्टिन, क्लोरोजेनिक एसिड, गैल्यूटोलिन, सिरसिनोल, प्रोटोकैटेच्यूइक एसिड, 4–हाइड्रॉक्सीबेन्जॉइक एसिड, और पाए गए हैं। β–सिटोस्टेरॉल, 2,6,33 इन यौगिकों की सहक्रियात्मक उपस्थिति ओ. सैंक्टम की एक एडाप्टोजेनिक, हेपेटोप्रोटेक्टिव, एंटी–इंफ्लेमेटरी और एंटीऑक्सीडेंट जड़ी बूटी के रूप में बहुआयामी औषधीय प्रासंगिकता को मजबूत करती है।

ओसीमम सैंक्टम के प्रमुख फाइटोकेमिकल घटक और उनका जैविक महत्व

| फाइटोकेमिकल वर्ग | प्रमुख घटक | निष्कर्षण प्रकार स्रोत | रिपोर्ट की गई जैविक भूमिका | संदर्भ |
|---|---|---|---|---|
| प्राथमिक मेटाबोलाइट्स | कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, लिपिड, अमीनो एसिड, फैटी एसिड, खनिज, विटामिन | ताजी पत्तियाँ, बीज का तेल | पोषण संतुलन, ऊर्जा चयापचय, संरचनात्मक अखंडता | 1,3,18 |
| वाष्पशील (आवश्यक) तेल | यूजेनॉल(67–73%), β–कैरिओफिलीन, (E)–β–ओसीमीन, β–पाइनीन, 1,8–सिनेओल, एस्ट ागोल, मिथाइल यूजेन ॉल, कैम्फेन, जर्मेक्रीनडी, α–बर्गामोटीन | पत्ती का तेल(0.7%) | एंटीऑक्सीडेंट, रोगाणुरोधी, सूजनरोधी, सुगंधित गुण शक्तिशाली | 4,20,28 |
| फेनोलिक यौगिक | रोजमेरिनिक एसिड, गैलिक एसिड, वैनिलिक एसिड, प्रोटोकैटेच्यूइक एसिड, क्लोरोजेनिक एसिड, मिथाइलसिनामेट | हवाई भाग, एथेनॉलिक और मेथनॉलिक अर्क | एंटीऑक्सीडेंट, कैंसर रोधी, सूजनरोधी | 6,17,33 |
| फ्लेवोनोइड्स | ओरिएंटिन, विसेनिन, ल्यूटोलिन, एपिजेनिन, एपिजेनिन–7–ओ–ग्लुकुरोनाइड, आइसोविटेक्सिन, विटेक्सिन, आइसोरिएंटिन, मोलुडिस्टिन | पत्ती और हवाई भाग के अर्क (अल्कोहलिक और जलीय) | मुक्त कणों का निराकरण, तनावरोधी, यकृत–सुरक्षात्मक, अनुकूली | 2,34,22 |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| ट्राइटरपीन्स और स्टेरोल्स | उर्सोलिक एसिड, β–सिटोस्टेरॉल, स्टिग्मास्टेर ॉल, α–अमोर्फीन, ट्रायकोन्टानॉलफेरुलेट | पत्ती और तने के अर्क | अल्सररोधी, सूजनरोधी, हृदय–सुरक्षात्मक, यकृत–सुरक्षात्मक कोशिका झिल्लियों का रखरखाव, | 6,27 |
| वसा अम्ल (स्थिर तेल) | लिनोलिक एसिड ( C18:2, n–6), लिनोलेनिक एसिड (C18:3, n–3), ओलिक एसिड, पामिटिक एसिड, एलाइडिक एसिड, स्टीयरिडोनिक एसिड | बीज का तेल | कोशिका झिल्लियों का रखरखाव, प्रोस्टाग्लैंडीन और ल्यूकोट्रिएन का अग्रदूत | 5 |
| खनिज और सूक्ष्म तत्व | Ca, Fe, Mg, P, K, Na, Zn; trace Mn, Cu, Mo, Ni. Li. Cr, Pb, As, Hg | तजी और सूखी पत्तियाँ | एंजाइमी सहकारक, ऑक्सीजन परिवहन, विषहरण | 13,32 |
| विटामिन | रेटिनॉल , एस्कॉर्बिक एसिड , थायमिन , राइबोफ्लेविन , नियासिन , पाइरिडोक्सिन , फोलिक एसिड,साइनोकोबालामिन, टोकोफेरोल, कैल्सिफेरोल, फाइलोक्विनोन | पत्ती का अर्क | एंटीऑक्सीडेंट रक्षा, प्रतिरक्षा विनियमन, कोशिकीय सुरक्षा | 22 |
| अन्य सुगंधित यौगिक | β–यूडेसमीन, β–एलीमीन, फाइटोल, फार्नेसिलअल्कोहल, α–बिसाबोलोल, ह्यूमुलीनऑक्साइड, मायर इस्टैल्डिहाइड | आवश्यक तेल अंश | रोगाणुरोधी, कवकरोधी, तनाव–राहत सुगंध प्रोफाइल | 4,28 |

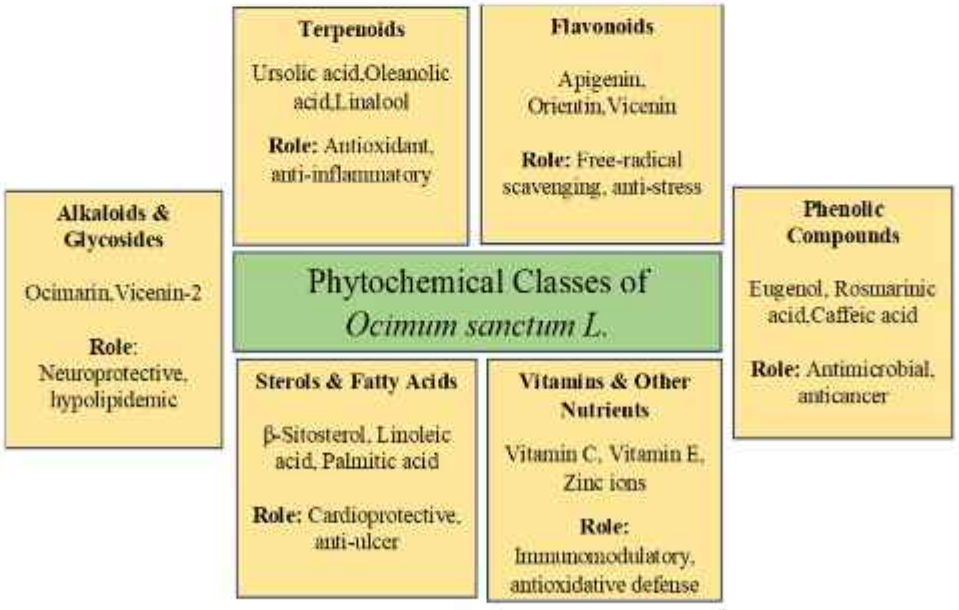


चित्र–1: ओसीमम सैंक्टम एल. में पादप अवयव (फाइटोकॉन्स्टिट्यूएंट्स) का वर्गीकरण और उनकी जैविक भूमिकाएँ

**ओसीमम सैंक्टम अर्क की औषधीय और जैविक गतिविधियाँ**– ओसीमम सैंक्टम (तुलसी) से प्राप्त विभिन्न विलायक अर्क ने विविध जैवसक्रिय क्रियाविधि के माध्यम से व्यापक औषधीय क्षमता प्रदर्शित की है। जलीय, एथेनॉलिक, मेथनॉलिक और पेट्रोलियम ईथर विलायकों का उपयोग करके तैयार किए गए अर्क – जो मैसेरेशन, रिफ्लक्स, सॉक्सलेट, शीत निष्कर्षण और अंतःसरण विधियों द्वारा प्राप्त किए जाते हैं– विभिन्न परीक्षणों में उल्लेखनीय जैविक और चिकित्सीय प्रभावकारिता प्रदर्शित करते हैं।

**एंटी–ऑक्सीडेंट गतिविधि**– सूचित जैवसंक्रियताओं में, ओसीमम सैंक्टम अर्क में महत्वपूर्ण एंटीऑक्सीडेंट क्षमता होती है। जलीय अर्क ने हाइड्रॉक्सिल रेडिकल्स को प्रभावी ढंग से हटा दिया और डीऑक्सीराइबोज अपघटन को लगभग 77.1% तक बाधित कर दिया, जिससे ऑक्सीडेटिव क्षति को कम करने की इसकी क्षमता प्रदर्शित होती है। अर्क की अर्ध–अधिकतम निरोधक सांद्रता ($IC_{50}$) 39516.2 g/mL थी, जो इसकी प्रबल रेडिकल–शमन क्षमता की पुष्टि करती है और ऑक्सीडेटिव तनाव–संबंधी तंत्रिका संबंधी विकारों में इसके चिकित्सीय लाभ को दर्शित करती है।[9]

**रोगाणुरोधी और सूजनरोधी गतिविधियाँ**– एथेनॉलिक अर्क (5–10% w/v) ने शक्तिशाली रोगाणुरोधी प्रभाव प्रदर्शित किए, जिससे एग्रीगेटिबैक्टर एक्टिनोमाइसीटमकोमिटन्स की वृद्धि का स्पष्ट रूप से दमन हुआ–जो मानक एंटीबायोटिक डॉक्सीसाइक्लिन के बराबर है। इसी प्रकार, अर्क में उल्लेखनीय सूजन–रोधी क्षमता देखी गई, जिससे कैरेजेनन–प्रेरित पंजा शोफ मॉडल में सोडियम सैलिसिलेट के तुलनीय परिणाम प्राप्त हुए, जो सूजन–रोधी मध्यस्थों के निषेध का संकेत देते हैं।[10,18]

**हाइपोलिपिडेमिक और हेपेटोप्रोटेक्टिव प्रभाव**– सॉक्सलेट और मैसेरेशन तकनीकों के माध्यम से प्राप्त अर्क में हाइपोलिपिडेमिक गतिविधि प्रदर्शित हुई, जो एलडीएल–कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड्स के कम सीरम स्तर और ग्लूटाथियोन की बढ़ी हुई सांद्रता से परिलक्षित होती है। ये जैव रासायनिक मॉड्यूलेशन लिपिड चयापचय विनियमन और ऑक्सीडेटिव रक्षा वृद्धि का संकेत देते हैं। यकृतसंरक्षी(हेपेटोप्रोटेक्टिव) अध्ययनों में, अर्क के प्रशासन के परिणामस्वरूप यकृत एंजाइम के स्तर का सामान्यीकरण और एल्ब्यूमिन–से–ग्लोब्युलिन अनुपात में उल्लेखनीय सुधार हुआ, जिसका अर्थ है विषाक्त आघात के बाद यकृत कार्य की पुर्नक्षमता।[14,23]

**प्रतिरक्षा–अनुशंसनीय क्षमता**– ओसीमम सैंक्टम अर्क की प्रतिरक्षा–अनुशंसनीय प्रभावकारिता की पुष्टि विडाल और भेड़ एरिथ्रोसाइट एग्लूटिनेशन परख, दोनों में बढ़े हुए एंटीबॉडी टाइटर्स के माध्यम से की गई। इसके अतिरिक्त, बढ़े हुए लिम्फोसाइटोसिस और ई–रोसेट गठन ने ह्यूमरल और कोशिकीय प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं, दोनों की उत्तेजना का संकेत दिया, जो एक प्रभावी प्रतिरक्षा सहायक के रूप में इसकी भूमिका को रेखांकित करता है।[11]

**तंत्रिका–सुरक्षात्मक और तनाव–रोधी गतिविधि**– प्रायोगिक परिणामों से शक्तिशाली तंत्रिका–सुरक्षात्मक और तनाव–रोधी गुणों का पता चला, जो मुख्य रूप से अर्क के एंटीऑक्सीडेंट तंत्र के कारण हैं। ऑक्सीडेटिव क्षति को कम करके और न्यूरोनल लचीलेपन को बढ़ाकर, ओसीमम सैंक्टम अर्क न्यूरोडीजेनेरेटिव और तनाव–प्रेरित विकारों को रोकने में मदद कर सकता है।[30]

**मधुमेह–रोधी और अल्सर–रोधी गतिविधियाँ**– जलीय और एथेनॉलिक अर्क ने नॉर्मोग्लाइसेमिक और मधुमेह दोनों मॉडलों में रक्त शर्करा के स्तर को उल्लेखनीय रूप से कम कर दिया – क्रमशः 204.4811.0 से 131.437.86 मिलीग्राम/डीएल और 73.543.7 से 61.442.3 मिलीग्राम/डीएल – जो प्रभावी ग्लाइसेमिक नियंत्रण का संकेत देता है। इसके अलावा, अल्सर–रोधी परीक्षणों ने गैस्ट्रिक अम्ल स्राव (3.200. 28 मिली/100 ग्राम) के पर्याप्त अवरोध को प्रदर्शित किया, जिसका श्रेय एस्पिरिन–प्रेरित अल्सर मॉडल में इसके 5–लिपोक्सीजिनेज निरोधात्मक प्रभाव को दिया जा सकता है।[16,29]

**कैंसर–रोधी गुण**– 100 मिलीग्राम/मिलीलीटर की सांद्रता पर, ओसीमम सैंक्टम के इथेनॉलिक अर्क ने स्पष्ट साइटोटोक्सिक प्रभाव प्रदर्शित किए और A549 मानव फेफड़े के कार्सिनोमा कोशिकाओं में एपोप्टोसिस को प्रेरित किया। ये निष्कर्ष एपोप्टोसिस–मध्यस्थ मार्गों के माध्यम से एक प्राकृतिक कैंसर–रोधी एजेंट के रूप में इसकी क्षमता का समर्थन करते हैं।[31] कुल मिलाकर, ओसीमम सैंक्टम औषधीय गुणों की एक उल्लेखनीय श्रृंखला प्रदर्शित करता है–जिसमें एंटीऑक्सीडेंट, रोगाणुरोधी, हाइपोलिपिडेमिक, हेपेटोप्रोटेक्टिव, इम्यूनोमॉड्यूलेटरी, न्यूरोप्रोटेक्टिव, मधुमेह–रोधी, सूजन–रोधी, अल्सर–रोधी और कैंसर–रोधी प्रभाव शामिल हैंकृजो विलायक प्रणाली और निष्कर्षण पद्धति पर निर्भर करता है। इस तरह के निष्कर्ष एक बहुक्रियाशील चिकित्सीय पौधे के रूप में इसके उपयोग को प्रमाणित करते हैं तथा इसके जैवसक्रिय घटकों और आणविक तंत्रों पर आगे की जांच की आवश्यकता बताते हैं।

**निष्कर्ष**– ओसीमम सैंक्टम एल. पारंपरिक हर्बल ज्ञान और समकालीन औषधीय विज्ञान के अभिसरण का उदाहरण है। इस पौधे का बहुआयामी फाइटोकेमिकल मैट्रिक्स–जिसमें टेरपेनॉइड्स, फेनोलिक्स, फ्लेवोनोइड्स, फैटी एसिड, स्टेरोल्स और विटामिन निहित हैं। जो इसे एक बहु–लक्ष्य औषधीय कवच के रूप में कार्य करने की अद्वितीय क्षमता प्रदान करता है। इन विट्रो और इन विवो के आकर्षक आंकड़े इसके एंटीऑक्सीडेंट, रोगाणुरोधी, यकृत–सुरक्षात्मक और मधुमेह–रोधी प्रभावों को प्रमाणित करते हैं, और इसके दीर्घकालिक

नृवंश–औषधीय उपयोग के लिए एक मजबूत वैज्ञानिक आधार स्थापित करते हैं। इन गतिविधियों के अंतर्निहित जैविक तंत्र काफी हद तक सहक्रियात्मक फाइटोकंस्टिट्यूएंट अंतःक्रियाओं पर निर्भर करते हैं, जो ऑक्सीडेटिव संतुलन, सूजन संबंधी मार्गों और कोशिकीय संकेतन कैस्केड को नियंत्रित करते हैं। फिर भी, आशाजनक चिकित्सीय अंतर्दृष्टि के बावजूद, मानकीकरण, फार्माकोकाइनेटिक प्रोफाइलिंग और नैदानिक खुराक अनुकूलन में महत्वपूर्ण शोध अंतराल बने हुए हैं। प्रयोगशाला निष्कर्षों को साक्ष्य–आधारित चिकित्सा में रूपांतरित करने के लिए अंतःविषयक दृष्टिकोणों के माध्यम से इन अंतरालों को पाटना महत्वपूर्ण होगा। ओ. सैंक्टम की जैवरासायनिक समृद्धि और सुरक्षा प्रोफाइल वैश्विक एकीकृत चिकित्सा ढाँचों में एक अनुकूलनीय फाइटोफार्मास्युटिकल एजेंट के रूप में इसकी भूमिका की पुष्टि करती है।

**भविष्य की संभावनाएँ**– ओसीमम सैंक्टम पर भविष्य के शोध में यूजेनॉल, उर्सोलिक एसिड और रोजमैरिनिक एसिड जैसे प्रमुख जैवसक्रिय पदार्थों के जैवसंश्लेषण मार्गों को समझने के लिए ओमिक्स–संचालित अन्वेषणों–मेटाबोलोमिक्स, ट्रांसक्रिप्टोमिक्स और प्रोटिओमिक्स–को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। आणविक डॉकिंग, क्यूएसएआर मॉडलिंग और नेटवर्क फार्माकोलॉजी जैसे कम्प्यूटेशनल दृष्टिकोणों को एकीकृत करने से आणविक स्तर पर लक्ष्य अंतःक्रियाओं और बहु–औषधीय नेटवर्क का पता लगाया जा सकता है। नैनो–प्रौद्योगिकी–सहायता प्राप्त वितरण प्रणालियाँ (जैसे, लिपोसोम, फाइटोसोम या पॉलीमेरिक नैनोकण) घुलनशीलता, जैवउपलब्धता और स्थान–विशिष्ट वितरण में सुधार करके तुलसी–आधारित चिकित्सा में क्रांति ला सकती हैं। इसके अलावा, सुपरक्रिटिकल $CO_2$, माइक्रोवेव–सहायता प्राप्त और अल्ट्रासाउंड–सहायता प्राप्त निष्कर्षण जैसी टिकाऊ हरित निष्कर्षण तकनीकों को अपनाने से उपज में वृद्धि होगी और साथ ही विलायक विषाक्तता भी कम होगी। विभिन्न आबादियों में सुरक्षा, प्रभावकारिता और खुराक की एकरूपता को प्रमाणित करने के लिए सुविचारित परीक्षणों के माध्यम से नैदानिक अनुवाद की तत्काल आवश्यकता है। नृवंशविज्ञान, जैवप्रौद्योगिकी और फार्माकोजेनोमिक्स के बीच अंतःविषय एकीकरण अनुभवजन्य उपयोग से साक्ष्य–आधारित, सटीक फाइटोमेडिसिन की ओर एक आदर्श बदलाव को सक्षम करेगा। इस प्रकार, ओ. सैंक्टम प्राकृतिक औषधि खोज के भविष्य के लिए एक रोडमैप प्रस्तुत करता है–परंपरा, प्रौद्योगिकी और अनुवादात्मक औषधि विज्ञान को जोड़ते हुए।

**References :**


1. Aggarwall, A., Mali, R., 2015. Ocimum tenuiflorum a medicinal plants with its versa tile uses. Int. J. Adv. Sci. Eng. Inf. Technol. 2, 1–10.
2. Bano, N., Ahmed, A., Tanveer, M., Khan, G.M., Ansari, M., 2017. Pharmacological evalua tion of Ocimum sanctum. J. Bioequiv. Bioavailab. 9 (3), 387–392.
3. Baseer, M., Jain, K., 2016. Review of botany, phytochemistry, pharmacology, contempo rary applications and toxicology of Ocimum sanctum. Int. J. Pharm. Life Sci. 7, 4918–4929.
4. Borah, R., Biswas, S., 2018. Tulsi (Ocimum sanctum), excellent source of phytochemi cals. Int. J. Environ. Agric. Biotechnol. 3, 1732–1738.
5. Bravo, H., Vera Cespedes, N., Zura-Bravo, L., Mu~ noz, L., 2021. Basil seeds as a novel food, source of nutrients and functional ingredients with beneficial properties: a review. Foods 10, 1467.
6. Chaudhary, A., Sharma, S., Mittal, A., Gupta, S., Dua, A., 2020. Phytochemical and antiox idant profiling of Ocimum sanctum. J. Food Sci. Technol. 57 (10), 3852–3863.
7. Cohen, M.M., 2014. Tulsi- Ocimum sanctum: a herb for all reasons. J. Ayurveda Integr. Med. 5, 251–259.
8. Corrado, G., Formisano, L., De Micco, V., Pannico, A., Giordano, M., El-Nakhel, C., Chiaiese, P., Sacchi, R., Rouphael, Y., 2020. Understanding the morpho-anatomical, physiological, and functional response of sweet basil to isosmotic nitrate to chlo ride ratios. Biology 9 (7), 158.
9. Ganasoundari, A., Uma Devi, P., Rao, M.N.A., 1997. Protection against radiation-induced chromosome damage in mouse bone marrow by Ocimum sanctum. Mutat. Res. Fundam. Mol. Mech. Mutagen. 373, 271–276.
10. Godhwani, S., Godhwani, J.L., Vyas, D.S., 1987. Ocimum sanctum: An experimental study evaluating its anti-inflammatory, analgesic and antipyretic activity in ani mals. J. Ethnopharmacol. 21, 153–163.
11. Godhwani, S., Godhwani, J.L., Was, D.S., 1988. Ocimum sanctum— a preliminary study evaluating its immunoregulatory profile in albino rats. J. Ethnopharmacol. 24, 193–198.
12. Jamshidi, N., Cohen, M.M., 2017. The clinical efficacy and safety of tulsi in humans: a systematic review of the literature. Evid. Based Complement. Altern. Med. 2017, 9217567.
13. Joseph, B., Nair, V.M., 2013. Ethanopharmacological and phytochemical aspects of Oci mumsanctumLinn-The Elixir of Life. Br. J. Pharm. Res. 3, 273–292.
14. Lahon, K., Das, S., 2011. Hepatoprotective activity of Ocimum sanctum alcoholic leaf extract against paracetamol-induced liver damage in Albino rats. Pharmacogn. Res. 3, 13–18.

15. Mahapatra, D., Sar, S., Arora, A., Nair, L., 2012. A comparative study on proximate analy sis conducted on medicinal plants of Chhattisgarh, CG, India. Res. J. Chem. Sci. 2 (9), 18–21.
16. Mallikarjun, S., Rao, A., Rajesh, G., Shenoy, R., Pai, M., 2016b. Antimicrobial efficacy of Tulsi leaf (Ocimum sanctum) extract on periodontal pathogens: an in vitro study. J. Indian Soc. Periodontol. 20, 145–150.
17. Mangal, A., Rath, C., Naik, R., Doddamani, d.s., N, S., Dixit, A.K., Vendrapati, R.R., 2021. Therapeutic exploration of medicinal plants in Yadgir District, Karnataka, India. J. Drug Res. Ayurvedic Sci. 5, 233–248.
18. Mondal, S., Mirdha, B.R., Mahapatra, S.C., 2009. The science behind sacredness of Tulsi (Ocimum sanctum Linn.). Indian J. Physiol. Pharmacol. 53, 291–306.
19. Navarrete, A., Trejo-Miranda, J.L., Reyes-Trejo, L., 2002. Principles of root bark of Hippo cratea excelsa (Hippocrataceae) with gastroprotective activity. J. Ethnopharmacol. 79, 383–388.
20. Padalia, R.C., Verma, R.S., 2011. Comparative volatile oil composition of four Ocimum species from northern India. Nat. Prod. Res. 25, 569–575.
21. Pattanayak, P., Behera, P., Das, D., Panda, S.K., 2010. Ocimum sanctum Linn. A reservoir plant for therapeutic applications: an overview. Pharmacogn. Rev. 4, 95–105.
22. Ribas, J.C., Matumoto-Pintro, P.T., Vital, A.C., Saraiva, B.R., Anjo, F.A., Alves, R.L., Santos, N.W., Machado, E., Agustinho, B.C., Zeoula, L.M., 2019. Influence of basil (Ocimum basilicum Lamiaceae) addition on functional, technological and sensorial characteristics of fresh cheeses made with organic buffalo milk. J. Food Sci. Tech nol. 56 (12), 5214–5224
23. Samak, G., Rao, M., Kedlaya, R., Vasudevan, D., 2007. Hypolipidemic efficacy of Ocimum sanctum in the prevention of Atherogenesis in male albino rabbits. Pharmacolo gyonline 2, 115–117.
24. Saranya, T., Noorjahan, C.M., Siddiqui, S.A., 2019. Phytochemical screening and antimi crobial activity of tulsi plant. Int. Res. J. Pharm. 10, 52–57.
25. Sen, S., Chakraborty, R., 2017. Revival, modernization and integration of Indian tradi tional herbal medicine in clinical practice: importance, challenges and future. J. Tradit. Complement. Med. 7, 234–244.
26. Singh, A.R., 2010. Modern medicine: towards prevention, cure, well-being and longevity Mens Sana Monogr. 8, 17–29.
27. Singh, D., Chaudhuri, P.K., 2018. A review on phytochemical and pharmacological prop erties of Holy basil (Ocimum sanctum L.). Ind. Crops Prod. 118, 367–382.
28. Siva, M., Shanmugam, K.R., Shanmugam, B., Venkata, S.G., Ravi, S., Sathyavelu, R.K., Mallikarjuna, K., 2016. Ocimum sanctum: a review on the pharmacological proper ties. Int. J. Basic Clin. Pharmacol. 5, 558–565.
29. Vats, V., Grover, J.K., Rathi, S.S., 2002. Evaluation of anti-hyperglycemic and hypoglyce mic effect of Trigonella foenum-graecum Linn, Ocimum sanctum Linn and Pterocar pus marsupium Linn in normal and alloxanized diabetic rats. J. Ethnopharmacol. 79, 95–100.
30. Venuprasad, M.P., Hemanth Kumar, K., Khanum, F., 2013. Neuroprotective effects of hydroalcoholic extract of ocimum sanctum against H2O2 induced neuronal cell damage in SH-SY5Y cells via its antioxidative defence mechanism. Neurochem. Res. 38, 2190–2200.
31. Wihadmadyatami, H., Karnati, S., Hening, P., Tjahjono, Y., Rizal, Maharjanti, F., Kusindarta, D.L., Triyono, T., Supriatno, 2019. Ethanolic extract Ocimum sanctum Linn. induces an apoptosis in human lung adenocarcinoma (A549) cells. Heliyon 5, e02772.
32. Wisdom, N., Effa, E., Jelani, F., Ishaku, G., Uwem, U., Samuel, C., 2016. Biochemical studies of ocimumsanctumandolaxsubscorpioidea leaf extracts. Br. J. Pharm. Res. 12, 1–9.
33. Xia, K., Khan, N., Perveen, N., 2018. Phytochemical analysis, antibacterial and antioxidant activity determination of Ocimum sanctum. Pharm. Pharmacol. Int. J. 6 (6), 490–507.
34. Zahran, E., Usama, Z., Abdelmohsen, U., Hany, E., Khalil, H., Yehia, S., Desoukey, S., Mostafa, A., Fouad, M., Mohamed, S., Kamel, M., 2021. Diversity, phytochemical and medicinal potential of the genus Ocimum L. (Lamiaceae). Phytochem. Rev. 19 (4), 907–953.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 27-31
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.5
SJIF (2025) : 8.749

शोध पत्र

# Social Intelligence and Innovation Capacity of Primary Teachers in the Context of National Education Policy 2020: A Conceptual Analysis

Puja Singh
Department of Education, University of Lucknow, Lucknow-226 007, U.P., India
mepujastw@gmail.com

**Received: 26-10-2025, Accepted: 20-11-2025**

**Abstract-** The *National Education Policy (NEP) 2020* marks a historic step toward reforming and restructuring the Indian education system. Under this policy, the role of a primary school teacher is no longer confined to the dissemination of textbook knowledge; rather, teachers are envisioned as mentors and facilitators of holistic student development. In this context, a teacher's *Social Intelligence* and *Innovation Capacity* play a crucial role in enhancing the quality and effectiveness of education. *Social Intelligence* encompasses a teacher's self-awareness, understanding of interpersonal relationships, empathy, and communication skills — all of which enable effective interaction with students and colleagues. Meanwhile, *Innovation Capacity* reflects a teacher's creative mindset, experimental attitude, and ability to adopt new pedagogical approaches. The study highlights that the interrelation between social intelligence and innovation capacity strengthens teachers' professional competence while fostering creativity, critical thinking, and active learning among students. Adopting a conceptual approach, the research analyzes various literary sources, policy documents, and previous academic studies. The findings clearly suggest that integrating social and innovative skills among teachers is essential to realizing the vision of the NEP 2020. If these two dimensions are prioritized in teacher training programs, they can bring about positive changes in the quality of primary education. The integrated development of social intelligence and innovation capacity can significantly contribute to achieving the objectives of the NEP 2020 and fostering holistic student development.

**Key words-** National Education Policy, Social Intelligence, Innovation Capacity, Educational Reform, Teaching Competence, Policy Implementation

# राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में प्राथमिक शिक्षकों की सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमताः एक अवधारणात्मक विश्लेषण

पूजा सिंह
शिक्षा शास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
mepujastw@gmail.com

**सार–** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन और पुनर्संरचना की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम उठाया है। इस नीति के अंतर्गत प्राथमिक स्तर पर शिक्षक की भूमिका केवल पाठ्य सामग्री के प्रसार तक सीमित नहीं रही, अपितु वे विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के मार्गदर्शक और प्रेरक बन गए हैं। इस परिप्रेक्ष्य में, शिक्षक की सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता शिक्षा की गुणवत्ता और प्रभावशीलता को बढ़ाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सामाजिक बुद्धि में शिक्षक की आत्म–जागरूकता, पारस्परिक संबंधों की समझ, सहानुभूति और संवाद कौशल सम्मिलित हैं, जो उन्हें विद्यार्थियों व सहकर्मियों के साथ प्रभावी संवाद स्थापित करने में सक्षम बनाते हैं। वहीं, नवाचार क्षमता शिक्षक के रचनात्मक दृष्टिकोण, प्रयोगशीलता और नई शिक्षण विधियों को अपनाने की योग्यता को दर्शाती है। अध्ययन यह रेखांकित करता है कि सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का पारस्परिक संबंध शिक्षक की पेशेवर दक्षता को सुदृढ़ करता है, साथ ही विद्यार्थियों में सृजनात्मकता, आलोचनात्मक चिंतन और सक्रिय अधिगम को भी प्रोत्साहित करता है। अवधारणात्मक दृष्टिकोण अपनाते हुए इस शोध में विविध साहित्यिक स्रोतों, नीति दस्तावेजों और पूर्ववर्ती शैक्षणिक अध्ययनों का विश्लेषण किया गया है। निष्कर्षतः यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा नीति 2020 की भावनाओं को साकार करने हेतु शिक्षकों में सामाजिक और नवाचारी कौशलों का समावेश अत्यंत आवश्यक है। यदि शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इन दोनों आयामों को प्रमुखता दी जाए, तो यह प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता में सकारात्मक परिवर्तन ला सकता है। संक्षेप में, यह अध्ययन न केवल नीति–निर्माताओं और शैक्षणिक संस्थानों के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत प्रदान करता है, बल्कि प्राथमिक शिक्षकों के पेशेवर विकास और शिक्षण–प्रक्रिया की गुणवत्ता सुधारने के लिए व्यावहारिक दिशा भी प्रस्तुत करता है। सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का एकीकृत विकास शिक्षा नीति 2020 के उद्देश्यों की प्राप्ति और विद्यार्थियों के समग्र विकास के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

**बीज शब्द–** राष्ट्रीय शिक्षा नीति सामाजिक बुद्धि, नवाचार क्षमता, शिक्षा परिवर्तन, शिक्षण दक्षता, नीति क्रियान्वयन

## शोध पत्र

1. **परिचय**– शिक्षा किसी भी समाज की प्रगति, स्थिरता और सामाजिक सशक्तिकरण की आधारशिला है। आधुनिक युग, जो वैश्वीकरण और तीव्र तकनीकी परिवर्तन का प्रतीक है, में शिक्षा का स्वरूप केवल अकादमिक ज्ञान तक सीमित नहीं रह गया है[1]। अब यह सामाजिक, भावनात्मक और रचनात्मक कौशलों के विकास का माध्यम बन चुकी है। इस परिप्रेक्ष्य में, प्राथमिक शिक्षक शिक्षा की नींव के निर्माता और विद्यार्थियों के समग्र विकास के प्रमुख कारक माने जाते हैं। वे न केवल ज्ञान का संप्रेषण करते हैं, बल्कि बच्चों के सामाजिक व्यवहार, नैतिक मूल्यों और व्यक्तित्व निर्माण में भी केंद्रीय भूमिका निभाते हैं[2]। भारत में शिक्षा के क्षेत्र में सुधार और नवाचार को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक ऐतिहासिक पहल के रूप में उभरी है। यह नीति शिक्षण–शिक्षक प्रणाली को अधिक समावेशी, रचनात्मक और नवाचारी दिशा में रूपांतरित करने का प्रयास करती है। इसके अंतर्गत शिक्षकों के व्यावसायिक विकास, विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक व भावनात्मक कौशलों के संवर्धन, तथा शिक्षण में प्रौद्योगिकी और नवाचार के समन्वित उपयोग पर विशेष बल दिया गया है। इस नीति के अनुसार, शिक्षक केवल ज्ञान के संवाहक नहीं हैं, बल्कि वे विद्यार्थियों में सृजनात्मक सोच, समस्या समाधान क्षमता और सामाजिक संवेदनशीलता के प्रेरक भी हैं। वर्तमान शैक्षिक परिवेश में शिक्षकों से अपेक्षा की जाती है कि वे पाठ्यपुस्तक आधारित शिक्षण से आगे बढ़कर विद्यार्थियों की सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता को विकसित करने में सक्रिय भूमिका निभाएँ। सामाजिक बुद्धि वह योग्यता है जो शिक्षक को आत्म–जागरूकता, पारस्परिक संबंधों की समझ और समूह परिस्थितियों में प्रभावी व्यवहार के लिए सक्षम बनाती है। वहीं, नवाचार क्षमता शिक्षकों की रचनात्मकता, नई शिक्षण विधियों को अपनाने की प्रवृत्ति और शैक्षणिक सुधार की दिशा में पहल करने की क्षमता को निरूपित करती है[3]। इस प्रकार, प्राथमिक शिक्षकों में सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का समन्वित विकास न केवल छात्रों की सीखने की गुणवत्ता और सहभागिता को बढ़ाता है, बल्कि शिक्षण प्रणाली को आधुनिक शैक्षणिक चुनौतियों के अनुरूप अधिक प्रभावी और सशक्त बनाता है। प्रस्तुत अध्ययन इसी दृष्टिकोण से प्राथमिक शिक्षकों की सामाजिक और नवाचारी क्षमताओं का अवधारणात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिससे नीति–निर्माताओं, शिक्षण संस्थानों और शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को सार्थक मार्गदर्शन और व्यवहारिक दिशा प्राप्त हो सके।[4]

2. **अध्ययन के उद्देश्य**– यह अवधारणात्मक अध्ययन इस विचार पर केंद्रित है कि किस प्रकार प्राथमिक शिक्षक अपनी सामाजिक बुद्धि के माध्यम से नवाचार क्षमता को विकसित कर सकते हैं तथा इसे शिक्षण प्रक्रिया में व्यावहारिक रूप से लागू कर सकते हैं।

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में शिक्षकों की भूमिका और उनकी पेशेवर दक्षता का विश्लेषण करना।
2. सामाजिक बुद्धि की अवधारणा को स्पष्ट करना।
3. शिक्षकों में नवाचार क्षमता के घटकों का विश्लेषण करना।

3. **शोध विधि**– यह शोध सामग्री विश्लेषण की शोध विधि पर आधारित है, जिसके अंतर्गत शोधकर्ता ने संकलित किए गए साक्षात्कारों, इंटरनेट स्रोतों तथा अन्य संबंधित डिजिटल माध्यमों से एकत्रित आंकड़ों का व्यवस्थित रूप से अध्ययन और व्याख्या की है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के दस्तावेजों के साथ–साथ, सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता पर उपलब्ध सैद्धांतिक और अनुभवजन्य शोध पत्रों का विश्लेषण किया गया है।

4. **संबंधित साहित्य सर्वेक्षण**– सामाजिक बुद्धि की अवधारणा का प्रारंभिक प्रतिपादन थॉर्नडाइक[5] ने किया था। उनके अनुसार, किसी व्यक्ति की सफलता केवल बौद्धिक क्षमता पर निर्भर नहीं करती, बल्कि यह उसकी दूसरों को समझने, उनसे संवाद स्थापित करने और सामूहिक रूप से कार्य करने की योग्यता पर भी आधारित होती है। यह विचार इस तथ्य को रेखांकित करता है कि मानवीय संबंधों को समझने की क्षमता भी बौद्धिकता जितनी ही आवश्यक है। सदरलैंड[6] के अध्ययन में यह पाया गया कि उच्च सामाजिक बुद्धि वाले शिक्षक अपनी कक्षा में एक सकारात्मक भावनात्मक वातावरण तैयार करते हैं। इससे विद्यार्थियों में सहभागिता की भावना, आत्मविश्वास और सीखने की प्रेरणा में उल्लेखनीय वृद्धि होती है। इसी प्रकार, रॉजर्स[7] ने नवाचार को समाज में प्रसार की एक सतत प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया, जिसके अंतर्गत शिक्षक नए विचारों, तकनीकों और शिक्षण विधियों को अपनाकर अधिगम को अधिक प्रासंगिक और प्रभावी बनाते हैं। क्रॉफर्ड[8] के अनुसार, नवाचार–प्रधान शिक्षक विद्यार्थियों को ऐसे शिक्षण अनुभव प्रदान करते हैं जो समस्या–समाधान, आलोचनात्मक चिंतन और सृजनात्मक सोच को प्रोत्साहित करते हैं। इस प्रकार, नवाचार केवल शिक्षण की तकनीक नहीं बल्कि एक दृष्टिकोण बन जाता है, जो विद्यार्थी के समग्र विकास की दिशा में सहायक होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षक को "रचनात्मक, समालोचनात्मक और संवेदनशील विचारक" के रूप में विकसित करने पर बल दिया है। यह नीति सामाजिक एवं भावनात्मक अधिगम और रचनात्मक शिक्षण दृष्टियों के एकीकरण को आवश्यक मानती है।

5. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा प्रणाली के पुनर्गठन और नवाचार की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम है। लगभग 34 वर्षों बाद लागू हुई इस नीति ने 1986/1992 की शिक्षा नीति का स्थान लेकर शिक्षा को आधुनिक युग की आवश्यकताओं– जैसे वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति और वैश्विक शैक्षिक मानकों के अनुरूप रूपांतरित करने का मार्ग प्रशस्त किया है। इस नीति का प्रमुख उद्देश्य शिक्षा को सुलभ, समावेशी, गुणवत्तापूर्ण और सृजनात्मक बनाना है, ताकि प्रत्येक विद्यार्थी अपनी संपूर्ण क्षमता का विकास कर सके और शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया में नवाचार के वाहक बनें। नीति के अंतर्गत शिक्षक की भूमिका को विशेष महत्व दिया गया है। शिक्षक अब केवल पाठ्य ज्ञान के संवाहक नहीं, बल्कि रचनात्मक, नवाचारी और सामाजिक रूप से संवेदनशील शिक्षण–पेशेवर के रूप में

परिभाषित किए गए हैं। 2020 में शिक्षक प्रशिक्षण, सतत व्यावसायिक विकास और प्रौद्योगिकी–आधारित शिक्षण को शिक्षा की गुणवत्ता सुधार का मूल आधार माना गया है। नीति यह भी रेखांकित करती है कि शिक्षक, अपनी सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता के माध्यम से, विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को अधिक समग्र, प्रेरणादायक और अनुभवात्मक बना सकते हैं। इसके अतिरिक्त, नीति शिक्षा में नवाचार और सृजनात्मकता को प्रोत्साहन देने पर बल देती है। इसमें परियोजना–आधारित शिक्षण प्रौद्योगिकी के एकीकृत उपयोग, तथा शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों के लिए रचनात्मक गतिविधियों के समावेश को आवश्यक माना गया है। विशेष रूप से प्राथमिक स्तर पर, शिक्षक इन पहलों के प्रभावी क्रियान्वयन में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं, क्योंकि वे विद्यार्थियों की प्रारंभिक सीखने की यात्रा का दिशा–निर्देशन करते हैं। संक्षेप में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 न केवल भारत के शिक्षा ढाँचे को नई दिशा प्रदान करती है, बल्कि शिक्षकों को परिवर्तन के सशक्त कारक के रूप में स्थापित करती है। यह नीति सामाजिक संवेदनशीलता, नवाचार और रचनात्मक अधिगम को एकीकृत करते हुए शिक्षा को 21वीं सदी की आवश्यकताओं के अनुरूप रूपांतरित करने का मार्ग प्रशस्त करती है।

6. **सामाजिक बुद्धि**– सामाजिक बुद्धि वह मानसिक एवं व्यवहारिक क्षमता है जिसके माध्यम से व्यक्ति स्वयं और दूसरों के विचारों, भावनाओं तथा व्यवहारों को समझकर सामाजिक संदर्भ में उपयुक्त एवं संवेदनशील प्रतिक्रिया देने में सक्षम होता है। यह केवल एक सामाजिक कौशल नहीं, बल्कि ऐसी समग्र योग्यता है जो व्यक्ति को सामाजिक परिस्थितियों में विवेकपूर्ण निर्णय लेने, सहानुभूति प्रकट करने और सहयोगात्मक दृष्टिकोण अपनाने में सहायता करती है। शिक्षा के क्षेत्र में, विशेष रूप से शिक्षकों के लिए, सामाजिक बुद्धि का महत्व अत्यधिक है। शिक्षकों का कार्य केवल विषय ज्ञान के संप्रेषण तक सीमित नहीं, बल्कि विद्यार्थियों, सहकर्मियों और अभिभावकों के साथ निरंतर संवाद और सहयोग पर आधारित होता है। एक सामाजिक रूप से बुद्धिमान शिक्षक अपनी कक्षा में न केवल सकारात्मक वातावरण बनाता है, बल्कि विद्यार्थियों की भावनात्मक आवश्यकताओं, सीखने की प्रवृत्तियों और विविधताओं को समझकर उनके अनुरूप शिक्षण रणनीतियाँ अपनाता है। उच्च सामाजिक बुद्धि वाले शिक्षक विद्यार्थियों के साथ सहानुभूतिपूर्ण और विश्वासपूर्ण संबंध स्थापित कर पाते हैं। वे सहयोग और संवेदनशीलता के आधार पर एक नवाचारी, सहयोगी और प्रेरक शिक्षण वातावरण का निर्माण करते हैं। इस प्रकार, सामाजिक बुद्धि शिक्षकों को शिक्षा के मानवीय पक्ष को सशक्त बनाने में सक्षम बनाती है।
सामाजिक बुद्धि के प्रमुख घटक इस प्रकार माने गए हैं–

आत्म–जागरूकता अपनी भावनाओं, शक्तियों और सीमाओं को पहचानने तथा उनके प्रति सजग रहने की क्षमता।
सामाजिक संवेदनशीलता दूसरों के दृष्टिकोण, भावनाओं और आवश्यकताओं को समझने की योग्यता।
सहयोग एवं टीम भावना समूह में कार्य करते हुए पारस्परिक विश्वास और सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने की प्रवृत्ति।
प्रभावी संवाद विचारों को स्पष्ट, सहानुभूतिपूर्ण और प्रेरक ढंग से अभिव्यक्त करने की कला।

विभिन्न अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि सामाजिक बुद्धि न केवल सामाजिक दक्षता का संकेतक है, बल्कि यह एक महत्त्वपूर्ण शैक्षणिक योग्यता भी है, जो शिक्षक के कक्षा प्रबंधन, निर्णय–निर्माण, और विद्यार्थी सहभागिता को गहराई से प्रभावित करती है सामाजिक रूप से बुद्धिमान शिक्षक शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार करते हैं, साथ ही विद्यार्थियों की सृजनात्मकता, समस्या समाधान क्षमता और भावनात्मक स्थिरता को भी विकसित करते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी इस तथ्य को रेखांकित किया गया है कि शिक्षक केवल ज्ञान के संवाहक नहीं, बल्कि सामाजिक रूप से जिम्मेदार, भावनात्मक रूप से संवेदनशील और नवाचारोन्मुख मार्गदर्शक हैं इस प्रकार, सामाजिक बुद्धि आधुनिक शिक्षक की पेशेवर दक्षता का एक अपरिहार्य अंग बन चुकी है, जो शिक्षा को अधिक मानवीय, संवादात्मक और सृजनशील बनाती है।

7. **नवाचार क्षमता**– नवाचार क्षमता से अभिप्राय व्यक्ति की उस रचनात्मक योग्यता से है जिसके माध्यम से वह परिवर्तित परिस्थितियों, नई चुनौतियों और आवश्यकताओं के अनुरूप नए विचार, विधियाँ और समाधान विकसित कर सके यह क्षमता किसी व्यक्ति के चिंतन, कल्पनाशक्ति और प्रयोगशील दृष्टिकोण को परिलक्षित करती है। शिक्षा के क्षेत्र में यह विशेष रूप से शिक्षकों के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि शिक्षक के नवाचारी दृष्टिकोण से न केवल शिक्षण की गुणवत्ता प्रभावित होती है, बल्कि विद्यार्थियों में भी सृजनात्मकता, जिज्ञासा और समस्या–समाधान प्रवृत्ति का विकास होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने नवाचार और सृजनात्मकता को शिक्षा के प्रमुख स्तंभों में से एक के रूप में मान्यता दी है। नीति के अनुसार, शिक्षक का कार्य केवल पाठ्यपुस्तक–आधारित ज्ञान का प्रसार करना नहीं है, बल्कि विद्यार्थियों को सोचने, प्रश्न करने और खोज करने के लिए प्रेरित करना भी है। एक नवाचारी शिक्षक पारंपरिक शिक्षण पद्धतियों से आगे बढ़कर परियोजना–आधारित प्रायोगिक शिक्षण और डिजिटल तकनीकों का उपयोग करता है, जिससे शिक्षा अधिक प्रासंगिक, सहभागितापूर्ण और आकर्षक बनती है।

नवाचार क्षमता शिक्षकों पर चार प्रमुख स्तरों पर प्रभाव डालती है–

शिक्षण–विधियों में रचनात्मकता नवीन शिक्षण रणनीतियों को अपनाकर अधिगम को रोचक, प्रेरक और विद्यार्थियों की रुचि के अनुरूप बनाना।
समस्या समाधान क्षमता– कक्षा में आने वाली शैक्षणिक या व्यवहारिक चुनौतियों का लचीलेपन, प्रयोगशीलता और नई सोच के माध्यम से

समाधान करना।
तकनीकी नवाचार का उपयोग– शिक्षण में ई–लर्निंग, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डिजिटल उपकरणों का प्रभावी एकीकरण कर शिक्षा की पहुँच और गुणवत्ता को बढ़ाना।
छात्र–केंद्रित शिक्षण विद्यार्थियों की आवश्यकताओं, क्षमताओं और रुचियों के अनुरूप शिक्षण प्रक्रिया को अनुकूल बनाना, जिससे वे सक्रिय रूप से सीखने की प्रक्रिया में भाग लें।

प्रस्तुत शोध से यह स्पष्ट होता है कि जब शिक्षक अपनी नवाचार क्षमता का विकास करते हैं, तो शिक्षा का व्यावहारिक और मानवीय दोनों पक्ष सशक्त होते हैं। ऐसे शिक्षक विद्यार्थियों को केवल ज्ञान नहीं देते, बल्कि उनमें स्वायत्तता, आत्मविश्वास, जिज्ञासा और रचनात्मक चिंतन जैसी क्षमताओं का संवर्धन करते हैं। विशेष रूप से प्राथमिक स्तर पर, नवाचार क्षमता का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यही वह अवस्था है जहाँ बच्चों की सृजनात्मकता, जिज्ञासा और सीखने की दिशा आकार लेती है। अतः शिक्षक की नवाचार क्षमता न केवल शिक्षा की गुणवत्ता को उन्नत करती है, बल्कि भविष्य के नवाचारी नागरिकों के निर्माण में भी योगदान देती है।

8. **सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का पारस्परिक संबंध**– सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता दोनों ही शिक्षक की व्यावसायिक दक्षता के ऐसे आयाम हैं जो एक–दूसरे को पूरक करते हैं। सामाजिक बुद्धि शिक्षक को पारस्परिक संबंधों की समझ, सहयोग, सहानुभूति और संवाद कौशल प्रदान करती है, जबकि नवाचार क्षमता उसे नई परिस्थितियों के अनुरूप रचनात्मक समाधान विकसित करने में सक्षम बनाती है। जब शिक्षक सामाजिक रूप से संवेदनशील होता है, तो वह विद्यार्थियों, सहकर्मियों और अभिभावकों की आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से समझ पाता है यही समझ उसकी नवाचार क्षमता को दिशा और उद्देश्य प्रदान करती है। शिक्षण–प्रक्रिया में यह संबंध स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है – सामाजिक रूप से बुद्धिमान शिक्षक कक्षा में एक सहयोगी और प्रेरक वातावरण निर्मित करता है, जो विद्यार्थियों में जिज्ञासा, रचनात्मकता और प्रयोगशीलता को बढ़ावा देता है। इस प्रकार, सामाजिक बुद्धि नवाचार के लिए भावनात्मक और सामाजिक आधार तैयार करती है, जबकि नवाचार क्षमता उस आधार को रचनात्मक क्रिया में रूपांतरित करती है[8]।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (के संदर्भ में भी यह पारस्परिक संबंध अत्यंत प्रासंगिक है। नीति में शिक्षक को "प्रेरक, संवेदनशील और नवाचारी मार्गदर्शक" के रूप में देखा गया है, जो तभी संभव है जब उसके भीतर सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का संतुलित विकास हो। अतः कहा जा सकता है कि सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का समन्वय शिक्षण को अधिक मानवीय, संवादात्मक और सृजनात्मक बनाता है, जिससे विद्यार्थियों के समग्र विकास की दिशा में ठोस प्रगति संभव होती है। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता प्राथमिक शिक्षकों की व्यावसायिक दक्षता और शिक्षण प्रभावशीलता के लिए अनिवार्य हैं। सामाजिक बुद्धि शिक्षक को विद्यार्थियों के भावनात्मक और सामाजिक आवश्यकताओं को समझने में सक्षम बनाती है, जिससे कक्षा में सकारात्मक और सहयोगात्मक वातावरण निर्मित होता है। वहीं, नवाचार क्षमता शिक्षकों को नई शिक्षण विधियों, तकनीकी संसाधनों और रचनात्मक दृष्टियों को अपनाने के लिए प्रेरित करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (की दृष्टि में शिक्षक का उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि विद्यार्थियों में सृजनात्मकता, आलोचनात्मक चिंतन और जीवन–केंद्रित कौशल का विकास करना है। इस संदर्भ में सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का सम्मिलित प्रयोग शिक्षक को एक प्रभावशाली और परिवर्तनकारी मार्गदर्शक बनाता है। इससे न केवल शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार आता है, बल्कि विद्यार्थियों का समग्र व्यक्तित्व, आत्मविश्वास और सीखने की रुचि भी विकसित होती है। अध्ययन यह भी संकेत देता है कि शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इन क्षमताओं के विकास पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। सामाजिक–भावनात्मक अधिगम और रचनात्मक शिक्षण तकनीकों का समावेश शिक्षकों को अधिक संवेदनशील, रचनात्मक और नवाचारी बनाता है। विद्यालय प्रशासन को भी नवाचारी प्रयोगों और शिक्षकों की सतत व्यावसायिक वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले वातावरण की स्थापना करनी चाहिए।

**शैक्षिक एवं व्यवहारिक निहितार्थ**– यह अध्ययन प्राथमिक शिक्षकों में सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता के महत्व को उजागर करता है और इसके आधार पर शिक्षक प्रशिक्षण, शिक्षण पद्धतियों और नीति निर्माण में व्यावहारिक योगदान प्रदान करता है। पहला, शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सामाजिक–भावनात्मक अधिगम और रचनात्मक शिक्षण विधियों का समावेश किया जाना चाहिए। इससे शिक्षक विद्यार्थियों की भावनात्मक आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से समझने, उनका मार्गदर्शन करने और उन्हें प्रेरित करने में अधिक सक्षम होंगे। दूसरा, शिक्षण पद्धतियों में नवाचार क्षमता को शामिल करने से कक्षा अधिक संवादात्मक, सहयोगात्मक और सक्रिय अधिगम–प्रधान बन सकती है। शिक्षक नई तकनीकों, परियोजना–आधारित अधिगम और डिजिटल संसाधनों का प्रभावी उपयोग करके शिक्षण को अधिक रोचक, प्रासंगिक और प्रेरक बना सकते हैं। तीसरा, नीति निर्माण के संदर्भ में यह अध्ययन नीति–निर्माताओं को प्रमाण आधारित दिशा–निर्देश प्रदान करता है। नीति निर्माता शिक्षक विकास, नवाचार प्रोत्साहन और समग्र मूल्यांकन प्रणालियों के निर्माण में सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता को प्राथमिकता देकर शिक्षा की गुणवत्ता और शिक्षक प्रभावशीलता में सुधार ला सकते हैं।

9. **निष्कर्ष**– भविष्य के शोध के लिए यह सुझाव दिया जाता है कि सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता के प्रभाव का सांख्यिकीय विश्लेषण, विभिन्न प्राथमिक विद्यालयों में उनका तुलनात्मक अध्ययन और लंबी अवधि में शिक्षण परिणामों पर इनके प्रभाव का मूल्यांकन किया जाए। इससे नीति निर्माण और शिक्षक विकास कार्यक्रम और अधिक साक्ष्य–आधारित और प्रभावकारी बन सकेंगे। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता न केवल शिक्षक के व्यक्तिगत विकास के लिए, अपितु समग्र शैक्षिक सुधार और शिक्षा–परिवर्तन

के लिए भी अनिवार्य हैं। इन दोनों क्षमताओं का संतुलित विकास शिक्षा को समावेशी, संवेदनशील और रचनात्मक बनाने में निर्णायक भूमिका निभाता है। संक्षेप में, यह अध्ययन शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने, शिक्षक प्रभावशीलता सुदृढ़ करने और विद्यार्थियों के समग्र विकास को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण व्यावहारिक योगदान देता है । सामाजिक बुद्धि और नवाचार क्षमता का समन्वित विकास न केवल शिक्षकों को अधिक सक्षम बनाता है, बल्कि शिक्षा प्रणाली को समावेशी, रचनात्मक और संवेदनशील बनाने में भी निर्णायक भूमिका निभाता है।

## References


1. Goleman, D. (1995). Emotional intelligence: Why it can matter more than IQ. New York, NY: Bantam Books.
2. UNESCO. (2019). Primary education and teacher effectiveness: Global report. Paris, France: UNESCO Publishing.
3. Ministry of Education. (2020). National Education Policy 2020. Government of India
4. Thorndike, E. L. (1920). Intelligence and its uses. Harper's Magazine, 140, 227–235.
5. Sutherland, P. (2007). Developing Emotional and Social Intelligence in Education. Open University Press.
6. Rogers, E. M. (2003). Diffusion of Innovations. Free Press
7. Crawford, C. (2010). Teaching Innovation and Creativity in Higher Education. Routledge.
8. Kumar, R., & Mishra, S. (2021). Social Intelligence and Innovation Capacity of Teachers: An Indian Perspective. Indian Journal of Education Research, 45(2), 67–78.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 32-36
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.6
SJIF (2025) : 8.749

शोध पत्र

# Relevance of Value-Based Education in the Digital Age: A Conceptual Study

Mukesh Kumar Bharti
Department of Education, University of Lucknow, Lucknow-226 007, U.P., India
mukeshbharti193518@gmail.com

**Received: 26-10-2025, Accepted: 05-12-2025**

**Abstract**- This study presents an analysis of the relevance and necessity of value-based education in the digital age. The rapid technological revolution of the 21st century has made education more accessible, flexible, and individualized. However, along with these advancements, several moral and social challenges have also emerged, such as cyberbullying, the spread of misleading information, digital addiction, and social isolation. In such a context, the true integration of education should not be limited merely to technical skills or the ability to process information; rather, its primary goal should be the preservation and promotion of human values, moral sensibility, and socially responsible behavior. Value-based education develops qualities such as character formation, cooperation, moral reasoning, social responsibility, and balanced digital conduct among students. These traits are essential for effectively addressing the complex challenges of the digital era. The study conceptually highlights major themes like "digital citizenship," "critical thinking," and "digital empathy," emphasizing the need to harmonize technological progress with moral and ethical perspectives. The study asserts that if the educational system ensures the harmonious integration of human values with technological innovations, then the digital age can become not merely a means of information expansion but also a foundation for genuine human development and moral progress.

**Key words**- Value-Based Education, Digital Age, Moral Sensibility, Digital Citizenship, Cooperation, Technology in Education, Ethics

# डिजिटल युग में मूल्य-आधारित शिक्षा की प्रासंगिकता: एक अवधारणात्मक अध्ययन

मुकेश कुमार भारती
शिक्षा शास्त्र विभाग,लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
mukeshbharti193518@gmail.com

सार– यह अध्ययन डिजिटल युग में मूल्य–आधारित शिक्षा की प्रासंगिकता और अनिवार्यता का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इक्कीसवीं सदी की तीव्र तकनीकी क्रांति ने शिक्षा को अभूतपूर्व रूप से सुलभ, लचीला और वैयक्तिकृत बनाया है। यद्यपि, इसके साथ ही अनेक नैतिक और सामाजिक चुनौतियाँ भी उभरी हैं, जैसे– साइबर बुलिंग, भ्रामक सूचना का प्रसार, डिजिटल असमानता और सामाजिक अलगाव। ऐसे परिदृश्य में शिक्षा की वास्तविक सार्थकता केवल तकनीकी दक्षता या सूचना–साझाकरण की क्षमता तक सीमित नहीं रह जाती, बल्कि उसका मूल उद्देश्य मानवीय मूल्यों, नैतिक चेतना और संवेदनशील सामाजिक व्यवहार का संरक्षण और संवर्धन होना चाहिए। मूल्य–आधारित शिक्षा विद्यार्थियों में चरित्र निर्माण, सहानुभूति, नैतिक विवेक, सामाजिक उत्तरदायित्व और संवेदनशील डिजिटल व्यवहार जैसे गुणों का विकास करती है, जो डिजिटल युग की जटिल चुनौतियों का प्रभावी रूप से सामना करने के लिए आवश्यक हैं। यह अध्ययन "डिजिटल नागरिकता", "आलोचनात्मक चिंतन" और "डिजिटल सहानुभूति" जैसे प्रमुख सिद्धांतों पर आधारित एक एकीकृत शैक्षिक ढाँचा प्रस्तुत करता है, जो तकनीकी प्रगति और मूल्य–आधारित दृष्टिकोण के बीच संतुलन स्थापित करने में सहायक है। अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि यदि शिक्षा प्रणाली तकनीकी नवाचारों के साथ मानवीय मूल्यों का समन्वित समावेश सुनिश्चित करे, तो डिजिटल युग केवल ज्ञान–विस्तार का माध्यम न रहकर मानवता की सच्ची प्रगति और नैतिक पुनर्जागरण का आधार बन सकता है।

**बीज शब्द**– मूल्य–आधारित शिक्षा, डिजिटल युग, नैतिक चेतना, डिजिटल नागरिकता, सहानुभूति, शिक्षा में प्रौद्योगिकी, नैतिकता

**1. परिचय**– इक्कीसवीं सदी मानव सभ्यता के इतिहास में एक अभूतपूर्व विरोधाभास लेकर आई है। एक ओर, डिजिटल क्रांति ने ज्ञान के क्षेत्र में असीम संभावनाएँ खोली हैं, जिससे शिक्षा अधिक लोकतांत्रिक, लचीली और वैयक्तिकृत बन गई है। इंटरनेट, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और आभासी वास्तविकता जैसे नवाचारों ने सूचना के महासागर को प्रत्येक व्यक्ति की पहुँच तक ला दिया है। इस परिवर्तन ने सीखने की प्रक्रिया को पारंपरिक सीमाओं से मुक्त कर दिया है और शिक्षार्थियों को आत्म–निर्देशित शिक्षा की दिशा में अग्रसर किया है। किन्तु दूसरी ओर, यही तकनीकी प्रगति अनेक गहन सामाजिक और नैतिक चुनौतियों को भी जन्म देती है। डिजिटल माध्यमों के दुरुपयोग, साइबरबुलिंग, भ्रामक

सूचनाओं के प्रसार, सामाजिक एकाकीपन और डिजिटल असमानता जैसी समस्याएँ इस बात की याद दिलाती हैं कि तकनीक का प्रसार हमेशा मानवीय मूल्यों के संरक्षण की गारंटी नहीं देता। इस प्रकार, डिजिटल युग शिक्षा को तो अधिक सुलभ बनाता है, परंतु मानवीय संवेदनाओं और नैतिक चेतना के ह्रास विघटन का जोखिम भी उत्पन्न करता है। इसी विरोधाभास को समझने और सुलझाने का प्रयास यह वैचारिक शोध पत्र करता है। इसका मूल तर्क यह है कि डिजिटल शिक्षा की सार्थकता केवल सूचना–साझाकरण की दक्षता पर नहीं, बल्कि इस बात पर निर्भर करती है कि उसमें मूल्य–आधारित शिक्षा के सिद्धांतों को किस प्रकार समाहित किया जाता है। पारंपरिक शिक्षा प्रणाली, अपने सीमित संसाधनों के बावजूद, चरित्र निर्माण, नैतिक विकास और सामाजिक मूल्यों के संवर्धन पर केंद्रित थी। उस युग में शिक्षक केवल ज्ञान–संप्रेषक नहीं, बल्कि एक नैतिक मार्गदर्शक और प्रेरक आदर्श हुआ करते थे। आज, जब शिक्षक की भूमिका "सूचना प्रदाता" से "सुगमकर्ता" में बदल रही है और शिक्षण प्रक्रिया अधिक तकनीकी एवं अवैयक्तिक होती जा रही है, मूल्य–संवहन का यह आयाम पुनः विचारणीय बन गया है। यह शोध पत्र डिजिटल शिक्षा के अवसरों और मूल्य–आधारित शिक्षा की अनिवार्यता के बीच एक वैचारिक सेतु स्थापित करने का प्रयास करता है। इसमें न केवल इस एकीकरण की सैद्धांतिक जटिलताओं और नैतिक आयामों की पड़ताल की जाएगी, बल्कि इसकी व्यावहारिक संभावनाओं पर भी विचार किया जाएगा।[1-3]

## 2. अध्ययन के उद्देश्य

2.1 डिजिटल युग में शिक्षा की प्रकृति और उसके प्रभावों का मूल्य–आधारित दृष्टिकोण से विश्लेषण करना।
2.2 मूल्य–आधारित शिक्षा की अवधारणा, सिद्धांतों और शैक्षिक महत्व को स्पष्ट करना।
2.3 डिजिटल शिक्षा से उत्पन्न नैतिक चुनौतियों और मूल्य क्षरण के संभावित जोखिमों की पहचान करना।

3. **शोध विधि**– यह शोध गुणात्मक एवं वैचारिक शोध विधि पर आधारित है, जिसमें माध्यमिक स्रोतों (पुस्तकें, शोध लेख, नीति दस्तावेज आदि) के विश्लेषण द्वारा विषय के सैद्धांतिक एवं नैतिक आयामों को स्पष्ट किया गया है।

4. **संबंधित साहित्य सर्वेक्षण**– सिंह और शर्मा[1] ने डिजिटल रूपांतरण के युग में मूल्य–आधारित शिक्षा की आवश्यकता पर गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। शोध में यह स्पष्ट किया गया कि तकनीकी प्रगति ने जहाँ शिक्षण को अधिक सुलभ बनाया है, वहीं इसने नैतिक पतन, संवेदनहीनता और सामाजिक अलगाव जैसी चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। लेखकों का मानना है कि शिक्षा प्रणाली में नैतिक मूल्यों और मानवीय सहानुभूति को पुनर्स्थापित किए बिना डिजिटल शिक्षा का दीर्घकालिक लाभ नहीं मिल सकता। उन्होंने सुझाव दिया कि मूल्य शिक्षा को 'डिजिटल एथिक्स' के रूप में पुनर्परिभाषित किया जाए ताकि विद्यार्थी न केवल ज्ञानवान, बल्कि जिम्मेदार डिजिटल नागरिक बन सकें। नायर और थॉमस[2] ने अपने शोध में ऑनलाइन शिक्षण के नैतिक पक्ष पर प्रकाश डाला है। अध्ययन में यह बताया गया है कि डिजिटल लर्निंग वातावरण में केवल तकनीकी दक्षता पर्याप्त नहीं है, बल्कि शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों में नैतिक चेतना और सामाजिक जिम्मेदारी का विकास आवश्यक है। लेखकों ने यह तर्क दिया कि ऑनलाइन शिक्षण प्लेटफॉर्म पर सहयोग, सम्मान और सहिष्णुता जैसे मूल्यों को बढ़ावा देने से न केवल शिक्षण की गुणवत्ता सुधरती है बल्कि 'डिजिटल नागरिकता' का भाव भी मजबूत होता है। यह अध्ययन डिजिटल युग में शिक्षक की नैतिक भूमिका को पुनर्परिभाषित करता है। कुमार और भट्टाचार्य[3] ने मूल्य शिक्षा के पारंपरिक दृष्टिकोण की पुर्नव्याख्या करते हुए 21वीं सदी के विद्यार्थियों के लिए उसकी प्रासंगिकता पर बल दिया है। उनका कहना है कि आधुनिक शिक्षा केवल सूचना–साझाकरण तक सीमित नहीं रह सकती, बल्कि उसे नैतिक निर्णय क्षमता, सहानुभूति, और वैश्विक नागरिकता जैसे मूल्यों को भी प्रोत्साहित करना चाहिए। लेख में यह भी बताया गया है कि तकनीक का उपयोग यदि नैतिक मार्गदर्शन के साथ किया जाए, तो यह मूल्य–आधारित शिक्षण का प्रभावी माध्यम बन सकता है।

5. **मूल्यों की अवधारणा एवं शैक्षिक परिप्रेक्ष्य**– मूल्य–आधारित शिक्षा ऐसी शैक्षणिक प्रक्रिया है जो पारंपरिक अकादमिक ज्ञान की सीमाओं से आगे बढ़कर विद्यार्थियों के नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक विकास पर केंद्रित होती है। इसका उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं, बल्कि ऐसे संवेदनशील, जिम्मेदार और नैतिक रूप से परिपक्व नागरिकों का निर्माण करना है जो समाज के समग्र कल्याण में योगदान दे सकें। इस शिक्षा की मूल भावना यह है कि शिक्षार्थी न केवल बुद्धिमान हों, बल्कि विवेकशील, सहानुभूतिपूर्ण और आत्म–संवेदनशील भी बनें।[4] दार्शनिक दृष्टि से मूल्य–आधारित शिक्षा मूल्यमीमांसा की उस शाखा से सम्बद्ध है जो यह समझने का प्रयास करती है कि मूल्य क्या हैं, क्यों आवश्यक हैं, और मनुष्य के आचरण में इनका स्थान कहाँ है। यह आदर्शवाद, प्रकृतिवाद और प्रयोजनवाद जैसे प्रमुख दार्शनिक दृष्टिकोणों से प्रेरणा लेती है, जो शिक्षा के अंतिम लक्ष्य–आत्म–साक्षात्कार, सामाजिक अनुकूलन, तथा लोकतांत्रिक नागरिकता को परिभाषित करते हैं। मूल्य–आधारित शिक्षा केवल यह नहीं सिखाती कि "क्या सही है", बल्कि यह भी समझाती है कि "क्यों यह सही है" और "इसे व्यवहार में कैसे लाया जाए"। यह शिक्षा कार्यों के पीछे निहित नैतिकता और औचित्य पर बल देती है। इसका उद्देश्य बाहरी नियमों के मात्र अनुपालन से आगे बढ़कर विद्यार्थियों में आंतरिक प्रेरणा, विवेकशीलता और आत्म–खोज की चेतना विकसित करना है। यह प्रक्रिया–उन्मुख दृष्टिकोण इसे सूचना–प्रधान डिजिटल शिक्षा से भिन्न बनाता है, जो प्रायः परिणाम और दक्षता पर अधिक केंद्रित रहती है। इस संदर्भ में विद्यालय का वातावरण, शिक्षक का आदर्श व्यवहार, तथा विद्यार्थियों में सहयोग, सहिष्णुता और पारस्परिक सम्मान की भावना जैसे तत्व मूल्य–आधारित शिक्षा के मूलाधार हैं।[5]

6. **समग्र व्यक्तित्व निर्माण में मूल्यों की भूमिका**– मूल्य–आधारित शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य विद्यार्थियों के समग्र व्यक्तित्व का विकास करना है, जिसमें शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक सभी पहलू सम्मिलित होते हैं। यह शिक्षा केवल शैक्षणिक उपलब्धियों तक सीमित नहीं है, बल्कि एक संतुलित, विवेकशील और संवेदनशील मानव के निर्माण पर बल देती है।

6.1 **चरित्र निर्माण और नैतिक विकास**– मूल्य शिक्षा विद्यार्थियों को सही और गलत के बीच विवेकपूर्ण अंतर करना सिखाती है। यह उन्हें नैतिक दुविधाओं का समाधान खोजने और उत्तरदायित्व की भावना विकसित करने में सहायता करती है। सत्यनिष्ठा, करुणा, सहानुभूति, नम्रता और कल्याण की भावना जैसे गुणों का पोषण इसी शिक्षा के माध्यम से होता है, जो एक दृढ़ और सदाचारी चरित्र की नींव रखते हैं। इससे विद्यार्थी जीवन की चुनौतियों के प्रति अधिक सहनशील, सकारात्मक और आत्मविश्वासी बनते हैं।
6.2 **भावनात्मक और सामाजिक बुद्धिमत्ता** मूल्य– आधारित शिक्षा विद्यार्थियों में आत्म–जागरूकता और सामाजिक संवेदनशीलता दोनों का विकास करती है। यह उन्हें अपने तथा दूसरों के अधिकारों का सम्मान करना, सहयोग की भावना विकसित करना और विविधताओं को स्वीकार करना सिखाती है। इस प्रक्रिया में वे पंथनिरपेक्षता, समानता और विश्वबंधुत्व की भावना को आत्मसात करते हैं। इस प्रकार यह शिक्षा ऐसे नागरिकों का निर्माण करती है जो संवेदनशील, सहृदय और न्यायप्रिय हों तथा समाज में सामंजस्य और सौहार्द के संवर्धन में योगदान दे सकें।
6.3 **सार्वभौमिक और राष्ट्रीय मूल्य**– मूल्य शिक्षा का क्षेत्र सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों जैसे सत्य, शांति, प्रेम और अहिंसा के साथ–साथ राष्ट्रीय और संवैधानिक आदर्शों तक विस्तृत है। इसमें भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के आदर्श, राष्ट्रीय एकता, लोकतांत्रिक व्यवहार, पंथनिरपेक्षता तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग जैसी अवधारणाएँ शामिल हैं। इस प्रकार यह शिक्षा न केवल विद्यार्थियों को बेहतर इंसान बनाती है, बल्कि उन्हें उत्तरदायी नागरिक बनने की दिशा में भी अग्रसर करती है। यह उन्हें अपनी सांस्कृतिक विरासत से जोड़ती है और समाज के प्रति समर्पण एवं कर्तव्यबोध की भावना का विकास करती है।

7. **डिजिटल शिक्षा की प्रकृति और इसका विस्तार**– डिजिटल शिक्षा, जिसे प्रायः ई–लर्निंग के रूप में जाना जाता है, एक ऐसा शिक्षण मॉडल है जो इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों कृ जैसे कंप्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल उपकरण, तथा अन्य डिजिटल संसाधनों कृ पर आधारित है। यह पारंपरिक कक्षा शिक्षण की सीमाओं को तोड़ते हुए शिक्षा को एक वैश्विक, गतिशील और इंटरैक्टिव स्वरूप प्रदान करती है। इसमें ऑनलाइन पाठ्यक्रम, आभासी कक्षाएँ, डिजिटल पुस्तकालय, और इंटरैक्टिव लर्निंग प्लेटफॉर्म जैसे विविध घटक सम्मिलित हैं। 21वीं सदी में इसका विस्तार अभूतपूर्व रूप से हुआ है, विशेष रूप से कोविड–19 महामारी के बाद, जब विश्वभर की शिक्षा प्रणालियाँ प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षण को अपनाने के लिए बाध्य हुईं।[6] डिजिटल शिक्षा ने सीखने के नए अवसरों का द्वार खोला है। इसका सबसे बड़ा लाभ ज्ञान तक समान और व्यापक पहुँच है, जिसने भौगोलिक, सामाजिक तथा आर्थिक बाधाओं को काफी हद तक कम किया है। अब दूरदराज के क्षेत्रों के विद्यार्थी भी उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षण सामग्री तक पहुँच सकते हैं। यह शिक्षा प्रणाली सीखने में लचीलापन प्रदान करती है, जिससे विद्यार्थी अपनी सुविधा, समय और गति के अनुसार अध्ययन कर सकते हैं। प्रौद्योगिकी ने वैयक्तिकृत शिक्षण की अवधारणा को भी साकार किया है, जहाँ कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसे उपकरण प्रत्येक शिक्षार्थी की सीखने की शैली और गति के अनुसार सामग्री को अनुकूलित कर सकते हैं। साथ ही, एनीमेशन, गेमिफिकेशन, और ऑडियो–विजुअल साधनों का उपयोग शिक्षण को अधिक रोचक, संवादात्मक और प्रभावी बनाता है। यह विद्यार्थियों की विषयवस्तु के प्रति रुचि और संलग्नता को बढ़ाता है। इसके अतिरिक्त, डिजिटल शिक्षा लागत–प्रभावी भी है, क्योंकि यह भौतिक संसाधनों, यात्रा और अवसंरचना की आवश्यकता को न्यूनतम कर देती है।

8. **डिजिटल परिदृश्य में नैतिक चुनौतियाँ एवं मूल्य क्षरण के जोखिम**– डिजिटल शिक्षा आज जहाँ एक ओर ज्ञानार्जन के नए क्षितिज खोल रही है, वहीं यह कई गहन नैतिक चुनौतियों और मूल्य क्षरण के जोखिमों को भी जन्म दे रही है। यह केवल व्यक्तिगत नैतिक विफलताओं का परिणाम नहीं है, बल्कि इसका मूल कारण उन तकनीकी प्लेटफार्मों का संरचनात्मक स्वरूप है, जो मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक उत्तरदायित्व से अधिक जुड़ाव और लाभप्रदता को प्राथमिकता देते हैं। इस प्रकार, डिजिटल शिक्षा का विकास जितना आशाजनक प्रतीत होता है, उतना ही यह मूल्य–आधारित शिक्षण के लिए जटिल प्रश्न भी प्रस्तुत करता है।

9. **डिजिटल विभाजन और शैक्षिक असमानता**– डिजिटल शिक्षा के समक्ष उपस्थित सबसे बड़ी नैतिक चुनौतियों में से एक है "डिजिटल विभाजन" – अर्थात् प्रौद्योगिकी तक समान पहुंच का अभाव। भारत जैसे विविधतापूर्ण और विकासशील देश में यह विभाजन अनेक स्तरों पर स्पष्ट दिखाई देता है। पहुंच की असमानता शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच डिजिटल संसाधनों-जैसे स्मार्टफोन, कंप्यूटर, टैबलेट तथा उच्च गति इंटरनेटकृकी उपलब्धता में भारी असमानता विद्यमान है। आर्थिक रूप से कमजोर और वंचित वर्गों के विद्यार्थियों के पास इन संसाधनों की कमी के कारण डिजिटल शिक्षा तक समान अवसर नहीं पहुँच पाते। परिणामस्वरूप, वे न केवल अकादमिक प्रतिस्पर्धा में पीछे रह जाते हैं, बल्कि मूल्य–आधारित शिक्षा की उस समावेशी प्रक्रिया से भी वंचित हो जाते हैं, जो डिजिटल माध्यम से सशक्त रूप में दी जा सकती थी। इस प्रकार, यह स्थिति शैक्षिक समानता के सिद्धांत को चुनौती देती है और सामाजिक न्याय के संदर्भ में एक गंभीर प्रश्न खड़ा करती है। भाषाई असमानतारू डिजिटल शिक्षा में भाषा भी एक महत्वपूर्ण बाधा के रूप में उभरती है। अधिकांश गुणवत्तापूर्ण डिजिटल सामग्री अंग्रेजी या कुछ चुनिंदा भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है। भारत जैसे बहुभाषी देश में यह स्थिति उन विद्यार्थियों के लिए अवरोध उत्पन्न करती है, जिनकी मातृभाषा अलग है। परिणामस्वरूप, ऐसे छात्र सीखने की प्रक्रिया से अलग–थलग महसूस करते हैं, जिससे उनके आत्मविश्वास और सहभागिता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार, भाषा–आधारित यह विभाजन न केवल शैक्षिक

असमानता को गहरा करता है, बल्कि सांस्कृतिक विविधता के सम्मान के सिद्धांत को भी कमजोर करता है।

10. **साइबरबुलिंग, भ्रामक सूचना और सामाजिक अलगाव**– डिजिटल वातावरण जहाँ एक ओर असीम संभावनाओं का द्वार खोलता है, वहीं यह सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से नई प्रकार की चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करता है। ये चुनौतियाँ उन मानवीय मूल्योंकृजैसे सम्मान, करुणा, सत्यनिष्ठा और समुदाय की भावना पर प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालती हैं, जो किसी भी स्वस्थ समाज की आधारशिला होते हैं।[7]

10.1 **साइबरबुलिंग और ऑनलाइन उत्पीड़न**– डिजिटल युग की गुमनामी और भौतिक दूरी का अभाव अनेक बार ऐसे वातावरण को जन्म देता है जहाँ व्यक्ति बिना परिणामों की तत्कालिक अनुभूति के अपमानजनक या आक्रामक व्यवहार करने के लिए प्रवृत्त हो जाता है। इसे सामूहिक रूप से साइबरबुलिंग कहा जाता है, जिसमें धमकी, अपशब्द, घृणास्पद टिप्पणियाँ या ऑनलाइन उत्पीड़न शामिल हैं। यह समस्या विशेष रूप से विद्यार्थियों और किशोरों में गहरे मानसिक और भावनात्मक प्रभाव उत्पन्न करती है, जैसेकृअवसाद, चिंता, आत्म–सम्मान में गिरावट, और कभी–कभी आत्मघाती प्रवृत्तियाँ भी। डिजिटल प्लेटफार्मों का ऐसा डिजाइन, जो त्वरित प्रतिक्रियाओं और निरंतर संचार को बढ़ावा देता है, उपयोगकर्ताओं में सहानुभूति और आत्म–नियंत्रण की क्षमता को कमजोर करता है, जिससे इस प्रकार के नकारात्मक व्यवहार की संभावना बढ़ जाती है।

10.2 **भ्रामक सूचना और दुष्प्रचार**– डिजिटल माध्यम सूचना प्रसार का सबसे तीव्र माध्यम बन गया है, किंतु यही तीव्रता गलत सूचना और दुष्प्रचार के प्रसार को भी बढ़ावा देती है। गलत सूचना वह होती है जो अनजाने में झूठी जानकारी के रूप में साझा की जाती है, जबकि दुष्प्रचार जानबूझकर भ्रम फैलाने के उद्देश्य से प्रसारित किया जाता है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों के एल्गोरिद्म अक्सर ऐसी सामग्री को प्राथमिकता देते हैं जो सनसनीखेज, विवादास्पद या भावनात्मक रूप से आवेशित होकृभले ही वह तथ्यात्मक न हो। परिणामस्वरूप, विद्यार्थियों में आलोचनात्मक चिंतन, तर्कशीलता और सत्यनिष्ठा जैसे मूल्य कमजोर होते हैं, जबकि समाज में अविश्वास और वैचारिक ध्रुवीकरण की प्रवृत्ति बढ़ती है।

10.3 **सामाजिक अलगाव और डिजिटल निर्भरता**– अत्यधिक स्क्रीन–समय और ऑनलाइन संवाद पर निर्भरता ने विद्यार्थियों के वास्तविक सामाजिक जीवन और मानवीय संबंधों को भी प्रभावित किया है। "अनंत स्क्रॉल" व "निरंतर सूचनाएँ" जैसी डिजाइन विशेषताएँ उपयोगकर्ताओं को लंबे समय तक आभासी दुनिया में बाँधे रखती हैं। इसके परिणामस्वरूप, व्यक्ति का वास्तविक दुनिया से संपर्क कम होता जाता है, जिससे अकेलापन, चिंता और सामाजिक अलगाव की भावना बढ़ने लगती है। यह स्थिति न केवल मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, बल्कि सहयोग, सहानुभूति और सामुदायिक भावना जैसे नैतिक मूल्यों को भी क्षीण करती है। इन चुनौतियों का समाधान केवल विद्यार्थियों को "बेहतर व्यवहार करने" की शिक्षा देने से नहीं हो सकता। इसके लिए तकनीकी संरचनाओं और डिजिटल प्लेटफार्मों के नैतिक पुनरूडिजाइन की आवश्यकता है–जहाँ पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और मानवीय गरिमा को प्राथमिकता दी जाए। यूरोपीय संघ द्वारा पारित डिजिटल सर्विस एक्ट जैसे विनियामक प्रयास यह दर्शाते हैं कि अब व्यक्तिगत जिम्मेदारी से आगे बढ़कर प्रणालीगत जिम्मेदारी पर ध्यान देना समय की मांग है। यही दृष्टिकोण डिजिटल शिक्षा को मूल्य–संवेदनशील और मानवीय दिशा में आगे बढ़ाने में सहायक हो सकता है।

11. **मूल्यों और प्रौद्योगिकी का संश्लेषणः एक एकीकृत ढाँचे की ओर**– डिजिटल युग में मूल्य–आधारित शिक्षा और प्रौद्योगिकी के बीच संतुलन स्थापित करना केवल तकनीकी सुधार का प्रश्न नहीं, बल्कि एक गहन शैक्षिक और सामाजिक जिम्मेदारी का विषय है। इसके लिए एक समग्र पारिस्थितिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो तकनीकी उपकरणों की सीमाओं से आगे बढ़कर उन मानवीय, नैतिक और सामाजिक आयामों को समाहित करे जो शिक्षा के मूल उद्देश्य को परिभाषित करते हैं। यह एकीकृत ढाँचा चार प्रमुख स्तंभों पर आधारित है–डिजिटल नागरिकता, आलोचनात्मक चिंतन, डिजिटल सहानुभूति, और हितधारकों की परिवर्तित भूमिकाएँ।[8]

12. **डिजिटल नागरिकता नैतिक ऑनलाइन व्यवहार की नींव**– डिजिटल नागरिकता का अर्थ हैकृप्रौद्योगिकी और इंटरनेट का सुरक्षित, जिम्मेदार और नैतिक उपयोग करने की समझ और क्षमता। यह अवधारणा आधुनिक शिक्षा में उस "नैतिक कम्पास" की भूमिका निभाती है जो विद्यार्थियों को डिजिटल व्यवहार के मानदंडों से परिचित कराती है।[9] अवधारणा और प्रमुख घटकरू डिजिटल नागरिकता में अनेक घटक शामिल हैं, जैसेकृडिजिटल अधिकार और जिम्मेदारियाँ (जैसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बनाम दूसरों का सम्मान), ऑनलाइन सुरक्षा (साइबरबुलिंग और शोषण से बचाव), गोपनीयता (व्यक्तिगत जानकारी की सुरक्षा), तथा डिजिटल शिष्टाचार (सम्मानजनक ऑनलाइन संचार)। ये तत्व विद्यार्थियों को तकनीकी साक्षरता के साथ–साथ नैतिक विवेक से भी सशक्त बनाते हैं। पाठ्यक्रम में एकीकरणः डिजिटल नागरिकता को एक पृथक विषय के रूप में नहीं, बल्कि शिक्षा के प्रत्येक क्षेत्र में समाविष्ट मूल्य के रूप में एकीकृत किया जाना चाहिए। छात्रों को व्यवहारिक रूप से यह सिखाना आवश्यक है कि–सुरक्षित पासवर्ड कैसे बनाएं, ऑनलाइन स्रोतों की विश्वसनीयता कैसे परखें, व्यक्तिगत जानकारी साझा करने से क्या खतरे हो सकते हैं, तथा अनुचित ऑनलाइन व्यवहार की रिपोर्टिंग कैसे करें। इस प्रकार की शिक्षा डिजिटल युग के नागरिकों को जिम्मेदार, नैतिक और आत्म–नियंत्रित बनाती है।

13. **हितधारकों की परिवर्तित भूमिका**– मूल्य–आधारित डिजिटल शिक्षा का सफल कार्यान्वयन किसी एक संस्था या व्यक्ति का कार्य नहीं, बल्कि एक साझा सामाजिक दायित्व है। इसमें शिक्षक, अभिभावक और नीति–निर्माता–सभी की भूमिकाएँ अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

13.1 **शिक्षक**– शिक्षक अब केवल ज्ञान–संप्रेषक नहीं, बल्कि डिजिटल मेंटर और नैतिक मार्गदर्शक की भूमिका निभाते हैं। उन्हें डिजिटल उपकरणों के उपयोग के साथ–साथ डिजिटल नैतिकता में भी दक्ष होना चाहिए। उनके आचरण में निष्पक्षता, सम्मान और संवेदनशीलता वह मॉडल प्रस्तुत करती है जो विद्यार्थियों को नैतिक आचरण की ओर प्रेरित करता है।

13.2 **अभिभावक**– घर अब डिजिटल शिक्षण का एक विस्तार बन चुका है। इसलिए माता–पिता को अपने बच्चों की ऑनलाइन गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी निभानी चाहिए। स्क्रीन–टाइम का संतुलन, सामग्री की गुणवत्ता, और डिजिटल सुरक्षा पर स्पष्ट संवाद आवश्यक है। घर और स्कूल के बीच निरंतर सहयोग ही सुरक्षित और मूल्य–आधारित डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण कर सकता है।

13.3 **नीति–निर्माता**– सरकारों और शैक्षणिक संस्थानों को ऐसी नीतियाँ विकसित करनी चाहिए जो डिजिटल नागरिकता और मूल्य–आधारित शिक्षण को सुदृढ़ बनाएं। प्लेटफार्मों को उनकी सामग्री और एल्गोरिद्म के लिए जवाबदेह बनाना, तथा उपयोगकर्ता विशेषकर बच्चों के डेटा की गोपनीयता सुनिश्चित करना अनिवार्य है। भारत का डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम 2023 इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। अंततः, यह समझना आवश्यक है कि कोई भी एकल हस्तक्षेपकृचाहे वह शिक्षक प्रशिक्षण हो या नीतिगत सुधारकृतब तक प्रभावी नहीं हो सकता जब तक कि पारिस्थितिकी तंत्र के अन्य तत्व समान रूप से सक्रिय न हों। एक बहु–हितधारक रणनीति ही ऐसी डिजिटल संस्कृति को जन्म दे सकती है जो न केवल ज्ञानवान, बल्कि संवेदनशील, जिम्मेदार और मूल्य–संपन्न नागरिकों का निर्माण करे।

8. **निष्कर्ष**– यह अवधारणात्मक अध्ययन स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है कि डिजिटल युग में मूल्य–आधारित शिक्षा केवल प्रासंगिक ही नहीं, बल्कि अत्यावश्यक है। 21वीं सदी की शिक्षा के सामने दोहरी चुनौती हैकृएक ओर उसे तकनीकी नवाचार को अपनाते हुए ज्ञान को अधिक सुलभ, लचीला और प्रभावी बनाना है, वहीं दूसरी ओर उन शाश्वत मानवीय मूल्यों को भी सुरक्षित रखना है, जो एक संवेदनशील, न्यायपूर्ण और सामंजस्यपूर्ण समाज की आधारशिला हैं। मूल्य–आधारित शिक्षा कोई पूरक तत्व नहीं, बल्कि समग्र मानव विकास की आत्मा है, जो व्यक्ति के चरित्र, भावनात्मक बुद्धिमत्ता, सहानुभूति और सामाजिक उत्तरदायित्व को सुदृढ़ करती है। साथ ही, डिजिटल शिक्षा के अनेक लाभों के बावजूद यह स्वभावतः मूल्य–तटस्थ है, यदि इसका प्रयोग विवेकपूर्वक और नैतिक दृष्टिकोण से न किया जाए, तो यह साइबरबुलिंग, भ्रामक सूचना, सामाजिक अलगाव और नैतिक क्षरण जैसे गंभीर परिणाम उत्पन्न कर सकती है। इन दोनों क्षेत्रों–प्रौद्योगिकी और मूल्य–का संतुलित समन्वय ही शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य को साकार कर सकता है। यह समन्वय "डिजिटल नागरिकता", "आलोचनात्मक सोच" और "डिजिटल सहानुभूति" जैसे तत्वों के माध्यम से संभव है, जिन्हें शिक्षकों, अभिभावकों और नीति–निर्माताओं सभी को एक साझा उत्तरदायित्व के रूप में अपनाना होगा। शिक्षा का लक्ष्य केवल सूचना–समृद्ध व्यक्ति तैयार करना नहीं, बल्कि ऐसे संवेदनशील नागरिक बनाना है जो जटिल नैतिक निर्णय ले सकें और समाज में सकारात्मक परिवर्तन के वाहक बनें। भविष्य की दिशा एक ऐसी पीढ़ी के निर्माण की ओर होनी चाहिए जो न केवल तकनीकी रूप से दक्ष हो, बल्कि नैतिक रूप से भी सजग और मानवीय हो। यदि हम डिजिटल युग की शिक्षा में मूल्यों को उसकी केंद्रीय धारा बनाए रखें, तो निश्चय ही तकनीकी प्रगति मानवता की सच्ची प्रगति का माध्यम बन सकेगी। यह केवल शिक्षा के भविष्य का नहीं, बल्कि मानव सभ्यता के भविष्य का प्रश्न है।

## References


1. Singh, R., & Sharma, M.(2023). *Value-Based Education in the Age of Digital Transformation: A Conceptual Review. International Journal of Educational Development, 99*, 102747. https://doi.org/10.1016/j.ijedudev.2023.102747
2. Nair, P., & Thomas, L. (2022). *Integrating Moral and Ethical Values in Online Learning Environments. Education and Information Technologies, 27*(10), 13459–13474. https://doi.org/10.1007/s10639-022-11256-3
3. Kumar, A., & Bhattacharya, S. (2021). *Revisiting Value Education for the 21st Century Learner. Journal of Human Values, 27*(2), 98–111. https://doi.org/10.1177/09716858211013542
4. Komalasari, K., Abdulkarim, A., Saripudin, D. & Iswandi, D. (2024). *Blended learning based on living values education for the development of students digital citizenship.* Kasetsart Journal of Social Sciences, 45(4), 1229–1240.
5. Joshi, J. H. & Sonara H. J. (2024). *Value Based Education in Modern Indian Education System.* Educational Administration: Theory & Practice, 30(6), 99-103. doi:10.53555/kuey.v30i6.511
6. Hassan Sain, Z., Baskara, R. & Vorfi, A. (2023). *Rethinking Pedagogy in the Digital Age: Analyzing the Effectiveness of E-Learning Strategies in Higher Education.* Journal of Information Systems & Technology Research, 3(1). doi:10.55537/jistr.v3i1.772.
7. Khare, A. (2021). *Analytical Study of Indian Society in Relevance to Value Based Education.* Turkish Online Journal of Qualitative Inquiry, 12(6).
8. Syobar, K. (2024). *Basic Value of Education in the Era of Artificial Intelligence (AI).* International Conference on Applied Social Sciences in Education, 1(1), 251-254. doi:10.31316/icasse.v1i1.6847.
9. Kumari, N., Sachdeva, M. & Verma, K. (2023). *Digital Citizenship Education in Higher Education: A Study in Indian Perspective.* Journal of Higher Education Theory & Practice, 23(20). doi:10.33423/jhetp.v23i20.6693.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 37-42
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i7
SJIF (2025) : 8.749

शोध पत्र

# Cyanobacteria and their uses

Pratibha Gupta[1], Mohit Kumar Tiwari[2] and Sonalika Mishra[2]
[1]Central Botanical Laboratory, Botanical Survey of India, Ministry of Environment, Forest and Climate Change Government of India, A.J.C. Bose Botanic Garden, Howrah- 711 103, W.B. India
[2]1/626, Ruchi Khand-1, Sharda Nagar Yojna, Lucknow- 226 002, U.P., India
drpratibha2024@gmail.com, drmohit2008@gmail.com, sonalika132003@gmail.com

**Received: 26-10-2025, Accepted: 10-11-2025**

**Abstract**- Cyanobacteria or blue green algae are gram negative photosynthetic autotrophic prokaryotes. They are most primitive organisms which started to perform oxygen producing photosynthesis processes on this earth. Cyanobacteria are most successful, self-dependent organisms on this earth, survived for more than 3 billion years in almost all climatic conditions of earth. They may be unicellular, colonial or filamentous, fresh water or marine or terrestrial or even also epiphytic. Cyanobacterial colonies are generally surrounded with a gelatinous sheath. They added oxygen in earth's atmosphere during early period of evolution of life. Their reserve food material is cyanophycean starch and protein. Bluegreen algae or Cyanobacteria are capable of converting atmospheric nitrogen into ammonium compounds. These organisms play very important role in ecosystem of earth and are very useful for us. Cyanobacteria are good source of energy, food and diet supplement, source of vitamins, minerals, with wide range of medicinal properties like potential antioxidants, immunomodulators, and even antitubercular, anticancer agents, source of bio fuels, bio fertilizer and bio herbicide, algaecide and pesticide. So well-studied and proper use of Cyanobacteria may act as boon for all organisms on this earth

**Key words**– Prokaryotic, Blue green algae, Cyanobacteria, Ammonium compounds, Bio-fuel, Bio fertilizer, Diet supplement

# सायनोबैक्टेरिया और उनके उपयोग

प्रतिभा गुप्ता,[1] मोहित कुमार तिवारी[2] एवं सोनालिका मिश्रा[2]
[1]केंद्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार, ए0 जे0 सी0 बोस वनस्पति उद्यान, हावड़ा– 711 103, पश्चिम बंगाल,
[2]1/626, रुचि खण्ड–1, शारदा नगर योजना, लखनऊ– 226 002, उ0प्र0
drpratibha2024@gmail.com, drmohit2008@gmail.com, sonalika132003@gmail.com

**सार**– नीलहरित शैवाल या सायनोबैक्टेरिया ग्राम रंजक ऋणात्मक, प्रकाश संश्लेशी, आत्मपोशी, पूर्वकेन्द्रकीय अति सूक्ष्म जीव हैं। ये वे जीवधारी हैं जिन्होंने प्रकाश संश्लेशण क्रिया द्वारा पृथ्वी पर आक्सीजन उत्पन्न करना प्रारम्भ किया। सायनोबैक्टेरिया पृथ्वी पर सबसे अधिक सफल व आत्मनिर्भर जीव हैं जो 3 खरब वर्षों से भी अधिक समय से इस पृथ्वी पर पाये जाने वाली सभी वातावरणीय परिस्थितियों में पाये जाते हैं। ये एक कोशकीय, औपनिवेशिक, तन्तुरूपी, स्वच्छजलीय, समुद्री, स्थलीय और उपरिपादपीय हो सकते हैं। नीलहरित शैवालों के औपनिवेश सामान्यतः एक विपविपी भलेष्मा झिल्ली से घिरे रहते हैं। जीवन की उत्पति के प्रारम्भ में इन्होंने ही पृथ्वी के वायुमण्डल में आक्सीजन का निर्माण किया। सायनोफाइसियन मंड एवं प्रोटीन इनके संग्रहित भोज्य पदार्थ होते हैं। नीलहरित शैवाल वातावरण की नाइट्रोजन को अमोनिया युक्त रसायनों में परिवर्तित करने की क्षमता रखते हैं। ये जीव पृथ्वी के परिस्थितिकी तंन्त्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं और हमारे लिये अत्यन्त उपयोगी हैं। सायनोबैक्टेरिया उर्जा, आहार एवं पोषण अनुपूरक, विटामिन व खनिजों के उत्तम स्रोत होते हैं, इसके साथ ही इनके वृहत औषधीय गुण जैसे प्रभावशाली प्रति–आक्सीजनक, रोग प्रतिरोधक क्षमता उत्प्रेरक, क्षय एवं कर्क रोग प्रतिरोधी प्रभाव, जैविक ईधन, जैविक उर्वरक एवं जैविक खर–पतवार, शैवाल एवं कीटनाशक के रूप में उपयोग किया जा सकता है। अतएव नीलहरित शैवालों का विस्तृत अध्ययन व उनका सही उपयोग पृथ्वी के समस्त जीवधारियों के लिये वरदान सिद्ध हो सकता है।

**बीज शब्द**– पूर्वकेन्द्रकीय, नीलहरित शैवाल, सायनोबैक्टेरिया, अमोनिया युक्त रसायन, जैविक ईधन, जैविक उर्वरक, पोषण अनुपूरक

## 1. नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया का परिचय

**1.1 प्राचीन प्रकाश संश्लेषक प्रोकैरियोट्स**– सायनोबैक्टीरिया, जिन्हें नील–हरित शैवाल भी कहा जाता है, पृथ्वी के जैविक इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। ये प्राचीन पूर्वकेन्द्रकीय जीव/प्रोकैरियोट्स लगभग 3–5 अरब वर्ष पूर्व उत्पन्न हुए थे, जिन्होंने प्रकाश संश्लेषण द्वारा ऑक्सीजन उत्पन्न की, जिसने पृथ्वी ग्रह के वायुमंडल को मौलिक रूप से बदल दिया[1,2]। परिणाम स्वरूप जीवों के विकास

प्रक्रिया की सफलता ने अधिक जटिल जीवन रूपों के निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया, जिसके कारण नीलहरित शैवाल जीवन की उत्पत्ति और पारिस्थितिकी विकास को समझने के लिए अपरिहार्य हो गए। वे एक ऐसे वंश का प्रतिनिधित्व करते हैं जो न केवल पूर्व के सभी भूवैज्ञानिक युगों में जीवित रहा वरन विकसित भी हुआ है। अत्यधिक अनुकूलन क्षमता के कारण, सायनोबैक्टीरिया विभिन्न प्रकार के वातावरणों में निवास करते हैं। मीठे पानी की झीलों और महासागरों की शांत प्रतीत होने वाली सतहों से लेकर भूतापीय झरनों, अतिलवणीय लैगून और यहाँ तक कि जमी हुई ध्रुवीय प्रणालियों की कठोरतम चरम सीमाओं तक पाये जाते हैं, इनकी अनुकूलन क्षमता अद्वितीय है[3,2]। नीलहरित शैवाल की सर्वव्यापी उपस्थिति उनकी सुदृढ़ उपापचयी प्रणाली और विविध ऊर्जा एवं पोषक स्रोतों का दोहन करने की क्षमता का प्रमाण है। इनकी प्रकाश संश्लेषक क्षमताएँ इन्हें सौर ऊर्जा का दोहन करने, कार्बन डाइऑक्साइड को कार्बनिक पदार्थों में परिवर्तित करने और ऑक्सीजन मुक्त करने में सक्षम बनाती हैं। प्राथमिक उत्पादकों के रूप में अपनी अद्वितीय भूमिका के अतिरिक्त, नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया वैश्विक पोषक चक्र, उर्जा चक्र, नाइट्रोजन चक्र एवं आक्सीजन चक्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनकी कई प्रजातियों में वायुमंडलीय नाइट्रोजन को ग्रहण करने और उसे अमोनिया जैसे जैवउपलब्ध रूपों में परिवर्तित करने की अनूठी क्षमता होती है, जो पौधों की वृद्धि और समग्र पारिस्थितिकी तंत्र में उत्पादकता एवं प्रकृतिक नाइट्रोजन चक्र के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं[4]। यह नाइट्रोजनस्थिरीकरण क्षमता उन्हें बंजर या पोषक तत्वों की कमी वाले वातावरण में भी पनपने की सामर्थ्य देती है, जिससे वे अग्रणी प्रजातियों के रूप में कार्य करते हैं, जो पोषक मृदा के निर्माण का प्रारम्भ करती हैं एवं मृदा की उर्वरता बढ़ाती हैं। उनका ये बहुआयामी योगदान सूक्ष्म स्तर से लेकर वैश्विक जैव–भू–रासायनिक चक्रों तक, उनके पारिस्थितिक महत्व को रेखांकित करता हैं।

1.2 **आकृति विज्ञान, वर्गीकरण और शरीर क्रिया विज्ञान**– नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया की लगभग 2,700–4,700 वर्णित और संभावित अनुमानतः 8000 से अधिक प्रजातियां, आकारिकी के विभिन्न रूपों की एक प्रभावशाली श्रृंखला प्रदर्शित करती हैं, जो व्यापक पारिस्थितिक स्थितियों में उनका सफल योगदान दर्शाते हैं। वे सरल एककोशिकीय जीवों के रूप में, जटिल औपनिवेशिक समूहों के रूप में या कोशिकाओं की श्रृंखलाओं से युक्त तंतुमय संरचनाओं के रूप में विद्यमान हो सकते हैं[5]। यह रूपात्मक विविधता उन्हें विभिन्न गणों में वर्गीकृत करती है, जिनमें सम्मिलित हैं, **क्रोकोकेल्स**– जिनकी विशेषता उनके एककोशिकीय या सरल औपनिवेशिक रूप हैं, **नोस्टोकेल्स**– जो अपनी तंतुमय, प्रायः नाइट्रोजन–स्थिरीकरण करने वाली प्रजातियों के लिए जाने जाते है, जिनमें हेटेरोसिस्ट जैसी विशिष्ट कोशिकाएँ होती हैं और **सिनेकोकोकेल्स**– जिनमें एककोशिकीय और तंतुमय दोनों प्रकार शामिल हैं। लगभग 4,500 से अधिक प्रजातियों की पहचान के साथ, उनका वर्गीकरण विस्तार उनके प्राचीन और सफल विकासवादी इतिहास को दर्शाता है।

**एककोशिकीय रूपः** सरल, एकल कोशिकाएँ, जो अक्सर प्लवकीय समुदायों में पाई जाती हैं। उदाहरण–सिनेकोकोकस।
**तंतुमय रूपः** कोशिकाओं की श्रृंखलाएँ, जिनमें कभी–कभी नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए हेटेरोसिस्ट जैसी विशिष्ट संरचनाएँ होती हैं। उदाहरण–नोस्टोक।
**औपनिवेशिक समुच्चयः**कोशिकाओं के समूह जो एक चिपचिपी श्लेष्मा के आवरण में बंद होते हैं और दृश्यमान उपनिवेश बनाते हैं, उदाहरण–माइक्रोसिस्टिस।

सु–अध्ययनित नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरियम का एक प्रमुख उदाहरण सिनेकोसिस्टिस प्रजाति (पीसीसी 6803) है, जो प्रोकैरियोटिक प्रकाश संश्लेषण और कोशिकीय जीव विज्ञान को समझने के लिए एक आदर्श जीव के रूप में कार्य करता है। सिनेकोसिस्टिस पर किए गए शोध ने जैविक गतिशीलता के जटिल तंत्रों को स्पष्ट किया है, जिसमें विशेष रूप से टाइप IV पिली नामक अमीनो अम्ल की तन्तु रुपी रचना द्वारा वाह्य कोशकीय इलेक्ट्रान तन्त्र मध्यस्थता की गई। ये गतिशील उपांग जीवाणु को सतहों पर गति करने और प्रकाश–आवर्तन प्रदर्शित करने में सक्षम बनाते हैं, जो प्रकाश संश्लेषण के लिए अनुकूलतम प्रकाश स्थितियों की तलाश हेतु एक महत्वपूर्ण अनुकूलन है। ऐसी गतिशीलता जैव झिल्ली (बायोफिल्म) निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, एक सामूहिक व्यवहार जो कोशिकाओं को शुष्कन और पराबैंगनी विकिरण से सुरक्षित रख कर विभिन्न पर्यावरणीय आवासों में उत्तरजीविता और अनुकूलन को बढ़ाता हैं। नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया के जीवन का मूल उनका अत्यधिक कुशल प्रकाश संश्लेषक तंत्र है, जो सकेन्द्रकीय/यूकेरियोटिक पौधों के तंत्र से अत्याधिक समानता दर्शाता है। इनमें सकेन्द्रकीय पौधों के समान प्रकाशतंत्र I (PSI-I) और प्रकाशतंत्र II (PSI-II) दोनों होते हैं, जो ऑक्सीजनमुक्त प्रकाश संश्लेषण को संभव बनाते हैं जहाँ जल के विभाजन से ऑक्सीजन मुक्त होती है और प्रकाश ऊर्जा, एटीपी (ATP) तथा एन.ए.डी.पी.एच. (NADPH) के रूप में, रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है[4]। यह जटिल जैवरासायनिक मार्ग उन्हें उल्लेखनीय दक्षता के साथ सौर ऊर्जा ग्रहण करने, कार्बन स्थिरीकरण और जैवभार उत्पादन को गति प्रदान करने में सक्षम बनाता है, जो कई जलीय खाद्य जालों का आधार बनता है। उनकी शारीरिक सुदृढ़ता, उनके विविध रूपों के साथ, उनकी पारिस्थितिकी जन्य बहुमुखी प्रतिभा और जैवविकास में उनके महत्व को दर्शाती हैं।

## 2. नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया के उपापचयज

2.1 **विविधता और कार्यात्मक भूमिकाएँ**– सायनोबैक्टीरिया प्राथमिक और द्वितीयक उपापचयजों की एक आश्चर्यजनक श्रृंखला के प्रचुर उत्पादक हैं, जिनमें से कई अत्यन्त महत्वपूर्ण पारिस्थितिक और जैवप्रौद्योगिकीय मूल्य रखते हैं। इनमें पाये जाने वाले रासायनिक यौगिक कैरोटीनॉयड, फाइकोसायनिन, फाइकोएरिथ्रिन और फाइकोबिलिप्रोटीन जैसे आवश्यक वर्णक होते हैं, जो प्रकाश–संरक्षण और विविध जीवंत रंग प्रदान करते हैं, तथा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में प्रकाश संचयन के लिए आवश्यक सहायक वर्णक हैं[5]। वर्णकों के अतिरिक्त वे विभिन्न फेनोलिक यौगिकों, महत्वपूर्ण वसीय अम्लों और माइकोस्पोरिन–सदृश अमीनो अम्लों (MAAs)जैसे अद्वितीय जैवअणुओं का

संश्लेषण भी करते हैं। माइकोस्पोरिन–सदृश अमीनो अम्ल (MAAs) अपने शक्तिशाली पराबैंगनी अवशोषक गुणों के लिए विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जो प्राकृतिक सनस्क्रीन के रूप में कार्य करते हैं और उच्च–प्रकाश वातावरण में साइनोबैक्टीरियल कोशिकाओं को हानिकारक सौर विकिरण से बचाते हैं[4]। विशेष बात यह है कि कुछ नीलहरित शैवालों में बने कुछ उपापचयी रसायन (साइनोबैक्टीरियल मेटाबोलाइट्स) अन्योन्य रसायन/ऐलीलोकेमिकल गुण प्रदर्शित करते हैं, जिसका अर्थ है कि वे अन्य जीवों की वृद्धि और उत्तरजीविता को प्रभावित कर सकते हैं। इनमें साइनोटॉक्सिन भी शामिल हैं, जो हानिकारक शैवाल प्रस्फुटन में अपने हानिकारक प्रभावों के बावजूद, कृषि अनुप्रयोगों के लिए आशाजनक हैं। इन प्राकृतिक यौगिकों का उपयोग शक्तिशाली, पर्यावरण–अनुकूल कीटनाशकों, विशेष रूप से शैवालनाशकों और शाकनाशियों के रूप में किया जा सकता है[5,6]। विशिष्ट कीटों या अवांछित पौधों के विरुद्ध उनकी लक्षित क्रिया,संश्लेषित (सिंथेटिक) कृषि–रसायनों का एक स्थायी विकल्प प्रदान करती है, पर्यावरणीय दुष्प्रभावों को कम करके आधुनिक कृषि में जैविक नियंत्रण रणनीतियों को प्रोत्साहन देती हैं, इसके अतिरिक्त, सायनोबैक्टीरिया फाइटोहॉर्मोनों का संश्लेषण करते हैं जो उनकी तनाव प्रतिक्रियाओं और समग्र शारीरिक नियमन के लिए अभिन्न अंग हैं। सायनोबैक्टीरिया में एक प्रसिद्ध पादप हार्मोन, एब्सिसिक अम्ल (ABA), की पहचान की गई है और यह पर्यावरणीय तनावों के प्रति उनके अनुकूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, उदाहरण के लिए, एब्सिसिक अम्ल सायनोबैक्टीरिया को उच्च लवणता और सूखे जैसी परिस्थितियों का सामना करने में सहायता करता है, और कोशिकीय जल संतुलन और जीन अभिव्यक्ति पथों[4] को प्रभावित करता है। ऐसे जटिल हार्मोनल तंत्रों की उपस्थिति और कार्यात्मक महत्व, उन परिष्कृत जैव–रासायनिक पथों को रेखांकित करते हैं जो सायनोबैक्टीरिया को अत्यधिक गतिशील और बहुधा चुनौतीपूर्ण आवासों में पनपने में सक्षम बनाते हैं, जो उनकी उल्लेखनीय अनुकूलन क्षमता को प्रदर्शित करता है।

2.2 **पर्यावरणीय और पारिस्थितिक महत्व**– नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया जलीय और स्थलीय दोनों पारिस्थितिक तंत्रों के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बनाए रखने में एक अपरिहार्य भूमिका निभाते हैं। प्राचीन प्राथमिक उत्पादकों के रूप में, वे कई खाद्य जालों का आधार बनाते हैं, प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से सौर ऊर्जा को कार्बनिक पदार्थों में परिवर्तित करते हैं। इसके अलावा, वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर करने की उनकी अद्वितीय क्षमता पोषक चक्रण का एक महतवपूर्ण आधार है। कई प्रजातियों में हेटेरोसिस्ट नामक विशिष्ट कोशिकाएँ होती हैं, जो निष्क्रिय नाइट्रोजन गैस को अमोनिया में परिवर्तित कर सकती हैं, जो पौधों की वृद्धि के लिए एक महत्वपूर्ण पोषक रसायन है। यह प्रक्रिया मिट्टी और जल की उरवरकता को समृद्ध बनाती है एवं समग्र जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र के नियंत्रण के कार्य को विशेष रूप से नाइट्रोजन–सीमित वातावरण में[4] सहयोग देती है। सायनोबैक्टीरिया मिट्टी की उर्वरता के लिए महत्वपूर्ण हैं, जो प्राकृतिक रूप से कृषि उत्पादकता को बढ़ाते हैं।उनकी अग्रणी सक्रियता, कठोर, बंजर वातावरण में उपनिवेश बनाने और उसे बदलने की उनकी क्षमता में स्पष्ट है। सायनोबैक्टीरिया अक्सर नवीन निर्मित चट्टानी सतहों या पोषक तत्वों की कमी वाली मिट्टी पर सबसे पहले स्वयं को स्थापित करने वाले प्रथम जीवन रूपों में से होते हैं। बाह्य कोशिकीय बहुलक पदार्थों (ईपीएस) के उत्सर्जन और जैव झिल्ली/बायोफिल्म निर्माण के माध्यम से, वे मिट्टी के कणों को बांधने, कटाव को रोकने और मृदा के विकास के प्रारंभिक चरणों में योगदान करने में सहायता करते हैं। यह प्रक्रिया नीलहरित शैवालों के सूक्ष्म आवासों के निर्माण से प्रारम्भ होती है और धीरे–धीरे कार्बनिक पदार्थो का निर्माण करती है, जिससे अधिक जटिल पौधों और सूक्ष्मजीव समुदायों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त होता है, इस प्रकार पारिस्थितिक उत्तराधिकार की स्थापना होती है और एक नये पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण का प्रारम्भ होता है[4]।

नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया का पारिस्थितिक प्रभाव सदैव केवल लाभकारी नहीं है। विशिष्ट पर्यावरणीय परिस्थितियों में, जैसे गर्म तापमान और उच्च पोषक तत्व भार (जैसे, कृषि अपवाह से नाइट्रोजन और फास्फोरस) के कारण, कुछ सायनोबैक्टीरिया की प्रजातियाँ अत्याधिक तीव्रता से वृद्धि कर सकती हैं, जिससे व्यापक प्रस्फुटन/ब्लूम उत्पन्न हो सकते हैं। ये सायनोबैक्टीरियल प्रस्फुटन/ब्लूम जल की गुणवत्ता को गंभीर रूप से नष्ट कर सकते हैं, जलमग्न वनस्पतियों तक सूर्य का प्रकाश पहुँचने से रोक लेते हैं और उनके सड़ने पर जल में ऑक्सीजन अत्यधिक कमी हो सकती है। इससे भी अधिक चिंताजनक बात यह है कि प्रस्फुटन/ब्लूम बनाने वाली कई प्रजातियाँ शक्तिशाली सायनोटॉक्सिन नामक विश उत्पन्न करती हैं, जो जलीय जीवन, पशुधन और मनुष्यों के लिए हानिकारक या घातक भी हो सकते हैं[7]। परिणामस्वरूप, हानिकारक सायनोबैक्टीरियल प्रस्फुटन/ब्लूम से जुड़े संकटों को कम करने और जन स्वास्थ्य एवं पारिस्थितिक अखंडता की रक्षा के लिए प्रभावी निगरानी और आवश्यक प्रबंधन रणनीतियाँ अपनाना आवश्यक है।

3. **जैव–प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगः** जैव ईंधन से जैव–उत्तेजक तक–

3.1 **स्थायी जैव ईंधन के लिये**– पर्यावरण के अनुकूल ऊर्जा के लिए तीव्र वृद्धि वाली उच्च लिपिड/वसा सामग्री के लिये उपयोग। सायनोबैक्टीरिया की कुछ प्रजातियां जैसे एनाबिना, नोस्टॉक, सिनेकोकोकस, सिनेकोसिस्टिस, स्पाइरूलिना, ओसिलोटोरिया इत्यादि की विभिन्नउपजातियां स्थायी जैव–प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों के लिए, विशेष रूप से गैर परम्परागत नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में, अत्यधिक आशाजनक प्रावधान के रूप में उभर रहे हैं। कुशल प्रकाश संश्लेषण करने की उनकी क्षमता का अर्थ है कि वे सौर ऊर्जा और कार्बन डाई आक्साइड को उच्च लिपिड/वसा सामग्री वाले जैवभार/बायोमास में परिवर्तित कर सकते हैं, जो उन्हें जैव–ईंधन उत्पादन के लिए आदर्श बनाता है[4]। कुछ प्रजातियाँ अपने शुष्क भार के 65% तक लिपिड/वसा संचित कर सकती हैं, जो कई अन्य जैव ईंधन के कच्चे माल (फीडस्टॉक्स) से अधिक उपयोगी है। स्थलीय फसलों के विपरीत, सायनोबैक्टीरिया को कृषि योग्य भूमि या मीठे पानी की आवश्यकता नहीं होती है, जिससे खाद्य उत्पादन के साथ प्रतिस्पर्धा कम होती है और बहुमूल्य कृषि संसाधन संरक्षित रहते हैं। उनकी तीव्र वृद्धि दर और गैर–पेयजल या यहाँ तक कि अपशिष्ट जल में भी पनपने की क्षमता, बायोडीजल और बायोएथेनॉल सहित अगली पीढ़ी के जैव ईंधनों के लिए एक स्थायी स्रोत के रूप में उनकी उपयोगिता को और बढ़ाती हैं।

3.2 **औषधीय क्षमता के उपयोग**– ऊर्जा के अतिरिक्त, नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया नवीन जैवसक्रिय यौगिकों का एक समृद्ध, अप्रयुक्त भंडार है, जिनमें महत्वपूर्ण औषधीय गुण हैं। अनुसंधानों ने एंटीबायोटिक, क्षय–रोधी, कैंसर–रोधी, विषाणु–रोधी और सूजन–रोधी गुणों वाले विविध प्रकार के उपापचयी रसायन (मेटाबोलाइट्स) की खोज की है[5,6,8,9]। ये प्राकृतिक उत्पाद औषधीय अनुसंधान और विकास के लिए एक मूल्यवान संसाधन हैं, जो विभिन्न रोगों के उपचार के नवीन मार्ग प्रदान करते हैं। वर्तमान समय में इन यौगिकों के पृथक्करण और उनकी विशेषताओं के निर्धारण के साथ–साथ व्यावसायिक स्तर पर उनके उत्पादन को अनुकूलित करने हेतु अनुसंधान किये जा रहे हैं। एंटीबायोटिक्स, कैंसर–रोधी और एंटीवायरल एजेंटों की खोज में पाया गया की कई साइनोबैक्टीरिया जैसे नोस्टॉक, आर्थोस्पाइरा, माइक्रोसिस्टिस, लेन्गब्या, सिम्पलोका, इत्यादि जैविक रूप से सक्रिय यौगिक उत्पन्न करते हैं, जिनमें कैरोटीनॉयड और अन्य जैव–अणु शामिल हैं जो प्रति–आक्सीजनक/एंन्टीऑक्सीडेंट, प्रति–प्रदाह/एंन्टीइन्फलेमेटरी, प्रतिरक्षा–उत्प्रेरक/इम्यूनोमॉड्यूलेटर और यहाँ तक कि इन्फलूएंजा, एडस्, व कैंसर–रोधी एजेंट के रूप में भी क्षमता प्रदर्शित करते हैं। जिसके परिणाम स्वरूप सायनोबैक्टीरिया भविष्य की चिकित्सा पद्धति और नए चिकित्सीय कारकों के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में स्थापित हो रहा है।

3.3 **कृषि जैव उत्तेजक के रूप में**– नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरिया कृषि के क्षेत्र में जलवायु–अनुकूल खेती के लिए, फसल की उपज में वृद्धि और तनाव प्रतिरोधक क्षमता के विकास में वृद्धि, सिंथेटिक उर्वरकों और कीटनाशकों के पर्यावरण–अनुकूल विकल्प प्रदान करते हैं। इनकी कुछ प्रजातियां जैसे नोस्टॉक, एनाबिना, माइक्रोसिस्टिस, स्पाइरूलिना, ओसिलेटोरिया इत्यादि प्राकृतिक जैव उत्तेजक के रूप में, ये फसल की उपज बढ़ाते हैं, पोषक तत्वों के अवशोषण में सुधार करते हैं, और शुष्क तथा उच्च लवणता जैसे पर्यावरणीय तनावों के प्रति पौधों की प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि करते हैं[9,10,11]। नील हरित शैवाल की नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने और वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थों का उत्पादन करने की उनकी क्षमता सीधे तौर पर मिट्टी की उर्वरता और पौधों के स्वास्थ्य को लाभ पहुंचाती है, जिससे अधिक टिकाऊ और जलवायु–अनुकूल कृषि पद्धतियों में योगदान मिलता है। ट्राइकोडेसमियम, एक समुद्री नाइट्रोजन–स्थिरीकरण करने वाली प्रजाति है। सायनोबैक्टीरिया–आधारित उत्पादों को कृषि प्रणालियों में एकीकृत करके, हम रासायनिक आदानों पर निर्भरता कम करके पर्यावरण प्रदूषण को कम कर सकते हैं और वैश्विक खाद्य सुरक्षा चुनौतियों का समाधान करते हुए अधिक सुदृढ़ और उत्पादक खाद्य प्रणालियों को बढ़ावा दे सकते हैं।

3.4 **भोजन और पोषण पूरक आहार एवं विटामिनों के स्त्रोत के रूप में**– नीलहरित शैवाल की कुछ प्रजातियां जैसे एफानिजोमेनॉन फ्लोस–एक्वा, नोस्टॉक, एनाबिना आदि का प्रयोग भोजन तथा पूरक आहार रूप में किया जाता है। स्पाइरुलिना (आर्थोस्पाइरा सहित) एक प्रसिद्ध तंतुरूपी नीलहरित शैवाल/सायनोबैक्टीरियम है, यह प्रोटीन, विटामिन और खनिजों का एक समृद्ध स्रोत है और इसे भी टैबलेट और पाउडर के रूप में इसका उपयोग पोषण पूरक आहार के रूप में किया जाता है[12]।

3.5 **जैव उर्वरकों के रूप में**– नीलहरित शैवाल कई प्रजातियां शक्तिशाली जैव उरर्वरक के रूप में प्रयोग की जाती हैं। नोस्टॉक पौधों के साथ सहजीवी संबंध बनाता है और पौधों में नाइट्रोजन की कमी को नियंत्रित करने में सहायता करता है। एनाबीना की विभिन्न प्रजातियाँ वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करके मृदा उर्वरता में योगदान करती हैं। औलोसिरा फर्टिलिसिमा, कैलोथिक्स प्रजाति, टॉलिपोथ्रिक्स प्रजाति, और साइटोनेमा प्रजाति, ये कुशल नाइट्रोजन–स्थिरीकरण साइनोबैक्टीरिया हैं जिनका उपयोग मृदा की गुणवत्ता में सुधार के लिए जैव उर्वरकों के रूप में किया जा सकता है[19]।

3.5 **पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण और जैवगार के लिए**– प्रोक्लोरोकोकस और सिनेकोकोकस ये समुद्री साइनोबैक्टीरिया पृथ्वी पर सबसे अधिक मात्रा में पाए जाने वाले प्रकाश संश्लेषक जीव हैं, जो हमारे वातावरण के लिये ऑक्सीजन का एक महत्वपूर्ण भाग उत्पन्न करते हैं और प्राथमिक उत्पादक के रूप में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। ट्राइकोडेसमियम एक तंतुमय समुद्री साइनोबैक्टीरियम जो महासागरों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3.6 **आनुवंशिक इंजीनियरिंग और औद्योगिक उत्पादन में प्रगति**– जैव प्रौद्योगिकी में सायनोबैक्टीरिया की अपार क्षमता ने आनुवंशिक अभियंत्रिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति को प्रेरित किया है, जिससे शोधकर्ताओं को उनकी चयापचय क्षमताओं का विश्लेषण और उपयोगिता अध्ययन में सहायता मिली है। लक्षित आनुवंशिक संशोधन (टारगेटेड जेनेटिक करेक्शन) के माध्यम से, सिनेकोसिरिटरा प्रजाति जैसे विशिष्ट उपभेदों को वांछित चयापचयों का अधिक उत्पादन करने या पूरी तरह से नए यौगिकों को संश्लेषित करने के लिए अभियंत्रित किया जा सकता है। इसमें चयापचय मार्गों से सम्बन्धित जीनों में परिवर्तन किया जाता है, जिससे जैव ईंधन, फार्मास्यूटिकल्स या उच्च–मूल्य वाले रंगों (पिगमेंट) जैसे मूल्यवान उत्पादों की पैदावार बढ़ जाती है। अनुकूलित जैवसंश्लेषण मार्ग अनुकूलित सायनोबैक्टीरियल कोशिकाये बनाने का मार्ग प्रशस्त करते हैं। साइनोबैक्टेरिया कोशिकाओं की प्रयोगशालाओं में कोशिका उत्पादन क्षमता को अनुकूलित करना और विभिन्न औद्योगिक अनुप्रयोगों के लिए आधार स्तर पर प्रसंस्करण से जुड़ी लागतों को कम करना मुख्य ध्येय है[7]।

प्रयोगशाला में प्राप्त सफलताओं को व्यावसायिक वास्तविकताओं में बदलने के लिए, जैव प्रसंस्करण कम्पनियाँ सक्रिय रूप से उन्नत खेती की तकनीकों का विकास कर रही हैं। प्रमुख चुनौतियों में लागत–प्रभावी मापदंड प्राप्त करना और चयापचयी घटकों (मेटाबोलाइट) के निष्कर्षण की दक्षता को अधिकतम करना आवश्यक है। जैव संयन्त्रक/बायोरिएक्टर डिजाइन में नवाचार, जैसे कि संलग्न प्रकाश जैव

संयन्त्रक / फोटोबायोरिएक्टर, का उद्देश्य नियंत्रित वातावरण प्रदान करना है जो प्रकाश प्रवेश, कार्बन डाइ आक्साइड आपूर्ति और पोषक तत्व वितरण को अनुकूलित करता है, जिससे पारंपरिक खुले तालाब प्रणालियों की तुलना में उच्च जैवभार / बायोमास उत्पादकता प्राप्त होती है। ये तकनीकी प्रगति औद्योगिक पैमाने पर सायनोबैक्टीरियल उत्पादन में आने वाली आर्थिक बाधाओं को दूर करने और प्रतिस्पर्धी बाजारों में सायनोबैक्टीरिया–व्युत्पन्न उत्पादों की व्यवहार्यता सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

एक उन्नत प्रकाश जैव संयन्त्रक / फोटोबायोरिएक्टर और सक्रिय द्रव प्रणालियों में सायनोबैक्टीरियाका एकीकरण उनकी वृद्धि स्थितियों को नियंत्रित और अनुकूलित करने में एक बड़ी उपलब्धि का प्रतिनिधित्व करता है। ये प्रणालियाँ पर्यावरणीय मापदंडों के सटीक नियमन, संदूषण के व्यवधानों को न्यूनतम करने और विकास दर एवं लक्षित उत्पाद संचयन को अधिकतम करने की प्रक्रियामें सहायता देती हैं[2,12]। ऐसे नियंत्रित वातावरण न केवल जैव ईंधन उत्पादकता में सुधार करते हैं, वरन संसाधन उपयोग को भी बढ़ाते हैं, जिससे समग्र उत्पादन प्रक्रिया को कम खर्चीला व अधिक दीर्घकालिक बनाया जा सकता है। जैसे–जैसे सायनोबैक्टीरिया के जटिल जीव विज्ञान पर शोध जारी है और इंजीनियरिंग तकनीकें अधिक परिष्कृत होती जा रही हैं, उनका औद्योगिक दोहन एक उभरती हुई जैव–अर्थव्यवस्था की आधारशिला बनने के लिए तैयार है, जो विविध क्षेत्रों में स्थायी समाधान प्रदान करेगी।

4. **निष्कर्ष और भविष्य के दृष्टिकोण**– पृथ्वी पर प्रकाश संश्लेषण के प्राचीनतम अग्रदूत, नीलहरित शैवाल / सायनोबैक्टीरिया, अपनी विकासवादी नम्यता और अद्भुत अनुकूलन क्षमता के अतुलनीय प्रमाण के रूप में स्थापित हैं। यह व्यापक समीक्षा उनकी बहुमुखी उपयोगिता को रेखांकित करती है और उन्हें मानवता की कुछ सबसे गंभीर चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक असाधारण बहुमुखी और स्थायी संसाधन के रूप में स्थापित करती है। हमारे ग्रह को ऑक्सीजन प्रदान करने और वैश्विक पोषक चक्रों से लेकर पर्यावरण प्रबंधन, सतत् कृषि, उन्नत औषधियों और नवीकरणीय ऊर्जा में उनके आधुनिक अनुप्रयोगों तक, सायनोबैक्टीरिया पारिस्थितिक महत्व और जैव–प्रौद्योगिकीय संभावनाओं का एक अनूठा मिश्रण प्रस्तुत करते हैं। नाइट्रोजन को स्थिर करने, विविध प्रकार के जैवसक्रिय उपापचयजों / मेटाबोलाइट्स का उत्पादन करने और सूर्य के प्रकाश को कुशलतापूर्वक जैवभार / बायोमास में परिवर्तित करने की उनकी अद्भुत क्षमता उन्हें बहुमूल्य बनाती है।

सायनोबैक्टीरिया का अध्ययन और उनका उपयोग करने की दिशा में हुई उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद, वर्तमान सीमाओं को पार करने और उनकी विशाल क्षमता को पूरी तरह से साकार करने के लिए निरंतर अंतःविषय अनुसंधान और तकनीकी नवाचार आवश्यक हैं। वृहद स्तर पर कृषि प्रणालियों को अनुकूलित करने, उपापचयज / मेटाबोलाइट निष्कर्षण दक्षताओं को बढ़ाने और सशक्त आनुवंशिक अभियान्त्रिकीय रणनीतियों को विकसित करने जैसी चुनौतियों के लिए निरंतर निवेश और सहयोगात्मक प्रयासों की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त हानिकारक शैवाल प्रस्फुटन से संबंधित पर्यावरणीय चिंताओं का समाधान करना एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बना हुआ है, जिससे जल गुणवत्ता और जन स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए उन्नत निगरानी, पूर्वानुमान और शमन तकनीकों की आवश्यकता है। भविष्य में, एक स्थायी भविष्य के लिए नीलहरित शैवालों / सायनोबैक्टीरिया का पूर्ण लाभ उठाने में पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं और नैतिक आनुवंशिक प्रगति पर विशेष बल देना होगा। इन विशिष्ट सूक्ष्मजीवों को वृत्तीय अर्थव्यवस्था मॉडल में एकीकृत करने से, जहाँ अपशिष्ट उत्पादों का न्यूनतम और संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जाता है, उनके पर्यावरणीय लाभों में और वृद्धि होगी। अपनी जैविक क्षमता का रणनीतिक उपयोग करके, सायनोबैक्टीरिया खाद्य सुरक्षा, जैव ईंधन, जैविक खाद, पोषण, कार्बन शमन, जलवायु परिवर्तन शमन और नवीन स्वास्थ्य समाधानों की खोज से संबंधित वैश्विक चुनौतियों का समाधान करने में प्रमुख भूमिका निभाने के लिए तैयार हैं। प्राचीन जीवन रूपों से लेकर आधुनिक जैव–प्रौद्योगिकी महाशक्तियों तक की उनकी यात्रा निरंतर प्रेरणा देती है और एक स्वस्थ, अधिक टिकाऊ ग्रह की ओर ठोस मार्ग प्रदान करती है।

**References**


1. Mulkidjanian, A. Y., et al., (2006), "The cyanobacterial genome core and the origin of photosynthesis." Proc Natl Acad Sci U S A. 2006 Aug 29; 103(35):13126-31. doi: 10.1073/pnas.0605709103. Epub 2006 Aug 21.
2. Mehdizadeh Alaf M et al., (2022). "Cyanobacteria: Model Microorganisms and Beyond"., Microorganisms. Mar 24;10(4):696. doi:10.3390/ Microorganisms10040696, https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC9025173
3. Castenholz, R. W., & Waterbury, J. B. (1989). "Group 1. Cyanobacteria". Preface. In: Bergey's Manual of Systematic Bacteriology. (Eds) Vol. 3, pp. 1710
4. Mur, L. R., Skulberg, O. M., & Utkilen, H. (1999). "Cyanobacteria in the environment." Water Boards California. https://www.waterboards.ca.gov/waterrights/water_issues/programs/bay_delta/california_waterfix/exhibits/docs/dwr/dwr-731.pdf
5. Guihéneuf, F., et al. (2016). "Cyanobacteria and algae as sources of metabolites for biotechnology." https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC5403934
6. Rachana Singh, et al (2017), "Uncovering Potential Applications of Cyanobacteria and Algal Metabolites in Biology, Agriculture and Medicine: Current Status and Future Prospects". Microbiol. Sec. Food Microbiology. Volume 8 - 2017 | https://doi.org/10.3389/fmicb.2017.00515

7. Chorus, I., & Bartram, J. (Eds.). (1999). "Toxic Cyanobacteria in Water: A Guide to Their Public Health Consequences, Monitoring and Management." World Health Organization.
8. Volka, K., & Furkert, D. P. (2006). "Antialgal, Antibacterial, Antifungal activity of two metabolites produced and excreted by cyanobacteria during growth", Microbiological Research, 161(2):180-6
9. Gupta, Pratibha. 2010. "Algae - A beam of light in drug resistant tuberculosis." *Vanaspati Vani* 19: 83 – 86.
10. Kumar, A., et al. (2019). "Environmental impacts of synthetic fertilizers and the role of cyanobacteria-based biostimulants." ScienceDirect.com
11. Angela Sanchez, et al. (2023). "Overview of microalgae and cyanobacteria - based bio stimulants produced from wastewater and $CO_2$ streams towards sustainable agriculture – A review". Microbiological Research, 277: 127505
    https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/S0944501323002070
12. Gupta, Pratibha2018. "Occurrence of *Nostoc* Vaucher ex Bornet & Flahault in Water Bodies of Maldah District, West Bengal." *Anusandhan* 6(1): 40 – 46.


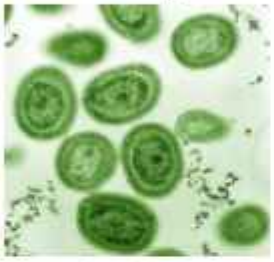

प्रोक्लोरोकोकस
*Prochlorococcus marinus*

सेनेकोकोकस
*Synechococcus*

ट्राइकोडेस्मियम
*Trichodesmium thiebautii*

स्पाइरूलिना
*Spirulina*

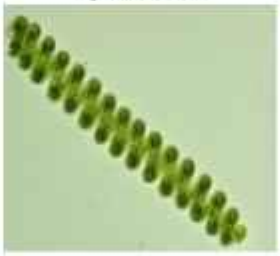

आर्थ्रोस्पाइरा
*Arthrospira platensis*

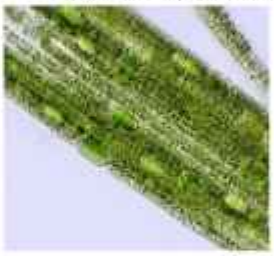

एफेनीजोमिनोन
*Aphanizomenon flos-aquae*

नोस्टोक
*Nostoc*

एनाबिना
*Anabaena circinalis*

ओलोसिरा
*Aulosira fertilissima*

कैलोथ्रिक्स
*Calothrix sp.*

टोलिपोथ्रिक्स
*Tolypothrix distorta*

स्काइटोनिमा
*Scytonema sp.*

(सभी चित्र इन्टरनेट से लिये गये हैं)

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 43-49
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.9
SJIF (2025) : 8.749

शोध पत्र

# A study of access to menstrual hygiene products among female construction workers

K.M. Chaman[1] and Vijay Kumar[2]
[1]Department of Sociology, University of Lucknow, Lucknow-226 007, UP, India
[2]Department of Sociology, B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226 001, UP, India
aarohichaman@gmail.com, kvijay297@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 30-11-2025**

**Abstract-** Menstrual hygiene is a significant health and social issue among female construction workers. This study aims to assess access and use of menstrual hygiene products among female construction workers. The study found that most female construction workers face a lack of hygiene products during menstruation, leading to physical, mental, and social health problems. The study also found that due to a lack of education and awareness, female construction workers do not understand the importance of menstrual hygiene. The results of this study point to the need to increase access and awareness of menstrual hygiene products among female construction workers. Governments and non-governmental organizations need to implement menstrual hygiene programs and provide them with hygiene products. The findings of this study are important for improving the health and well-being of female construction workers and can be useful for policymakers and program implementers.

**Key words-** menstrual hygiene, female construction workers, health, awareness

# महिला निर्माण श्रमिकों के बीच मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों तक पहुंच एक अध्ययन

के. एम. चमन[1] एवं विजय कुमार[2]
[1]समाजशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
[2]बी.एस.एन.वी. पी.जी. कॉलेज, लखनऊ–226 001, उ0प्र0, भारत
aarohichaman@gmail.com, kvijay297@gmail.com

**सार**– महिला निर्माण श्रमिकों के बीच मासिक धर्म स्वच्छता एक महत्वपूर्ण स्वास्थ्य और सामाजिक मुद्दा है। इस अध्ययन का उद्देश्य महिला निर्माण श्रमिकों के बीच मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की पहुँच और उपयोग का आकलन करना है। अध्ययन में पाया गया कि अधिकांश महिला निर्माण श्रमिकों को मासिक धर्म के दौरान स्वच्छता उत्पादों की कमी का सामना करना पड़ता है, जिससे शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। अध्ययन में यह भी पाया गया कि शिक्षा और जागरूकता की कमी के कारण, महिला निर्माण श्रमिक मासिक धर्म स्वच्छता के महत्व को नहीं समझ पाती हैं। इस अध्ययन के परिणाम महिला निर्माण श्रमिकों के बीच मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की पहुँच और जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता की ओर संकेत करते हैं। सरकारों और गैर–सरकारी संगठनों को मासिक धर्म स्वच्छता कार्यक्रमों को लागू करने और उन्हें स्वच्छता उत्पाद उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। इस अध्ययन के निष्कर्ष महिला निर्माण श्रमिकों के स्वास्थ्य और कल्याण में सुधार के लिए महत्वपूर्ण हैं और नीति निर्माताओं और कार्यक्रम कार्यान्वयनकर्ताओं के लिए उपयोगी हो सकते हैं।

**बीज शब्द**– मासिक धर्म स्वच्छता, महिला निर्माण श्रमिक, स्वास्थ्य, जागरूकता

1. **परिचय**– भारतीय अर्थव्यवस्था अनौपचारिक क्षेत्र पर काफी अधिक निर्भर करती है। यह क्षेत्र भारत के सामाजिक–आर्थिक–सांस्कृतिक विकास के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है। भारत जैसे विकासशील देश में अनौपचारिक क्षेत्र न केवल अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है, बल्कि यह देश के सबसे बड़े रोजगार देने वाले क्षेत्रों में से भी एक है। इस क्षेत्र में पुरुषों के साथ–साथ महिलाओं की भागीदारी भी महत्वपूर्ण है। महिला श्रमबल भागीदारी दर विभिन्न संरचनात्मक और सामाजिक–आर्थिक तत्वों से प्रभावित होती हैं। पिछले कुछ दशकों में श्रमबल में महिलाओं की भागीदारी दर में वृद्धि देखी गई है। श्रमबल में महिलाओं की अधिक भागीदारी को बढ़ावा देना और उनका स्वागत करना देश के आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है (श्रम एवं रोजगार मंत्रालय)[1]।अनौपचारिक क्षेत्र के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाएं कार्य करती हैं, जिसमें घरेलू कामकाजी महिलाएं, ब्यूटी पार्लर, सिलाई–कढ़ाई–बुनाई, होममेड, अस्पतालों, स्कूलों, कॉलेजों, निर्माण उद्योग, कृषि और मौसमी कृषि श्रमिक इत्यादि के रूप में शामिल हैं। वहीं कुछ महिलाएं सब्जी, मिठाई, फास्ट–फूड, खिलौनों का दुकान रखकर अपना जीवन निर्वाह कर रहीं हैं तथा कुछ महिलाएं गारा, मिट्टी, सीमेंट ढोने, बीड़ी उद्योग में कार्यरत है। इन सभी कार्यों को करते समय इनको कई सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। महिला निर्माण श्रमिकों को भारी भार उठाने, लंबे समय तक खड़े रहने और धूल व रसायनों के संपर्क में आने के कारण श्वसन संबंधी समस्याएं और चोट लगने का खतरा होता है। अत्यधिक तापमान में काम करने और कठोर रसायनों

के संपर्क में आने के कारण वे गर्मी में तनाव, निर्जलीकरण और त्वचा संबंधी समस्याओं के प्रति भी संवेदनशील होती हैं। निर्माण क्षेत्र दुनिया का सबसे बड़ा औद्योगिक रोजगारदाता है। जो वैश्विक रोजगार का 7 प्रतिशत और औद्योगिक रोजगार का 28 प्रतिशत हिस्सा प्रदान करता है। दक्षिण एशिया के देशों में महिलाएं ज्यादातर कम वेतन पर महत्वपूर्ण लेकिन अकुशल–अर्धकुशल कार्य करतीं हैं। भारत में यह अनुमान लगाया गया है कि, निर्माण श्रमिकों में 30 प्रतिशत महिलाएं कार्यरत हैं। जो उद्योग के निचले स्तर पर अकुशल या अर्धकुशल श्रमिकों के रूप में सिर पर बोझ उठाने वाले के रूप में कार्य कर रहीं हैं। भारत में निर्माण उद्योग को अगले 10 वर्षों में हर साल 7–8 प्रतिशत की वृद्धि दर की संभावना है। यह क्षेत्र भारत में कृषि के बाद आर्थिक गतिविधियों में दूसरा सबसे बड़ा योगदानकर्ता है। इस क्षेत्र में लगभग 35 मिलियन लोग कार्यरत हैं और यह क्षेत्र प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) प्रवाह का महत्वपूर्ण चालक है (पटेल,.आर..एल. एवं पिट्रोडा, जे. (2016)[2]।

2 **पृष्ठभूमि**– श्रमिक महिलाओं का कुशल निर्माण व्यवसायों में बहिष्कार और उनका हाशिए पर होना एक वैश्विक घटना है। भारत दुनिया का अकेला ऐसा देश नहीं है जो महिलाओं को निर्माण क्षेत्र के व्यवसायों में भाग लेने से हतोत्साहित करता है। निर्माण क्षेत्र अक्सर पुरुष प्रधान क्षेत्र माना जाता है यहाँ महिलाओं को अक्सर का अकुशल कार्य ही करना पड़ता है। भारत में निर्माण उद्योग सबसे तेजी से विकास करने वाले क्षेत्रों में से एक है। जिसकी वैश्विक वृद्धि दर 10 प्रतिशत है (निर्माण उद्योग विकास परिषद 2003)[3]। विभिन्न देशों में निर्माण क्षेत्र में कार्य करने वाली महिलाओं के अनुभव भिन्न –भिन्न हो सकते हैं, लेकिन इन विभिन्नताओं के पीछे कुछ सामान समस्याएं देखी जाती हैं। विकसित और विकासशील देशों में निर्माण श्रम बाजार लिंग के आधार पर बटा हुआ है, जहाँ महिलाएं आमतौर पर कम वेतन और दोहरावे वाले कार्यों तक सीमित रहती हैं जबकि पुरुष उच्च वेतन और कुशल कार्यों में संलग्न होते हैं। दुनिया भर में महिलाओं के लिए कुशल निर्माण कार्यों में प्रवेश करना कई जगहों पर चुनौतीपूर्ण बना हुआ है (बरुआ.बी 2008, 199)[4]। यह क्षेत्र श्रमिक महिलाओं के लिए कई समस्याओं का कारण भी बनता है। इस क्षेत्र में अक्सर महिलाओं को कम रोजगार प्राप्त होता है। ज्यादातर काम पुरुष श्रमिकों को दिया जाता है, क्योंकि समाज में कुछ लोगों की अब भी ये धारणा है कि पुरुष वर्ग महिला वर्ग से शारीरिक रूप में ज्यादा शक्तिशाली होता है। हालांकि मौजूदा दृष्टिकोण यह दर्शाते हैं, कि बदलाव लाना आसान नहीं होगा क्योंकि निर्माण उद्योग में पुरुषों का वर्चस्व महिलाओं के लिए एक बाधा है। अधिकांश देशों में निर्माण उद्योग लगभग पूरी तरह से पुरुषों का क्षेत्र है, जबकि भारत में बड़ी संख्या में महिलाएं निर्माण प्रक्रिया में सक्रिय रूप से शामिल हैं।

3. **निर्माण क्षेत्र में कार्यरत श्रमिक महिलाओं की समस्याएं**– निर्माण उद्योग दुनिया भर में सबसे बड़े नियोक्ताओं में से एक है, फिर भी यह महिला श्रमिकों के लिए स्वास्थ्य संबंधी गंभीर जोखिमें पैदा करता है। निर्माण उद्योग में महिलाओं को विभिन्न शारीरिक जरूरतों जैसे स्वास्थ्य सेवा की कमी और खतरनाक कार्यस्थल परिस्थितियों के कारण अनेक स्वास्थ्य चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। मासिक धर्म एक प्राकृतिक जैविक प्रक्रिया है जो दुनिया भर में लाखों करोड़ों महिलाओं को प्रभावित करती हैं। हालांकि, कई महिलाओं के लिए, विशेष रूप से निम्न–आय वर्ग और हाशिए पर रहने वाले समुदायों की महिलाओं के लिए, मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों, स्वच्छता सुविधाओं और शिक्षा तक सीमित पहुंच के कारण मासिक धर्म एक बड़ी चुनौती बना हुआ है। महिला निर्माण श्रमिकों को प्रजनन स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जिनमें मासिक धर्म संबंधी समस्याएं, गर्भावस्था संबंधी जटिलताएं और प्रजनन पथ के संक्रमण शामिल हैं। स्वच्छता सुविधाओं, स्वच्छ पानी और स्वच्छता उत्पादों तक पहुंच की कमी इन समस्याओं को और अधिक बढ़ा देती है, जिसके दौरान महिला निर्माण श्रमिकों को नौकरी की शारीरिक और भावनात्मक मांगों, सामाजिक समर्थन की कमी और उत्पीड़न व हिंसा के कारण तनाव, चिंता और अवसाद सहित मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं के विकसित होने का भी खतरा रहता है। महिला निर्माण श्रमिकों को स्वास्थ्य सेवा तक पहुंचने में कई बाधाओं का सामना करना पड़ता है, जिनमें स्वास्थ्य बीमा का अभाव, स्वास्थ्य सुविधाओं तक सीमित पहुंच और नौकरी की असुरक्षा के कारण स्वास्थ्य समस्याएं घर करने लगती हैं। निर्माण उद्योग में महिलाएं अक्सर अकुशल श्रमिकों के रूप में कार्य करती हैं जिनके कारण उनको यौन उत्पीडन, लिंग पूर्वाग्रह, असमान वेतन जैसी समस्याएं उनमें देखने को मिलता है। इस क्षेत्र में कार्य करने का माहौल मुश्किल हो जाता है वह वर्षों तक अकुशल या अर्धकुशल श्रमिकों के रूप में कार्य करती रहती हैं। जिसके कारण उनको बहुत अधिक आर्थिक हानि उठानी पड़ती है (देवी.के एवं किरन.यूवी, 2013)[5]।

4. **लखनऊ शहर के निर्माण उद्योग में कार्यरत श्रमिक महिलाओं की स्थिति**– जनगणना 2011[6] के अनुसार, लखनऊ की जनसंख्या 4,589,838 है, जिसमें पुरुषों की संख्या 2,394,476 और महिलाओं की संख्या 2,195,362 है। जिसमें 2001 की तुलना में जनसंख्या में 25.82 प्रतिशत का परिवर्तन हुआ है। 2011 में लखनऊ के साक्षरता दर 77.29 थी, लखनऊ की कुल जनसंख्या का 66.21 प्रतिशत हिस्सा जिले के शहरी क्षेत्रों में रहता है। 2011 की जनगणना में लखनऊ जिले का घनत्व 1,816 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। 2011 में, उत्तर प्रदेश के लखनऊ जिले में कुल 5,737 परिवार फुटपाथ पर या बिना छत के रहते थे। 2011 की जनगणना के समय बिना छत के रहने वाले लोगों की कुल जनसंख्या 18,119 थी। सिंह.ए एवं दुबे. जी.एम. (2025)[7] के अनुसार, भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई) की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में निर्माण उद्योग 2020–2025 की अवधि के दौरान 11 प्रतिशत की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर (सीएजीआर) से बढ़ाने की उम्मीद है। यह क्षेत्र व्यापक रूप से दो प्रमुख खंडों में विभाजित है। संगठित और असंगठित (अनौपचारिक) क्षेत्र भारतीय उद्योग परिसंघ (सीआईआई), 2020[8]। संगठित क्षेत्र में सरकारी परियोजनाएं और बड़ी निर्माण कंपनियां शामिल हैं, जबकि असंगठित क्षेत्र में स्वतंत्र ठेकेदार और अनियमित श्रम शामिल हैं। असंगठित क्षेत्र भारत के निर्माण उद्योग में एक महत्वपूर्ण उपस्थिति रखता है जिसमें कार्यबल का एक बड़ा हिस्सा कार्यरत है। निर्माण क्षेत्र लगभग 30 मिलियन श्रमिकों को रोजगार देता है, जिसमें महिलाओं की संख्या 51 प्रतिशत है। यह क्षेत्र

भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में लगभग 5 प्रतिशत का योगदान करता है और देश के पूंजी निर्माण में 8 प्रतिशत का योगदान करता है (सेवा अकादमी, 2000)[9]। उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ शहर के अनौपचारिक क्षेत्र में कार्य कर रही श्रमिक महिलाओं की स्थिति अच्छी नहीं है। यहाँ पर कई राज्यों से प्रवास होकर श्रमिक, शहर के अनौपचारिक क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं। शहर पर बढ़ता दबाव और बढ़ती आबादी एक चिंता का विषय है। जिस तरह से शहर का विकास हो रहा है उस तरह से अनौपचारिक क्षेत्र में कार्य कर रहे श्रमिकों का विकास नहीं हो पा रहा है। देश में लगभग 70 प्रतिशत से अधिक आबादी अनौपचारिक क्षेत्र में कार्य कर रही है। निर्माण उद्योग जिसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है क्योंकि निर्माण क्षेत्र में कार्य करने के लिए किसी विशेष कौशल की आवश्यकता नहीं होती है, जिसकी वजह से इस क्षेत्र में कृषि के बाद सबसे ज्यादा श्रमिक कार्यरत हैं। अकुशल श्रमिकों के रूप में महिलाएं बढ़–बढ़कर हिस्सा ले रही हैं। निर्माण क्षेत्र में कार्य करने के दौरान महिलाओं को अक्सर विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों से गुजरना पड़ता है।

भारत, विशेषकर लखनऊ जैसे बड़े शहरों में, निर्माण स्थल अक्सर पुरुषों के प्रभुत्व वाले वातावरण में होते हैं, जहाँ महिला श्रमिकों के बुनियादी जरूरत को अक्सर नजरअंदाज कर दिया जाता है। उन महिलाओं को जो अक्सर दूर दराज के क्षेत्र में पलायन करती हैं। उनको मासिक धर्म के दौरान गरिमा और स्वास्थ्य के साथ जीने के लिए न्यूनतम सुविधाओं से भी वंचित रहना पड़ता है। यह केवल सुविधा का प्रश्न नहीं है, बल्कि गंभीर मानवाधिकार और सार्वजनिक स्वास्थ्य का मुद्दा है। मासिक धर्म में स्वच्छता उत्पादों तक महिलाओं की पहुंच की कमी, सुरक्षित और निजी शौचालयों का अभाव, और स्वच्छ पानी जैसी बुनियादी सुविधाओं की अनुपलब्धता इन महिला श्रमिकों के स्वास्थ्य को गंभीर रूप से प्रभावित करती है। इससे उनमें मूत्रमार्ग संक्रमण, प्रजनन संक्रमण और अन्य गंभीर बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। इन समस्याओं के कारण उन्हें काम से अनुपस्थित रहना पड़ता है, जिससे उनकी आय और परिवार की आजीविका पर सीधा असर पड़ता है। भारत में महिला निर्माण श्रमिकों के अधिकारों के रक्षा के लिए कानून मौजूद है, लेकिन उनका कार्यान्वयन एक बड़ी चुनौती बना हुआ है।

5. **साहित्य की समीक्षा**– जाफर.एच, इस्माइल.एस.वाई. एवं अजेरी.ए (2023)[10] मासिक धर्म की गरीबी एक वैश्विक सामुदायिक स्वास्थ्य समस्याएं है जिसे अक्सर लंबे समय से नजरअंदाज किया जाता है। इस स्थिति को मासिक धर्म संबंधी उत्पादों, शिक्षा, एवं स्वच्छता सुविधाओं तक अपर्याप्त पहुंच के रूप में वर्णित किया जाता है। लाखों महिलाएं मासिक धर्म के कारण अन्याय और असमानता का शिकार होती हैं। इरा शोध की समीक्षा करने पर यह पता चलता है कि अभी भी कई देश मासिक धर्म से जुड़े कलंक और वर्जनाओं, मासिक धर्म संबंधी स्वास्थ्य और उसके प्रबंधन के बारे में अपर्याप्त जानकारी, मासिक धर्म के बारे में शिक्षा का अभाव और मासिक धर्म संबंधी उत्पादों और सुविधाओं तक पहुंच की कमी से प्रभावित हैं। रोसांव.एल. एवं रांस.एच (2021)[11] महिलाओं और लड़कियों के मासिक धर्म स्वास्थ्य में सुधार, गरिमा, लैंगिक समानता और प्रजनन स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए नीतिगत महत्व प्राप्त कर रहा है। मासिक धर्म स्वास्थ्य प्रबंधन (एमएचएम) में स्वच्छ अवशोषक सामग्रियों तक पहुंच शामिल है, लेकिन इन सामग्रियों के उपयोग के लिए निजी और सुरक्षित स्थान का होना भी जरूरी है यह अध्ययन सांद्रता सूचकांकों और अपघटन विधियों का उपयोग करके किशोरा (बीआरसी), इथियोपिया, गाना, केन्या, राजस्थान (भारत), इंडोनेशिया, नाइजीरिया, और युगांडा में मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन में असमानता के अनुभवजन्य प्रमाण प्रदान करता है। सभी देशों में मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन की स्थिति और सेनेटरी पैड तक पहुंच में धन–संबंध असमानता के लगातार प्रमाण मिलते हैं। बानु.एस.आर एवं संमपथकुमार.एस (2018)[12] दुनिया के विभिन्न उद्योगों के बढ़ने में निर्माण उद्योग की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। निर्माण उद्योग विश्व श्रम शक्ति में 7.5 प्रतिशत का हिस्सा बनाएं हुए है। वहीं निर्माण क्षेत्र में कार्य करने वाली महिलाओं की कई सारी समस्याएं सामने आती हैं। तमिलनाडु के त्रिचिरापल्ली जिले के एक अध्ययन में पाया गया कि 84.2 प्रतिशत महिला श्रमिकों को मूत्र पथ के संक्रमण का मामला सामने आया है 15.8 प्रतिशत महिलाओं की ऐसी कोई शिकायत नहीं है और 70.7 प्रतिशत महिलाओं को मांसपेशियों से संबंधित समस्याएं देखी गई है कुछ महिलाओं ने कहा कि वे श्वसन सम्बन्धी समस्याओं से पीड़ित हैं इस क्षेत्र में कार्य करने वाली महिलाओं में हिंदू समुदाय की अनुसूचित जाति की महिलाएं ज्यादा थी और कुछ महिलाएं पिछड़े और सबसे पिछड़े समुदाय से संबंधित हैं। बोर्ड.एस.ए, बुकेन्या.जे.एन एवं अन्य (2023)[13] पूरे दुनिया भर में महिलाओं को अपने मासिक धर्म को प्रबंधित करने में विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। मासिक धर्म और जननांग स्वच्छता संबंधी व्यवहार नकारात्मक स्वास्थ्य परिणामों से जुड़े पाए गए हैं, जिनमें मूत्रजननांगी संबंधी लक्षण और पुष्ट संक्रमण शामिल हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य युगांडा के मुकोनो जिले में कामकाजी महिलाओं में मासिक धर्म देखभाल प्रथाओं और स्व–रिपोर्ट किए गए मूत्रजननांगी संबंधी लक्षणों की व्यापकता का वर्णन करना और मासिक धर्म और जननांग देखभाल प्रथाओं और मूत्रजननांगी संबंधी लक्षणों के बीच संबंधों का परीक्षण करना था।

6. **शोध प्रश्न**

- महिला निर्माण श्रमिकों को उपलब्ध मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की गुणवत्ता और पहुंच कैसी है?
- मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की अनुपलब्धता या अपर्याप्तता के कारण महिला निर्माण श्रमिकों के स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है?
- महिला निर्माण श्रमिकों में मासिक धर्म स्वच्छता के बारे में जागरूकता और शिक्षा का स्तर क्या है?
- महिला निर्माण श्रमिकों के लिए मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की पहुंच में सुधार के लिए नीतिगत और कार्यक्रमिक हस्तक्षेप क्या हो सकते हैं?

## शोध पत्र

7. शोध उद्देश्य

- महिला निर्माण श्रमिकों को उपलब्ध मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की गुणवत्ता और पहुच का मूल्यांकन करना।
- मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की अनुपलब्धता या अपर्याप्तता के कारण उनके स्वास्थ्य पर प्रभाव, का मूल्यांकन करना।
- महिला निर्माण श्रमिकों को मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों के बारे में शिक्षा और जागरूकता के स्तर पता लगाना।
- महिला निर्माण श्रमिकों में मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों की पहुंच में सुधार के लिए नीतिगत और कार्यक्रमिक हस्तक्षेपों का अध्ययन करना।

8 **शोध विधि**– इस अध्ययन का उद्देश्य लखनऊ शहर में महिला निर्माण श्रमिकों के बीच मासिक धर्म स्वच्छता उत्पादों तक पहुंच की जांच करना है। यह शोध एक पायलट आधारित शोध पत्र है। इस शोध में मिश्रित विधि द्वारा श्रमिक महिलाओं की स्थिति और उनसे गहन बातचीत के दौरान उनकी व्यक्तिगत समस्याओं को जानने का प्रयास किया गया है। इस अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्यों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक तथ्यों में संरचनात्मक एवं असंरचनात्मक साक्षात्कार, सर्वेक्षण तथा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि द्वारा 10 महिला श्रमिकों से तथ्य इकट्ठा किए गए हैं। द्वितीयक तथ्यों में विभिन्न प्रकार के शोध–पत्र, समाचार–पत्र, पत्रिकाओं, किताबें, सरकारी रिपोर्ट का प्रयोग किया गया है।

निर्माण क्षेत्र में कार्यरत श्रमिक महिलाओं का साक्षात्कार सारांश–

| क्रमांक | विवरण श्रेणी | विवरण |
|---|---|---|
| 1 | कुल साक्षात्कारित महिलाएं | 10 |
| 2 | सरकारी नाली निर्माण में कार्यरत महिलाएं | 3 |
| 3 | प्रवासी राज्य | छत्तीसगढ़ |
| 4 | प्रवासी महिलाओं की संख्या | 3 |
| 5 | प्रवासी महिलाओं की आयु | 30–40 वर्ष |
| 6 | प्रवासी महिलाओं की जाति | साहू (तेली, बनिया या कुछ और जाति) |
| 7 | प्रवास का स्वरूप | एक जिले से दूसरे जिले में कार्य हेतु प्रवास |
| 8 | स्थायी निवास | छत्तीसगढ़ |
| 9 | परिवार का स्थान | छत्तीसगढ़, कुछ बच्चों के साथ वहीं रहते हैं।(आधा परिवार छत्तीसगढ़ में रहता है)। |
| 10 | समूह के अन्य सदस्य | वाराणसी, आगरा आदि जिलों में (श्रमिकों के रूप में) कार्यरत है। |
| 11 | उत्तर प्रदेश की निवासी महिलाएं | 4 (लखीमपुर जिले से) |
| 12 | आयु (स्थानीय महिलाएं) | लगभग 30 वर्ष; एक महिला 50 वर्ष से अधिक |
| 13 | निवास स्थान (लखनऊ) | खुर्रमनगर, लेखराज मार्केट के आस पास |
| 14 | लखनऊ शहर के अंदर किराया 10000–15000 है (परंतु निर्माण श्रमिक महिलाएं 1000–1500 के किराए के मकान में रहती हैं) | इससे हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि श्रमिकों का जीवन स्तर क्या है। और वह किस वातावरण में रह रहे हैं और कितना भोजन, स्वास्थ्य, बच्चों की शिक्षा पर खर्च कर रहे हैं। |
| 15 | दैनिक मजदूरी | 400–500 रु प्रतिदिन। |
| 16 | मासिक धर्म के दौरान इस्तेमाल | पुराने कपड़े (जो किसी अन्य काम के नहीं होते हैं)। |
| 17 | कपड़े का प्रकार | सूती कपड़े (कत्थई रंग का) जिसमें दाग पता ना चले। |

| | | |
|---|---|---|
| 18 | धार्मिक व्यवहार | मासिक दिनों के दौरान पूजा पाठ, मंदिरों में स्वत: नहीं जाती हैं। |
| 19 | कार्य उपस्थिति | मासिक धर्म के दौरान भी नियमित कार्य करती हैं। |
| 20 | स्वास्थ्य समस्याएं | मांसपेशियों व घुटनों में दर्द, पेट दर्द, खुजली, मूत्रमार्ग संक्रमण |
| 21 | बीमारी के प्रति जागरूकता | शिक्षा के अभाव के कारण कम जागरूकता (जागरूकता तो है परंतु धनाभाव के कारण गंभीर से गंभीर बीमारी में भी वह जादू–टोना व ईश्वर के भरोसे रहती हैं)। |
| 22 | गर्भावस्था के दौरान कार्य | कार्य जारी रहता है, कभी–कभी भारी कार्य की वजह से गर्भपात हो जाता है। |
| 23 | प्रसव स्थिति | समय से पहले प्रसव, एक महिला ने बताया कि वह बच्चों के जन्म के एक दिन पहले तक काम कर रही थी। |
| 24 | सेनेटरी उत्पादों का उपयोग | सेनेटरी पैड का कम उपयोग करती है। मेंस्ट्रूअल कप के उपयोग के बारे में उनको जानकारी नहीं है। |
| 25 | मेंस्ट्रूअल की जानकारी | जानकारी का अभाव |
| 26 | शौचालय सुविधा (कार्यस्थल पर) | सुलभ शौचालय उपलब्ध नहीं या सही से साफ नहीं है। अधिकांश पिंक शौचालय बंद रहते हैं या उनके बगल में ही चाय या ठेला या मोटर वाहन की रिपेयरिंग होती है। |
| 27 | स्वछता समस्या | यौन संक्रमण और अस्वच्छ वातावरण |
| 28 | सेनेटरी पैड निपटान सुविधा | उपलब्ध नहीं, खुले में फेंकने से वातावरण को नुकसान होता है। |

9. **तथ्य आधारित विश्लेषण**– प्रस्तुत शोध में निर्माण क्षेत्र में कार्य करने वाली 10 महिलाओं से साक्षात्कार किया गया है, जिसमें तीन महिलाएं सरकारी नाली निर्माण में कार्य कर रही हैं। 10 महिलाओं में से 3 महिलाएं छत्तीसगढ़ से प्रवास करके लखनऊ शहर में कार्यरत हैं। उनकी आयु 35–40 वर्ष है उन्होंने अपनी जाति साहू बतायीं है। वे महिलाएं अपने पति के साथ कार्यस्थल पर काम करने जातीं हैं। श्रमिक महिलाएं एक जिले से दूसरे जिले में प्रवास करती हैं। कार्यस्थल के आसपास उनका अस्थायी निवास है। उनका स्थायी निवास छत्तीसगढ़ में है। उनके समूह के और लोग वाराणसी, आगरा इत्यादि जिलों में कार्य कर रही हैं। उनके बच्चे सहित अन्य परिवार छत्तीसगढ़ में है। कुछ महिलाओं के बच्चे उनके पास ही रहते हैं। 4 महिलाएं उत्तर प्रदेश के लखीमपुर जिले की निवासी हैं उन्होंने अपनी आयु 30 साल बतायी। उसमें एक महिला ने 50 से उपर अपनी उम्र बतायीं हैं। ये महिलाएं लखनऊ शहर के खुर्रमनगर नगर में 1000–1500 के किराए के मकान में रहती हैं। कुछ महिलाएं लेखराज मार्केट के आस पास के इलाकों में किराए के मकान में रहती हैं। श्रमिक महिलाओं को एक दिन का 400–500 रुपए मिलते हैं। उनसे गहन बातचीत करने के बाद उन्होंने बताया कि वे अपने मासिक धर्म के दौरान उन कपड़े का इस्तेमाल करती हैं जिसका प्रयोग किसी काम में नहीं किया जाता है। उनका कहना है कि वो कपड़ा तो बेकार होता है इसलिए हम लोग जिस कपड़े का कोई इस्तेमाल नहीं होता है वहीं कपड़ा इस्तेमाल में लेती हूं। कुछ महिलाओं ने बताया कि वे बाजार से सूती कपड़े खरीद कर लाती है, जो कत्था रंग का होता है जिसमें दाग धब्बा पता नही चलता है। वे महिलाएं अभी भी मासिक धर्म के दौरान पूजा–पाठ 7 दिनों तक नहीं करती हैं। इस समय वे मंदिर के आसपास भी नहीं जाती हैं, लेकिन शुरू के एक–दो दिन छोड़कर वे काम करने प्रतिदिन जाती हैं।

श्रमिक महिलाओं ने बताया कि उनके मांसपेशियों में दर्द, घुटनों में दर्द, होता है। मासिक धर्म के दौरान वे पेट दर्द, यौन संक्रमण, कपड़े की गर्माहट की वजह से खुजली, लाल दाने, मूत्रमार्ग में संक्रमण से पीड़ित रहती हैं। शिक्षा के अभाव होने की वजह से मासिक धर्म के समय होने वाली बीमारियों पर वे ज्यादा ध्यान नहीं देती हैं। कुछ श्रमिक महिलाएं गर्भावस्था के दौरान भी निर्माण उद्योग में कार्य करती हैं कभी कभी ज्यादा भारी सामान उठाने की वजह से उनका गर्भपात भी हो जाता है। निर्माण क्षेत्र में कार्य करने वाली महिलाओं का गर्भावस्था के दौरान सही से देखभाल ना करने की वजह से उनका समय के पहले प्रसव हो जाता है, जिससे उनकी समस्याएं और बढ़ जाती है। एक महिला ने बताया कि कि वे बच्चा पैदा होने के एक दिन पहले तक काम कर रही थी। श्रमिक महिलाएं कोई सेनेटरी पैड, मेंस्ट्रुअल कप का

प्रयोग नहीं करती हैं। उन महिलाओं को मेंस्ट्रुअल कप के बारे में जानकारी ही नहीं है। कार्यस्थल पर श्रमिक महिलाओं के सुलभ शौचालय उपलब्ध नहीं होते हैं और जहाँ उपलब्ध होते है वो अच्छे से साफ–सुथरे नहीं होते हैं। यदि भूल से या बहुत जरूरी होने पर इसके प्रयोग से यौन रोग की संभावना बढ़ती रहती है। श्रमिक महिलाओं को कार्यस्थल पर सेनेटरी पैड बदलने या इस्तेमाल किया गया सेनेटरी पैड रखने की सुविधा नहीं होती है। यदि कुछ श्रमिक महिलाएं सेनेटरी पैड लगाती हैं और यदि उसको खुले में फेंक दिया जाए तो वह पर्यावरण के लिए खतरा होता है। यदि वह उसको बदलती हैं तो उस दशा में कार्यस्थल पर सेनेटरी पैड बदलने की सुविधा नहीं होती है।

"नैशनल फैमिली हेल्थ सर्वे"[4] के नतीजे बताते हैं कि देशभर में 15 से 24 साल के बीच की 62 प्रतिशत युवतियां अब भी मासिक धर्म के दौरान कपड़े का इस्तेमाल करती हैं। इस रिपोर्ट के अनुसार जिसका संबंध साल 2015–16 से है, में कहा गया है कि बिहार की 82 प्रतिशत युवतियां अब भी पीरियड्स के दौरान सुरक्षा के लिए कपड़े के टुकड़े का इस्तेमाल करती हैं जबकि छत्तीसगढ़ और यूपी में पीरियड्स के दौरान कपड़ा इस्तेमाल करने वाली युवतियों की संख्या 81 प्रतिशत है। मासिक धर्म के समय होने वाली परेशानियों की वजह से कभी कभी श्रमिक महिलाएं मानसिक तनाव का शिकार हो जाती हैं। एक महिला के बारे में पता चला कि एक बार यह महिला निर्माण स्थल पर कार्य कर रहीं थी उसी समय वहीं पर 4–5 लड़कियां आ गई जो कि वे लड़कियां नशें में धुत्त थी। वे लड़कियां उस महिला को जबरदस्ती डांस कराने लगी, जिससे उस महिला को डर लगने लगा, जिसकी वजह से अब कोई शोधार्थी उस महिला के पास तथ्य इकट्ठा करने जाते है तब से वह महिला किसी भी शोधार्थी लड़की से बात नहीं करती। ऐसा ही कुछ मेरे साथ भी हुआ। मैंने उस महिला से बहुत बार बात करने की कोशिश की लेकिन वह महिला बिल्कुल भी बात नहीं की और न ही उसने मेरे किसी प्रश्न का उत्तर दिया। कुछ महिलाओं के पति की मृत्यु उनसे पहले हो जाती है जिससे श्रमिक महिला के ऊपर घर की सारी जिम्मेदारीयां आ जाती है। श्रमिक महिलाएं अपने बुढ़ापे के लिए कहीं कोई बचत नहीं कर पाती हैं। कार्यस्थल पर श्रमिक महिलाओं को यौन उत्पीडन, लिंग पूर्वाग्रह का सामना करना पड़ता है, लेकिन अगर श्रमिक महिलाओं में जागरूकता फैलाई जाए और सरकार द्वारा कोई अनोखे कदम उठाए जाए तो हम इस समस्या से थोड़ा छुटकारा पा सकते हैं।"[5]

10. **निष्कर्ष**– किसी भी समाज में महिलाओं की स्थिति इस पैमाने से तय होती है कि उस समाज में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्थिति कैसी है। निर्माण क्षेत्र अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, क्योंकि यह अनौपचारिक क्षेत्र के निर्माण उद्योग में अकुशल श्रमिकों को सबसे ज्यादा रोजगार प्रदान करता है। निर्माण उद्योग औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक ढांचे का निर्माण करता है। इनमें से लगभग एक–तिहाई श्रमिक निम्न स्तर की कौशल और निम्न स्तर की शिक्षा वाली महिलाएँ हैं, और इन श्रमिक महिलाओं को काम से संबंधित कई सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे वेतन भेदभाव, लैंगिक असमानता और यौन उत्पीड़न, अस्वस्थ कार्य संबंध, कम वेतन इत्यादि। भारत सरकार द्वारा महिला निर्माण श्रमिकों में मासिक धर्म से संबंधित जागरूकता फैलाई जाय तथा उनके लिए हर महीने सेनेटरी पैड उपलब्ध कराए जाएं। उनको मेंस्ट्रुअल कप व साफ कपड़े प्रयोग करने के लिए जागरुक किया जाए क्योंकि खराब कपड़ों का प्रयोग करने से कई भयानक बिमारियां सामने आ रही हैं। श्रमिक महिलाओं की रोजाना आय ही 400–500 रुपए है जिससे वे अपने घर का पूरा खर्चा चलाती हैं। मासिक धर्म के दौरान होने वाली बिमारियां श्रमिक महिलाओं को सामान्य लगता है। श्रमिक महिलाओं में शिक्षा का अभाव होने के वजह से लगता है कि मासिक धर्म के दौरान अगर कोई दिक्कत होती है तो वो सामान्य है उसके दौरान उनको किसी प्रकार का दवा नहीं खानी चाहिए। वह धीरे–धीरे अपने आप ठीक हो जायेगा जिससे उनकी समस्याएं और दिन पर दिन बढ़ती जाती है। कुछ महिलाएं कार्य करने के दौरान नशें का पदार्थ भी लेती हैं जैसे कि पान, गुटखा–मसाले, सुर्ती, बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू इत्यादि। इसके प्रयोग से उनका स्वास्थ्य और प्रभावित होता है। निर्माण उद्योग में जिन महिलाओं का रजिस्ट्रेशन हुआ है या जिन्होंने अपना रजिस्ट्रेशन खुद जाकर करा लिया है उनको तो सरकार बुढ़ापे में पेंशन देती है लेकिन जिन महिलाओं का रजिस्ट्रेशन नहीं हुआ है उनको बुढ़ापे में किसी भी प्रकार की पेंशन, या सुविधाएं नहीं मिलती है। जितनी भी सरकारी योजनाएं श्रमिक महिलाओं के लिए लागू किए गए हैं उन योजनाओं के बारे में ज्यादातर श्रमिक महिलाओं को पता ही नहीं है। इस शोध पत्र का सुझाव है कि ज्यादा से ज्यादा निर्माण उद्योग में कार्य कर रही श्रमिक महिलाओं पर शोध हो और साथ में प्रत्येक शोधार्थी द्वारा श्रमिक महिलाओं के स्वास्थ्य और उनके अधिकार के बारे में शोध करें जिससे उनके बारे में अधिक से अधिक जानकारी इकट्ठा हो सके और सरकार, स्वयं सेवी संस्थाएं उन समस्याओं के समर्थन हेतु सरकार कारगर कार्यवाही कर सकें। सरकार द्वारा श्रमिक महिलाओं के लिए और योजनाएं लाएं जाए और जो योजनाएं पहले से लागू किए गए हैं उनको और प्रभावपूर्ण तरीके से लागू किया जाए तथा श्रमिक महिलाओं के मासिक धर्म से संबंधित उत्पाद सरकार द्वारा उनको निःशुल्क कराए जाएं और साथ ही साथ श्रमिक महिलाओं के अंदर स्वास्थ्य से संबंधित जागरूकता फैलाई जाए जिससे उनको ज्यादा गंभीर बीमारियों का सामना न करना पड़े। मासिक धर्म के दौरान स्वच्छता उत्पादों की कमी पाई गई है, जिसके कारण उनके स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव देखने को मिला है। भारतीय समाज की कुछ सामाजिक सांस्कृतिक बाधाएं ऐसी है जो महिलाओं के विकास में एक बाधा बनी हुई है। यदि हम अपने योजनाओं और कार्यक्रमों में कुछ बदलाव करें तो श्रमिक महिलाओं का कुछ सीमा तक विकास किया जा सकता है।

**References**


1. Female Labour and Utilization in India, Employment Statistics in Focus -April (2023) Ministry of Labour and Employment of India.
2. Patel R.L. and Pitroda. J. (2016) The Role of Women in Construction Industry: An Indian Perspective. Conference: International Conference on Women in Science & Technology: Creating Sustainable Career (ICWSTCSC-2016)

3. Construction Industry Development Council, 2003
4. Baruah.B (2008) Gender and Globalization Opportunities and Constraints Faced by Women in the Construction Industry in India, https://1sj.sagepub.com
5. Devi.K and Kiran.UV (2013) Status of female workers in construction industry: A review, International Journal of Humanities and Social Science 14(4):27-30
6. www.census.2011.co.in hiips://wwwcensus2011.co.in
7. Singh A. and Dubey G.M. (2025) Shedding Light on the Socio-economic Status of Women Construction Workers in India.
8. Confedration of Indian Industry (CII),2020.10.Jaafar.H ,Ismail.S.Y ,Azzeri.A (May, 2023) Period Poverty: A Neglected Public Health Issue, 16;44(4):183-188. Doi: 10.4082/kjfm.22.0206, PMCID: PMC10372806 PMID: 37189262
11. Rossouw A. and Ross.H (March, 2021) Understanding Period of Poverty: Socio-Economic Inequalities in Menstrual Hygiene Management in Eight Low – and Middle – Income Countries, International Journal of Environmental Research and Public Health, PMCID: PMC7967348 PMID: 33806590
12. Banu S.R. and Sampathkumar S. (2018) Health issues of women construction workers: An Evidence from Tiruchirapalli, Tamilnadu, Volume -8| Issue-7| July -2018| ISS-2249-555X| IF:5.397| IC Value:86.18
13. Borg.S.A ,Bukenya.J.N ,Kibira.S.P.S ,Nakamya.P ,Makumbi.F.E ,Exum.N.G ,Schwab.K.J ,Hennegan.J (2023) The Accociation Between Menstrual Hygiene, Workplace Sanitation Practices and Self -Reported Urogenital Symptoms in A Cross – Sectional Survey of Women Working in Mukono District, Uganda, PMCID: PMC10358934 PMID: 37471386
14. Navbharat Times, https://navbharattimes.indiatimes.com
15. Dainik Bhaskar, Lucknow|20/03/25, https://www.bhadkar.com

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 50-53
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.9
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Soil Pollution: Human Health and Food Security

Rashmi Tewary
Ram Niwas, Moti Nagar, Lucknow-226 004, UP. India
rashmitewary@hotmail.com

**Received: 20-09-2025, Accepted: 10-10-2025**

**Abstract**- Soil pollution has a significant effect on both human health and the environment. Direct contact, inhalation, ingestion of contaminated soil or food grown in it lead to various health problems including respiratory issues, neurological disorders and even cancer. Soil pollution reduces soil fertility, impacting agricultural productivity and food security. The negative effects on ecosystems by biodiversity loss, disturbing mineral cycles and leading to water and air pollution as well.

**Key words**- Soil, Component, Quality, Earth, Climate, Refuse, Disposal

# मृदा प्रदूषण : मानव स्वास्थ्य एवं खाद्य सुरक्षा

रश्मि तिवारी
राम निवास, मोतीनगर, लखनऊ–226 004, उ0प्र0, भारत
rashmitewary@hotmail.com

**सार**– मृदा प्रदूषण वातावरण और मानव स्वास्थ्य पर सशक्त प्रभाव डालता है। संक्रमित मृदा को सीधे तौर पर श्वास द्वारा ग्रहण करने या उसमें उगाया गया अनाज अनेक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को जन्म देता है है, जैसे – श्वसन एवं तंत्रिका तंत्र से जुड़े विकार, यहां तक कि कैंसर भी उत्पन्न कर सकता है। मृदा प्रदूषण मिट्टी की उर्वरकता को घटा कर उसकी उत्पादन क्षमता को क्षीण कर देता है। प्रदूषित मृदा में उगाए गए अनाज खाद्य सुरक्षा के लिए एक गंभीर प्रश्न बन गया है। यह पारिस्थितिकी तंत्र एवं जैव विविधता पर भी नकारात्मक प्रभाव डालता है। वातावरण में पोषक तत्वों के चक्रण की प्रकिया को विघटित कर एक सीमा तक जल एवं वायु प्रदूषण का कारण बनता है।

**बीज शब्दः** मृदा, घटक, गुणवत्ता, पृथ्वी, जलवायु, अवशिष्ट, निस्तारण

1. **परिचय**– पृथ्वी का आधार मृदा है परन्तु उसके संरक्षण के विषय में चर्चा नगण्य है, जबकि जल और वायु प्रदूषण सतत् गहन संवेदना और विवेचना का विषय रहे हैं। अन्य प्राकृतिक घटकों की भांति मृदा भी हमारे वातावरण, जीवन, स्वास्थ्य एवं खाद्य सुरक्षा पर प्रभाव डालती है। मृदा प्रदूषण के अनेक कारक हैं जो पारिस्थितिकी तंत्र को विघटित कर जलवायु चक्र को परिवर्तित कर रहे है। यह तथ्य अविवादित रूप से सत्य है कि इस विषय पर हमारा ध्यान नहीं जा रहा है। समय रहते सुधार की आवश्यकता है अन्यथा अत्यन्त गंभीर परिणाम हो सकते हैं। विभिन्न अनुचित पदार्थों का मिट्टी में मिल जाने के कारण उसका संतुलित स्वरूप बदल जाता है, जो हमारे पेड़–पौधों, पशु–पक्षी और मानव जीवन पर हानिकारक प्रभाव डालता है। औद्योगिक गतिविधियां, हानिकारक कृषि अभ्यास, गलत तरीकों से अवशिष्ट निष्पादन, खनन, शहरीकरण, पेट्रोलियम निष्कर्षण, हाइड्रोकार्बन एवं रेडियोएक्टिव पदार्थ का उपयोग और निस्तारण जैसी क्रियाओं द्वारा पृथ्वी की ऊपरी सतह दिन–प्रतिदिन अपनी गुणवत्ता खोती जा रही है। 20 दिसम्बर 2013, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने एक अधिवेशन में सर्व सम्मति से 5 दिसंबर विश्व मृदा दिवस के रूप में घोषित किया, इसके उपरान्त यह प्रतिवर्ष मनाया जाने लगा। वर्ष 2015 को विश्व मृदा वर्ष के रूप में मनाया गया।[1] आधिकारिक मान्यता के उपरांत वैज्ञानिक वर्ग के अतिरिक्त सामान्य जन मानस ने मृदा के महत्व को जाना। अब प्रतिवर्ष 5 दिसंबर को विश्व मृदा दिवस मनाया जाता है।[2] आज के समय में मृदा प्रदूषण एक विकट सामयिक समस्या बन गई है, क्योंकि उस पर निर्भर करता है, हमारा पारिस्थितिकी तंत्र एवं जैव विविधता। अतः मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बनाए रखना मृदा प्रबंधन का प्रथम अनिवार्य कदम है ( संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम )।

### 1.1 संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन (02/05/2018) की एक रिपोर्ट के अनुसार–

क. मृदा प्रदूषण का प्रभाव मृदा जैव विविधता, कृषि खाद्य सुरक्षा के साथ ही साथ मानव स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है। आज वैश्विक स्तर पर असुरक्षित खाद्यान्नों के उपयोग से अनेकानेक जटिल मानव रोग बढ़ते जा रहे हैं।

ख. युद्ध, औद्योगीकरण, खनन ( पृथ्वी के गर्भ से धातुओं, अयस्कों तथा अन्य उपयोगी खनिजों का निष्कर्षण), कृषि विकास और तीव्रीकरण ने सारे विश्व की कृषि उपयोगी मृदा को प्रदूषित कर दिया है। पृथ्वी पर बढ़ती मानव जनसंख्या, मानव आवासों का निर्माण एवं शहरीकरण, कृषि का व्यवसायीकरण, औद्योगीकरण एवं उसमें प्रयुक्त आधुनिक वैज्ञानिक तरीके भी मृदा प्रदूषण को प्रोत्साहित करते हैं। नगर निकायों का मल एवं अवशिष्ट, कारखानों से वाहित दूषित जल नदियों के साथ–साथ धरती की ऊपरी उपजाऊ मिट्टी की परत को भी प्रदूषित करता है। उस मिट्टी में जो अनाज बोया जाता है वह शुद्ध एवं स्वास्थ्य वर्धक नहीं होता। अतः यह तथ्य अविवादित रूप से सत्य है कि मृदा प्रदूषण का दीर्घकालिक प्रभाव शनैः–शनैः दिखाई दे रहा है।
ग. मृदा प्रदूषण खाद्यान्न, हवा और पानी पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के साथ ही साथ हमारी पारिस्थितिकी के स्वास्थ्य पर भी विपरीत प्रभाव डाल रहा है ( खाद्य एवं कृषि संगठन की संयुक्त निदेशक : जनरल मारिया हेलेन सेमिडो )।[4]

2. वैश्विक आंकड़ों के अनुसार :[5]

- ऑस्ट्रेलिया में लगभग 80,0000 स्थानों की मृदा प्रदूषित है।
- चीन ने अपनी धरा की 16 प्रतिशत मृदा और 19 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि को प्रदूषित बताया।
- यूरोप में 3 मिलियन क्षेत्र में पाई जाने वाली मिट्टी प्रदूषित है, जो उनके आर्थिक विकास के लिए उपयोगी है।
- संयुक्त राज्य अमेरिका में 1,300 स्थान ऐसे हैं जिनको प्रदूषण मुक्त करना देश की प्राथमिकता बन गई है।

वैश्विक स्तर पर मृदा प्रदूषण का सही आंकलन अभी नहीं हो पाया है, लेकिन सतत् कृषि विकास एवं विस्तारण, शहरीकरण और औद्योगिक विकास मृदा की गुणवत्ता को क्षीण कर रहा हैं।

3. **मृदा प्रदूषण–अदृश्य खतरा**– मृदा प्रदूषण एक अदृश्य खतरा है जो वाह्य रूप से नहीं दिखाई देता किंतु उसके हानिकारक प्रभाव हमेशा विद्यमान हैं वह ब्रह्माण्ड में उपस्तिथत हर जैविक ओर अजैविक घटक को प्रभावित कर रहा है। यह खाद्य सुरक्षा को भी दो तरह से प्रभावित करता है, पहला उनकी उपापचय क्रियाओं को अव्यस्थित करके और दूसरा उनके रासायनिक संगठन को असंतुलित करके। इससे पैदावार में गिरावट आती है और प्रदूषित मृदा में बोया गया अनाज मानव उपयोग के लिए भी असुरक्षित एवं विषाक्त है। प्रदूषित मृदा में उपस्थित भारी धातु (जैसे : आर्सेनिक, कैडमियम, एंटीमनी, जिंक, निकिल, बेरेलियम, सिलेरियम क्रोमियम थैलियम, लेड, मर्करी, कॉपर), कार्बनिक पदार्थ (पॉलीसाइक्लिक हाइड्रोकार्बन, पॉलीक्लोरीनेटेड बाईफिनायल, औषधि निर्माण में प्रयुक्त एंटीबायोटिक, हार्मोन, जैविक प्रदूषक, एंडोक्राइन, चिकित्साकीय अवशिष्ट) पुराने इलेक्ट्रोनिक उपकरण, प्लास्टिक अवशिष्ट एवं मलवा पौधों द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं, जो मृदा के अतिरिक्त खाद्य के गुण और स्वरूप के लिए भी असुरक्षित है।[6]

4. मृदा प्रदूषण के कारण–

- अधिकांशतः मृदा प्रदूषण मानव जनित कार्यकलाप / गतिविधियों का परिणाम है।
- औद्योगिक इकाइयों द्वारा उत्सर्जित विषैली गैसे और प्रदूषित जल ।
- कृषि विकास एवं विस्तारण में प्रयुक्त कीटनाशक, खर–पतवार और जंगली प्रजातियों को नष्ट करने वाले रसायन, रासायनिक खाद आदि।
- खनिजों, धातुओं, पेट्रोल, डीजल का निष्कर्षण, खनन एवं उत्पादन ।
- यातायात साधनों द्वारा पेट्रोल / डीजल का छलकाव एवं रिसाव ।
- खनन के दौरान भारी धातुओं का विसरण।
- ढलाई खाना जहाँ बर्तन और लोहे की छड़ गेट आदि बनाए जाते हैं, धातुओं का बिखराव होता है।
- औषधि निर्माण में प्रयुक्त रसायन और उनका निस्तारण।
- इलेक्ट्रानिक अपशिष्ट का एकत्रण।
- नाभिकीय / आण्विक / रेडियोएक्टिव पदार्थों का विकीरण।
- पुरानी इमारतों को नष्ट करना और नव भवन निर्माण ।
- लेड से बने पेन्ट और रंगों का निर्माण और उपयोग।

मृदा प्रदूषण एक गंभीर वातावरणीय समस्या है जो धरा पर हानिकारक रसायनों की वजह से उत्पन्न हो रही है और मानव स्वास्थ्य और खाद्य सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही है। प्राकृतिक कारणों के अतिरिक्त मानव क्रिया कलाप, औद्योगीकरण, अनियंत्रित कृषि अभ्यास

एवं असंतुलित अवशिष्ट प्रबंधन, मृदा में भारी धातुओं की मात्रा, विषैले रसायनों को जोड़ता जाता है जो मिट्टी की उर्वरा शक्ति को घटाते है, साथ ही साथ भूमिगत जल प्रदूषण, जैव विविधता क्षय और मानव स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं को जन्म देते है। यहां तक कि इस तरह पारिस्थितिकी तंत्र असंतुलित हो रहा है और पृथ्वी का वायुमंडल सतत् जलवायु परिवर्तन की ओर अग्रसर हो रहा है। प्रदूषित मृदा में उत्पन्न अनाज उस मिट्टी से विषैले पदार्थों को अवशोषित करता है जो मानव द्वारा उपयोग में लाए जाने पर अनेकानेक जटिल मानव बीमारियों को जन्म देता है।

5. **मानव स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव**– मृदा प्रदूषक वातावरण में ठोस, द्रव्य और गैस तीनों रूप में उपस्थित होते है जो सीधे स्पर्श, साँस द्वारा या किसी खाद्य पदार्थ के सेवन से मानव शरीर में पहुंचते है और सिरदर्द, एलर्जी, कफ, छाती में दर्द, श्वसन क्रिया में तकलीफ, उल्टी, कमजोरी, तनाव, खुजली एवं जलन जैसे लक्षण उत्पन्न करते हैं । इसके दीर्घकालिक प्रभाव बच्चों में तंत्रिका तंत्र संबंधित परेशानियां एवं मानसिक अवसाद जैसी स्थाई क्षति पैदा करते है। किडनी और यकृत की जटिल बीमारियों की संभावना भी कई गुना बढ़ जाती है। मृदा प्रदूषण, आज जल और अन्न के सीधे संपर्क में होने के कारण मानव स्वास्थ्य से सम्बन्धित समस्याओं में अदृश्य रूप से वृद्धि कर रहा है। इसके अलावा यह प्रजनन तंत्र को भी प्रभावित करता है, जिससे नवजात शिशुओं में विकलांगता एवं गर्भवती महिलाओं में गर्भपात जैसी स्थितियां देखने को मिलती हैं। मिलों और फैक्ट्रियों के निकट रह रहे मजदूरों के शरीर में अनेकानेक जटिल रोगों का होना निश्चित है, क्योंकि वे उस प्रदूषण के सीधे संपर्क में रहते हैं।

5. **खाद्य सुरक्षा पर प्रभाव**– प्रदूषित मृदा में उगाई गई फसलें हानिकारक रसायनों, भारी धातुओं को अवशोषित कर उत्पादित अनाज को खाद्य सुरक्षा की कसौटी पर खरा नहीं उतरने देती और मानव उपयोग के लिए असुरक्षित बना रही हैं, साथ ही कृषि उपज भी प्रभावित होती है। चीन में (12 मिलियन टन अनाज लगभग 2.6 मिलियन USD) मानव उपयोग के लिए सुरक्षित नहीं है। भारी धातु इसका मुख्य कारण है। (चीन के एक शोधपत्र "Dialogue" के अनुसार)[5]

6. **मृदा उर्वरता एवं कृषि उत्पादों में गिरावट**– प्रदूषण मृदा में पाये जाने वाले आवश्यक खनिज लवणों की मात्रा को घटाकर विषाक्त रसायनों को जोड़ता है, यही कारण है कि कृषि उत्पादन का स्तर निरंतर गिरता जा रहा है जो खाद्य सुरक्षा के लिए एक प्रश्न बन गया है।

7. **जल प्रदूषण**– मृदा प्रदूषण भू–जल एवं सतही जल की गुणवत्ता पर निश्चित रूप असर डाल रहा है जो पेय जल को विषाक्त कर जलीय पारिस्थितिकी तंत्र को नष्ट कर रहा है।

8. **जैव विविधता क्षय**– मृदा प्रदूषण के कारण मिट्टी के स्वरूप एवं गुण में परिवर्तन आ रहा है, इस कारण वहां पर उगने वाले पौधें अपने मूल आवास से वंचित होकर अपनी विशेषताओं को समाप्त कर रहे है। मृदा प्रदूषण संवेदनशील स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र को इस सीमा तक प्रभावित कर चुका है कि अनेकानेक पर्यावरणीय मित्र कीट, कृमि, लाभकारी सूक्ष्म जीव नष्ट हो रहे हैं, जो खनिज पदार्थों और विभिन्न लवणों का चक्रीकरण करके मिट्टी की उर्वरक शक्ति को बढ़ाते हैं।

9. **पारिस्थितिकी तंत्र**– वाष्पशील विषाक्त पदार्थ हवा द्वारा वातावरण में और कई बार भूमिगत स्रोतों में पहुँच जाते हैं, अतः मृदा प्रदूषण सीधे तौर पर वायु और जल प्रदूषण का भी कारण बनता है। अम्लीय वर्षा का भी कारण यही होता है क्योंकि अमोनिया का बहुत अधिक उत्सर्जन वातावरण में होता है जो बारिश के साथ धरा पर आता है। अम्लीय मृदा मिट्टी में रहने वाले लाभकारी कृमि एवं अन्य सूक्ष्म जीवों को नुकसान पहुंचाता है, जिससे मृत जीवों का विघटन नहीं हो पाता और मिट्टी की गुणवत्ता एवं स्वरूप क्षतिग्रस्त होता है।[7]

10. **जलवायु परिवर्तन**– मृदा प्रदूषण, मृदा की मूल संरचना को बदलने में सक्षम है। कार्बन एवं अन्य ग्रीनहाउस गैसे जो वर्षा द्वारा धरती पर गिरती है, मिट्टी द्वारा अवशोषित कर ली जाती हैं, जो बाद में अन्य माध्यमों से वातावरण में विसरित हो जलवायु परिवर्तन की समस्या को द्विगुणित करती हैं।

11. **आर्थिक प्रभाव**– मृदा प्रदूषण, कृषि उत्पादकता को घटाकर आर्थिक हानि पहुँचाता है। जब मानव स्वास्थ्य का प्रश्न हो तो अनेकानेक जटिल बीमारियों से सम्बन्धित परीक्षणों एवं औषधियों के व्यय को बढ़ाता है। प्रदूषित मृदा के सुधार में अनावश्यक आर्थिक हानि होती है।

12. **मृदा क्षरण**– मृदा संवेदनशील होती है, विषैले रसायनों के साथ मिल कर अशुद्ध एवं अनुपयुक्त हो जाती है इस तरह उसकी गुणवत्ता का पूर्णतया क्षरण हो जाता है । वह कृषि योग्य नहीं रह जाती। सर्वाधिक हानिकारक प्रदूषक है, जेनोबायोटिक्स (अगतजीवी)[8] जो वास्तव में अप्राकृतिक है, और मानव निर्मित है। ये अधिकतर कैंसर कारक होते है।

तालिका–1

| | |
|---|---|
| खनिज तेल | 20 प्रतिशत |
| हाइड्रोकार्बन | 42 प्रतिशत |
| भारी धातु ( लेड, पारा) | 31 प्रतिशत |
| अन्य | 07 प्रतिशत |

मानव एवं अन्य जीव, पशु–पक्षी परपोषी हैं, हम सभी का वनस्पति (पेड़–पौधों) के बिना जीवित रहना असंभव है। हम पूर्णतया जल में उगने वाले पौधों और जानवरों पर निर्भर करे यह भी अतिशयोक्ति ही होगी। अतः समय रहते इस समस्या का उचित समाधान जरूरी है।

13. **मृदा प्रदूषण सुधार/नियंत्रण**– मृदा प्रदूषण को रोकने और उसकी गुणवत्ता को बनाए रखने के लिएआज अनेकानेक विधियां विकसित करी जा रही हैं।[9]

- जैविक कृषि को बढ़ावा : फसल चक्र, कम्पोस्ट खाद, जैविक उर्वरकों का उपयोग।
- जन जागरूकता : किसानों और आम जनता को मृदा प्रदूषण एवं खाद्य सुरक्षा के खतरों और गंभीर परिणामों के बारे में अवगत करा कर जागरूकता फैलाना एक असरदार तरीका है।
- नीति और निगरानी।
- अंतर्राष्ट्रीय सहयोग।
- प्लास्टिक के उपयोग को नियंत्रित करना एक अति आवश्यक कार्य है, प्लास्टिक के स्थान पर पर्यावरण अनुकूल थैलों, डिब्बों और बोतलों का उपयोग प्रारम्भ करें, जो अन्य वातावरणीय क्षति को भी रोकने में सहायता करगे।
- मृदा सीमांतरण : प्रदूषित मृदा को निर्जन, कृषि अभ्यास के लिए अनुपयुक्त स्थान पर स्थानांतरित करना, मृदा की ऊपरी सतह को खोदकर ऐसे स्थान पर स्थानांतरित करना, जो कृषि योग्य न हो, साथ ही साथ उस स्थान पर मानव एवं जीव–जंतु का आवागमन भी न होता हो।
- मृदा को उच्च ताप द्वारा अभिक्रमित करना : प्रदूषित मृदा को उच्च ताप द्वारा अभिक्रमित करा कर प्रदूषकों को वाष्पीकृत कर लेना ओर वाष्प को निष्कासित कर किसी पात्र में एकत्र कर लेना।
- जैविक उपचार : कुछ ऐसे सूक्ष्म जीवों और पौधों को उस स्थान पर उगाना / आवासित करना जो उस स्थान और मिट्टी को आसानी से अपना लें।
- कवक उपचार : कुछ कवक प्रजातियां मिट्टी में उपस्थित भारी धातुओं को अवशोषित कर लेती हैं, अतः ऐसी प्रदूषित मृदा में यदि उन कवक प्रजातियों को उगाया जाए तो वे भारी धातुओं को अवशोषित कर मिट्टी को शुद्ध कर देती हैं।

14. **निष्कर्ष**– मृदा प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य जोखिमों से भर गया, कृषि उत्पादकता में कमी, जैव विविधता क्षय और पारिस्थितिक असंतुलन जैसी गम्भीर समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं, जो सतत विकास की संभावनाओं को प्रभावित करती हैं। तत्काल समाधान के रूप में परम्परागत स्थाई कृषि पद्धतियों को अपनाना, सुरक्षित अवशिष्ट प्रबंधन, प्रभावी उपचार विधियों का उपयोग और समय–समय पर मृदा की गुणवत्ता का आंकलन करना आवश्यक है ताकि भावी पीढ़ी के लिए मिट्टी सुरक्षित रह सकें।

**References**


1. Soil Pollution: A Hidden Reality. N. Rodriguez-Eugenio, M.Mc Laughlin, D. Pennock. FAO. Of the United Nations, 2018.142 p.-ISBN.978-92-5-1305058.
2. Soil pollution poses a worrisome threat to agricultural productivity, good safety and human health. New FAO. Report. (02-05-2018) released at the global symposium.
3. Soil Pollution - A Hidden Reality. Report Sounds Alarm on Soil Pollution 02-05-2018).
4. Food and Agriculture Organization, https://forid.fao.org.
5. Regional & Global Hotspots of Arsenic Contamination of Top Soil identified by Deep Learning. Mengting Wu, Chongchong Wi, Yong Sik Ok. Communication Earth & Environment-5, Article number :10 (2024).
6. Heal the Planet : Small Act, Huge Impact, Newsletter. https://healtheplanet.com.
7. ScienceDirect.com.https://www.sciencedirect.com.Vol.178,September2023,108135.
8. Soil pollution and health.08-12-2022 modified 12-08-2025. European Environment Agency.
9. Wikipedia.https://en.wikipedia.org.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 54-60
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.10
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Three Moments theorem vis-à-vis Moment Distribution method-A pragmatic approach

Manoj Kumar Varshney
Department of Civil Engineering, D. N. Polytechnic, Meerut-251 003, UP, India
manojvarshaney17@rediffmail.com

**Received: 10-10-2025, Accepted: 15-11-2025**

**Abstract**- The pragmatic approach regarding the three moment theorem versus moment distribution method has been in regular practice to get the moments on supports which has been always under confusion, about the resulting moments at support. The author's title revealed through illustrations that resulting moments calculated on supports by applying both methods, result almost remained same.

**Key words**- Three Moments theorem, Moment Distribution method, a pragmatic approach

# तीन आघूर्ण प्रमेय बनाम आघूर्ण वितरण विधि–एक व्यावहारिक दृष्टिकोण

मनोज कुमार वार्ष्णेय
सिविल इंजीनियरिंग विभाग, डी0 एन0 पॉलीटैक्निक, मेरठ–250 103, उ0प्र0, भारत
manojvarshaney17@rediffmail.com

**सार**– तीन आघूर्ण प्रमेय व आघूर्ण वितरण विधि से सपोर्ट पर आघूर्ण ज्ञात करने की प्रक्रिया नियमित रुप से प्रैक्टिस में संदेहास्पद रही है। लेखक के तकनीकी पेपर से उदाहरण के माध्यम से स्पष्ट हुआ है कि धरन के सपोर्ट पर परिणामी आघूर्ण का मान दोनों विधियों से सम्भवतः एक समान ही आता है। अनुप्रयोग किया गया और यह पाया गया कि गणना के आधार पर अंतिम आघूर्ण दोनों विधियों से पूर्णतः लगभग समान ही आये हैं।

**बीज शब्द**– तीन आघूर्ण प्रमेय, आघूर्ण वितरण विधि, एक व्यावहारिक दृष्टिकोण

1. **परिचय**– तीन आघूर्ण प्रमेय प्रायः अनवरत धरनों पर आ रहे भार के कारण उत्पन्न नमन आघूर्ण व कर्तन बल के साथ–साथ उनके आरेख भी ड्रा करने के लिये उपयोगी हैं। यह सिद्धान्त 1857 में एनिल क्लेपयार्न ने विकसित किया था। इस सिद्धान्त के अनुसार दो क्रमागत पाटों के मुक्त नमन आघूर्ण को उनकी लम्बाई के साथ लेकर मुक्त नमन आघूर्ण का क्षेत्रफल आघूर्ण के साथ बराबर किया जाता है जिसमें EI का मान नियत अथवा हर पाट के लिये कुछ अलग भी हो सकता है। दो से अधिक पाटों के लिये हर बार दो क्रमागत पाट ही लेकर अगले दो पाटों का विश्लेषण किया जाता है। निम्न रामीकरण सामान्य नोटेशन के साथ इस प्रकार है।

$$Ma\,L_1/EI_1 + 2Mb\,(L_1/EI_1 + L_2/EI_2) + Mc\,L_2 = 6A_1X_1/EI_1L_1 + 6A_2X_2/EI_2L_2$$

आघूर्ण वितरण विधि में इटरेटिव आघूर्ण क्रमशः विस्थापित होते रहते है। इस विधि को 1930 में हार्डी क्रॉस ने विकसित किया था। जिसमें अज्ञात संरचनाओं यथा अनवरत धरनों व दृढ पोर्टल फ्रेमों पर विकसित होने वाले असंतुलित आघूर्ण को फ्रेम के सदस्यों में मैनुअली वितरित करते हुए संतुलन की स्थिति तक किया जाता है। यह तकनीकी पेपर उक्त दोनों विधियों से प्राप्त आघूर्ण की उदाहरण सहित पुष्टि करता है और विधियों की प्रासंगिकता का महत्व दर्शाता है।[1-3]

2. **मुख्य शब्द**–

E= प्रत्यास्थ का मापांक, I= जड़त्वाघूर्ण, A= सम्बन्धित अवधि के लिये मुक्त नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल, M= अवलम्बों पर आबद्ध नमन आघूर्ण, X= मुक्त नमन आघूर्ण आरेख के सम्बन्धित छोर से गुरुत्वकेन्द्र की दूरी, L= सम्बन्धित पाट की लम्बाई, D.F.=वितरण कारक, UDL= समान रुप से वितरित भार, W= बिन्दु भार

3. **विधि**– तीन आघूर्ण प्रमेय में प्रत्येक पाट के लिये अधिकतम नमन आघूर्ण ज्ञात करते हुए नमन आघूर्ण का क्षेत्रफल व इसके गुरुत्व केन्द्र की आलम्ब से दूरी की गणना की जायेगी। फिर निम्न सूत्र से आलम्ब के लिये गणना की जायेगी।

$$Ma\,L_1/EI_1 + 2Mb\,(L_1/EI_1 + L_2/EI_2) + Mc\,L_2 = 6A_1X_1/EI_1L_1 + 6A_2X_2/EI_2L_2$$

यदि प्रारम्भ व अन्त के सपोर्ट फिक्स हैं, तो काल्पनिक लम्बाई मानकर जिसके लिए मुक्त नमन आघूर्ण शून्य होगा, को सूत्र

$$Ma\,L_1/EI_1 + 2Mb\,(L_1/EI_1 + L_2/EI_2) + Mc\,L_2 = 6A_1X_1/EI_1L_1 + 6A_2X_2/EI_2L_2$$

में रखकर सपोर्ट क आघूर्ण कैलकुलेट किये जाते हैं। यदि प्रारम्भ व अन्त के सपोर्ट हिंज्ड हैं तो इसके लिए आघूर्ण शून्य लिया जाता है। सभी सपोर्ट पर फाइनल फिक्सिंग मोमेंट ज्ञात कर संयुक्त आघूर्ण मुक्त नमन आघूर्ण के साथ ड्रा कर दिया जाता है। इसी प्रकार आघूर्ण वितरण विधि में सपोर्ट पर फिक्सिंग आघूर्ण ज्ञात कर, आघूर्ण वितरण कारक के साथ आघूर्ण वितरण असन्तुलित आघूर्ण को सन्तुलित कर बीजीय योग करते हुए सपोर्ट पर आघूर्ण ज्ञात किये जाते हैं।
आघूर्ण वितरण विधि में आघूर्ण की गणना सभी जोड़ो को स्थिर मानकर की जाती है जैसे UDL = $wL^2/12$, केन्द्र पर भार = WL/8, केन्द्र पर भार नहीं = $Wa^2b/L^2$, $Wab^2/L^2$, एक तरफ त्रिकोणीय भार = $wL^2/20$, $wL^2/30$, के द्वारा सपोर्ट रोटेशन के कारण आघूर्ण में वितरण कारक संशोधन के बाद, बीजीय योग कर आघूर्ण ज्ञात किया जायेगा। निम्न उदाहरणों से उक्त प्रमेयों को आसानी से समझा जा सकता है।

केस स्टडी–1
एक अनवरत धरन 6–6 मीटर के दो पाटों A-B व B-C पर टिकी है। पहले पाट के मध्य में 100 Kn का लोड व दूसरे पाट (B-C) के B से 4 मीटर दूर 60 Kn का लोड़ आ रहा है। EI का मान नियत है।

समाधान–1
पाट AB के लिए केन्द्र पर अधिकतम नमन आघूर्ण =150KN-m,
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल $A_1$=(0.5) (6) (150)=450 इकाई
$X_1$=3m, $X_2$=3m
पाट BC के लिए
अवलम्ब B से अधिकतम नमन आघूर्ण 4m पर = 80KN-m,
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल BMD $A_2$ =(0.5) (6) (80)=240 इकाई
$X_1$=10/3, $X_2$=2+6/3=8/3

पाट AB-BC के लिए तीन आघूर्ण प्रमेय
Ma (6) + 2Mb (6+6) +Mc (6)=6(450)(3)/6 + 6(240)(8/3)/6
चूंकि अवलम्ब A और C मुक्त हैं, इसलिए Ma और Mc भून्य होंगे
तो 24 Mb = 1350+640=1990
इसलिए Mb= 1990/24 =82.91 KN-m, Ma=0 और Mc=0

आघूर्ण वितरण विधि

**Mab= - W L/8 =100 (6)/8 = -75 KN-m, Mba=75 KN-m**
**Mbc= - $Wab^2/L^2$ = -60 (4) (22)/36 = -26.67 KN-m, Mcb = $Wa^2b/L^2$= 60(2)(42)=53.33 KN-m**

आघूर्ण वितरण तालिका

| जोड़ | अवयव | कड़ापन | कुल कड़ापन | वितरण कारक |
|---|---|---|---|---|
| A | BA | 4EI/6 | 8EI/6 | 0.5 |
| | BC | 4EI/6 | | 0.5 |

आघूर्ण वितरण तालिका

| A | B | B | C |
|---|---|---|---|
| | 0.5 | 0.5 | |
| -75 | 75 | -26.67 | 53.33 |
| +75 | +37.7 | -26.67 | -53.33 |
| 0 | 112.5 | -53.34 | 0 |
| | -29.58 | -29.58 | |
| 0 | 82.92 | -82.92 | 0 |

केस नंबर–1 के नतीजे से पता चला है कि फिक्सिटी के कारण सपोर्ट पर आघूर्ण दोनों तरीकों से समान रहा। दोनों स्थितियों में मुक्त नमन आघूर्ण समान होगा।

केस अध्ययन–2
एक अनवरत धरन 6–6 मीटर के दो पाटों A-B व B-C पर टिकी है। पहले पाट के मध्य में 100 Kn का लोड व दूसरे पाट B-C के B से 4 मीटर दूर 60 Kn का लोड आ रहा है। EI का मान नियत है। पहला आलम्ब A फिक्स्ड है एवं दूसरा आलम्ब हिंज्ड है।

समाधान–2–
पाट A-B के लिए
अधिकतम केन्द्र पर नमन आघूर्ण =**150KN-m,** नमन आघूर्ण आरेख
का क्षेत्रफल **BMD** $A_2$ **=(0.5) (6) (150)=450** इकाई
$X_1$**=3m,** $X_2$**=3m**

पाट B-C के लिए
सपोर्ट B से 4m पर अधिकतम नमन आघूर्ण = **80KN-m ,**
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल **(BMD)** $A_3$**=(0.5) (6) (60)=240** इकाई
$X_1$**=10/3,** $X_2$**=2+6/3=8/3**

पाट **A'A-AB** के लिए तीन आघूर्ण प्रमेय
**Ma' (0) + 2Ma (0+6) + Mb (6) = 6(0)(0)/6 + 6(450)(3)/6**
चूंकि सपोर्ट A'मुक्त है, इसलिए Ma' शून्य होगा।
इसलिए **2 Ma + Mb = 225** ----------(1)

पाट **AB-BC** के लिए तीन आघूर्ण प्रमेय
**Ma (6) + 2Mb (6+6) + Mc (0) = 6(450)(3)/6 + 6(240)(8/3)/6**
चूंकि सपोर्ट C मुक्त है, इसलिए MC शून्य होगा।
इसलिए **Ma + 4Mb = (1350+640)/6 = 331.67** ----------(2)

(1) और (2) को हल करके प्राप्त होगा **Ma = 81.19, Mb = 62.62**

आघूर्ण वितरण विधि– **Mab = - WL/8 = 100 (6)/8 = -75 KN-m, Mba = 75 KN-m**
**Mbc = -** $Wab^2/L^2$ **= -60 (4)(**$2^2$**)/36 = -26.67 KN-m, Mcb =** $Wa^2b/L^2$ **= 60(2)(**$4^2$**) = 53.33 KN-m**

आघूर्ण वितरण कारक तालिका

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| B | BA | 3EI/6 | 7EI/6 | 3/7 |
| | BC | 4EI/6 | | 4/7 |
| C | CD | 4EI/6 | 7EI/6 | 4/7 |
| | DC | 3EI/6 | | 3/7 |

आघूर्ण वितरण तालिका

| A | B | B | C | C | D |
|---|---|---|---|---|---|
| | 3/7 | 4/7 | 4/7 | 3/7 | |
| -75 | +75 | -26.67 | 53.34 | -53.34 | 26.67 |
| +75 | +37.5 | | | -13.33 | -26.67 |
| 0 | 112.5 | -26.67 | 53.34 | -66.67 | 0 |
| | -36.78 | -49.05 | 7.61 | 5.71 | |
| | | 3.8 | -24.52 | | |
| | -1.63 | -2.7 | 14.01 | 10.51 | |
| | | 7 | -1.35 | | |
| | -3 | -4 | +0.77 | +0.58 | |
| | | 0.385 | -2 | | |
| | -0.15 | -0.22 | +1.44 | 0.86 | |
| | | 0.72 | -0.11 | | |
| | -0.31 | -0.41 | +0.06 | +0.05 | |
| 0 | 70.93 | 71.76 | 49.25 | 49.06 | 0 |

केस संख्या–4 के परिणाम से पता चला है कि स्थिरता के कारण सपोर्ट पर आघूर्ण दोनों तरीकों से समान रहा। दोनों स्थितियों में मुक्त नमन आघूर्ण समान होगा।

**केस अध्ययन –5**

एक अनवरत धरन 6–6 मीटर के दो पाटों A-B, व B-C पर टिकी है। पहले पाट के मध्य में 100 Kn का लोड व दूसरे पाट B से 4 मीटर दूर 60, Kn का लोड आ रहा है। EI का मान पहले पाट के लिए 2I व दूसरे पाट के लिए 3I नियत है। आलम्ब, A व C हिंज्ड हैं।

**समाधान–5**

पाट A-B के लिए केन्द्र पर अधिकतम नमन आघूर्ण =150KN-m,
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल BMD $A_1$=(0.5) (6) (150)=450 इकाई, $X_1$=3m, $X_2$=3m

पाट B-C के लिए
सपोर्ट B से 4m पर अधिकतम नमन आघूर्ण = **80KN-m,**
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल **BMD $A_2$= (0.5) (6) (60)=240** इकाई, **$X_1$=10/3, $X_2$=2+6/3=8/3**

पाट AB-BC के लिए तीन आघूर्ण प्रमेय
**Ma (6)/2 + 2Mb (6/2+6/3) +M c(6)/3 = 6(450)(3)/6(2) + 6(240)(8/3)/6(3)**
चूंकि सपोर्ट **A** और C मुक्त हैं, इसलिए **Ma** और **Mc** शून्य होगा।
इसलिए **10 Mb = 675+213.33=888.33**
इसलिए **Mb= 888.33 / 10 = 88.83 KN-m, Ma=0 and Mc=0**

**आघूर्ण वितरण विधि**
**Mab= - WL/8 =100 (6)/8 = -75 KN-m, Mba =75 KN-m**
**Mbc= - Wab$^2$/L$^3$ = -60 (4)(2$^2$)/36 = -26.67 KN-m, Mcb = W a$^2$ b/L$^3$ = 60(2)(4$^2$)=53.33 KN-m**

आघूर्ण वितरण कारक तालिका

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| A | BA | 3EI(2)/6=EI | 2.5EI | 1/2.5 | 0.4 |
| | BC | 3EI(3)/6=1.5EI | | 1.5/2.5 | 0.6 |

आघूर्ण वितरण तालिका

| **A** | **B** | **B** | **C** |
|---|---|---|---|
| | 0.4 | 0.6 | |
| -75 | +75 | -26.67 | 53.33 |
| +75 | 37.5 | -26.67 | -53.33 |
| 0 | 112.5 | -53.34 | 0 |
| | -23.66 | -35.5 | |
| 0 | 88.84 | -88.84 | 0 |

केस संख्या–5 के परिणाम से पता चला है कि स्थिरता के कारण सपोर्ट पर आघूर्ण दोनों तरीकों से समान रहा। दोनों स्थितियों में मुक्त नमन आघूर्ण समान होगा।

**केस अध्ययन–6**
एक अनवस्त धरन 6–6 मीटर के तीन पाटों A-B, B-C व C-D पर टिकी है। पहले पाट के मध्य में 100 Kn का लोड व दूसरे पाट B से 4 मीटर दूर 60, Kn का लोड आ रहा है। साथ ही तीसरे पाट C से 2 मीटर दूर 60, Kn का लोड आ रहा है। EI का मान पहले, दूसरे व तीसरे पाट के लिए क्रमशः 2I, 3I व 4I हैं। आलम्ब, A, B व C हिंज्ड हैं।

**समाधान–6**

लोड के तहत अधिकतम मुक्त नमन आघूर्ण 150 यूनिट, 80 यूनिट और 80 यूनिट होगा।
पाट A-B के लिए केन्द्र पर अधिकतम नमन आघूर्ण **=150KN-m,**
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल **BMD** $A_1$**=(0.5) (6) (150)=450** इकाई, $X_1$**=3m,** $X_2$**=3m**

पाट B-C के लिए सपोर्ट B से 4m पर अधिकतम नमन आघूर्ण **=80KN-m,**
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल **BMD** $A_2$**=(0.5) (6) (80)=240** इकाई, $X_1$**=10/3,** $X_2$**=(2+6)/3=8/3**

पाट C-D के लिए
सपोर्ट C से 2m पर अधिकतम नमन आघूर्ण **=80KN-m,**
नमन आघूर्ण आरेख का क्षेत्रफल **BMD** $A_3$**=(0.5) (6) (80)=240** इकाई, $X_1$**=8/3,** $X_2$**=(4+6)/3=10/3**

पाट AB-BC के लिए तीन आघूर्ण प्रमेय
$Ma(L_1/EI_1)+2Mb(L_1/EI_1+L_2/EI_2)+Mc(L_2/EI_2)=6A_1X_1/EI_1L_1+6A_2X_2/EI_2L_2$
**Ma (6/2) +2Mb (6/2 +6/3) +Mc (6/3) = 6(450)(3)/6(2) + 6(240)(8/3)/6(3)**
चूंकि सपोर्ट A पर आघूर्ण शून्य होगा।
इसलिए **5Mb + Mc = 444.17** ----------(1)

पाट BC-CD के लिए तीन आघूर्ण प्रमेय
**Mb (6/3) + 2Mc (6/3+6/4) +Md (0)= 6(240)(10/3)/6(3) + 6(240)(10/3)/6(4)**
इसलिए **2Mb + 7Mc= 466.67** ----------(2)

(1) और (2) को हल करके प्राप्त होगा, **Mb = 80.10 bdkbZ and Mc = 43.67** इकाई

आघूर्ण वितरण विधि

**Mab= - WL/8 =100 (6)/8 = -75 KN-m, Mba =75 KN-m**
**Mbc= -** $Wab^2/L^2$ **= -60 (4)(**$2^2$**)/36 = -26.67 KN-m, Mcb =W** $a^2$ **b/**$L^2$**= 60(2)(**$4^2$**)=53.33 KN-m**
**Mcd= -53.34 , Mdc=26.67**

आघूर्ण वितरण कारक तालिका

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| B | BA | 3EI(2)/6 =1 | 3 | 1/3 |
| | BC | 4EI(3)/6 = 2 | | 2/3 |
| C | CB | 4EI(3)/6 = 2 | 4 | 1/2 |
| | CD | 3EI(4)/6 =2 | | 1/2 |

आघूर्ण वितरण तालिका

| A | B | B | C | C | D |
|---|---|---|---|---|---|
| | 1/3 | 2/3 | 0.5 | 0.5 | |
| -75 | 75 | -26.67 | 53.34 | -53.34 | 26.67 |
| 75 | 37.5 | | | -13.34 | - 26.67 |

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 0 | 112.5 | -26.67 | 53.34 | -66.67 | 0 |
| | -28.61 | -57.22 | 6.66 | 6.66 | |
| | | 3.33 | -28.61 | | |
| | -1.11 | -2.22 | 14.30 | 14.31 | |
| | | 7.15 | -1.11 | | |
| | -2.38 | -4.77 | 0.55 | 0.55 | |
| | | 0.27 | -2.38 | | |
| | -0.09 | -0.18 | 1.19 | 1.19 | |
| 0 | 80.31 | -80.31 | 43.94 | -43.96 | 0 |

केस संख्या–6 के परिणाम से पता चला है कि स्थिरता के कारण सपोर्ट पर आघूर्ण दोनों तरीकों से समान रहा। दोनों स्थितियों में मुक्त नमन आघूर्ण समान होगा।

5. **निष्कर्ष**– प्रस्तुत तकनीकी शीर्षक में छः केस अध्ययनों के माध्यम से तीन आघूर्ण प्रमेय व आघूर्ण वितरण विधि की पुष्टि का अनुप्रयोग किया गया और पाया गया कि गणना के आधार पर अंतिम आघूर्ण दोनों विधियों से पूर्णतः लगभग समान ही आये हैं। आघूर्ण वितरण विधि में छोटे आघूर्ण मानों को नजर अंदाज करने पर ही कुछ अन्तर आते हैं। अन्यथा परिणाम बिलकुल सही प्राप्त होते हैं। अतः लेखक ने अपने तकनीकी पेपर के माध्यम से समझाया है कि आघूर्ण ज्ञात करने के लिए दोनों विधियां प्रासंगिक हैं और वर्तमान में प्रचलित हैं।

**References**

1. Varshney. Manoj (2023-24) Sanrachnayon ka Vishleshan, Asian Publishers, Mujaffarnagar. ISBN: 978-93-5502-177-9
2. Varshney. Manoj (2025-26) Samagri ke Yantriki. Asian Publishers. Mujaffarnagar. ISBN: 978-93-5502-882-2.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 61-71
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.11
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Food Additives and Preservatives: Advances, Applications, and Health Implications

Reetu Sangwan
Department of Chemistry, Ramashray Baleshwar College
Dalsingsarai, Samastipur-848 114, Bihar, India
(A Constituent Unit of LNMU Darbhanga, Bihar)
ritnikrana@gmail.com

**Received: 13-10-2025, Accepted: 20-11-2025**

**Abstract**- Food additives and preservatives play a crucial role in the modern food industry by enhancing flavor, appearance, texture, and shelf life. Additives include a wide range of substances such as flavor enhancers, colorants, emulsifiers, and sweeteners, while preservatives are specifically used to inhibit microbial growth and delay spoilage. These compounds enable mass food production, long-distance transportation, and extended storage, making processed foods more accessible and convenient for consumers. However, the widespread use of synthetic additives and preservatives has raised public health concerns, including potential links to allergic reactions, behavioral changes, and long-term health effects. Regulatory bodies such as the FDA and EFSA strictly control their use, ensuring that only substances proven safe are permitted in food products. Increasing consumer awareness has also led to a growing demand for natural alternatives, prompting research into plant-based and bio-derived preservatives.

**Key words**- Food, Additives, Preservatives, E-Numbers

# खाद्य योजक और परिरक्षक: प्रगति, अनुप्रयोग और स्वास्थ्य निहितार्थ

रीतू सांगवान
रसायन विज्ञान विभाग, रामाश्रय बालेश्वर महाविद्यालय
दलसिंगसराय, समस्तीपुर-848 114, बिहार, भारत
(एलएनएमयू दरभंगा, बिहार की एक घटक इकाई)
ritnikrana@gmail.com

**सार**– खाद्य योजक और परिरक्षक आधुनिक खाद्य उद्योग में स्वाद, रूप, बनावट और शेल्फ लाइफ को बढ़ाकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। योजकों में स्वाद बढ़ाने वाले, रंग, पायसीकारी और मिठास जैसे कई प्रकार के पदार्थ शामिल होते हैं, जबकि परिरक्षकों का उपयोग विशेष रूप से सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकने और खराब होने में देरी करने के लिए किया जाता है। ये यौगिक बड़े पैमाने पर खाद्य उत्पादन, लंबी दूरी के परिवहन और लंबे समय तक भंडारण को संभव बनाते हैं, जिससे प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ उपभोक्ताओं के लिए अधिक सुलभ और सुविधाजनक हो जाते हैं। यद्यपि, सिंथेटिक योजकों और परिरक्षकों के व्यापक उपयोग ने जन स्वास्थ्य संबंधी चिंताएँ पैदा की हैं, जिनमें एलर्जी, व्यवहार परिवर्तन और दीर्घकालिक स्वास्थ्य प्रभावों के संभावित संबंध शामिल हैं। FDA और EFSA जैसी नियामक संस्थाएँ इनके उपयोग को सख्ती से नियंत्रित करती हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि खाद्य उत्पादों में केवल सुरक्षित सिद्ध पदार्थों को ही अनुमति दी जाए। बढ़ती उपभोक्ता जागरूकता के कारण प्राकृतिक विकल्पों की माँग भी बढ़ रही है, जिससे पादप-आधारित और जैव-व्युत्पन्न परिरक्षकों पर शोध को बढ़ावा मिला है।

**बीज शब्द**– भोजन, योजक, संरक्षक, ई-संख्याएं

1. **परिचय**– भोजन से तात्पर्य किसी भी ऐसे पदार्थ से है जिसका सेवन किया जाता है–चाहे खाया जाए या पिया जाए–जो शरीर को पोषण प्रदान करता है। यह आमतौर पर पौधों या पशु स्रोतों से प्राप्त होता है। पौधों के विभिन्न भागों का भोजन के रूप में सेवन किया जाता है, और इस उद्देश्य के लिए दुनिया भर में लगभग 2,000 पौधों की प्रजातियों की खेती की जाती है। पौधे ऐसे फल पैदा करने के लिए विकसित हुए हैं जो जानवरों को आकर्षित करते हैं, जिससे वे फल खाने और बीजों को अधिकतर मूल पौधे से कुछ दूरी पर फैलाने के लिए प्रोत्साहित होते हैं। परिणामस्वरूप, अधिकांश संस्कृतियों में फल मानव आहार का एक प्रमुख घटक बनते हैं। सब्जियाँ पादप-आधारित खाद्य पदार्थों की एक अन्य प्रमुख श्रेणी का प्रतिनिधित्व करती हैं। इनमें शामिल हैं–

- जड़ वाली सब्जियाँ: जैसे, आलू, गाजर
- पत्तेदार सब्जियाँ: जैसे, पालक, लेट्यूस

- तने वाली सब्जियाँ: जैसे, बाँस के अंकुर, शतावरी
- पुष्पित सब्जियाँ: जैसे, ग्लोब आर्टिचोक, ब्रोकली

इसके अतिरिक्त, कई जड़ी–बूटियाँ और मसाले, जो अपने तीखे स्वाद और सुगंध के लिए जाने जाते हैं, सब्जियों के विभिन्न भागों से प्राप्त होते हैं।[1] खाद्य रसायन विज्ञान, भोजन के जैविक और अजैविक दोनों घटकों से जुड़ी रासायनिक प्रक्रियाओं और अंतःक्रियाओं का अध्ययन है।[2] इसमें खाद्य उत्पादों का उत्पादन, प्रसंस्करण, वितरण, तैयारी, मूल्यांकन और उपयोग भी शामिल है। आधुनिक समय में, बहुत से लोग सुविधाजनक, खाने के लिए तैयार खाद्य पदार्थों को पसंद करते हैं जो बाजार में व्यापक रूप से उपलब्ध हैं। इन खाद्य पदार्थों में अक्सर उनकी गुणवत्ता, स्वाद और शेल्फ लाइफ बनाए रखने के लिए योजक और संरक्षक होते हैं। खाद्य योजक और संरक्षक, स्वाद, बनावट, रूप और स्थिरता को बढ़ाने के लिए खाद्य उत्पादन या प्रसंस्करण के दौरान थोड़ी मात्रा में मिलाए जाने वाले पदार्थ होते हैं। इनका उपयोग स्वीकार्य दैनिक सेवन (एडीआई) सीमा के भीतर ही रहना चाहिए, क्योंकि अत्यधिक सेवन से स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ सकते हैं। योजकों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है: प्रत्यक्ष योजक विशिष्ट कार्यों (जैसे–मिठास, रंग) को प्राप्त करने के लिए जानबूझकर मिलाए जाते हैं। अप्रत्यक्ष योजक प्रसंस्करण, पैकेजिंग या भंडारण के दौरान भोजन में प्रवेश कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, खाद्य योजकों को प्राकृतिक या सिंथेटिक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है: प्राकृतिक योजक पौधों और जानवरों जैसे स्रोतों से प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए: सोयाबीन और मक्का भोजन की स्थिरता बनाए रखने में मदद करते हैं। कारमेल, जो कारमेलाइज्ड चीनी से बनता है, का उपयोग रंग एजेंट के रूप में किया जाता है। एस्पार्टेम, जो एस्पार्टिक एसिड से प्राप्त होता है, एक स्वीटनर और परिरक्षक के रूप में कार्य करता है। आमतौर पर उपयोग किए जाने वाले कुछ परिरक्षक और योजक सोडियम नाइट्रेट, ब्यूटाइलेटेड हाइड्रॉक्सीएनिसोल (बीएचए), मोनोसोडियम ग्लूटामेट और सोडियम बेंजोएट हैं। कुछ कृत्रिम रंगों का उपयोग किया जाता है जैसे एरिथ्रोसिन (लाल), ऐमारैंथ (एजोइक लाल), एनाट्टो बिक्सिन (पीला नारंगी)।

1.1. **खाद्य संरक्षण प्रक्रिया**– खाद्य संरक्षण, सूक्ष्मजीवों के कारण या उनके कारण होने वाली या त्वरित गुणवत्ता, खाद्यता, या पोषण मूल्य की क्षति को रोकने या काफी हद तक धीमा करने के लिए खाद्य पदार्थों के उपचार और प्रबंधन की प्रक्रिया है। कुछ संरक्षण विधियाँ जानबूझकर लाभकारी बैक्टीरिया, यीस्ट या कवक का उपयोग विशिष्ट गुणों को बढ़ाने और साथ ही शेल्फ लाइफ़ बढ़ाने के लिए करती हैं, जैसा कि पनीर और वाइन जैसे उत्पादों में देखा जाता है। खाद्य पदार्थों के संरक्षण में इसके पोषण मूल्य, बनावट और स्वाद को बनाए रखना या बढ़ाना भी शामिल है, जो कि खाद्य या वांछनीय माने जाने वाले सांस्कृतिक प्राथमिकताओं के अनुसार भिन्न हो सकते हैं। आम तौर पर, संरक्षण तकनीकों का उद्देश्य बैक्टीरिया, कवक और अन्य सूक्ष्मजीवों के विकास को रोकना, वसा के ऑक्सीकरण को धीमा करना होता है जिससे बासीपन होता है, और प्राकृतिक उम्र बढ़ने या रंगहीनता को रोकना होता है, जैसे कि कटे हुए सेबों में होने वाला एंजाइमेटिक भूरापन।[3]

1.2. **खाद्य संरक्षण की पारंपरिक विधियाँ**– कुछ खाद्य संरक्षण विधियों में सूक्ष्मजीवों द्वारा पुनः संदूषण को रोकने के लिए उपचार के बाद उत्पाद को सील करना आवश्यक होता है, जबकि अन्य–जैसे सुखानाकृखाद्य पदार्थों को विशेष पैकेजिंग के बिना लंबे समय तक सुरक्षित रूप से संग्रहीत करने की अनुमति देते हैं। सामान्य संरक्षण तकनीकों में सुखाना, स्प्रे सुखाने, फ्रीज–सुखाने, फ्रीजिंग, वैक्यूम पैकिंग, डिब्बाबंदी, सिरप में संरक्षण, चीनी क्रिस्टलीकरण, खाद्य विकिरण, और परिरक्षकों या कार्बन डाइऑक्साइड जैसी अक्रिय गैसों का मिश्रण शामिल हैं। अन्य विधियाँ, जैसे अचार बनाना, नमकीन बनाना, धूम्रपान, क्योरिंग, और सिरप या अल्कोहल में संरक्षण, न केवल शेल्फ लाइफ बढ़ाते हैं बल्कि भोजन का स्वाद भी बढ़ाते हैं। संरक्षण प्रक्रियाओं में शामिल हैं–

- सूक्ष्मजीवों को मारने या विकृत करने के लिए गर्म करना (जैसे, उबालना)
- ऑक्सीकरण (जैसे– सल्फर डाईऑक्साइड का उपयोग)
- विषाक्त अवरोध (जैसे– धूम्रपान, कार्बन डाईऑक्साइड, सिरका, अल्कोहल आदि का उपयोग)
- निर्जलीकरण (सुखाना)
- परासरण अवरोध (जैसे, सिरप का उपयोग)
- निम्न तापमान निष्क्रियण (जैसे, जमाना)
- अत्यधिक उच्च जल दाब (जैसे, ताजा किया हुआ, एक प्रकार का "ठंडा" पाश्चुरीकरण, यह दाब प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले रोगाणुओं को मार देता है, जो भोजन को खराब करते हैं और खाद्य सुरक्षा को प्रभावित करते हैं)।
- इन विधियों में सम्मिलित हैं: सुखाना, जमाना, वैक्यूम पैकिंग, चीनी, अचार बनाना, विकिरण, संशोधित वातावरण, नमक, जमीन में दफनाना, सूक्ष्मजीवों का नियंत्रित उपयोग, उच्च दाब खाद्य संरक्षण आदि।

2. **खाद्य परिरक्षक**– खाद्य परिरक्षक वे पदार्थ होते हैं जिन्हें वृद्धि को रोकने या धीमा करने के लिए मिलाया जाता है। ये कवक और अन्य सूक्ष्मजीवों के कारण होते हैं जो खराब होने का कारण बनते हैं। इनका उपयोग अकेले या अन्य संरक्षण विधियों के साथ मिलाकर शेल्फ

लाइफ बढ़ाने के लिए किया जा सकता है। पारंपरिक प्राकृतिक परिरक्षकों में नमक, चीनी, सिरका, अल्कोहल और डायटोमेसियस अर्थ शामिल हैं। कुछ परिरक्षक विशेष रूप से फलों और सब्जियों में मौजूद एंजाइमों को लक्षित करते हैं जो भोजन को काटने के बाद भी अपना कार्य जारी रखते हैं। उदाहरण के लिए, नींबू या अन्य खट्टे फलों के रसों में पाए जाने वाले साइट्रिक और एस्कॉर्बिक एसिड, एंजाइम फिनोलेज को बाधित कर सकते हैं, जो कटे हुए सेब और आलू की सतह पर भूरापन पैदा करता है। अधिकांश खाद्य पदार्थों में स्वाभाविक रूप से एंजाइम या रासायनिक यौगिक–जैसे अम्ल या अल्कोहल होते हैं, जो कटाई या तैयारी के तुरंत बाद गुणवत्ता में गिरावट का कारण बनते हैं। निकोलस एपर्ट द्वारा डिब्बाबंदी के विकास ने खाद्य संरक्षण में क्रांति ला दी। 1795 में, नेपोलियन द्वारा दिए गए एक पुरस्कार के बदले में, एपर्ट ने लंबी समुद्री यात्राओं के लिए फलों और सब्जियों को काँच के कंटेनरों में सील करके संरक्षित करने की एक विधि तैयार की। उनकी तकनीक को बाद में 1810 में इंग्लैंड में पीटर डूरंड ने अपनाया, जिन्होंने व्यावसायिक उत्पादन के लिए धातु के डिब्बों का उपयोग शुरू किया। हालाँकि, प्रारंभिक डिब्बाबंदी विधियों में कभी–कभी सीसा सोल्डर के उपयोग के कारण सीसा विशाक्तता हो जाती थी। आधुनिक संरक्षण विधियों, जैसे वैक्यूम सीलिंग और प्लास्टिक रैपिंग, ने अब इन खतरनाक प्रथाओं का स्थान ले लिया है। परिरक्षक आमतौर पर दो मुख्य श्रेणियों में आते हैं: रोगाणुरोधी परिरक्षक, जो बैक्टीरिया, फफूंद और कवक के विकास को रोकते हैं, और एंटीऑक्सीडेंट, जैसे ऑक्सीजन अवशोषक, जो खाद्य घटकों के ऑक्सीकरण को रोकते हैं जिससे भोजन खराब हो सकता है।

2.1. **परिरक्षकों का वर्गीकरण**– परिरक्षकों को आम तौर पर दो मुख्य श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है:

**श्रेणी I परिरक्षक**– ये पारंपरिक, प्राकृतिक रूप से प्राप्त पदार्थ हैं जो सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और जल गतिविधि को कम करके भोजन को संरक्षित करने में मदद करते हैं। उदाहरणों में नमक, चीनी, वनस्पति तेल, मसाले, सिरका, ग्लूकोज और शहद शामिल हैं।

**श्रेणी II परिरक्षक**– ये रासायनिक परिरक्षक हैं जिनका उपयोग सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकने, खराब होने में देरी करने और शेल्फ लाइफ बढ़ाने के लिए किया जाता है। सामान्य उदाहरणों में सोडियम बेंजोएट, बेंजोइक एसिड औए नाइट्राइट सम्मिलित हैं।

**सोडियम बेंजोएट**– सोडियम बेंजोएट का रासायनिक सूत्र NaC‡ H… O, है। यह खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में सबसे अधिक इस्तेमाल किए जाने वाले परिरक्षकों में से एक है और आमतौर पर बेंजोइक अम्ल को निष्क्रिय करके बनाया जाता है। सोडियम बेंजोएट अम्लीय खाद्य पदार्थों, पेय पदार्थों, दवाओं और सौंदर्य प्रसाधनों में प्रभावी है और आमतौर पर 0-1% तक की सांद्रता में इसका उपयोग किया जाता है।

**टाइटेनियम डाईऑक्साइड**– अल्ट्राफाइन टाइटेनियम डाईऑक्साइड के रूप में भी जाना जाता है, यह यौगिक एक सफेद, क्रिस्टलीय, गंधहीन पाउडर है जिसमें कम घुलनशीलता और अपेक्षाकृत कम विशाक्तता होती है। इसका उपयोग भोजन को संरक्षित करने और शेल्फ लाइफ बढ़ाने में मदद के लिए किया जाता है। भोजन के अलावा, टाइटेनियम डाइऑक्साइड का उपयोग अपनी चमकदार सफेदी और स्थिरता के कारण पेंट, स्याही, सौंदर्य प्रसाधन, सनस्क्रीन, कागज और छपाई में व्यापक रूप से किया जाता है।

**सोडियम क्लोराइड (NaCl) (नमक)**– सबसे पुराने और सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले परिरक्षकों में से एक, सोडियम क्लोराइड सस्ता, सुरक्षित और अत्यधिक प्रभावी है। यह जल गतिविधि को कम करके भोजन को संरक्षित करता है, जिससे सूक्ष्मजीवों की वृद्धि बाधित होती है और शेल्फ लाइफ बढ़ जाती है।

**नाइट्रेट और नाइट्राइट**– इनका उपयोग आमतौर पर संसाधित मांस में क्लोस्ट्रीडियम बोटुलिनम की वृद्धि को रोकने और रंग को संरक्षित करने के लिए किया जाता है। हालाँकि, ये स्वास्थ्य के लिए जोखिम पैदा कर सकते हैं। कुछ स्थितियों में, नाइट्राइट उच्च तापमान प्रसंस्करण के दौरान या पेट के अम्लीय वातावरण में द्वितीयक अमीनों के साथ प्रतिक्रिया करके नाइट्रोसामाइन बना सकते हैं, जो शक्तिशाली जीनोटॉक्सिक कार्सिनोजेन्स हैं। यूरोपीय संघ की खाद्य वैज्ञानिक समिति (निर्देश 2008/7/CE] 1995) के अनुसार, मांस उत्पादों में नाइट्रेट गर्म करने पर नाइट्राइट में परिवर्तित हो सकते हैं। नाइट्राइट तब नाइट्रस अम्ल (HNO,) बना सकते हैं, जो प्रोटीन के टूटने से उत्पन्न अमीनों के साथ प्रतिक्रिया करके नाइट्रोसामाइन बनाता है। ये यौगिक कैंसर के विकास से जुड़े हैं, और इनके संपर्क की कोई सुरक्षित सीमा निर्धारित नहीं की गई है। अन्य सूचित दुष्प्रभावों में उच्च रक्तचाप रोधी प्रभाव, हिस्टामाइन संबंधी प्रतिक्रियाएँ और शिशुओं में विशाक्तता सम्मिलित हैं, जहाँ नाइट्राइट मेथेमोग्लोबिनेमिया का कारण बन सकते हैं और विटामिन A, B और B, के स्तर को कम कर सकते हैं।

**सल्फाइट (सल्फर डाईऑक्साइड और संबंधित लवण)**– सल्फाइट रोगाणुरोधी और एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करते हैं, जो

प्रभावी रूप से खराब होने और रंगहीन होने से बचाते हैं। हालाँकि, ये सल्फाइट के प्रति संवेदनशील व्यक्तियों, विशेष रूप से अस्थमा से पीड़ित व्यक्तियों में ब्रोन्कोकन्सट्रिक्शन का कारण बन सकते हैं, और अतिसंवेदनशील लोगों में त्वचा संबंधी प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न कर सकते हैं। इन संभावित स्वास्थ्य प्रभावों के कारण, अधिकांश नियामक प्राधिकरण मानक जोखिम प्रबंधन और उपभोक्ता सुरक्षा उपायों के भाग के रूप में, निर्दिष्ट सांद्रता सीमा से अधिक सल्फाइट युक्त खाद्य पदार्थों पर स्पष्ट लेबलिंग की आवश्यकता रखते हैं।

**सिंथेटिक एंटीऑक्सीडेंट**– खाद्य परिरक्षकों के रूप में एंटीबायोटिक दवाओं का उपयोग विवादास्पद है क्योंकि यह एंटीबायोटिक–प्रतिरोधी सूक्ष्मजीवों के विकास में योगदान कर सकता है, जिससे चिकित्सा में उनकी चिकित्सीय प्रभावशीलता के लिए गंभीर जोखिम पैदा हो सकते हैं। इस चिंता के बावजूद, कुछ एंटीबायोटिक्स जैसे नाइसिन (E234) और पिमारिसिन या नैटामाइसिन (E235) का उपयोग विनियमित परिस्थितियों में खाद्य संरक्षण में किया गया है।[5]

**नाइसिन (E234)**– नाइसिन एक प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला रोगाणुरोधी पदार्थ है लैक्टिक अम्ल जीवाणुओं के कुछ विशिष्ट उपभेदों द्वारा उत्पादित लाइपेप्टाइड मुख्य रूप से ग्राम–पॉजिटिव सूक्ष्मजीवों, जैसे स्ट्रेप्टोकोकी, बेसिली और क्लोस्ट्रीडिया, के विरुद्ध सक्रिय होता है। डेयरी उद्योग में इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है– विशेषकर कठोर और प्रसंस्कृत चीजों में ब्यूटिरिक किण्वन और सफेद फफूंदों की वृद्धि को रोकने के लिए। डिब्बाबंद सब्जियों में, नाइसिन मिलाने से उत्पाद की सुरक्षा और गुणवत्ता बनाए रखते हुए, स्टरलाइजेशन प्रक्रिया को आसान बनाया जा सकता है। इसका उपयोग पुडिंग, सूजी और टैपिओका जैसे उत्पादों में सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाले खराब होने से बचाने के लिए भी किया जाता है।

**नैटामाइसिन (पिमारिसिन, E235)**– नैटामाइसिन एक अन्य रोगाणुरोधी पॉलीपेप्टाइड है जिसकी खमीर और फफूंदों के विरुद्ध प्रबल सक्रियता है। यह कुछ सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित होता है और इसका उपयोग मुख्य रूप से पनीर की सतह के उपचार और सूखे सॉसेज जैसे उत्पादों पर फफूंद की वृद्धि को रोकने के लिए किया जाता है। इसका उपयोग आमतौर पर सतही अनुप्रयोगों तक ही सीमित रखा जाता है ताकि प्रणालीगत जोखिम को कम किया जा सके और खराब होने वाले जीवों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सके।

**बीएचए (ब्यूटिलेटेड हाइड्रॉक्सीएनिसोल) और बीएचटी (ब्यूटिलेटेड हाइड्रॉक्सीटोल्यूइन)**– ये सिंथेटिक एंटीऑक्सीडेंट हैं जिनका व्यापक रूप से वसा और तेलों के ऑक्सीकरण को रोकने के लिए उपयोग किया जाता है, जिससे स्नैक उत्पादों, बेक्ड उत्पादों और अनाज जैसे खाद्य पदार्थों की शेल्फ लाइफ बढ़ जाती है। बीएचए और बीएचटी दोनों का व्यापक अध्ययन किया गया है, और कुछ पशु अध्ययनों ने उच्च खुराक पर ट्यूमरजन्य प्रभावों की सूचना दी है, जिससे उनके संभावित स्वास्थ्य जोखिमों और मानव प्रासंगिकता के बारे में बहस जारी है। नियामक एजेंसियां उनकी सुरक्षा की निगरानी और मूल्यांकन करती रहती हैं, और खाद्य उत्पादों में उनके उपयोग की अधिकतम स्वीकार्य सीमाएँ निर्धारित करती हैं।

3. **खाद्य योजक**– खाद्य योजक ये पदार्थ होते हैं जिन्हें खाद्य पदार्थों में स्वाद बनाए रखने, स्वाद में सुधार करने या रूप निखारने के लिए मिलाया जाता है। कई योजकों का उपयोग सदियों से किया जाता रहा है–जैसे अचार बनाने में सिरका, बेकन जैसे मांस को पकाने में नमक, और कुछ वाइन में सल्फर डाइऑक्साइड–शेल्फ लाइफ बढ़ाने और गुणवत्ता बनाए रखने के लिए। हालाँकि, 20वीं सदी के उत्तरार्ध में प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों के उदय के साथ, प्राकृतिक और सिंथेटिक दोनों योजकों का उपयोग काफी बढ़ गया है।[6]

संयुक्त राज्य अमेरिका के खाद्य एवं औषधि प्रशासन (एफडीए) के अनुसार, खाद्य योज्य को "कोई भी पदार्थ, जिसके इच्छित उपयोग से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी खाद्य पदार्थ का घटक बनने या उसकी विशेषताओं को प्रभावित करने का परिणाम मिलता है या होने की संभावना है" के रूप में परिभाषित किया गया है। खाद्य योज्यों का उपयोग तभी स्वीकार्य माना जाता है जब वे विशिष्ट शर्तों को पूरा करते हों–

क. यह उपभोक्ताओं को गुमराह न करे,
ख. यह किसी तकनीकी उद्देश्य या आवश्यकता की पूर्ति करे, और
ग. यह खाद्य स्थिरता को बढ़ाए या पोषण गुणवत्ता को बनाए रखे।
घ. खाद्य योज्यों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है–

### 3.1. कार्य के अनुसार वर्गीकरण

**रोगाणु रोधी परिरक्षक**– सामान्य रोगाणुरोधी परिरक्षकों में सॉर्बेट, बेंजोएट, नाइट्राइट/नाइट्रेट, सल्फाइट और प्रोपिओनेट शामिल हैं। इन पदार्थों का उपयोग बैक्टीरिया, फफूंदी और यीस्ट जैसे सूक्ष्मजीवों के कारण होने वाले खाद्य पदार्थों के खराब होने से बचाने के लिए किया जाता है। उदाहरणों में सिरका, नमक, कैल्शियम प्रोपियोनेट और सॉर्बिक एसिड शामिल हैं, जिनका उपयोग आमतौर पर बेक्ड उत्पादों, सलाद ड्रेसिंग, चीज और अचार वाले खाद्य पदार्थों में किया जाता है। इनका प्राथमिक कार्य सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकना है, जिससे शेल्फ लाइफ बढ़ती है और उत्पाद की सुरक्षा और गुणवत्ता बनी रहती है।

**एंटीऑक्सीडेंट**– एंटीऑक्सीडेंट ऐसे यौगिक होते हैं जिन्हें वसा और वसा युक्त खाद्य पदार्थों में ऑक्सीकरण को विलंबित करने के लिए मिलाया जाता है, जिससे बासीपन, पोषक तत्वों की हानि और अवांछित स्वाद या गंध हो सकती है। एक प्रभावी एंटीऑक्सीडेंट को भोजन के स्वाद, रंग या गंध को नहीं बदलना चाहिए, कम सांद्रता में प्रभावी होना चाहिए, वसा में घुलनशील और गैर–विशाक्त होना चाहिए। खाद्य उद्योग में उपयोग किए जाने वाले सामान्य सिंथेटिक एंटीऑक्सीडेंट में ब्यूटाइलेटेड हाइड्रॉक्सीएनिसोल (BHA), ब्यूटाइलेटेड हाइड्रॉक्सीटोल्यूइन (BHT), और तृतीयक ब्यूटाइल हाइड्रोक्विनोन (TBHQ) सम्मिलित हैं, ये सभी फेनोलिक यौगिक हैं। अन्य एंटीऑक्सीडेंट जैसे डाइलॉरिल थायोडिप्रोपियोनेट और थायोडिप्रोपियोनिक एसिड का उपयोग भी खाद्य पदार्थों को ऑक्सीडेटिव क्षरण से बचाने के लिए किया जाता है।• टोकोफेरोल (विटामिन ई) पौधों और जानवरों के ऊतकों में प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करते हैं और ऑक्सीकरण के खिलाफ जैविक संरक्षक के रूप में काम करते हैं। हालांकि, सिंथेटिक विकल्पों की तुलना में उनकी अधिक लागत के कारण, उन्हें शायद ही कभी व्यावसायिक खाद्य योजक के रूप में उपयोग किया जाता है।

### एसिडुलेंट और पीएच नियामक

एसिडुलेंट और पीएच नियामक ऐसे पदार्थ हैं जिनका उपयोग ऑक्सीकरण को कम करके अम्लता को नियंत्रित करने और खाद्य पदार्थों में रंगहीनता को रोकने के लिए किया जाता है। सामान्य उदाहरणों में शामिल हैं:

एस्कॉर्बिक एसिड (E300): विटामिन C के रूप में भी जाना जाता है, इसका उपयोग बीयर, कटे हुए फलों, सूखे आलू और जैम में रंगहीनता और ऑक्सीकरण को रोकने के लिए किया जाता है, जिससे ताजगी और रंग बना रहता है।

साइट्रिक एसिड (E330): यह एसिड जैम, जेली, बिस्कुट, मादक पेय और सूखे सूप जैसे खाद्य पदार्थों में पीएच स्तर को नियंत्रित करने और रंगहीनता को रोकने में मदद करता है।

टोकोफेरोल (E307): ये प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट फैटी एसिड और विटामिन के ऑक्सीकरण को कम करने में मदद करते हैं और अक्सर मीट पाई, तेल और अन्य वसा युक्त खाद्य पदार्थों में उपयोग किए जाते हैं।

ब्यूटाइलेटेड हाइड्रॉक्सीएनिसोल (BHA) (E320): एक सिंथेटिक एंटीऑक्सीडेंट जिसका उपयोग वसा और विटामिन। के ऑक्सीकरण को विलंबित करने के लिए किया जाता है, जो आमतौर पर चिप्स, पनीर और स्नैक फूड में पाया जाता है।

**रंग**– रंग पदार्थ खाद्य पदार्थों में मिलाए जाने वाले पदार्थ होते हैं जो रंग को निखारते या पुर्नस्थापित करते हैं, जिससे वे अधिक आकर्षक और देखने में विशिष्ट बनते हैं। रंग एक प्रमुख संवेदी गुण है जो उपभोक्ता की धारणा और स्वीकृति को प्रभावित करता है। इन कारकों में खाद्य प्रसंस्करण के दौरान उपस्थिति बनाए रखने के लिए उपयोग किए जाने वाले स्टेबलाइजर और रंग धारण करने वाले यौगिक भी शामिल हो सकते हैं। रंगों को मोटे तौर पर प्राकृतिक और सिंथेटिक प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है:

**प्राकृतिक रंग**– पौधों, जानवरों या खनिजों से प्राप्त, इन रंगों को भौतिक या रासायनिक विधियों का उपयोग करके निकाला जाता है। उदाहरणों में शामिल हैं–
एनाट्टो, बिक्सा ओरेलाना के बीजों के नारंगी गूदे से प्राप्त, जिसका उपयोग मक्खन और पनीर को रंगने के लिए किया जाता है।
कैरोटीन, गाजर से प्राप्त, जो नारंगी रंग प्रदान करता है।
हल्दी, एक मसाला जो करी, मांस उत्पादों और सलाद ड्रेसिंग को पीला रंग प्रदान करता है।
कोचीनील, मादा कोकस कैक्टी कीट से निकाला गया एक लाल रंगद्रव्य।

**सिंथेटिक रंग**– ये रासायनिक रूप से उत्पादित होते हैं, आमतौर पर पानी में घुलनशील होते हैं और पाउडर, पेस्ट या दानों के रूप में उपलब्ध होते हैं। उनकी स्थिरता प्रकाश, पीएच, ऊष्मा और अपचायक कारकों जैसे कारकों से प्रभावित हो सकती है। उदाहरणों में

टार्ट्राजीन (पीला) और एरिथ्रोसिन (लाल) शामिल हैं। प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों में एजो और ट्राइएरिलमीथेन जैसे सिंथेटिक रंग भी आम हैं।

**स्वाद वर्धक**– स्वाद वर्धक ऐसे यौगिक होते हैं जो भोजन के मौजूदा स्वाद को बिना कोई विशिष्ट स्वाद दिए, उसे तीव्र या बेहतर बनाने के लिए मिलाए जाते हैं। इस अवधारणा की उत्पत्ति एशिया में हुई, जहाँ पारंपरिक रूप से सूप में स्वाद बढ़ाने के लिए समुद्री शैवाल मिलाया जाता था। बाद में शोधकर्ताओं ने एल–ग्लूटामेट की पहचान की, विशेष रूप से मोनोसोडियम ग्लूटामेट (MSG) के रूप में, जो "उमामी" स्वाद के लिए जिम्मेदार प्रमुख स्वाद–वर्धक यौगिक है। आज, MSG और न्यूक्लियोटाइड का उपयोग आमतौर पर प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों, सूप और सॉस में स्वादिष्ट स्वादों को समृद्ध करने के लिए किया जाता है। मसाले और जड़ी–बूटियाँ प्राकृतिक स्वाद योजक के रूप में काम करती हैं, जबकि एथिल ब्यूटिरेटजो अनानास का स्वाद प्रदान करता है एक सिंथेटिक स्वाद वर्धक एजेंट का एक उदाहरण है।

**स्वीटनर और पोषक योजक**– स्वाद और मिठास बढ़ाने के लिए खाद्य पदार्थों में स्वीटनर मिलाए जाते हैं। इन्हें पोषक और गैर–पोषक प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है–

**पोषक स्वीटनर:** कार्बोहाइड्रेट के रूप में ऊर्जा प्रदान करते हैं और कैलोरी में उच्च होते हैं। उदाहरणों में सुक्रोज, ग्लूकोज, फ्रुक्टोज और कॉर्न सिरप शामिल हैं।

**गैर–पोषक स्वीटनर:** बहुत कम या बिल्कुल भी ऊर्जा प्रदान नहीं करते हैं और कैलोरी में कम होते हैं। उदाहरणों में सैकरीन (च्यूइंग गम और शीतल पेय में प्रयुक्त) और एस्पार्टेम (आहार पेय, डेयरी उत्पादों और कम कैलोरी वाले फ्लेवर्ड दूध में प्रयुक्त) शामिल हैं।

**बल्किंग एजेंट**– बल्किंग एजेंट का उपयोग भोजन के पोषण मूल्य में बदलाव किए बिना उसके आयतन या वजन को बढ़ाने के लिए किया जाता है। इन्हें अक्सर बेकरी और कन्फेक्शनरी उत्पादों, सॉस, सूप और प्रसंस्कृत मांस में मिलाया जाता है। कुछ, जैसे ग्वार गम जैसे घुलनशील फाइबर, बनावट को भी बेहतर बनाते हैं। स्टार्च एक अन्य सामान्य बल्किंग एजेंट है जिसका उपयोग उत्पाद की गुणवत्ता और स्थिरता बनाए रखते हुए थोक बढ़ाने के लिए किया जाता है।

**एंटी–केकिंग एजेंट और प्रसंस्करण सहायक**– एंटी–केकिंग एजेंट पाउडर या दानेदार खाद्य पदार्थों में गांठ और नमी अवशोषण को रोकते हैं, जिससे एक मुक्त–प्रवाह बनावट सुनिश्चित होती है। सामान्य उदाहरणों में शामिल हैं–
सिलिकॉन डाइऑक्साइड, जिसका उपयोग पाउडर वाले अंडों और बीयर के निस्पंदन में किया जाता है।
फॉस्फेट, जो बनावट और नमी बनाए रखने में सुधार करते हैं।
स्टीयरिक अम्ल, दूध की वसा में पाया जाने वाला एक फैटी एसिड है जो शेल्फ लाइफ बढ़ाने में मदद करता है।
टेबल नमक में, एंटीकेकिंग एजेंट नमक के क्रिस्टल को अलग और मुक्त–प्रवाह रखने के लिए उन पर परत चढ़ाते हैं।

**3.2. उत्पत्ति और उपभोक्ता ढाँचे के अनुसार वर्गीकरण**– खाद्य योजकों को उनकी उत्पत्ति के आधार पर निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है–

प्राकृतिक: पौधों, जानवरों या खनिजों से सीधे प्राप्त।
प्रकृति–समान: रासायनिक रूप से संश्लेषित लेकिन प्राकृतिक यौगिकों के समान।
सिंथेटिक: कृत्रिम रूप से उत्पादित पदार्थ जिनका कोई प्राकृतिक समकक्ष नहीं है।

हाल के वर्षों में, उपभोक्ता वरीयता प्रवृत्तियों, विशेष रूप से "क्लीन–लेबल" आंदोलन ने प्राकृतिक या न्यूनतम प्रसंस्कृत योजकों की मांग में वृद्धि की है। यह बदलाव मुख्यतः प्रमाणों के बजाय धारणा से प्रेरित है, क्योंकि वैज्ञानिक अध्ययन प्राकृतिक और सिंथेटिक योजकों के बीच सुरक्षा या पोषण संबंधी प्रभावों में सीमित अंतर दर्शाते हैं।

**3.3. क्रिया विधि**– परिरक्षक विविध क्रियाविधि से कार्य करते हैं: पर्यावरणीय या अंतःकोशिकीय पीएच (कार्बनिक अम्ल) को कम करना, कोशिका झिल्लियों या भित्तियों की अखंडता (फेनोलिक यौगिक, आवश्यक तेल) को बाधित करना, आवश्यक धातु आयनों (EDTA) का कीलेटिंग करना, या विशिष्ट उपापचयी एंजाइमों में हस्तक्षेप करना। नाइट्राइट और नाइट्रेट की संसाधित मांस में एक विशिष्ट भूमिका होती है–दोनों ही रोगाणुरोधी एजेंटों (विशेष रूप से क्लोस्ट्रीडियम बोटुलिनम के विरुद्ध) और रंग–स्थिरीकरण क्योरिंग एजेंटों के रूप में–जो रेडॉक्स रसायन विज्ञान और नाइट्रोसिलमायोग्लोबिन के निर्माण के माध्यम से कार्य करते हैं। एंटीऑक्सिडेंट हाइड्रोजन/इलेक्ट्रॉन दाता प्रदान करके, जो पेरोक्सिल रेडिकल्स को बुझाते हैं, या संक्रमण धातुओं (Fe] Cu) का कीलेटिंग करके, जो रेडिकल्स के निर्माण को उत्प्रेरित

करते हैं, स्व–ऑक्सीकरण श्रृंखला अभिक्रियाओं में बाधा डालते हैं। लिपिड एंटीऑक्सीडेंट (टोकोफेरोल, बीएवए बीएवटी) वसा और वसा युक्त मैट्रिक्स को संरक्षित करते हैंय जल में घुलनशील एंटीऑक्सीडेंट (एस्कॉर्बिक एसिड) जलीय प्रावस्थाओं की रक्षा करते हैं और धातु केलेटर्स के साथ सहक्रियात्मक रूप से भी कार्य कर सकते हैं।

4. **संख्या प्रणाली**– परिरक्षकों की पहचान यूरोपीय ई–नंबर प्रणाली और अंतर्राष्ट्रीय नंबरिंग प्रणाली (आईएनएस) दोनों के अंतर्गत मानकीकृत नंबरिंग प्रणाली का उपयोग करके की जाती है। यह प्रणाली खाद्य योजकों को विनियमित करने और उपभोक्ताओं को उनकी प्रकृति के बारे में स्पष्ट जानकारी प्रदान करने के लिए डिजाइन की गई है। सॉर्बिक एसिड को E200 या INS 200 के रूप में लेबल किया जाता है। लैक्टिक एसिड को $E_{270}$ या INS 270 के रूप में लेबल किया जाता है। (**तालिका–1, 2**) ये संख्याएँ निर्माताओं और उपभोक्ताओं दोनों को खाद्य उत्पादों में प्रयुक्त परिरक्षकों को आसानी से पहचानने और ट्रैक करने में सक्षम बनाती हैं ताकि शेल्फ लाइफ बढ़ाई जा सके और गुणवत्ता बनाए रखी जा सके[•]।

तालिका–1 : योजकों की सूची और संख्या प्रणाली

| सामान्य योजक | E Numbers |
|---|---|
| खाद्य रंग | E100-199 |
| संरक्षक | E200-299 |
| एंटीऑक्सीडेंट | E300-399 |
| पायसीकारक और स्थिरक | E400-499 |
| एंटीकाकरण कारक | E500-599 |
| स्वाद वर्धक | E600-699 |
| मीठा करने वाले पदार्थ | E900-999 |

तालिका–2 : ई संख्या, नाम, रासायनिक संरचना और उनके उपयोग का विवरण

| ई–नंबर / वर्ष एन एस नम्बर | नाम | रासायनिक सूत्र | विवरण | उपयोग |
|---|---|---|---|---|
| E100 | करक्यूमिन | $C_{21}H_{20}O_6$ | प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला नारंगी और पीला रंग, जो मसाला हल्दी से निकाला जाता है। | पेस्ट्री, सॉस और सूप में उपयोग किया जाता है। |
| E101 | राइबोफ्लेविन (Vit. B2) | $C_{17}H_{20}N_4O_6$ | प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला बी समूह का विटामिन जो खमीर से प्राप्त होता है। | प्रसंस्कृत पनीर में पीले और नारंगी रंग के रूप में मिलाया जाता है। |
| E102 | टार्ट्राजीन (FD & C Yellow No. 5) | $C_{16}H_9N_4Na_3O_9S_2$ | पीले या नारंगी रंग के रूप में प्रयुक्त | केक, बिस्कुट, मांस उत्पादों और सॉस में पाया जाता है। |
| E120 | कोचीनियल (carminic acid) | $C_{22}H_{20}O_{13}$ | यह एक प्राकृतिक लाल रंग है जो अंडे की जर्दी से प्राप्त होता है। | खाद्य पदार्थों में प्रयुक्त लाल रंग |
| E123 | ऐमारैंथए FD&C Red No. 2, E123, C.I. Food Red 9, Acid Red 27, Azorubin S | $C_{20}H_{11}N_2Na_3O_{10}S_3$ | यह एक सिंथेटिक कोलटार डाई है और इसका रंग लाल होता है। | ग्रेवी, ब्लैक करंट पेय में उपयोग किया जाता है। |
| E127 | एरिथ्रोसिन(FD&C Red No. 3 or C.I. Food Red 14.) | $C_{20}H_6I_4Na_2O_5$ | यह एक सिंथेटिक कोलटार डाई है और इसका रंग लाल होता है तथा इसमें खनिज आयोडीन प्रचुर मात्रा में होता है। | डिब्बा बंद स्ट्रॉबेरी और चिप्स व आलू आधारित स्नैक्स के कुछ खास स्वादों में इस्तेमाल किया जाता है। |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| E140(i) | क्लोरोफिल | $C_{55}H_{72}O_5N_4Mg$ | यह एक प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला हरा रंग द्रव्य है जो पौधों की पत्तियों और तनों में पाया जाता है। | हरी सब्जियों में रंग निखारने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। |
| E140(ii) | क्लोरोफिलिन | $C_{34}H_{31}MgN_4O_6$ | | |
| E160 a-f | E160a:कैरोटीन | $C_{40}H_{56}$ | यह एक पादप रंग द्रव्य है जो गाजर, संतरे और गुलाब के कूल्हों से प्राप्त होता है। | पीले से लेकर लाल तक कई तरह के रंग प्रदान करने में मदद करता है। |
| | E160c:लालशिमला मर्चकासत्व | $C_{40}H_{56}O_3$ | | |
| | E160d:लाइकोपीन | $C_{40}H_{56}$ | | |
| | E160e:एपोकैरोटेनल | $C_{30}H_{40}O$ | | |
| | E160f:एथिल बीटा–एपो–8'–कैरोटीनोएट | $C_{32}H_{44}O_2$ | | |
| E163 | एंथोसायनिन | $C_{15}C_{11}O^+$ | ये पादप वर्णक हैं जिनका रंग लाल से नीले तक होता है। | ये लाल पत्ता गोभी और अंगूर में पाए जाते हैं। |
| E200 | सॉर्बिक अम्ल | $C_6H_8O_2$ | इन्हें आमतौर पर खाद्य परिरक्षक के रूप में उपयोग के लिए कृत्रिम रूप से निर्मित किया जाता है। | शीतल पेय, पिज्जा और केक में इनका उपयोग किया जाता है। |
| E201 | सोडियमसॉर्बेट | $C_6H_7NaO_2$ | | |
| E202 | पोटेशियमसॉर्बेट | $C_6H_7KO_2$ | | |
| E203 | कैल्शियमसॉर्बेट | $C_{12}H_{14}CaO_4$ | | |
| E210 | बेंजोइक अम्ल | $C_7H_6O_2$ | चेरी की छाल, रसभरी और चाय में पाया जाता है। | फल उत्पाद, सलाद ड्रेसिंग और शीतल पेय |
| E211 | सोडियमबेंजोएट | $C_7H_5NaO_2$ | | |
| E212 | पोटेशियमबेंजोएट | $C_7H_5KO_2$ | | |
| E213 | कैल्शियमबेंजोएट | $C_{14}H_{10}CaO_4$ | | |
| E214 | एथिलp–हाइड्रॉक्सी बेंजोएट | $C_9H_{10}O_3$ | सिंथेटिक परिरक्षक | कवक रोधी परिरक्षक |
| E215 | (ethylparaben) | $C_9H_9NaO_3$ | सिंथेटिक परिरक्षक | सूक्ष्म जीवों की वृद्धि को रोकता है |
| E216 | एथिलp–हाइड्रॉक्सी बेंजोएटकासोडियम लवण | $C_{10}H_{12}O_3$ | सिंथेटिक परिरक्षक | खाद्य पदार्थ, सौंदर्य प्रसाधन |
| E217 | p–हाइड्रॉक्सीबेंजोएटकासोडियमलवण | $C_{10}H_{11}NaO_3$ | सिंथेटिक परिरक्षक | शीतल पेय, डेयरी और बेक्ड सामान |
| E218 | मिथाइलp–हाइड्रॉक्सीबेंजोएट(डमजील सचंतंइमद) | $C_8H_8O_3$ | सिंथेटिक परिरक्षक | खाद्य और सौंदर्य प्रसाधनों में। |
| E219 | मिथाइलp–हाइड्रॉक्सीबेंजोएटकासोडियमलवण | $C_8H_7NaO_3$ | परिरक्षक और एंटीऑक्सीडेंट। | |
| E230 | बाइफिनाइल | $C_{12}H_{10}$ | कोलतार से संश्लेषण | खट्टे फलों की सतह के उपचार के लिए प्रयुक्त कवकनाशी। |
| E231 | ऑर्थोफिनाइलफेनॉल | $C_{12}H_{10}O$ | सिंथेटिक परिरक्षक | क्वक रोधी एजेंट और परिरक्षक |
| E232 | सोडियम ऑर्थोफिनाइलफेनॉल | $C_{12}H_9NaO$ | | एंटीसेप्टिक और कवकनाशी गुण |
| E239 | हेक्सामेथिलनेटेट्रामाइन | $C_6H_{12}N_4$ | फॉर्मेल्डिहाइड | |
| E242 | डाइमिथाइलडाई–कार्बोनेट(DMDC) | $C_4H_6O_5$ | और अमोनिया की प्रतिक्रिया से बनता है | प्रोवोलोन पनीर |

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| E260 | एसिटिकअम्ल | $C_2H_4O_2$ | सिंथेटिक परिरक्षक | कवक, खमीर और जीवाणुओं की वृद्धि को नियंत्रित करता है। |
| E270 | लैक्टिकअम्ल | $C_3H_6O_3$ | यह सिरके का एक प्राकृतिक घटक है जो आमतौर पर लकड़ी से बनाया जाता है। | इसका उपयोग अचार और चटनी में किया जाता है। |
| E284 | बोरिकअम्ल | $H_3BO_3$ | जो कुछ खनिजों, पौधों, मिट्टी | स्टर्जन अंडे (अर्थात, |
| | | | और पानी में पाया जाता है। | कैवियार) |
| E285 | बोरेक्स, सोडियमटेट्राबोरेट | $Na_2B_4O_7.10H_2O$ | प्राकृतिक और व्यावसायिक रूप से उत्पादित दोनों | स्टर्जन के अंडे (यानी, कैवियार) |
| E306 | α–टोकोफेरॉल | $C_{29}H_{50}O_2$ | विटामिन ई) ये गेहूँ के बीज, कपास के बीज, मक्का और हरी पत्तियों से प्राप्त होते हैं। | एंटीऑक्सीडेंट और पोषक तत्व के रूप में उपयोग किए जाते हैं। वसा और तेल में मिलाए जाते हैं। |
| | β–टोकोफेरॉल | $C_{28}H_{48}O_2$ | | |
| | γ–टोकोफेरॉल | $C_{28}H_{48}O_2$ | | |
| | δ–टोकोफेरॉल | $C_{27}H_{46}O_2$ | | |
| E330 | साइट्रिकअम्ल | $C_6H_8O_7$ | यह खट्टे फलों में पाया जाता है और गुड़ के किण्वन से तैयार किया जा सकता है। | एंटीऑक्सीडेंट, परिरक्षक और आटे को बेहतर बनाने वाले के रूप में उपयोग किया जाता है। इन्हें अचार, डेयरी और बेक्ड उत्पादों में मिलाया जाता है। |
| E334 | टार्टरिक अम्ल | $C_4H_6O_6$ | ये वाइन बनाने के प्राकृतिक उत्पाद हैं जिनका उपयोग अम्ल नियामक के रूप में किया जाता है। | इन्हें बेकिंग पाउडर में मिलाया जाता है। |
| E412 | ग्वारगम | पौधे के स्रोत पर निर्भर करता है | मटर परिवार के एक पेड़ के बीज से प्राप्त गोंद | गाढ़ा करने वाले औरस्थिरक के रूप में उपयोग किया जाता है। इन्हें सॉस, सूप और आइसक्रीम में मिलाया जाता है। |
| E1105 | लाइसोजाइम | विशिष्ट स्रोत के आधारपर | प्राकृतिक उत्पत्ति (अंडे का सफेद भाग) | क्लोस्ट्रीडियम के कारण देर से बनने वाली गैस को रोकने के लिए |

5. **खाद्य योजकों और परिरक्षकों के तकनीकी लाभ और स्वास्थ्य जोखिम में संतुलन**– परिरक्षकों के मुख्य लाभ यह हैं कि वे बैक्टीरिया, फफूंद और खमीर से होने वाले नुकसान को रोककर शेल्फ लाइफ बढ़ाते हैं, रंग, स्वाद और बनावट को बनाए रखकर खाद्य गुणवत्ता बनाए रखते हैं, हानिकारक रोगाणुओं की वृद्धि को रोककर खाद्य सुरक्षा बढ़ाते हैं, खाद्य अपशिष्ट को कम करते हैं, और लागत कम कर सकते हैं और साल भर खाद्य पदार्थों की उपलब्धता सुनिश्चित कर सकते है। कुछ प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं–[3]

1. परिरक्षक बैक्टीरिया, फफूंद और खमीर की वृद्धि को रोकते या धीमा करते हैं जो भोजन को खराब करते हैं।
2. हानिकारक सूक्ष्मजीवों को नियंत्रित करके, परिरक्षक खाद्य जनित बीमारियों को रोकने में मदद कर सकते हैं।
3. वे भोजन के रंग, स्वाद और बनावट में होने वाले परिवर्तनों को धीमा या रोकते हैं, और खराब होने में देरी करते हैं।
4. इससे भोजन लंबे समय तक ताजा रहता है, जो उपभोक्ताओं और खाद्य व्यवसायों के लिए फायदेमंद है।
5. शेल्फ लाइफ बढ़ाकर, खराब होने से पहले अधिक भोजन बेचा और खाया जा सकता है, जिससे अपशिष्ट कम होता है।
6. परिरक्षक मौसम की परवाह किए बिना खाद्य पदार्थों तक पहुँच को संभव बनाते हैं।
7. खाद्य पदार्थों को संरक्षित करने से यह अधिक किफायती हो सकता है।
8. परिरक्षकों वाले प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ व्यस्त व्यक्तियों या अप्रत्याशित मेहमानों के लिए त्वरित भोजन समाधान प्रदान करते हैं।

हालाँकि खाद्य भंडारण के लिए योजक और परिरक्षक आवश्यक हैं, फिर भी ये कुछ स्वास्थ्य समस्याओं को जन्म दे सकते हैं। ये कुछ लोगों में विभिन्न एलर्जी और अतिसक्रियता और ध्यान अभाव विकार जैसी स्थितियाँ पैदा कर सकते हैं जो विशिष्ट पदार्थों के प्रति संवेदनशील

होते हैं[14]। यदि व्यक्ति लगातार इन खाद्य योजकों के संपर्क में रहता है या इनका संचय करता है, तो इनके प्रभाव तत्काल या समय के साथ संभावित रूप से खतरनाक हो सकते हैं। कुछ प्रभावों में ऊर्जा स्तर में परिवर्तन, सिरदर्द और व्यवहार या प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया में परिवर्तन शामिल हो सकते हैं। दीर्घकालिक प्रभाव कैंसर, हृदय रोग, श्वसन और अन्य स्वास्थ्य समस्याओं के जोखिम को बढ़ा सकते हैं[15–19]।

1.टार्ट्राजिन में मानव लिम्फोसाइटों के प्रति जीनोटॉक्सिक क्षमता होती है और यह सीधे डीएनए से जुड़ता है।
2.सैकरीन के सेवन से मोटापा, मधुमेह, गुर्दे और यकृत की दुर्बलता हो सकती है। कुछ शिशु फार्मुलों में पाया जाने वाला सैकरीन चिड़चिड़ापन और मांसपेशियों में शिथिलता पैदा कर सकता है।
3.एनाट्टो कम मात्रा में उपयोग करने पर सुरक्षित है। जो लोग इसके प्रति संवेदनशील हैं, उनमें यह कुछ एलर्जी पैदा कर सकता है। लक्षणों में सूजन, खुजली, पेट दर्द और निम्न रक्तचाप शामिल हैं।
4.यह बताया गया है कि E230 और E231 से E232 त्वचा में एलर्जी, मतली, उल्टी और आँखों व नाक में जलन पैदा कर सकते हैं। पशु प्रयोगों में, इन योजकों का उच्च खुराक में उपयोग करने पर आंतरिक रक्तस्राव और अंगों में उत्परिवर्तनीय परिवर्तन भी देखे गए[15]।
4.1 बोरिक एसिड और बोरेक्स के बार–बार सेवन से दस्त और आंतरिक अंगों को नुकसान हो सकता है।
4.1E239 के दुष्प्रभाव हैं क्योंकि यह अमोनिया और फॉर्मलाडेहाइड से प्राप्त होता है, जो फॉर्मलाडेहाइड के निकलने का संकेत देते हैं। यह एक एलर्जी पैदा करने वाला पदार्थ प्रतीत होता है जो जठरांत्र या मूत्र संबंधी गड़बड़ी पैदा कर सकता है।
4.3E211 अस्थमा को बढ़ाता प्रतीत होता है और इसके न्यूरोटॉक्सिन और कार्सिनोजेन होने का संदेह है, और यह भ्रूण में असामान्यताएं और अतिसक्रियता पैदा कर सकता है[17]।
4.4E214, E215, E217 और E219 योजकों को ऑस्ट्रेलिया में प्रतिबंधित कर दिया गया था[18]।

6. **नियामक ढाँचे, मानक और वर्तमान नीतिगत गतिविधियाँ**– खाद्य योजकों का विनियमन विभिन्न राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा किया जाता है, जो यह निर्धारित करती हैं कि खाद्य पदार्थों और पूरकों में कौन से पदार्थ मिलाए जा सकते हैं, साथ ही उपभोक्ता सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए स्वीकार्य गुणवत्ता और मात्रा भी निर्धारित करती हैं। इन मानदंडों को पूरा करने वाले पदार्थों को सामान्यतः सुरक्षित मान्यता प्राप्त (GRAS) के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। खाद्य योजकों के लिए कोडेक्स एलिमेंटेरियस सामान्य मानक (GSFA) अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सुसंगत दिशानिर्देश प्रदान करता है, जिसमें अनुमत योजकों और उनके उपयोग की शर्तों का एक खोज योग्य सूचकांक शामिल है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और राष्ट्रीय नियामक मानकों के लिए इसका व्यापक रूप से संदर्भ लिया जाता है। यूरोपीय खाद्य सुरक्षा प्राधिकरण (EFSA) जैसे क्षेत्रीय प्राधिकरण और राष्ट्रीय नियामक निकाय नियमित रूप से अनुमत योजकों का पुनर्मूल्यांकन करते हैं, विशेष रूप से उन योजकों का जो आधुनिक जोखिम–मूल्यांकन ढाँचों को अपनाने से पहले अधिकृत थे। इसी प्रकार, अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन (FDA) एक खाद्य योजक स्थिति सूची, रंगीन योजकों की सूची और योग्य विशेषज्ञों द्वारा उपभोग के लिए सुरक्षित माने जाने वाले पदार्थों के लिए एक GRAS ढाँचा बनाए रखता है।

7. **निष्कर्ष**– खाद्य परिरक्षकों और योजकों की एक विस्तृत श्रृंखला–जिनमें स्वादवर्धक, पोषक तत्व, रंग और पायसीकारी शामिल हैं– खाद्य पदार्थों को सूक्ष्मजीवों द्वारा खराब होने से बचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे उनकी शेल्फ लाइफ बढ़ती है और खाद्य आपूर्ति बढ़ती है। कई योजक स्पष्ट लाभ प्रदान करते हैं, जैसे खाद्य सुरक्षा में सुधार और पोषण गुणवत्ता बनाए रखना। हालाँकि, कुछ योजकों के अत्यधिक या अनुचित उपयोग के प्रतिकूल प्रभाव हो सकते हैं। नाइट्राइट, सोडियम और पोटेशियम नाइट्रेट, बेंजोएट्स, सल्फाइट्स, डाइफेनिल, ऑर्थोफेनिलफेनॉल और हेक्सामेथिलनेटेट्रामाइन जैसे परिरक्षक, यदि सावधानीपूर्वक नियंत्रित न किए जाएँ, तो गंभीर स्वास्थ्य समस्याएँ पैदा कर सकते हैं। खाद्य योजकों से होने वाली प्रतिक्रियाओं में त्वचा, पित्ती/वाहिकाशोथ, एटोपिक डर्मेटाइटिस, पसीना आना, खुजली, चेहरे पर लालिमा, जठरांत्र संबंधी, पेट दर्द, मतली/उल्टी, दस्त, श्वसन, अस्थमा के लक्षण, खांसी, नासिकाशोथ, मस्कुलोस्केलेटल, मांसपेशियों में दर्द, जोड़ों में दर्द, थकान, कमजोरी, तंत्रिका संबंधी, व्यवहार और मनोदशा में बदलाव, ध्यान की कमी और अतिसक्रियता विकार, माइग्रेन सिरदर्द, सुन्नता, हृदय संबंधी, धड़कन और अतालता शामिल हैं। इसलिए इन उत्पादों के उपयोग को विनियमित करने के लिए नियामक अधिकारियों को कुछ गंभीर कदम उठाने चाहिए ताकि खाद्य संरक्षण मानव कल्याण के लिए हो न कि बीमारी का कारण बने।

**References**


1. H. McGee, On food and cooking: The science and lore of the kitchen, Scribner, Rev Upd edition, (2004).
2. O.R. Fennema, Food Chemistry, Second Edition, Revised and Expanded. New York: Marcel Dekker, Inc.,(1985), pp.827.
3. P.B. Jean, Food Preservation. Nicolas Appert inventeur at humaniste 2-908670-17-8 and http://www.appert_aina.com, (1994).

4. A. H. Abdulmumeen, A. N. Risikat, A. R. Sururah, Food: Its preservatives, additives and applications, *International Journal of Chemical and Biochemical Sciences, 1(2012),36-47*
5. F. C. Lidon. M. M. A. Silvestre. Industrias Alimentares - Aditivos e tecnologias. Escolar Editora, Lisbon, 2007.
6. F. C. Lidon, M. M. A. Silvestre, Conservação de Alimentos – Principios e Metodologias, Escolar Editora, Lisbon,2008.
7. F. C. Lidon, M. M. A. Silvestre,. Principios de Alimentação e Nutrição Humana. Escolar. Editora, Lisbon,2010.
8. V. Suganthi, E. Selvarajan, C. Subathradevi, V. Mohanasrinivasan. Lantibiotic nisin: Natural preservative from Lactococcus Lactis, Int. Res. J. Pharm. 3(1), 2012.13-19.
9. U.S. Food and Drug Administration, Everything Added to Food in the United States. Boca Raton, FL: C.K. Smoley (c/o CRC press. Inc.). (1993).
10. M. Houghton, The American Heritage Food Science Dictionary; c2002. http://www.amazon.com/American Heritage%C2%AE-Student-Science Dictionary/dp/061818919X
11. K.Thakur, D. Singh, R. Rajput, Effects of food additives and preservatives and shelf life of the processed foods, Journal of Current Research in Food Science 2022, 3(2), 11-22
12. M. M. Silva, F. C. Lidon, Emirates Journal of Food and Agriculture. 2016. 28(6). 366-373 doi: 10.9755/ejfa.2016-04-351
13. M. Houghton. The American Heritage Food Science Dictionary. ScienceDictionary/dp/061818919X. (2002).
14. S.T. Louis, M.E. Botulism. Complete Guide to home canning. Epidemiology and Control 2nd Ed. Washington, D.C.: U.S. Government Printing Office, (1991).
15. C. Voss, Utilidades e riscos dos aditivos alimentares, ed. EDIDECO – Editores Para a defesa do consumidor Lda. Lisboa, 2002.
16. Shaziakhanummirza, to study the harmful effects of food preservatives on human health. 2017, 2, 610-616.
17. J. E. Inetanbor. Effects of food additives and preservatives on man. Asian Journal of science and technology, 2015; 6(2),1118-1135.
18. C. G. Awuchi, H. T., Victory S. Igwe, I. O. Amagwula, Journal of Animal Health, Vol. 2, 1(1), 1 - 16, 2020.
19. M.O. Elhkim, F. Heraud, N. Bemrah, T. Tanaka and A. Ogata, New consideration regarding the risk assessment, intolerance reactions and maximum theoretical daily intake in France, Regulatory Toxicology and Pharmacology.(2007),43(3).308-16.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 72-81
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.12
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Cervical Spondylitis: Causes, Symptoms, Treatment

D.K. Awasthi[1], N.K. Awasthi[2] and G. K. Mishra[2]
[1]Department of Chemistry, Sri Sharda Group of Institutions, Lucknow-226 501 U.P., India
[2]Department of Chemistry, B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226 001, U.P., India
dkawasthi5@gmail.com

**Received: 20-10-2025, Accepted: 10-11-2025**

**Abstract**- Cervical spondylitis is a degenerative disorder that occurs primarily due to the degeneration of the cervical cells and vertebral discs of the neck. This disease is the main cause of neck pain, nerve pressure, dizziness, numbness in hands, and reduced mobility in adults and elderly people, all around the world. Modern busy lifestyle, wrong sitting posture and excessive use of computer and mobile are increasing the prevalence of this disease. In the present paper, this disease is reviewed intensively.

**Key words**- cervical cells, intervertebral discs, nerve pressure, busy lifestyle

# सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिसः कारण, लक्षण, उपचार

डी0के0 अवस्थी[1], एन0के0 अवस्थी[2] एवं जी0के0 मिश्र[2]
[1]रसायन विज्ञान विभाग, श्री शारदा ग्रुप ऑफ इंस्टीट्यू न्स, लखनऊ–226 501, उ0प्र0, भारत
[2]रसायन विज्ञान विभाग, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226 001, उ0प्र0, भारत
dkawasthi5@gmail.com

**सार**– सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस एक अपक्षयी विकार है, जो मुख्यतः गर्दन की सर्वाइकल कशेरुकाओं एवं वर्टिब्रल डिस्क में होने वाले क्षय के कारण उत्पन्न होता है। यह रोग विश्व भर में वयस्कों एवं वृद्धजनों में गर्दन दर्द, नस दबाव, चक्कर, हाथों में सुन्नपन एवं गतिशीलता में कमी का मुख्य कारण हैं। आधुनिक व्यस्त जीवन शैली, गलत बैठने की मुद्रा, कंप्यूटर एवं मोबाइल का अत्यधिक प्रयोग इस रोग की व्यापकता को बढ़ा रहा है। प्रस्तुत पत्र में इस रोग की गहनता से समीक्षा की गयी है।

**बीज शब्द**– सर्वाइकल कशेरुकाओं, वर्टिब्रल डिस्क, नस दबाव, व्यस्त जीवनशैली

1. **परिचय**– सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस (Cervical Spondylitis) एक दीर्घकालिक एवं प्रगतिशील रोग है जो मानव रीढ़ की सर्वाइकल क्षेत्र (C1-C7 कशेरुका) में स्थित अस्थि एवं डिस्क संरचनाओं में होने वाले क्षरण से संबंधित है। यह मुख्यतः उन व्यक्तियों में पाया जाता है जिनकी जीवन शैली में गर्दन का अत्यधिक उपयोग, अचानक झुकाव या लंबे समय तक एक ही मुद्रा में कार्य सम्मिलित होता है। सर्वाइकल स्पान्डिलोसिस, आस्टियोआर्थराइटिस का एक रूप है।

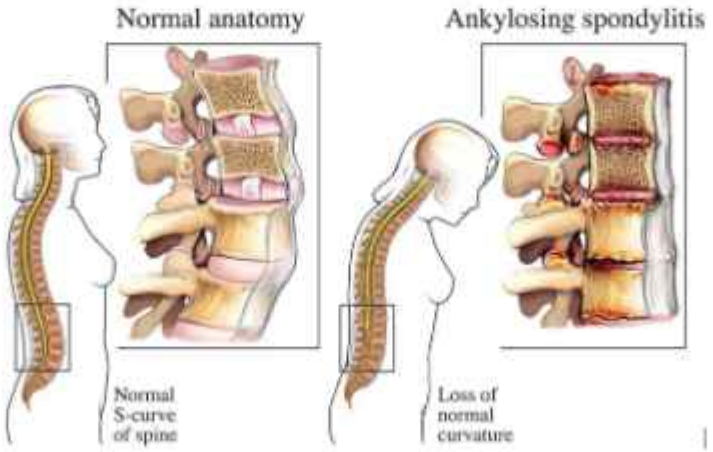


चित्र–1: गर्दन की कशेरुकाओं और डिस्क का क्षरण

सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस एक सामान्य आयु–संबंधी स्थिति है जिसमें गर्दन की कशेरुकाओं और डिस्क का क्षरण होता है, जिससे दर्द और अकड़न होती है लक्षणों में गर्दन में दर्द, सिरदर्द और अकड़न शामिल हो सकते हैं, लेकिन गंभीर मामलों में सुन्नता, बाजुओं में कमजोरी और चलने में कठिनाई हो सकती है। इसका इलाज आमतौर पर दवा, फिजियोथेरेपी और कभी–कभी गर्दन पर नरम कालर जैसे गैर–सर्जिकल तरीकों से किया जाता है, लेकिन अगर लक्षण गंभीर हों तो सर्जरी एक विकल्प है। सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस, सर्वाइकल स्पाइन की सबसे प्रचलित अपक्षयी स्थिति है, जो मुख्य रूप से 60 वर्ष और उससे अधिक आयु के व्यक्तियों को प्रभावित करती है। इस स्थिति की विशेषता प्रगतिशील अपक्षयी परिवर्तन हैं, जिनमें इंटरवर्टेब्रल डिस्क का सूखना, डिस्क की ऊंचाई में कमी, स्पाइनल अलाइनमेंट में परिवर्तन, और फेसेट जोड़ों का क्षय शामिल है। इन परिवर्तनों के साथ अक्सर आस्टियोफाइट का निर्माण होता है, जिससे अक्षीय गर्दन में दर्द, सर्वाइकल रेडिकुलोपैथी, या सर्वाइकल मायलोपैथी हो सकती है, जिससे दैनिक कार्य और जीवन की गुणवत्ता में उल्लेखनीय कमी आती है। एक प्राकृतिक उम्र बढ़ने की प्रक्रिया के रूप में, स्पोंडिलोसिस पाँचवें दशक के बाद अधिकांश व्यक्तियों को प्रभावित करता है, जिसमें सर्वाइकल स्पाइन की व्यापक गति को सहारा देने और तंत्रिका व संवहनी संरचनाओं की रक्षा करने की अनूठी भूमिका इसके क्षय के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाती है। लक्षण गर्दन में दर्द और अकड़न के रूप में प्रकट होते हैं, अक्सर तंत्रिका संरचनाओं के संकुचित होने पर रेडिकुलर लक्षणों के साथ। इसकी व्यापकता और इससे जुड़ी विकलांगता को देखते हुए, सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस एक बड़ा आर्थिक बोझ डालता है, जिससे रोगियों के जीवन पर इस स्थिति के प्रभाव को कम करने के लिए समय पर पहचान और साक्ष्य–आधारित प्रबंधन आवश्यक हो जाता है। स्पान्डिलाइटिस एक प्राकृतिक उम्र बढ़ने की प्रक्रिया है और अधिकांश व्यक्तियों में जीवन के पाचवें दशक के बाद दिखाई देती है। सर्वाइकल मोशन सेगमेंट विशेष रूप से अपक्षय के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं क्योंकि उन्हें रीढ़ की हड्डी, रीढ़ की नसों और कशेरुका धमनियों की रक्षा करते हुए एक साथ व्यापक लचीलापन, विस्तार, घुमाव, पार्श्व झुकाव और अक्षीय भार वहन करना होता है। सर्वाइकल स्पोंडिलोसिस के लक्षण गर्दन में दर्द और अकड़न के रूप में प्रकट होते हैं और तंत्रिका संरचनाओं के संपीड़न के कारण रेडिकुलर लक्षण भी हो सकते हैं। गर्दन का दर्द एक आम स्थिति है और कमर दर्द के बाद दूसरी सबसे आम शिकायत है। गंभीर विकलांगता और आर्थिक लागत से जुड़ी इस बीमारी के गंभीर बोझ को देखते हुए, स्वास्थ्य सेवा पेशेवरों को लक्षणात्मक सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस की पहचान करने और प्रमाण–आधारित, लागत–प्रभावी हस्तक्षेप प्रदान करने की आवश्यकता है।[1]

2. **एटियलजि**– सरवाइकल स्पान्डिलाइटिस एक बहुर्इंद्रयात्मक अपक्षयी प्रपात से उत्पन्न होता है जिसका प्रमुख कारण इंटरवर्टेब्रल डिस्क और सर्वाइकल स्पाइनल तत्वों का आयु–संबंधित अपक्षय है। प्रोटियोग्लाइकेन्स की आयु–संबंधित हानि न्यूक्लियस पल्पोसस को निर्जलित करती है, डिस्क की ऊंचाई कम करती है, और भार संचरण को फेसेट और अनकवर्टिब्रल जोड़ों की ओर स्थानांतरित करती है, जिससे आस्टियोफाइट निर्माण और लिगामेंट्स इनफोल्डिंग शुरू होती है। रीढ़ की संरचनाओं में अपक्षयी परिवर्तन, जिनमें अनकवर्टिब्रल जोड़, फेसेट जोड़, पश्च अनुदैर्ध्य लिगामेंट और लिगामेंटम फ्लेवम शामिल हैं, स्पाइनल कैनाल और इंटरवर्टेब्रल फोरामिना को संकुचित करते हैं। परिणामस्वरूप, रीढ़ की हड्डी स्पाइनल वाहिकाएं और तंत्रिका मूल संकुचित हो सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप सर्वाइकल स्पोंडिलोसिस के तीन नैदानिक लक्षण दिखाई देते हैं: अक्षीय गर्दन दर्द, सर्वाइकल मायलोपैथी और सर्वाइकल रेडिकुलोपैथी। रोग प्रक्रिया को तीव्र करने और सर्वाइकल स्पोंडिलोसिस की शुरुआत में योगदान देने वाले कारकों में गंभीर रीढ़ की हड्डी में चोट लगना, जन्मजात संकरी कशेरुक नलिका, सर्वाइकल मांसपेशियों को प्रभावित करने वाला डिस्टोनिक सेरेब्रल पाल्सी, और रग्बी, फुटबाल और घुड़सवारी जैसी विशिष्ट एथलेटिक गतिविधियाँ शामिल हैं।[2] आनुवंशिक संवेदनशीलता क्षय की गति और पैटर्न पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। जीवनशैली के कारक मुख्य रूप से रोग को बढ़ाने वाले कारक होते हैं। सिगरेट पीने से वर्टिब्रल माइक्रोसर्कुलेशन प्रभावित होता है और आक्सीडेटिव तनाव बढ़ता है, जिससे डिस्क का सूखना तेज हो जाता है। इसके अलावा, अतिरिक्त शारीरिक भार संपीड़न बलों को बढ़ाता है, जबकि शारीरिक निष्क्रियता स्थैतिक अधिभार को बढ़ावा देती है। दोनों ही स्थितियाँ डिस्क–वर्टेब्रा काम्प्लेक्स की तेज संरचनात्मक विफलता से संबंधित हैं। मेंडेलियन यादृच्छिकीकरण धूम्रपान और मोटापे के बढ़ते प्रचलन के माध्यम से कम शैक्षिक उपलब्धि को उच्च ग्रीवा स्पोंडिलोसिस जोखिम से जोड़ता है, जो सामाजिक निर्धारकों के योगदान को रेखांकित करता है।[3] लंबे समय तक गर्दन के लचीलेपन, बार–बार ऊपरी हाथों की गतिविधि और ऊपरी अंगों पर अत्यधिक भार के व्यावसायिक जोखिम, निर्माण श्रमिकों और अन्य शारीरिक श्रम करने वालों में शल्य चिकित्सा उपचार की आवश्यकता वाले ग्रीवा स्पोंडिलोसिस की उच्च दर से जुड़े हैं।

3. **महामारी विज्ञान**– रेडियोग्राफिक अध्ययनों से अक्सर ग्रीवा रीढ़ में स्पोंडिलोटिक परिवर्तन दिखाई देते हैं, फिर भी अधिकांश प्रभावित व्यक्ति लक्षणहीन ही रहते हैं। महामारी विज्ञान के आँकड़े बताते हैं कि ये परिवर्तन 40 वर्ष से कम आयु के लगभग 25% व्यक्तियों में, 40 वर्ष से अधिक आयु के 50% व्यक्तियों में और 60 वर्ष से अधिक आयु के 85% व्यक्तियों में मौजूद होते हैं। सबसे अधिक प्रभावित होने वाले स्तर C6-C7 हैं, उसके बाद C5-C6 हैं। लक्षणात्मक सर्वाइकल स्पोंडिलोसिस आमतौर पर गर्दन के दर्द के रूप में प्रकट होता है। सामान्य आबादी में, गर्दन के दर्द की व्यापकता 0.4% से 41.5% तक होती है, एक वर्ष में होने वाली घटना 4.8% से 79.5% तक होती है, और जीवन भर की व्यापकता 86.8% तक हो सकती है। ग्लोबल बर्डन ऑफ डिजीज 2015 के अनुसार, पीठ के निचले हिस्से और गर्दन का दर्द विकलांगता के साथ जीने वाले वर्षों का प्रमुख कारण और विकलांगता–समायोजित जीवन वर्षों का चौथा प्रमुख कारण बना हुआ है।[4] ग्रीवा स्पोंडिलोसिस के रोग जनन में एक अपक्षयी प्रपात शामिल होता है जो ग्रीवा रीढ़ में जैवयांत्रिक परिवर्तन उत्पन्न करता है, जो तंत्रिका और संवहनी संरचनाओं के द्वितीयक संपीड़न के रूप में प्रकट होता है। केराटिन–कॉन्ड्रोइटिन अनुपात में वृद्धि प्रोटियोग्लाइकन मैट्रिक्स में परिवर्तन को प्रेरित करती है, जिसके परिणामस्वरूप इंटरवर्टेब्रल डिस्क में पानी, प्रोटीन और म्यूकोपॉलीसेकेराइड्स की हानि होती है। डिस्क के सूखने से न्यूक्लियस पल्पोसस की लोच कम हो जाती है क्योंकि यह निर्जलित होकर रेशेदार हो जाता है। जैसे–जैसे न्यूक्लियस सिकुड़ता है, अक्षीय भार एनलस फाइब्रोसस और अनकवर वर्टिब्रल तथा फेसेट जोड़ों पर स्थानांतरित हो जाता है, जिससे ऑस्टियोफाइट

निर्माण और कैप्सूलर हाइपरट्राफी होती है। गति खंड के निरंतर पतन से पश्च अनुदैर्ध्य स्नायुबंधन और लिगामेंटम फ्लेवम दोनों में ऐंठन और मोटाई होती है, जो स्पाइनल कैनाल और तंत्रिका छिद्रों पर अतिक्रमण करती है, जिसके परिणामस्वरूप स्पाइनल स्टेनोसिस होता है।

आगे निर्जलीकरण के साथ, एनुलर फाइबर संपीड़न तनाव के तहत यांत्रिक अखंडता खो देते हैं, जिससे ग्रीवा रीढ़ में भार वितरण बदल जाता है। डिस्क स्पेस की ऊंचाई का नुकसान सामान्य लार्डोटिक वक्रता को किफोसिस में बदल देता है। यह गलत संरेखण एनुलर और शार्पी फाइबर को कशेरुका अंतः प्लेटों से अलग करने का कारण बनता है, जिससे प्रतिक्रियाशील हड्डी गठन प्रतिक्रिया शुरू हो जाती है। ऑस्टियोफाइट्स बाद में ग्रीवा कशेरुकाओं के उदर या पृष्ठीय मार्जिन के साथ उत्पन्न होते हैं और रीढ़ की हड्डी की नहर और इंटरवर्टेब्रल फोरामिना में प्रोजेक्ट कर सकते हैं, जिससे स्टेनोसिस बिगड़ सकता है। इसके अलावा, बाधित भार संतुलन अनकवरटेब्रल और फेसेट जोड़ों पर अक्षीय तनाव बढ़ाता है, जिससे संयुक्त अतिवृद्धि होती है और तंत्रिका फोरामिना के भीतर बोनी स्पर का विकास तेज होता है। गतिशील कारक चोट को बढ़ाते हैं। विस्तार नहर को संकरा करता है, जबकि फ्लेक्सन पहले से ही समझौता किए गए कॉर्ड को फैलाता है, विशेष रूप से फोकल या सेगमेंटल किफोसिस में। दोहराए जाने वाले कतरनी तनाव विकृत स्तरों पर सूक्ष्म गति को तेज करते हैं, अस्थिरता और रीढ़ की हड्डी की नहर के अतिक्रमण को बढ़ाते हैं। रेडिकुलोपैथी तब उत्पन्न होती है जब अनकवर वर्टिब्रल या फेसेट ऑस्टियोफाइट्स, डिस्क फैलाव, या फोरामिनल लिगामेंट की अतिवृद्धि तंत्रिका जड़ को विकृत करती है। रूट ट्रैक्शन या संपीड़न एक्सोप्लाज्मिक प्रवाह को बाधित करता है, शिरापरक भीड़ को भड़काता है, और इंट्रारेडिकुलर परफ्यूजन को कम करता है। कुंडलाकार आँसू या लीक हुए न्यूक्लियस पल्पोसस से साइटोकिन्स को संवेदनशील बनाना नोसिसेप्टर उत्तेजना और पुराने दर्द को और बढ़ा देता है। मायलोपैथी दोहरावदार विस्तार गतिशील संपीड़न का कारण बनता है, जिससे आगे चलकर माइक्रोइस्केमिया, डिमाइलेनेशन और एक्सोनल हानि होती है।[4]

सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस यांत्रिक विकृति, संवहनी अपर्याप्तता और तंत्रिका–सूजन संबंधी परिवर्तनों की एक श्रृंखला उत्पन्न करता है। इन तंत्रों की सापेक्ष प्रबलता यह निर्धारित करती है कि रोगियों में केवल अक्षीय दर्द, रेडिकुलोपैथी या प्रगतिशील सरवाइकल मायलोपैथी प्रकट होती है। सरवाइकल डिजनरेटिव डिस्क रोग, सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस और सरवाइकल डिस्क हर्नियेशन शब्द आपस में जुड़े हुए हैं: डिजनरेटिव डिस्क रोग डिस्क–केन्द्रित विकृति है, स्पॉडिलोसिस सर्वाइकल स्पाइन (डिस्क, वर्टिब्रल बॉडी, फेसेट और लिगामेंट सहित) के व्यापक डिजनरेटिव रीमॉडलिंग को शामिल करता है, और डिस्क हर्नियेशन एक फोकल हर्नियेशन घटना का प्रतिनिधित्व करता है जो डिजनरेटिव प्रक्रिया के दौरान उत्पन्न हो सकती है।[14,15]

4. **हिस्टोपैथोलोजी**– डिस्क हर्नियेशन स्पॉंडिलोसिस के विकास का एक प्रारंभिक संकेत हो सकता है। हालाँकि स्पॉंडिलोटिक और हर्नियेटेड डिस्क समान अपक्षयी परिवर्तनों (जैसे, मैक्रोफेज घुसपैठ, वृद्धि कारकों और साइटोकाइन्स का अपरेगुलेशन) से गुजरती हैं, फिर भी दोनों रोग प्रक्रियाओं के बीच इम्यूनोहिस्टोलॉजिकल अंतर मौजूद हैं। कोकुबो एट अल द्वारा 2008 में किए गए एक अध्ययन में, डिस्क हर्नियेशन वाले 198 रोगियों और स्पॉंडिलोसिस वाले 166 रोगियों से निकाली गई कुल 500 सर्वाइकल इंटरवर्टिब्रल डिस्क की एन ब्लॉक हिस्टोलॉजिकल विश्लेषण और इम्यूनोहिस्टोकेमिकल स्टेनिंग के माध्यम से जाँच की गई।

5. **इतिहास और भौतिक**– इतिहास संग्रह में दर्द की समय–सीमा, दर्द के विकिरण, उत्तेजक कारकों और उत्तेजक घटनाओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए। पारंपरिक रूप से, लक्षणात्मक ग्रीवा स्पान्डिलाइटिस निम्नलिखित 3 प्राथमिक नैदानिक सिंड्रोम में से एक या अधिक के रूप में प्रकट होता है।

5.1. अक्षीय गर्दन दर्द

चित्र–2: अक्षीय गर्दन दर्द

- मरीज आमतौर पर ग्रीवा रीढ़ में अकड़न और दर्द की शिकायत करते हैं, जो सीधे खड़े होने की स्थिति में सबसे अधिक गंभीर होता है और बिस्तर पर आराम करने से राहत मिलती है, क्योंकि गर्दन से अक्षीय गुरुत्वाकर्षण भार हटा दिया जाता है।
- गर्दन की गति, विशेष रूप से अति–विस्तार और बगल की ओर झुकने से आमतौर पर दर्द बढ़ जाता है।

- ऊपरी और निचले ग्रीवा रीढ़ की बीमारी में, मरीज क्रमशः कान के पीछे या ओसीसीपट में दर्द फैलने की शिकायत कर सकते हैं, जबकि बेहतर ट्रेपीजियस या पेरिस्केपुलर पेशी में दर्द फैलने की शिकायत हो सकती है।

- कभी–कभी, मरीजों में सर्वाइकल एनजाइना के असामान्य लक्षण दिखाई दे सकते हैं, जैसे जबड़े में दर्द या सीने में दर्द।
- ऊपरी ग्रीवा रेडिकुलोपैथी अक्षीय गर्दन दर्द के रूप में उपस्थित हो सकती है।

### 5.2 सरवाइकल रेडिकुलोपैथी

- रेडिक्यूलर लक्षण आमतौर पर मायोटोमल वितरण का अनुसरण करते हैं, जो शामिल तंत्रिका जड़(ओं) पर निर्भर करता है, और एकतरफा या द्विपक्षीय गर्दन दर्द, बांह दर्द, स्कैपुलर दर्द, पेरेस्टेसिया और बांह या हाथ की कमजोरी के रूप में प्रकट हो सकते हैं।
- सिर को प्रभावित हिस्से की ओर झुकाने या अत्यधिक खिंचाव और प्रभावित हिस्से की ओर झुकने से दर्द बढ़ जाता है।

### 5.3 सरवाइकल मायलोपैथी

- यह स्थिति आमतौर पर कपटी रूप से शुरू होती है, लेकिन अक्सर गर्दन में दर्द के बिना होती है।

- यह शुरुआत में हाथों की कमजोरी और अनाड़ीपन के रूप में प्रकट हो सकता है, जिसके परिणामस्वरूप उन कार्यों को पूरा करने में असमर्थता हो सकती है जिनके लिए ठीक मोटर समन्वय की आवश्यकता होती है (जैसे, शर्ट के बटन लगाना, जूते के फीते बांधना, छोटी वस्तुओं को उठाना)।
- मरीज अक्सर चाल में अस्थिरता और अस्पष्टीकृत गिरावट की शिकायत करते हैं।
- मूत्र संबंधी लक्षण दुर्लभ हैं जो आमतौर पर रोग के बढ़ने के बाद दिखाई देते हैं।

पहली नजर में, रोगी सिर और गर्दन के क्षेत्र में स्थिर और अकड़न महसूस कर सकता है, खासकर ग्रीवा रीढ़ की हड्डी की गति के साथ अक्षीय गर्दन में दर्द बढ़ सकता है। सुपीरियर ट्रैपीजियस, ग्रीवा पैरास्पाइनल और/या पेरिस्केपुलर मांसपेशियों में अक्सर कोमल "ट्रिगर" बिंदु मौजूद होते हैं। मान लीजिए कि सिर के विस्तार और प्रभावित हिस्से की ओर सिर के इप्सिलेटरल घुमाव के साथ ऊपरी अंग में दर्द फैल रहा है। ऐसी स्थिति में, इसे ग्रीवा रेडिकुलोपैथी के लिए एक सकारात्मक स्पर्लिंग परीक्षण माना जाता है। शबात एट अल द्वारा 2011 में किए गए एक अध्ययन के परिणामों से पता चला है कि 257 रोगियों में तंत्रिका जड़ विकृति के निदान के लिए स्पर्लिंग परीक्षण 95% संवेदनशील और 94% विशिष्ट था, जैसा कि ग्रीवा रीढ़ की गणना टोमोग्राफी औरध्या चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग (एमआरआई) द्वारा पुष्टि की गई है।[7] कुछ मामलों में, मैनुअल गर्दन का ध्यान भटकाने से रेडिकुलर दर्द कम हो सकता है। रीढ़ की हड्डी से नीचे और ग्रीवा के लचीलेपन के साथ चरम सीमाओं तक जाने वाली बिजली के झटके जैसी संवेदनाएं एक सकारात्मक लेर्मिट संकेत हैं, जो अपक्षयी ग्रीवा मायलोपैथी (डीसीएम) के लिए चिंताजनक है, जिसे ग्रीवा स्पोंडिलोटिक मायलोपैथी के रूप में भी जाना जाता है। डीसीएम के लिए एक अधिक विशिष्ट संकेत हॉफमैन संकेत है, जो रोगी की मध्यमा उंगली के डिस्टल फालानक्स को फड़फड़ाना, सभी शारीरिक परीक्षणों में मांसपेशियों की मजबूती, संवेदना और गहरी कण्डरा सजगता के लिए द्विपक्षीय अंगों का सूक्ष्म मूल्यांकन शामिल होना चाहिए ताकि क्रमशः मायोटोमल वितरण में कमजोरी, डर्मटोमल पैटर्न में संवेदी कमियाँ और प्रतिवर्त परिवर्तनों का पता लगाया जा सके, ये सभी क्षतिग्रस्त तंत्रिका मूल(मूलों) और/या मायलोपैथी की पहचान करने में मदद कर सकते हैं। चिकित्सक पैर की उंगलियों से एड़ी तक चलने और रोमबर्ग परीक्षणों का उपयोग करके रोगी की चाल और संतुलन का मूल्यांकन कर सकते हैं। रोमबर्ग परीक्षणों में, रोगी आँखें बंद करके और हाथ आगे की ओर करके खड़ा होता है। संतुलन में वृद्धि को रोमबर्ग परीक्षण के सकारात्मक परिणाम के रूप में समझा जाता है और यह रीढ़ की हड्डी के पृष्ठीय स्तंभों से जुड़ी शिथिलता का संकेत देता है।

ऊपरी मोटर न्यूरॉन के लक्षणों (जैसे–स्पास्टिसिटी, हाइपररिफ्लेक्सिया, निरंतर क्लोनस, एक्सटेंसर बैबिंस्की प्रतिक्रिया) की उपस्थिति से परीक्षक को रीढ़ की हड्डी की समस्या का नैदानिक संदेह होना चाहिए। मायलोपैथी के लिए एक अन्य स्क्रीनिंग टेस्ट ग्रिप–एंड–रिलीज टेस्ट है। आमतौर पर, एक मरीज 10 सेकंड में 20 बार मुट्ठी बनाकर छोड़ सकता है, और बढ़ती उम्र के साथ कट–ऑफ मान कम होते जाते हैं, और पुरुषों की तुलना में महिलाओं में कट–ऑफ मान कम होते हैं।[8] डीसीएम के मरीज विविध प्रकार की शिकायतों के साथ आते हैं। हाथों का सुन्न होना, सुन्न होना, भारीपन, कमजोरी और चाल में असंतुलन आम हैं। कम प्रचलित लक्षण कुल बोझ का लगभग 40% हिस्सा होते हैं। पैरों में भारीपन का एहसास ही एकमात्र प्रारंभिक लक्षण है जो शीघ्र निदान की भविष्यवाणी करता है।[9] ट्रोमनर रिफ्लेक्स

और सामान्य हाइपररिफ्लेक्सिया सबसे संवेदनशील होते हैं। बैबिंस्की, ट्रोमनर, क्लोनस और उल्टे सुपिनेटर लक्षण अत्यधिक विशिष्ट होते हैं। निदान की पुष्टि के लिए चिकित्सकों को पूरे लक्षण इतिहास को इमेजिंग के साथ जोड़ना चाहिए।[9,10]

6. **चुम्बकीय अनुनाद इमेजिंग**– चुंबकीय अनुनाद इमेजिंग (एमआरआई) तंत्रिका संरचनाओं और कोमल ऊतकों के मूल्यांकन के लिए स्वर्ण मानक है। यह इमेजिंग रोगी को विकिरण के संपर्क में लाए बिना संपूर्ण ग्रीवा रीढ़ की उचित दृश्यता सक्षम बनाती है। सैगिटल और अक्षीय कट तंत्रिका और कॉर्ड संपीड़न की सीमा को मापने और आपत्तिजनक रोग संबंधी परिवर्तनों (जैसे, हर्नियेटेड डिस्क, बोनी स्पर्स, लिगामेंटम फ्लेवम हाइपरट्रॉफी, या फेसेट जाइंट आर्थ्रोपैथी) को प्रकट करने में मदद कर सकते हैं। टी2–भारित छवियों पर एक अतितीव्र रीढ़ की हड्डी का संकेत एडिमा, सूजन, इस्केमिया, मायलोमैलेशिया, या ग्लियोसिस का संकेत दे सकता है। स्पॉन्डिलोटिक परिवर्तनों के लिए एमआरआई अध्ययनों की उच्च संवेदनशीलता के बावजूद, जब तक संकेत न दिया जाए, उन्हें नैदानिक कार्य का नियमित हिस्सा नहीं होना चाहिए, स्पर्शोन्मुख व्यक्तियों में एमआरआई पर अपक्षयी निष्कर्षों की उच्च व्यापकता को देखते हुए।[10]

7. **मोडिक योजना**– मोडिक परिवर्तन कशेरुकाओं के अंतिम प्लेटों और आसन्न मज्जा में एमआरआई संकेत परिवर्तनों का वर्णन करते हैं, जिन्हें अपक्षयी प्रपात के विभिन्न चरणों के रूप में व्याख्यायित किया जाता है। T1 और T2 भारित छवियों पर, मोडिक प्रकार 1% T1 पर अल्पतीव्र और T2 पर अतितीव्र दिखाई देता है, जो सूजन संबंधी शोथ को दर्शाता है, प्रकार 2% दोनों क्रमों पर अतितीव्र हो जाता है, जो वसायुक्त मज्जा पतिस्थापन का संकेत देता है, कई लेखक सामान्य अंतिम प्लेट के लिए ग्रेड 0 जोड़ते हैं और प्रत्येक प्रकार के स्थानिक विस्तार को और अधिक स्तरीकृत करते हैं, लेकिन त्रि–स्तरीय मोडिक योजना नैदानिक मानक बनी हुई है। ग्रीवा रीढ़ में मोडिक परिवर्तनों की व्यापकता लगभग 5% से 40% तक होती है, जिसमें टाइप। सबसे प्रमुख पैटर्न है और C5-C6 स्तर सबसे अधिक प्रभावित होते हैं। अध्ययन लगातार दर्शाते हैं कि निचले उप–अक्षीय खंड सबसे अधिक यांत्रिक भार वहन करते हैं और सबसे अधिक बार मोडिक रूपांतरण प्रदर्शित करते हैं। चिकित्सकीय रूप से, मोडिक परिवर्तन संरचनात्मक और लक्षणात्मक दोनों प्रकार के अधःपतन के संकेतों से सहसंबद्ध होते हैं। जिन खंडों में मोडिक संकेत परिवर्तन दिखाई देते हैं, उनमें ऐसे परिवर्तनों से रहित खंडों की तुलना में उच्च–श्रेणी की डिस्क अधःपतन या स्पष्ट हर्नियेशन होने की संभावना अधिक होती है। इसके विपरीत, मोडिक संलिप्तता वाले रोगियों में क्रोनिक अक्षीय गर्दन दर्द की दर अधिक और विकलांगता स्कोर कम होते हैं। सक्रिय प्रदाहक मज्जा का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रकार 1 घावों का त्वरित डिस्क पतन के साथ सबसे गहरा संबंध प्रतीत होता है, हालाँकि क्रास–सेक्शनल अध्ययनों में प्रकार 2 घाव प्रमुख हैं। इन मज्जा परिवर्तनों की पहचान, एंडप्लेट जीव विज्ञान को रोगी के लक्षणों से जोड़कर और तेजी से बिगड़ने के जोखिम के स्तर को चिन्हित करके ग्रीवा स्पॉन्डिलोसिस के रेडियोग्राफिक मूल्यांकन को समृद्ध बनाती है।

डिस्क–एंडप्लेट–अस्थि मज्जा कॉम्प्लेक्स (DEBC) वर्गीकरण, मानक T1– और T2–भारित छवियों के अतिरिक्त, शार्ट टाऊ इनवर्जन रिकवरी (STIR) अनुक्रमों का विश्लेषण करके, डिस्क, एंडप्लेट और आसन्न मज्जा को एक अन्योन्याश्रित इकाई के रूप में वर्गीकृत करके, पारंपरिक मोडिक योजना पर आधारित है। चूँकि STIR वसा संकेत को दबा देता है, इसलिए यह प्रणाली सूजन संबंधी शोफ का पता लगाती है जिसे एक पारंपरिक मोडिक रीडिंग गलती से वसा समझ सकती है, और यह संयुक्त रूप को प्रकार 1 (तीव्र शोफ), प्रकार B (मिश्रित जीर्ण सूजन), प्रकार C (अव्यक्त वसा परिवर्तन), या प्रकार D (स्केलेरोसिस) के रूप में लेबल करती है। इन 4 फेनोटाइप को निर्दिष्ट करने के लिए इंट्राआब्जर्वर और इंटरआब्जर्वर समझौता उत्कृष्ट है ($k \approx 0.81$), विधि की पुनरुत्पादकता पर जोर देता है। 301 गर्दन–दर्द रोगियों और 200 आघात नियंत्रणों के 2025 के अवलोकन समूह में, लगभग 5 में से 1 लक्षण वाले व्यक्ति, और 8 में से 1 नियंत्रण में डीईबीसी परिवर्तन मौजूद थे, दोनों समूहों में सी 5–6 और सी 6–7 पर टाइप सी प्रबल था। एसटीआईआर घटक ने लगभग एक चौथाई एंडप्लेट्स को पुनर्वर्गीकृत किया, जिन्हें मोडिक ने टाइप 2 कहा था, यह दर्शाता है कि मिश्रित एडिमा–वसा घाव आम हैं और एसटीआईआर को छोड़ने पर आसानी से अनदेखा किए जाते हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात, अध्ययन से पता चला है कि सर्जिकल जोखिम किसी एक विशेषता के बजाय इमेजिंग निष्कर्षों के समूह द्वारा संचालित होता है। जब डिस्क हर्नियेशन डीईबीसी घाव के साथ मेल खाता था, तो अकेले हर्नियेशन की तुलना में सर्जिकल उपचार की आवश्यकता की संभावना लगभग 7 गुना बढ़ जाती थी। इसके विपरीत, पृथक डीईबीसी या एंड–प्लेट क्षरण में थोड़ा बढ़ा हुआ जोखिम दिखाई देता था। ये आँकड़े इस अवधारणा को पुष्ट करते हैं कि डिस्क, एंडप्लेट और मज्जा एक एकल बायोमैकेनिकल और जैविक परिसर के रूप में कार्य करते हैं और इस इंटरफेस पर संयुक्त विकृति विज्ञान नैदानिक विफलता के लिए प्रवण खंडों की पहचान करता है।[11]

8. **रीढ़ की हड्डी का संरेखण**– ग्रीवा संरेखण का पूर्ण रेडियोग्राफिक मूल्यांकन एक सीधी पार्श्व फिल्म से शुरू होता है जिसमें खोपड़ी का आधार और ऊपरी वक्ष प्रवेश द्वार शामिल होता है। इस छवि से, पुनरुत्पादित मापों का एक छोटा समूह धनु प्रोफाइल को कैप्चर करता है और इसे दर्द स्कोर, न्यूरोलॉजिक रिकवरी और आसन्न–खंड रोग के जोखिम से जोड़ा गया है। C2 - C7 कॉब कोण एक सीधी पार्श्व रेडियोग्राफ पर C2 और C7 के अवर अंतप्लेटों के साथ रेखाएं खींचकर, लंबवत रेखाएं खड़ी करके और प्रतिच्छेदन कोण को मापकर प्राप्त किया जाता है। C2 –C7 कॉब कोण वैश्विक ग्रीवा लॉर्डोसिस को दर्शाता है। स्पर्शोन्मुख वयस्कों में, लॉर्डोसिस का औसत मूल्य लगभग 40° है। अधिकांश सर्जिकल पुनर्निर्माण का उद्देश्य रोगी के T1 ढलान के लगभग 20° के भीतर वक्र को बहाल करना है, C2-C7 सैगिटैल वर्टिकल अक्ष C2 के केंद्र से C7 वर्टिब्रल बॉडी के पीछे–ऊपरी कोने तक गिराए गए एक साहुल रेखा से क्षैतिज दूरी का प्रतिनिधित्व करता है। सामान्य संरेखण औसतन 1.7 सेमी होता है, जबकि 4 सेमी से अधिक का ऑफसेट सकारात्मक सैगिटैल

मैलएलाइनमेंट इंगित करता है जो स्वास्थ्य संबंधी गुणवत्ता–जीवन स्कोर के साथ और संलयन के बाद आसन्न–खंड विफलता के उच्च जोखिम से संबंधित है। क्योंकि उच्च ढलानों में सिर को संतुलित करने के लिए अधिक लार्डोसिस की आवश्यकता होती है, सर्जन अक्सर T1 ढलान माइनस सर्वाइकल लॉर्डोसिस मिसमैच की गणना करते हैं। 20° से अधिक मान विकृति को परिभाषित करते हैं। ठोड़ी–भौंह ऊर्ध्वाधर कोण (सीबीवीए) भौंह से ठोड़ी तक की रेखा और वास्तविक ऊर्ध्वाधर के बीच के कोण को मापकर क्षैतिज दृष्टि का आकलन करता है। जब सीबीवीए ±10° से अधिक विचलित हो जाता है, तो रोगियों को अधिकतर चलने या सीढ़ियां चढ़ने जैसे नित–प्रतिदिन के कार्यों में कठिनाई का अनुभव होता है। परिणामस्वरूप, सुधारात्मक ऑस्टियोटामी का उद्देश्य अधिकतर कार्यात्मक दृष्टि और गतिशीलता को अनुकूलित करने के लिए लगभग 10° फ्लेक्सान को बहाल करना होता है।

9. **उपचार / प्रबंधन**– सर्वाइकल स्पोंडिलोसिस के लिए उपचार की रणनीति रोगी के लक्षणों और संकेतों की गंभीरता पर निर्भर करती है। "लाल झंडे" के लक्षणों या गंभीर मायलोपैथी की अनुपस्थिति में, उपचार का लक्ष्य दर्द से राहत, दैनिक गतिविधियों में कार्यात्मक क्षमता में सुधार और तंत्रिका संरचनाओं को स्थायी क्षति से बचाना है। लाल झंडे नैदानिक चेतावनी संकेत हैं–जैसे गंभीर या तेजी से बढ़ने वाली तंत्रिका संबंधी कमियाँ, आंत्र या मूत्राशय की शिथिलता, या अस्पष्टीकृत वजन घटना–जो गंभीर अंतर्निहित विकृति का संकेत हो सकते हैं जिसके लिए तत्काल मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। लक्षणात्मक सर्वाइकल स्पोंडिलोसिस का चरणबद्ध तरीके से इलाज किया जाना चाहिए, जिसकी शुरुआत गैर–शल्य चिकित्सा प्रबंधन से होनी चाहिए। सर्वाइकल रेडिकुलोपैथी के इलाज के लिए इंटरलेमिनर या ट्रांसफोरामिनल ईएसआई करवाने वाले 40% से 70% मरीजों में सफलता की दीर्घकालिक रिपोर्टें हैं। मंचिकांति एट अल द्वारा 2015 में की गई एक व्यवस्थित समीक्षा में, सर्वाइकल रेडियोफ्रीक्वेंसी लेजनिंग, मीडियल ब्रांच ब्लॉक और फेसेट जाइंट इंजेक्शन से दीर्घकालिक दर्द से राहत देखी गई थी। हालाँकि, इन व्यवस्थित समीक्षाओं की सीमाओं में उच्च–गुणवत्ता वाले अध्ययनों की कमी और, विशेष रूप से, प्लेसीबो या शम नियंत्रण तुलना समूहों के साथ जाँच का अभाव सम्मिलित है।

10. **स्थानीय मस्कुलोस्केलेटल स्रोत**– ग्रीवा मोच, खिंचाव, फेसेट आर्थोपैथी और मायोफेशियल ट्रिगर पाइंट, बिना डर्मेटोमल रेडिएशन के अक्षीय गर्दन में दर्द पैदा करते हैं और तंत्रिका संबंधी परीक्षण को सामान्य रखते हैं। ग्लेनोहुमरल आर्थराइटिस, रोटेटर कफ रोग और एक्रोमियोक्लेविकुलर जोड़ का अधःपतन, पार्श्व कंधे के दर्द का कारण बनता है।

11. **परिधीय तंत्रिका और जाल घाव**– कार्पल टनल सिंड्रोम अंगूठे, तर्जनी और मध्यमा उंगलियों में रात्रिकालीन पेरेस्थेसिया उत्पन्न करता है, गर्दन की गति को बनाए रखता है, और कलाई में मध्य चालन को धीमा कर देता है। क्यूबिटल टनल सिंड्रोम अनामिका और छोटी उंगलियों में सुन्नता पैदा करता है और हाथ में आंतरिक कमजोरी के साथ, लेकिन उलनार अग्रबाहु की त्वचा को प्रभावित नहीं करता, एक ऐसा पैटर्न जिसकी व्याख्या C8 की भागीदारी से नहीं की जा सकती। ब्रेकियल न्यूरिटिस तीव्र कंधे के दर्द के साथ प्रकट होता है जिसके बाद किसी एक मूल से संबंधित नहीं, पैची पक्षाघात होता है।

12. **वक्षीय निकास और संवहनी संपीड़न**– स्थितिजन्य पेरेस्थेसिया या बाँहों की थकान, जो कंधे को नीचे करने पर कम हो जाती है, वक्षीय निकास पर तंत्रिकावाहिनी संबंधी समस्या का संकेत देती है। उत्तेजक उन्नयन परीक्षण लक्षणों को पुनः उत्पन्न करते हैं, जबकि ग्रीवा कर्षण इनसे राहत नहीं देता।

13. **गैर–अपक्षयी रीढ़ की हड्डी की स्थितियां**– तीव्र फ्रैक्चर, एपिड्यूरल फोड़ा, ऑस्टियोमाइलाइटिस, या मेटास्टेटिक ट्यूमर को तब बाहर रखा जाना चाहिए जब दर्द लगातार बना रहे, रात में बढ़ जाए, या बुखार, वजन कम होने, या कैंसर के इतिहास जैसे प्रणालीगत लक्षणों के साथ हो। लाल निशान दिखाई देने पर एमआरआई जरूरी है।

14. **आंतरिक तंत्रिका संबंधी विकार**– मल्टीपल स्क्लेरोसिस, विटामिन बी12 की कमी, एमियोट्रोफिक लेटरल स्क्लेरोसिस और गिलियन–बैरे सिंड्रोम, बिना किसी सुसंगत इमेजिंग संपीड़न के अंगों में कमजोरी, चाल में असंतुलन, या संवेदी हानि उत्पन्न करके मायलोपैथी की नकल करते हैं। इलेक्ट्रोमायोग्राफी और उपयुक्त प्रयोगशाला परीक्षण इन विकृतियों को अलग करते हैं।

15. **रोग का निदान**– सर्वाइकल स्पोंडिलोसिस एक धीरे–धीरे बढ़ने वाली, अपक्षयी रोग प्रक्रिया है जो उम्र के साथ बिगड़ती जाती है। हालाँकि, लक्षणों की गंभीरता न्यूरोइमेजिंग पर दिखाई देने वाले स्पोंडिलोसिस की गंभीरता से आवश्यक रूप से संबंधित नहीं हो सकती है। अक्षीय गर्दन के दर्द से पीड़ित मरीजों में आमतौर पर समय के साथ सुधार होता है, लेकिन दर्द फिर से हो सकता है। एक अध्ययन के परिणामों में पाया गया कि गर्दन के दर्द से पीड़ित 79% मरीजों में लक्षणों की शुरुआत के बाद 15 साल के अनुवर्ती अध्ययन के बाद सुधार हुआ या वे लक्षणहीन हो गए।[12] वर्तमान में गर्दन के दर्द से पीड़ित 50% से 75% लोग 1 से 5 साल बाद फिर से गर्दन के दर्द की शिकायत करते हैं। कैरोल एट अल द्वारा 2008 में किए गए एक अध्ययन में, मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य, मुकाबला करने के तरीके और सामाजिककरण की आवश्यकता सहित मनोसामाजिक कारक गर्दन के दर्द के सबसे मजबूत रोगनिदान कारक थे।[13] सर्वाइकल रेडिकुलोपैथी वाले अधिकांश रोगियों में सर्जिकल हस्तक्षेप के बिना 1 से 2 वर्षों में लक्षणों का अंतिम समाधान होता है। सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिक मायलोपैथी में

दीर्घकालिक रोग निदान उतना स्पष्ट नहीं है। हल्के से मध्यम लक्षणों वाले रोगियों में, सर्वाइकल स्पान्डिलोइटिक मायलोपैथी का प्राकृतिक कोर्स अत्यधिक परिवर्तनशील होता है।

16. **निवारण और रोगी शिक्षा**– सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस का प्राकृतिक इतिहास अत्यधिक परिवर्तनशील है, और इसे रोकना भी चुनौतीपूर्ण है, क्योंकि यह सामान्य उम्र बढ़ने की प्रक्रिया का हिस्सा है। हालाँकि, व्यक्ति सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस की शुरुआत को जल्दी रोकने के तरीकों पर प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं, जिसमें गर्दन की अच्छी मज़बूती और लचीलापन बनाए रखना, एक सक्रिय और स्वस्थ जीवनशैली अपनाना और गर्दन की चोटों को रोकना शामिल है (जैसे, अच्छा एर्गोनॉमिक्स, गर्दन को लंबे समय तक न फैलाना, संपर्क वाले खेलों के लिए उचित उपकरण, सुरक्षित टैकलिंग तकनीक और वाहनों में सीटबेल्ट का उपयोग)। मरीजों को सर्जिकल और नॉन–सर्जिकल उपचार विकल्पों के जोखिमों और लाभों को भी समझना चाहिए।

17. **स्वास्थ्य सेवा टीम के परिणामों को बढ़ाना**– सर्वाइकल स्पॉडिलोसिस को उम्र बढ़ने की एक प्राकृतिक प्रक्रिया माना जाता है, जो 65 वर्ष की आयु तक 95% लोगों में पाई जाती है। अधिकांश लोग बिना किसी लक्षण के रहते हैं, लेकिन अक्षीय गर्दन में दर्द हो सकता है और सर्वाइकल रेडिकुलोपैथी और/या सर्वाइकल मायलोपैथी में बदल सकता है। स्वास्थ्य सेवा पेशेवरों को एक संपूर्ण इतिहास और विस्तृत शारीरिक परीक्षण प्राप्त करने की आवश्यकता होती है, जिससे विकृति की गंभीरता का पता लगाने और उपचार के विकल्पों का मार्गदर्शन करने में मदद मिलती है। जिन व्यक्तियों को असहनीय दर्द और/या प्रगतिशील तंत्रिका संबंधी समस्या हो, उन्हें किसी न्यूरोसर्जन या ऑर्थोपेडिक स्पाइन सर्जन के पास रेफरल करवाना चाहिए। अल्पावधि में, सर्जिकल डिकम्प्रेसन सर्वाइकल रेडिकुलोपैथी या मायलोपैथी के रोगियों में दर्द, कमज़ोरी और संवेदी हानि से तेज़ी से राहत प्रदान कर सकता है। सर्वाइकल स्पॉडिलोसिस के परिणाम लक्षणों की गंभीरता और अंतर्निहित विकृति पर निर्भर करते हैं। हालाँकि, परिणामों में सुधार के लिए, यह अनुशंसा की जाती है कि आवश्यकतानुसार इंटरप्रोफेशनल हेल्थकेयर टीम के सदस्यों से तुरंत परामर्श लिया जाए। आज के समय में यह रोग केवल वृद्धावस्था तक सीमित नहीं रहा, बल्कि 30 से 40 वर्ष आयु वर्ग में भी तेजी से देखा जा रहा है। इस रोग के कारण व्यक्ति को गर्दन में दर्द, मांसपेशीय खिंचाव, नसों पर दबाव, चक्कर आना एवं कंधे से हाथों तक दर्द का अनुभव होता है।

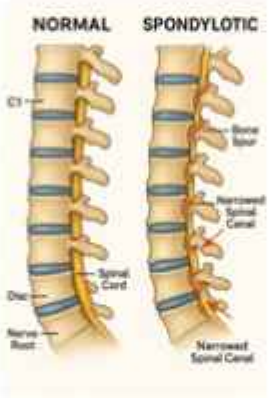


चित्र–3: सर्वाइकल कशेरुकाओं, इंटरवर्टिब्रल डिस्क एवं स्नायुबंधन में संरचनात्मक क्षति

18. **रोग की परिभाषा एवं विकृति–विज्ञान (Pathophysiology)**– सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस एक अपक्षयी रोग है जिसमें सर्वाइकल कशेरुकाओं, इंटरवर्टिब्रल डिस्क एवं स्नायुबंधन (Ligaments) में संरचनात्मक क्षति होती है। समय के साथ डिस्क का द्रव्य सूखने लगता है और वह अपनी लोच क्षमता खो देता है, जिससे कशेरुकाओं के बीच घर्षण बढ़ता है। परिणामस्वरूप, Osteophytes (हड्डी के उभार) बनते हैं जो नसों पर दबाव डालते हैं। यह विकृति रीढ़ की हड्डी में सूजन (Inflammation), मांसपेशीय तंतु क्षरण एवं तंत्रिका संचार अवरोध का कारण बनती है। यह रोग धीरे–धीरे बढ़ता है और प्रारंभ में हल्के दर्द के रूप में दिखाई देता है किंतु समय के साथ यह पुराना एवं कष्टदायक हो सकता है।

चित्र–4: सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस के सामान्य कारक

19. **कारण एवं जोखिम कारक**– सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं–

1. गलत बैठने या सोने की मुद्रा – लंबे समय तक एक ही मुद्रा में बैठना, कंप्यूटर या मोबाइल का अत्यधिक उपयोग।

2. आयु संबंधित परिवर्तन – उम्र बढ़ने के साथ डिस्क में जलांश कम हो जाता है एवं संधि–विकार विकसित होते हैं।

3. पेशागत दबाव–वे व्यक्ति जो मशीनरी संचालन, ड्राइविंग या टाइपिंग जैसे कार्य करते हैं, उनमें जोखिम अधिक होता है।

4. आघात (Trauma) – किसी दुर्घटना या अचानक झटके से सर्वाइकल क्षेत्र में क्षति।

5. अनुवांशिक प्रवृत्ति – परिवार में रीढ़ संबंधी रोगों का इतिहास।

20. **नैदानिक लक्षण (Clinical Manifestations)**– सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस के सामान्य एवं विशिष्ट लक्षण निम्नलिखित हैं–

- गर्दन में दर्द एवं अकड़न – विशेष कर सुबह के समय या लंबे कार्य के बाद।
- चक्कर आना एवं सिरदर्द – विशेष कर सर्वाइकल नर्सों पर दबाव के कारण।
- हाथों में सुन्नपन या झुनझुनी – नरा दबाव (Radiculopathy) के कारण।
- कंधे एवं पीठ में दर्द – मांसपेशीय तनाव एवं स्पैज़्म के कारण।
- गतिशीलता में कमी – गर्दन घुमाने में कठिनाई।

21. **निदान (Diagnosis)**– सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस के निदान हेतु निम्नलिखित परीक्षण उपयोगी होते हैं–

1. एक्स–रे (X-Ray) – कशेरुकाओं के बीच की दूरी एवं ऑस्टियोफाइट निर्माण का आकलन।

2. एमआरआई (MRI) – नसदबाव, डिस्क हर्नियेशन एवं मृदु ऊतकों की स्थिति।

3. सीटी स्कैन (CT Scan) – अस्थि संरचना में सूक्ष्म परिवर्तन का विश्लेषण।

4. न्यूरोलॉजिकल परीक्षण – रिफ्लेक्स, संवेदना एवं मांसपेशीय शक्ति की जांच।

22. **उपचार (Treatment Modalities)**– सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस का उपचार बहुआयामी होता है जिसमें Allopathy, Ayurvedic, Yoga एवं Homeopathy सभी की भूमिका महत्वपूर्ण है।

22.1 **एलोपैथिक उपचार (Allopathic Treatment)**–

- NSAIDs – दर्द एवं सूजन नियंत्रण हेतु।
- Muscle Relaxants – मांसपेशीय तनाव को कम करने हेतु।
- Physiotherapy – Hot/Cold Therapy, TENS, Traction
- सर्जिकल हस्तक्षेप – गंभीर नस दबाव में ACDF Surgery

22.2 **आयुर्वेदिक उपचार (Ayurvedic Management)**

- ग्रीवा बस्ती – तिल तेल / औषधीय तेल द्वारा स्थानीय उपचार।
- अभ्यंग एवं स्वेदन – मांसपेशीय जकड़न में राहत हेतु।
- औषधियाँ – योगराज गुग्गुलु, अश्वगंधा, दशमूल क्वाथ।

22.3 **योग एवं व्यायाम (Yoga & Therapeutic Exercises)**

- भुजंगासन, मकरासन, शशांकासन – रीढ़ में लचीलापन बनाए रखने हेतु।
- गर्दन स्ट्रेचिंग व्यायाम – Flexion, Extension, Rotation अभ्यास।
- प्राणायाम – अनुलोम–विलोम, कपालभाति।

22.4 **होम्योपैथिक उपचार (Homeopathic Approach)**

- Rhus Tox – stiffness व दर्द में।

- Bryonia – हलचल से बढ़ने वाले दर्द में।
- Colocynthis – नसों के दर्द (Neuralgia) हेतु।

22.5 रोग–प्रबंधन एवं पुनर्वास (Rehabilitation)

- नियमित फिजियोथेरेपी।
- सही मुद्रा (Posture Correction)।
- नियमित योग अभ्यास।

23. निष्कर्ष– सर्वाइकल स्पान्डिलाइटिस एक जटिल परंतु प्रबंधनीय स्थिति है। बहु–चिकित्सीय उपचार दृष्टिकोण द्वारा रोगी दीर्घकालिक राहत प्राप्त कर सकता है। जीवन शैली में सुधार, उचित व्यायाम एवं चिकित्सीय परामर्श से यह रोग नियंत्रित किया जा सकता है।

**References**


1. Hoy DG, Protani M, De R, Buchbinder R. The epidemiology of neck pain. Best Pract Res Clin Rheumatol. 2010 Dec;24(6):783-92. [PubMed]
2. Lu X, Tian Y, Wang SJ, Zhai JL, Zhuang QY, Cai SY, Qian J. Relationship between the small cervical vertebral body and the morbidity of cervical spondylosis. Medicine (Baltimore). 2017 Aug;96(31):e7557. [PMC free article] [PubMed]
3. Hurwitz EL, Randhawa K, Yu H, Côté P, Haldeman S. The Global Spine Care Initiative: a summary of the global burden of low back and neck pain studies. Eur Spine J. 2018 Sep;27(Suppl 6):796-801. [PubMed]
4. Donnally III CJ, Hanna A, Odom CK. StatPearls [Internet]. StatPearls Publishing; Treasure Island (FL): Jan 15, 2023. Cervical Myelopathy. [PubMed]
5. Shabat S, Leitner Y, David R, Folman Y. The correlation between Spurling test and imaging studies in detecting cervical radiculopathy. J Neuroimaging. 2012 Oct;22(4):375-8. [PubMed]
6. Machino M, Ando K, Kobayashi K, Morozumi M, Tanaka S, Ito K, Kato F, Ishiguro N, Imagama S. Cut off value in each gender and decade of 10-s grip and release and 10-s step test: A comparative study between 454 patients with cervical spondylotic myelopathy and 818 healthy subjects. Clin Neurol Neurosurg. 2019 Sep;184:105414. [PubMed]
7. Jiang Z, Davies B, Zipser C, Margetis K, Martin A, Matsoukas S, Zipser-Mohammadzada F, Kheram N, Boraschi A, Zakin E, Obadaseraye OR, Fehlings MG, Wilson J, Yurac R, Cook CE, Milligan J, Tabrah J, Widdop S, Wood L, Roberts EA, Rujeedawa T, Tetreault L., AO Spine RECODE-DCM Diagnostic Criteria Incubator. The Frequency of Symptoms in Patients With a Diagnosis of Degenerative Cervical Myelopathy: Results of a Scoping Review. Global Spine J. 2024 May;14(4):1395-1421. [PMC free article] [PubMed]
8. Munro CF, Yurac R, Moritz ZC, Fehlings MG, Rodrigues-Pinto R, Milligan J, Margetis K, Kotter MRN, Davies BM. Targeting earlier diagnosis: What symptoms come first in Degenerative Cervical Myelopathy? PLoS One. 2023;18(3):e0281856. [PMC free article] [PubMed]
9. Jiang Z, Davies B, Zipser C, Margetis K, Martin A, Matsoukas S, Zipser-Mohammadzada F, Kheram N, Boraschi A, Zakin E, Obadaseraye OR, Fehlings MG, Wilson J, Yurac R, Cook CE, Milligan J, Tabrah J, Widdop S, Wood L, Roberts EA, Rujeedawa T, Tetreault L., AO Spine RECODE-DCM Diagnostic Criteria Incubator. The value of Clinical signs in the diagnosis of Degenerative Cervical Myelopathy - A Systematic review and Meta-analysis. Global Spine J. 2024 May;14(4):1369-1394. [PMC free article] [PubMed]
10. Brinjikji W, Luetmer PH, Comstock B, Bresnahan BW, Chen LE, Deyo RA, Halabi S, Turner JA, Avins AL, James K, Wald JT, Kallmes DF, Jarvik JG. Systematic literature review of imaging features of spinal degeneration in asymptomatic populations. AJNR Am J Neuroradiol. 2015 Apr;36(4):811-6. [PMC free article] [PubMed]
11. Jagadish T, Murugan C, Ramachandran K, Thippeswamy PB, Anand K S SV, Kanna RM, Shetty AP, Rajasekaran S. The Association of Modic Changes and Disc-Endplate-Bone Marrow Complex Classification in Patients With Cervical Degenerative Disc Disease. Global Spine J. 2025 Feb 14;:21925682251320893. [PMC free article] [PubMed]

12. Gore DR, Sepic SB, Gardner GM, Murray MP. Neck pain: a long-term follow-up of 205 patients. Spine (Phila Pa 1976). 1987 Jan-Feb;12(1):1-5. [PubMed]

13. Carroll LJ, Hogg-Johnson S, van der Velde G, Haldeman S, Holm LW, Carragee EJ, Hurwitz EL, Côté P, Nordin M, Peloso PM, Guzman J, Cassidy JD., Bone and Joint Decade 2000-2010 Task Force on Neck Pain and Its Associated Disorders. Course and prognostic factors for neck pain in the general population: results of the Bone and Joint Decade 2000-2010 Task Force on Neck Pain and Its Associated Disorders. Spine (Phila Pa 1976). 2008 Feb 15;33(4 Suppl):S75-82. [PubMed]

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 82-85
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.13
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Care Education in the Context of National Education Policy 2020

Rashmi Tripathi and Manjul Trivedi
Department of Education, B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226 001, UP. India
rashmi.tripathi84@gmail.com, manjultrivedi.007@gmail.com

**Received: 17-09-2025, Accepted: 20-11-2025**

**Abstract**- Care Education is a new concept in educational word which is proposed by Nell Nodings. It is based on moral theory of care ethics which helps in character building of the child it helps to develop all the three domains (cognitive, effective and psychomotor) of personality, means it focuses on holistic development of the child which is the ultimate aim of education. The fundamental principles of NEP 2020 also focus on Care Education like identify or acceptance the specific capabilities of the child, flexibility of curriculam, development of human or ethical values, life skills and education as the Public Service. This research paper deals with the studies about Care Education in context to NEP 2020 part 1- ECCE and suggest some measures to develop social, emotional,& ethical values among children from the very early age.

**Key words**- Care Education, ECCE, and NEP 2020

# राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में देखभाल की शिक्षा

रश्मि त्रिपाठी एवं मंजुल त्रिवेदी
शिक्षाशास्त्र विभाग, बी.एस.एन.वी. पी.जी. कॉलेज, लखनऊ–226 001, उ0प्र0, भारत
rashmi.tripathi84@gmail.com, manjultrivedi.007@gmail.com

**सार**– देखभाल की शिक्षा शिक्षा जगत के लिए एक नया विचार है जिसे नेल नोडिंग्स ने प्रतिपादित किया है। देखभाल की शिक्षा नैतिक सिद्धांतों के देखभाल की नैतिकता सिद्धांत पर आधारित है। यह बालक के चारित्रिक विकास में सहायक है क्योंकि देखभाल की शिक्षा में व्यक्तित्व के तीनों पक्ष (ज्ञानात्मक, भावात्मक व मनोगत्यात्मक) सक्रिय होते हैं। यह शिक्षा के समग्र दृष्टिकोण पर आधारित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के जो आधारभूत सिद्धांत है देखभाल की शिक्षा भी उन्हीं पर काम करती है जैसे– प्रत्येक बालक की विशिष्ट क्षमताओं की स्वीकृति, पहचान और उनके विकास हेतु प्रयास करना, पाठ्यक्रम का लचीलापन, नैतिकता व मानवीय मूल्यों का विकास, जीवन कौशल तथा शिक्षा को एक सार्वजनिक सेवा समझना। प्रस्तुत शोध पत्र में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के भाग–1 स्कूली शिक्षा (ईसीसीई) के संदर्भ में देखभाल की शिक्षा का अध्ययन किया गया है व कुछ सुझाव प्रस्तुत किए गए जो प्रारंभिक बाल्यावस्था से ही छात्र में सामाजिक–भावनात्मक–नैतिक विकास में सहायक होंगे।

**बीज शब्द**– देखभाल की शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, ईसीसीई

1. **प्रस्तावना**– नई शिक्षा नीति 2020 के कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में गठित पहली ऐसी शिक्षा नीति है जो शिक्षा के भारतीयकरण पर बल देती है, साथ ही भावी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए भविष्य के लिये मार्ग भी प्रशस्त करती है। इसके 5 आधारभूत सिद्धांत हैं–पहुँच (Access), समानता (Equity), गुणवत्ता (Quality) सामर्थ्य (Affordability), और जवाबदेही (Accountability) (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020[1]) शिक्षा को सब तक समान रूप से पहुँचाने का लक्ष्य भारतीय ज्ञान परम्परा का द्योतक है। भारतीय ज्ञान परम्परा सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार मानता है। देखभाल की शिक्षा का भी यही आधार है कि देखभाल की भावना सभी के लिए समान रुप से होनी चाहिए चाहे कोई हमारा संबंधी हो या न हो। आज के तकनीकी युग व वर्तमान शिक्षा ने हमें सब कुछ दिया है किंतु कहीं न कहीं हमारा सांस्कृतिक व नैतिक पतन भी किया है। जिस कारण आज का युवा आर्थिक रुप से सफल होने पर भी भावनात्मक व नैतिक निर्णय नही ले पाता और आत्महत्या जैसे कदम उठाते है। अतः वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के सामने यह बहुत बड़ी चुनौती है कि वह बालक के व्यक्तित्व के सभी पक्षों का संतुलित विकास करे। देखभाल की शिक्षा इसमें एक अहम भूमिका निभा सकती है। बाल्यकाल में बच्चों को जो सिखाया जाता है वह युवावस्था में परिपक्व होकर सामने आता है अतः आज की शिक्षा के एक अंश के रूप में देखभाल की शिक्षा को भी पाठ्यक्रम (ईसीसीई) में स्थान दिया जाना चाहिये।

2. **संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण**– अधिकारी, सह और सेन[2] ने अपने अध्ययन में बताया की देखभाल ही नैतिकता का आधार है नोडिंग्स जो एक संबंध पारक और समग्र शिक्षा के लिए करुणा पैदा करने वाली शिक्षा की बात करती हैं उसके द्वारा यह बताना चाहती हैं कि देख भाल पाने वाला देखभाल करना भी सीखे ब्रोस्ट्रांम[3] ने अपने लेख "केयर एंड एजुकेशन टुवर्ड्स ए न्यू पैराडाइज इन अर्ली चाइल्डहुड एजुकेशन" में बताया है कि डेनमार्क की प्राथमिक शिक्षा देखभाल से बहुत संबंधित है उन्होंने इस पत्र में बच्चों के कल्याण के माध्यम के रूप में देखभाल तथा बच्चों के सीखने के माध्यम के रूप में शिक्षक के बीच संबंध का अध्ययन किया और बताया कि यह गलत अवधारणा है

बल्कि देखभाल और बच्चों के कल्याण सीखने और विकास के लिए प्रारंभिक बिंदु है। "देखभाल नैतिकता और नैतिक शिक्षा के प्रति एक संबंध परख दृष्टिकोण" पुस्तक में इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए हैं और देखभाल को नैतिकता का आधार बताते हुए देखभाल कर्ता और देखभाल पाने वाले के बीच संबंधों पर प्रकाश डाला है[3]।

3. **शोध प्रश्न**–

3.1 देखभाल की शिक्षा व उसकी प्रमुख अवधारणायें क्या है?
3.2 क्या राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 स्कूली शिक्षा(ईसीसीई) में देखभाल की शिक्षा की बात करती है?

4. **उद्देश्य**–

4.1 देखभाल की शिक्षा का विस्तार से अध्ययन करना।
4.2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आधारभूत सिद्धांतों व भाग–1 में वर्णित ईसीसीई का विस्तृत अध्ययन करना।

5. **शोध विधि**– प्रस्तुत शोध पत्र गुणात्मक प्रकार का शोध है जिसमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एव केयर एजुकेशन से सम्बन्धित विषय वस्तु व शोध पत्रों का विश्लेष्णात्मक व समीक्षात्मक अध्ययन किया गया है।

6. **उद्देश्य**–1

6.1 **पृष्ठभूमि**– देखभाल की शिक्षा का संप्रत्यय नेल नोडिंग्स की देन है जो देखभाल की नैतिकता सिद्धांत पर आधारित है। वस्तुतः केरोल गिलगिन देखभाल की नैतिकता सिद्धांत की प्रधान प्रर्वतक हैं जो उन्होने कॉलबर्ग के नैतिक सिद्धांत के विरोध में प्रतिपादित किया गिलीगंन ने 1982 में प्रकाशित अपनी पुस्तक इन ए डिफरेंट वॉइस में नैतिकता का स्त्रीवादी पक्ष उजागर किया जिसमें उन्होंने बताया कि नैतिकता के प्रति स्त्रियों का दृष्टिकोण पुरुषों से भिन्न है पुरुष जहां नैतिकता को अधिकारों कानून और सार्वभौमिक रूप से लागू सिद्धांत के रूप में देखते हैं वही स्त्रियां नैतिकता को रिश्तो, करुणा व दूसरों के प्रति जिम्मेदारी के रूप में देखती हैं।[4] गिलिगन के इसी विचार को नेल नोडिंग्स ने आगे बढ़ाते हुए शिक्षा में प्रयोग किया।
6.2 **देखभाल की शिक्षा (केयर एजुकेशन) का अर्थ**– देखभाल की शिक्षा, एक संबंध केंद्रित शिक्षा है जिसका प्रारंभ घर से होता है[5] किंतु नोडिंग इसे घर से विद्यालय, समाज, समुदाय, फिर देश व विदेश तक लाने की आवश्यकता बताती है। नोडिंग[6] नैतिक विकास का आधार देखभाल को ही बताती है। देखभाल के द्वारा ही छात्रों में सही व गलत की समझ बाल्यकाल में ही विकसित करके नैतिक निर्णय लेने में उन्हें सक्षम बनाया जा सकता है। नोडिंग्स इसके दो प्रमुख घटक बताती हैं– **देखभाल कर्ता और देखभाल प्राप्त कर्ता**[7]। देखभाल की शिक्षा इन दोनों के बीच की अंतः क्रिया और उससे विकसित होने वाले संबंधों की बात करती है। देखभाल की शिक्षा एक पारस्परिक क्रिया या अनुभूति है जो बालक के सामाजिक भावात्मक नैतिक विकास में सहायक है।
6.3 **देखभाल की शिक्षा के चरण**– 1–मॉडलिंग 2–डायलॉग( वार्ता ) 3–प्रैक्टिस (अभ्यास) 4–कन्फर्मेशन (पुष्टिकरण)
6.4 **मॉडलिंग**– का तात्पर्य है की देखभाल करने की क्षमता प्रदर्शित करने के अवसरों का लाभ उठाना छात्र दूसरों के द्वारा होने वाली देखभाल को देखकर उसका अनुसरण करें।
6.5 **वार्ता**– वार्ता का तात्पर्य है खुली बातचीत। जिसके द्वारा प्रतिभागियों को यह पता नहीं होता कि इसका अंत कैसे होगा इसमें दोनों बोलते हैं और दोनों ध्यान से सुनते हैं।
6.6 **अभ्यास**– देखभाल करने की क्षमता विकसित करने के लिए नियमित रूप से शिक्षक द्वारा देखभाल संबंधी गतिविधियां या क्रियाएं कराई जाए और छात्र उनमें पूर्णता से प्रतिभागिता करें।
6.7 **पुष्टिकरण**– पुष्टिकरण का यहाँ पर तात्पर्य है अपने कार्यों के लिए सर्वोत्तम संभव उद्देश्य निर्धारित करना व उन पर काम करना। यह देखभाल किए जाने वाले व्यक्ति और देखभाल करने वाले के बीच के संबंध पर निर्भर करती है।

7. **देखभाल की शिक्षा की विशेषताएं**–

7.1 यह भावना आधारित है अर्थात इसमें सहानुभूति, तदनुभूति जैसी भावनाओं के विकास पर महत्व दिया गया है।
7.2 व्यक्तिगत विभिन्नताओं के अनुसार शिक्षा।
7.3 देखभाल आधारित छात्र शिक्षक संबंध।
7.4 निर्णय क्षमता का विकास।
7.5 नैतिक व सामाजिक मूल्यों का विकास।
7.6 ग्रहणशीलता ।

7.7 संबंधोन्मुख उपागम।

**उद्देश्य**–2 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 21वीं सदी की पहली शिक्षा नीति है जो भारतीय परम्पराओं को आधार बनाकर शिक्षा के पुर्नगठन के लिए तत्पर है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में स्पष्ट कहा गया है कि इस शिक्षा नीति का उद्देश्य अच्छे इंसानो का विकास करना है। जिनमें करुणा, सहानुभूति, लचीलापन, साहस, कल्पनाशीलता, वैज्ञानिक चिंतन, तार्किक चिंतन व नैतिक मूल्य विद्यमान हों[1] साथ ही यह भी कहा गया कि अच्छी शैक्षणिक संस्था वह है जहाँ प्रत्येक छात्र का स्वागत हो और उसकी देखभाल की जाये जहाँ एक सुरक्षित प्रेरणादायक वातावरण हो।

8. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के कुछ आधारभूत सिद्धांत–

- प्रत्येक बच्चे की विशिष्ट क्षगताओं की स्वीकृती, पहचान और उनके विकास हेतु प्रयास।
- लचीलापन
- नैतिकता, मानवीय और संवैधानिक मूल्य
- जीवन कौशल
- शिक्षा एक सार्वजनिक सेवा है[1]।

9. **प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा सीखने की नींव**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के भाग–1 में वर्णित ईसीसीई के अंतरगत बताया गया कि बालक के मस्तिष्क का 85% विकास 6 वर्ष की अवस्था तक हो जाता है[1]। इसलिये इस समय बच्चों को ऐसे अनुभव प्रदान करने चाहिये जो उन पर अमिट छाप छोड़े। ईसीसीई में मुख्यतः लचीली व बहुआयामी शिक्षा की बात की गई है जिसमें ध्यानदेने योग्य बात यह है कि अक्षर, भाषा,संख्या ज्ञान के साथ ही सामाजिक कार्य, मानवीय संवेदना, आपसी सहयोग, अच्छे व्यवहार, समूह में कार्य करने व नैतिकता पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है। इसका उद्देश्य छात्र का सामाजिक–संवेगात्मक–नैतिक विकास करना है।

10. **समान बिंदु**– इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत कुछ ऐसे सिद्धांत वर्णित हैं जो देखभाल शिक्षा का आधार हैं जैसे–**नैतिक व मानवीय मूल्य, सहानुभूति, जीवन कौशल व लचीला पाठ्यक्रम** । इसके अतिरिक्त कुछ और बिंदु हैं जहाँ दोनो में एकरूपता दिखाई देती है–

10.1 **शिक्षक**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति में वर्णित शिक्षक देखभाल शिक्षा के शिक्षक की ही भांति है क्योंकि ईसीसीई शिक्षक भी विशेष रूप से प्रारंभिक बाल विकास व देखभाल में प्रशिक्षित होगा[1] और देखभाल शिक्षा का शिक्षक भी देखभाल कर्ता के रूप में प्रशिक्षित होगा जिसकी जिम्मेदारी संवेदनशील वयस्क तैयार करने की है जो समाज में अपना योगदान दे सके।

10.2 **शिक्षार्थी**– शिक्षार्थी देखभाल प्राप्तकर्ता के रूप में होगा जो शिक्षक से देखभाल करना सीखेगा एवं वह पारस्परिक अनुक्रियाओं द्वारा संबंधों के महत्व को समझ सकेगा। नई शिक्षा नीति में भी प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा के अंतर्गत छात्र को एक ऐसे वातावरण प्रदान किया जाना है जिसमें वह अपने शिक्षकों द्वारा पारस्परिक सहयोग को सीख सके[1] व सामाजिक– संवेगात्मक–नैतिक विकास को प्राप्त कर सके।

10.3 **विद्यालय**– देखभाल शिक्षा में विद्यालय घर की तरह ही होना चाहिए क्योंकि नॉर्डिंग्स डीवी से प्रभावित थी और डीवी का कहना है कि विद्यालय एक लघु समाज के रूप में है हम सब जानते हैं कि समाज की शुरुआत घर से होती है और नल लोडिंग भी देखभाल की शिक्षा का प्रारंभ घर से मानती हैं लेकिन उसे विद्यालय तक ले जाने की बात करती है तो विद्यालय एक ऐसी जगह होनी चाहिए जहाँ पर बच्चा अपनी बात रखने के लिए पूर्णतया स्वतंत्र हो वह सुरक्षित महसूस करें वह जहाँ पर उसकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं और रुचियों का ध्यान दिया जाए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में बताई गई बालवाड़ी एवं आंगनबाड़ी इसी प्रकार के विद्यालय हैं[1] जहाँ पर बच्चों को पूरी घर जैसी देखभाल वह उनके पूर्ण विकास पर काम किया जाएगा।[9]

10.4 **लचीला पाठ्यक्रम**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भाग–1 के अंतर्गत लचीला पाठ्यक्रम की बात की गई है ताकि शिक्षार्थियों में उनके सीखने के तौर तरीकों और अपनी प्रतिभा और रुचियां के अनुसार जीवन में आगे बढने का अवसर प्राप्त हो सकें[1]। लचीलापन, देख भाल शिक्षा का भी एक प्रमुख सिद्धांत है। प्रारंभिक बाल्यावस्था में शिक्षक को इस परिप्रेक्ष्य में पाठयक्रम के लचीलेपन की स्वतंत्रता दी गयी है क्योंकि यह आधारभूत अवस्था होती है जिसमें बालक सब कुछ देखकर सीख रहा होता है तो अगर शिक्षक पाठ्यक्रम में बंधा हुआ नहीं होगा तो छात्रों की रुचि व व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार यह सुनिश्चित कर पायेगा कि उन्हें कैसी देखभाल की आवश्यकता है जिसके द्वारा उनका सामाजिक–भावनात्मक– नैतिक विकास ज्यादा से ज्यादा किया जा सके उसके अनुसार शिक्षण उन गतिविधियों व क्रियाओं को पाठ्यक्रम में शामिल करने के लिए स्वतंत्र हो।[10]

11. देखभाल शिक्षा की क्रियाएं– कुछ सुझाव–

- शिक्षक का देखभाल पूर्ण व्यवहार ।
- समूह में बैठकर वार्तालाप जो की देखभाल केंद्रित हो ।

- देखभाल आधारित कहानी सुनाना व सुनना ।
- बच्चों से पूछना कि वह अपने बुजुर्गों दादा–दादी, नाना–नानी एवं अन्य बड़े लोगों की प्रतिदिन कैसे देखभाल करते हैं?
- पौधों और वातावरण की देखभाल से संबंधित वार्तालाप।
- प्रकृति व वातावरण देखभाल से संबंधित कहानियां बच्चों को सुनाना व उनका रोल प्ले करवाना ।
- बच्चों से प्राकृतिक देख भाल आधारित कहानी सुनने व सीखने के लिए प्रेरित करना ।
- हफ्ते में दो दिन बच्चों को प्राकृतिक भ्रमण (जो कि विद्यालय परिसर या आसपास ही हो) के लिए ले जाना ।
- पशुओं की देखभाल संबंधी वार्तालाप व कहानियों का आदान–प्रदान।
- सामूहिक कार्यों को प्रोत्साहन ।
- सामूहिक खेलों को प्रोत्साहन ।
- सहपाठी समूह की देखभाल संबंधी क्रियाओं में बच्चों को संलग्न करना।
- छोटे–छोटे निर्णय लेने संबंधी क्रियाओं का आयोजन।

11. **निष्कर्ष**– देखभाल की शिक्षा वर्तमान मोबाइल युग में बालक के पूर्ण विकास के लिए एक अहम प्रयास साबित हो सकता है क्योंकि इसमें शिक्षा के उस पक्ष पर ज्यादा जोर दिया गया है जो अब तक उपेक्षित रहा है नेल ने विद्यालयी शिक्षा में देखभाल की शिक्षा के सुझाव द्वारा बालक के सामाजिक–भावात्मक–नैतिक विकास पर बल दिया है जो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के उद्देश्यों में से एक है। उपर्युक्त वर्णित देखभाल आधारित क्रियाओं द्वारा छात्र के भावात्मक पक्ष को बाल्यकाल में ही मजबूत किया जा सकता है जो आगे चलकर एक पूर्ण व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक सिद्ध होगा। अतः राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में वर्णित प्रारंभिक बाल्यकाल देखभाल और शिक्षा लगभग लगभग वही सुझाव प्रस्तुत कर रही है जो देखभाल की शिक्षा करती है अतः देखभाल की शिक्षा की कुछ विशेषताओं को प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा में शामिल करके एक उपयोगी पाठ्यक्रम विकसित किया जा सकता है।

**References**


1. Ministery of Education, Government of India (2020) National Education Policy2020. Retrieved from-https://www-education-gov-in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0-pdf
2. Adhikari, A., Saha, B., & Sen, S. (2023) Nel Noddings' theory of care and its ethical components. International Research Journal of Education and Technology, 5(8), 198-206.
3. Broström, S. (2006, December) Care and education: Towards a new paradigm in early childhood education. In Child and youth care forum (Vol. 35, No. 5, pp. 391-409). New York: Kluwer Academic Publishers-Plenum Publishers
4. https://share.google/sDr23jw6r25AmAY4Q
5. Noddings, N. (2013) Caring: A relational approach to ethics and moral education. University of California Press.
6. infed.org https://share.google/cpYaMoUII5nsmwfpcL
7. Noddings, N. (2002) Starting at home: Caring and social policy. Univ of California Press.
8. Noddings. N. (2008) Caring and moral education. Handbook of moral and character education. 161-174.
9. Noddings, N. (2015) The challenge to care in schools. teachers college press.
10. Mondal, A., & Mondal, P. (2025) Early Childhood Care and Education (ECCE) in India in the light of national education policy 2020: a reality check. Education 3-13, 1–15. https://doi.org/10.1080/03004279.2025.2524484.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 86-97
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.14
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Nobel laureates (year 2025) and their research-a review

Deepak Kumar Srivastava
Department of Mathematics, B.S.N.V. Post Graduate College
(University of Lucknow, Lucknow)
Charbagh, Lucknow-226 001, U.P., India
dksflow@hotmail.com

**Received: 14-10-2025, Accepted: 25-10-2025**

**Abstract**- The short review of academic introduction, reputed honours received and research of Nobel laureates for year 2025 in the areas of Physiology-Medicine, Physics, Chemistry, Literature, Peace and Economics is given in the present article.

**Key words**- Nobel laureates, Physiology, Physics, Chemistry, Literature, Peace and Economics

# नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान (वर्ष 2025) एवं उनका शोध-एक समीक्षा

दीपक कुमार श्रीवास्तव
गणित विभाग, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज
(लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)
चारबाग, लखनऊ–226 001, उ0 प्र0, भारत
dksflow@hotmail.com

सार– प्रस्तुत लेख में वर्ष–2025 हेतु कार्यकी–चिकित्सा, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, साहित्य, शांति एवं अर्थशास्त्र के क्षेत्रों में दिये जाने वाले नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वानों का शैक्षणिक परिचय, प्राप्त प्रतिष्ठित सम्मान एवं उनके शोध की संक्षिप्त समीक्षा की गई है।

**बीज शब्द**– नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान, चिकित्सा, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, साहित्य, शांति, अर्थशास्त्र

1. **कार्यकी–चिकित्सा के क्षेत्र में**– वर्ष 2025 में चिकित्सा के क्षेत्र में नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा नियुक्त नोबेल एसेम्बली ने केरोलिन्स्का इंस्टीट्यूट, स्वीडन, में दिनांक 06.10.2025 (सोमवार) को दो अमेरिकी जीव विज्ञानी व चिकित्सकों **मैरी ब्रंको** (वरिष्ठ कार्यक्रम प्रबंधक, इंस्टीट्यूट फॉर सिस्टम्स बायोलॉजी, सिएटल, यू0एस0ए0) और **फ्रेड राम्सडेल** (वैज्ञानिक सलाहकार, सोनोमा बायोथेरेप्यूटिक्स, सैनफ्रांसिस्को, यू0एस0ए0) तथा जापानी जीव विज्ञानी शिमोन साकागुची (इम्यूनोलॉजी फ्रंटियर रिसर्च सेंटर, ओसाका विश्वविद्यालय) को संयुक्त रूप से "परिधीय प्रतिरक्षा सहिष्णुता (पेरिफेरल इम्यून टॉलरेंस)" में उनकी खोजों हेतु चुना गया। सामान्य शब्दों में कहें तो विज्ञानियों ने यह पता लगाया कि प्रतिरक्षा प्रणाली को कैसे नियंत्रित रखा जाता है। पेरिफेरल इम्यून टॉलरेंस के जरिये शरीर की शक्तिशाली प्रतिरक्षा प्रणाली को नियंत्रित किया जाता है, ताकि यह गलती से ये हमारे अपने अंगों पर हमला न करे। स्वस्थ कोशिकाओं को बचाने की प्रक्रिया से जुड़ी ब्रंको, राम्सडेल ओर साकागुची की खोज ऑटोइम्यून रोगों, डायबिटीज टाइप वन, स्क्लेरोसिस और कैंसर के इलाज की राह खोल सकती है। ये महत्वपूर्ण बायोलॉजिकल प्रक्रिया प्रतिरक्षा प्रणाली को हानिकारक आक्रमणकारियों और शरीर के अपने टिश्यू के बीच अंतर करने में मदद करती है, जिससे ऑटोइम्यून रोगों की रोकथाम होती है। इस खोज से शरीर की कार्यप्रणाली को नियंत्रण में रखने के एक नये तरीके का पता चला। चिकित्सा के लिए नोबेल विजेताओं का चयन स्वीडन के कैरोलिंस्का इंस्टीट्यूट मेडिकल यूनिवर्सिटी की नोबेल असेंबली द्वारा किया जाता है। संस्थान के थॉमस पर्लमैन ने कहा कि नियामक टी–सेल्स से जुड़े 200 से अधिक परीक्षण इंसानों पर चल रहे हैं, हालांकि, विशिष्ट उपचारों को अभी बाजार की स्वीकृति नहीं मिली है। प्रतिरक्षा प्रणाली में तमाम ओवरलेपिंग सिस्टम होते हैं, जो हानिकारक बैक्टीरिया, वायरस और अन्य तत्वों का पता लगाते हैं ओर उनसे लड़ते हैं। इनमें टी–सेल जैसे अहम प्रतिरक्षा योद्धाओं को हानिकारक तत्वों की पहचान करने का प्रशिक्षण मिला होता है। प्रशिक्षण के बावजूद यदि कुछ टी–सेल गड़बड़ हो जाते हैं तो उनसे ऑटोइम्यून रोगों का खतरा पैदा हो जाता है। इन विज्ञानियों की खोज से विज्ञानी खास रेगुलेटरी टी–सेल्स का उपयोग रोगों के उपचार में कर सकेंगे। इनसे टाइप–वन डायबिटीज या ल्यूपस जैसे रोगों को ठीक किया जा सकता है। अंग–प्रत्यारोपण के दौरान कभी–कभी शरीर नये अंग को खारिज कर देता है। ऐसे में इन रेगुलेटरी टी–सेल्स की मदद से हालात संभाले जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ कैंसर मामलों में ट्यूमर इन रेगुलेटरी टी–सेल्स में छिप जाते हैं ताकि इन पर प्रतिरक्षा सेल्स हमला न कर सकें। ऐसे में इन कैंसर सेल्स को ब्लॉक किया जा सकेगा, जिससे प्रतिरक्षा प्रणाली इनको नष्ट करके कैंसर से निजात दिला सकेगी।

मैरी ई. ब्रंको
(जन्म–1961, पोर्टलैंड, ओरिगन, अमेरिका)

फ्रेड रैम्सडेल
(जन्म–1960, एल्महर्स्ट, अलिनॉइस, अमेरिका)

साइमन साकागुची
(जन्म–1951, नागाहामा, भीगा, जापान)

**मैरी ई. ब्रंको का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 63 वर्षीय मैरी ई. ब्रंको का जन्म 1961 को पोर्टलैंड, ओरिगन, अमेरिका में हुआ था। मैरी एलिजाबेथ ब्रंको एक अमेरिकी आणविक जीवविज्ञानी और प्रतिरक्षा विज्ञानी हैं। उन्हें स्कर्फी माउस फेनोटाइप के कारण के रूप में बाद में FOXP3 नाम दिए गए जीन की सह–पहचान के लिए जाना जाता है, एक ऐसी खोज जो आधुनिक नियामक टी कोशिका जीव विज्ञान के लिए आधार बन गई। उन्होंने 1979 में पोर्टलैंड स्थित सेंट मैरीज अकादमी से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। ब्रंको ने 1983 में वाशिंगटन विश्वविद्यालय से आणविक एवं कोशिकीय जीव विज्ञान में विज्ञान स्नातक की उपाधि प्राप्त की और 1991 में प्रिंसटन विश्वविद्यालय से आणविक जीव विज्ञान में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। उनकी डॉक्टरेट सलाहकार शर्ली एम. टिलघमैन थीं। उनके डॉक्टरेट शोध प्रबंध का शीर्षक था: "ट्रांसजेनिक चूहों में H19 जीन की अभिव्यक्ति और कार्य"। ब्रंको ने सिएटल क्षेत्र में उद्योग अनुसंधान में काम किया, वाशिंगटन के बोथेल में सेलटेक आर एंड डी में, जहाँ उन्होंने और फ्रेड रामस्डेल ने FOXP3 पर अपना नोबेल पुरस्कार विजेता काम किया, और बाद में वह सिएटल में इंस्टीट्यूट फॉर सिस्टम्स बायोलॉजी में वरिष्ठ कार्यक्रम प्रबंधक बन गईं। ब्रंको 2001 के नेचर जेनेटिक्स पेपर के सह–लेखक हैं, जिसने स्कर्फी जीन उत्पाद की पहचान की थी, जिसे शुरू में स्कर्फिन कहा गया था और बाद में FOXP3 के रूप में जाना गया। इस शोध में चूहों में इसके विघटन को एक घातक लिम्फोप्रोलिफेरेटिव विकार से जोड़ा गया था। ब्रंको के सबसे अधिक उद्धृत कार्य ने स्कर्फी दोष को FOXP3 से जोड़ा और प्रदर्शित किया कि इस प्रतिलेखन कारक की हानि अनियंत्रित टी कोशिका सक्रियण और घातक लिम्फोप्रोलिफेरेशन को प्रेरित करती है, जिससे FOXP3 नियामक टी कोशिकाओं द्वारा मध्यस्थता वाली परिधीय प्रतिरक्षा सहिष्णुता के केंद्र में आ जाता है। FOXP3 की आनुवंशिक पहचान ने यह समझने के लिए एक आणविक आधार प्रदान किया कि प्रतिरक्षा प्रणाली थाइमस के बाहर आत्म–प्रतिक्रियाशीलता को कैसे नियंत्रित करती है और नियामक टी कोशिका विकास और कार्य पर व्यापक कार्य को उत्प्रेरित किया।[1,2,3]

**फ्रेड रैम्सडेल का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 64 वर्षीय अमेरिकी प्रतिरक्षा विज्ञानी फ्रेड रैम्सडेल का जन्म 04 दिसम्बर 1960 में एल्महर्स्ट, इलिनॉयस, अमेरिका, में हुआ। 2025 तक, वह सोनोमा बायोथेरेप्यूटिक्स में सलाहकार हैं, जो उनके द्वारा सह–स्थापित एक जैव प्रौद्योगिकी कंपनी है। 2025 में, उन्हें परिधीय सहिष्णुता पर उनके कार्य के लिए मैरी ई. ब्रंको और शिमोन साकागुची के साथ संयुक्त रूप से फिजियोलॉजी या मेडिसिन का नोबेल पुरस्कार दिया गया। चूंकि वह चार साल की यूजी शिक्षा के लिए बहुत गरीब थे, इसलिए रामस्डेल ने होमस्टेड हाई स्कूल (कैलिफोर्निया) से फुटहिल कॉलेज में दाखिला लिया और फिर कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, सैन डिएगो में स्थानांतरित हो गए। उन्होंने 1983 में यूसीएसडी से जैव रसायन और कोशिका जीव विज्ञान में एक प्रमुख के साथ विज्ञान स्नातक की डिग्री प्राप्त की। उसी वर्ष, उन्होंने डॉक्टरेट के छात्र के रूप में कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, लॉस एंजिल्स में प्रवेश लिया और सिडनी गोलब की सलाह के तहत माइक्रोबायोलॉजी और इम्यूनोलॉजी का अध्ययन किया, 1987 में पी–एच0डी0 प्राप्त की। 1990 के दशक में, वाशिंगटन के बोथेल स्थित सेलटेक में कार्यरत, रैम्सडेल और ब्रंको ने स्कर्फी नामक चूहों की एक प्रजाति का अध्ययन किया, जो गंभीर स्वप्रतिरक्षी रोग से ग्रस्त थी। उन्होंने इस लक्षण–प्ररूप के लिए उत्तरदायी उत्परिवर्तन की पहचान करने का प्रयास किया। X गुणसूत्र पर लगभग 20 संभावित जीनों वाले एक संभावित क्षेत्र की पहचान करने के बाद, उन्होंने एक पूर्व अज्ञात जीन में दो क्षार युग्मों के सम्मिलन की पहचान की, जिसे उन्होंने FOXP3 नाम दिया। 2001 में, हंस डी. ओच्स, रॉबर्ट वाइल्डिन और उनकी टीमों के सहयोग से, रैम्सडेल और ब्रंको ने प्रदर्शित किया कि मानव FOXP3 जीन में उत्परिवर्तन IPEX सिंड्रोम, एक दुर्लभ स्वप्रतिरक्षी रोग, में पाए जाते हैं। 2017 में, रैम्सडेल को शिमोन साकागुची और अलेक्जेंडर रुडेन्स्की के साथ पॉलीआर्थराइटिस पर शोध के लिए क्राफूर्ड पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उन्हें "नियामक टी कोशिकाओं से संबंधित उनकी खोजों के लिए सम्मानित किया गया, जो गठिया और अन्य स्वप्रतिरक्षी रोगों में हानिकारक प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं का प्रतिकार करती हैं।"[1,2,4]

**साइमन साकागुची का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 74 वर्षीय जापानी प्रतिरक्षा विज्ञानी साइमन साकागुची का जन्म 19 जनवरी 1951 में नागाहामा, भीगा, जापान, में हुआ। शिमोन साकागुची ओसाका विश्वविद्यालय के विशिष्ट प्रोफेसर और क्योटो विश्वविद्यालय के एमेरिटस प्रोफेसर हैं। उन्होंने 1976 में क्योटो विश्वविद्यालय के चिकित्सा संकाय से चिकित्सा की डिग्री प्राप्त की। 1982

में, उन्होंने क्योटो विश्वविद्यालय से ही पी–एच0डी0 की डिग्री भी प्राप्त की। साकागुची ने 1983 से 1987 तक ल्यूसिल पी. मार्के स्कॉलर के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका के जॉन्स हॉपकिन्स विश्वविद्यालय और स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में पोस्टडॉक्टरल शोध किया। बाद में, उन्होंने सिक्प्स रिसर्च इंस्टीट्यूट में इम्यूनोलॉजी विभाग में सहायक प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। 1991 में जापान लौटने के बाद, उन्होंने रिकेन में जापान विज्ञान और प्रौद्योगिकी एजेंसी के अन्वेषक के रूप में कार्य किया। बाद में, वे टोक्यो मेट्रोपॉलिटन इंस्टीट्यूट ऑफ जेरोन्टोलॉजी में इम्यूनोपैथोलॉजी विभाग के प्रमुख बने। 1998 से 2011 के बीच, उन्होंने क्योटो विश्वविद्यालय के फ्रंटियर मेडिकल साइंसेज संस्थान में प्रायोगिक पैथोलॉजी विभाग के प्रोफेसर और अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। 2007 से 2011 तक, उन्होंने संस्थान के निदेशक के रूप में भी कार्य किया। उनकी प्रयोगशाला 2011 में ओसाका विश्वविद्यालय में स्थानांतरित कर दी गई। साकागुची द्वारा प्राप्त पुरस्कारों में विलियम बी0 कूले अवार्ड(2004), किओ मेडिकल साइंस प्राइज(2008), मेडल ऑफ ऑनर विद पर्पल रिबन(2009), कनाडा गार्डनर इंटरनेशनल अवार्ड(2015), रॉबर्ट कोच प्राइज(2020), डेबरेकेन अवार्ड फॉर मॉलिक्यूलर मेडिसिन(2023) आदि प्रमुख हैं।[1,3,5]

नोबेल पुरस्कार देने वाली संस्था द्वारा बताया गया कि स्वीडन में तीनों चिकित्सा वैज्ञानिकों को सम्पूर्ण पुरस्कार राशि (11.1 मिलियन स्वीडिश क्रोनर या 11,71,938 यूएस डॉलर या करीब 10 करोड़ 36 लाख रुपये) का एक–तिहायी हिस्सा बराबर–बराबर प्राप्त होगा।[1,2]

2. **भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में**– वर्ष 2025 में भौतिक विज्ञान में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडेमी ऑफ साइंस द्वारा 07.10.2025(मंगलवार) को तीन भौतिकविदों अमेरिका के **जॉन क्लार्क, मिशेल एच. डेवोरेट और जॉन एम. मार्टिनिस** को संयुक्त रूप से डिजिटल क्रांति की जनक मानी जाने वाली क्वांटम मिकेनिक्स पर उनके उत्कृष्ट कार्य **"फॉर द डिस्कवरी ऑफ मैक्रोस्कोपिक क्वांटम मिकेनिकल टनेलिंग एण्ड एनर्जी इन एन इलेक्ट्रिक सर्किट"** पर दिये जाने की घोषणा की गयी। इन वैज्ञानिकों ने इलेक्ट्रिक सर्किट में बड़े पैमाने पर मैक्रोस्कोपिक क्वांटम टनेलिंग और ऊर्जा के स्तरों की खोज की थी। तीनों वैज्ञानिकों ने वर्ष 1984 और 1985 में कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी में एक खास प्रयोग किया। उन्होंने दो सुपरकंडक्टर से एक बिजली का सर्किट बनाया। इन दोनों सुपरकंडक्टरों के बीच में एक पतली परत थी, जो बिजली को रोकती थी। फिर भी, उन्होंने देखा कि सर्किट में उपस्थित सभी चार्ज किये हुए कण एक साथ मिलकर ऐसा व्यवहार करते थे, जैसे वे एक ही कण हों। ये कण उस पतली परत को पार कर दूसरी तरफ जा सकते थे, जो क्वांटम टनेलिंग का सबूत था। इस प्रयोग से वैज्ञानियों ने पाया कि क्वांटम टनेलिंग बड़े सिस्टम में कैसे काम करती है। यह खोज क्वांटम कम्प्यूटिंग और नई तकनीकों के लिए बहुत बड़ी बात है। इस खोज से भविष्य में क्वांटम कम्प्यूटिंग और नई तकनीकों को विकसित करने में मदद मिल सकती है। क्वांटम तकनीक सेमीकंडक्टर, कम्प्यूटर और माइक्रो चिप्स में उपयोग होती है। रॉयल स्वीडिश एकेडेमी ने कहा कि इन वैज्ञानिकों ने यह साबित किया कि क्वांटम इफेक्ट आम जनजीवन में भी देखे जा सकते हैं। दरअसल, भौतिकी में एक बनियादी सवाल यह रहा है कि क्या क्वांटम इफेक्ट, जो आमतौर पर परमाणु और कणों तक सीमित रहते हैं, बड़े पैमाने पर भी दिखाई दे सकते हैं। नोबेल विजेता क्लार्क ने कहा कि हम सभी सेलफोन के जरिये एक दूसरे से बात करते हैं और इसके पीछे क्वांटम मेकेनिक्स ही वजह है। उनके शोध कार्यों में पाया गया कि एक साथ जितने बड़े सिस्टम में भी टनेलिंग प्रक्रिया और क्वांटाइज्ड एनर्जी लेवल आकार ले सकता है। नोबेल भौतिकी कमेटी के अध्यक्ष ओले इरिक्सन ने पुरस्कार की घोषणा करते हुए कहा कि क्वांटम मेकेनिक्स समस्त डिजिटल तकनीक का आधार है।

जॉन क्लार्क
(जन्म–1942, कैम्ब्रिज, इंग्लैंड)

मिशेल एच. डोवोरेट
(जन्म–1953, पेरिस, फ्रांस)

जॉन एम. मार्टिनिस
(जन्म–1958, अमेरिका)

**जॉन क्लार्क का शैक्षणिक परिचय व प्राप्त सम्मान**– 83 वर्षीय **जॉन क्लार्क** का जन्म 10.02.1942 को कैम्ब्रिज, इंग्लैंड, में हुआ था। जॉन क्लार्क (जन्म 10 फरवरी 1942) एक ब्रिटिश प्रायोगिक भौतिक विज्ञानी और कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले में प्रोफेसर एमेरिटस हैं। वे अतिचालकता पर आधारित मापन उपकरणों पर अपने विभिन्न कार्यों के लिए जाने जाते हैं। स्टीवन गिर्विन ने क्लार्क को "अतिचालक इलेक्ट्रॉनिक्स का गॉडफादर" कहा है। 1980 के दशक में, क्लार्क ने एक शोध दल का नेतृत्व किया, जिसमें जॉन एम. मार्टिनिस और मिशेल डेवोरेट शामिल थे। जोसेफसन प्रभाव का उपयोग करके स्थूल क्वांटम परिघटनाओं में उनकी खोजों के लिए उन्हें 2025 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार मिला। जॉन क्लार्क का जन्म 10 फरवरी 1942 को कैम्ब्रिज, इंग्लैंड में हुआ था। उन्होंने क्राइस्ट कॉलेज, कैम्ब्रिज से प्राकृतिक विज्ञान की डिग्री लेने से पहले पर्स स्कूल में पढ़ाई की। उन्होंने 1964 में भौतिकी में स्नातक की उपाधि प्राप्त

की और फिर कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की रॉयल सोसाइटी मॉड प्रयोगशाला में भौतिकी में पी–एच.डी. की पढ़ाई की।

1965 में, क्लार्क नव स्थापित डार्विन कॉलेज, कैम्ब्रिज में प्रवेश लेने वाले पहले छात्रों में से एक बने और डार्विन कॉलेज छात्र संघ के पहले अध्यक्ष बने। अपने डॉक्टरेट कार्य के दौरान–जिसका पर्यवेक्षण ब्रायन पिपर्ड ने किया–क्लार्क ने एक अति संवेदनशील वोल्टमीटर विकसित किया, जिसे बाद में उन्होंने "SLUG" (सुपरकंडक्टिंग लो–इंडक्टेंस अनडुलेटरी गैल्वेनोमीटर) नाम दिया। उन्होंने 1968 में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। क्लार्क ने कई बार कहा है कि उनका काम नोबेल पुरस्कार विजेता ब्रायन जोसेफसन से प्रभावित था, जिन्होंने 1962 में जोसेफसन प्रभाव की भविष्यवाणी की थी और वह पिपर्ड के पूर्व छात्र भी थे। डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त करने के बाद, क्लार्क ने कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले में पोस्टडॉक्टरल शोध पद प्राप्त किया और उसके बाद अपने पूरे शैक्षणिक जीवन में बर्कले में सहायक प्रोफेसर (1969), एसोसिएट प्रोफेसर (1971) और भौतिकी के प्रोफेसर (1973–2010) के रूप में कार्य किया। 1969 में, क्लार्क लॉरेंस बर्कले राष्ट्रीय प्रयोगशाला में भी शामिल हुए और अंततः 2010 में पदार्थ विज्ञान प्रभाग में संकाय के वरिष्ठ वैज्ञानिक के रूप में सेवानिवृत्त हुए। संयुक्त राज्य अमेरिका जाने के बाद भी, क्लार्क का कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से जुड़ाव जारी रहा। 1972 में, उन्हें क्राइस्ट कॉलेज का फेलो चुना गया; 1989 में, वे क्लेयर हॉल, कैम्ब्रिज में विजिटिंग फेलो थे, और 1998 में चर्चिल कॉलेज, कैम्ब्रिज के बाय–फेलो चुने गए। क्लार्क को 2003 में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से डी.एस–सी. की उपाधि प्रदान की गई। उन्हें 1997 में क्राइस्ट कॉलेज का मानद फेलो और 2023 में डार्विन कॉलेज का मानद फेलो चुना गया। क्लार्क का शोध अतिचालकता और अतिचालक इलेक्ट्रॉनिक्स पर केंद्रित है, विशेष रूप से अतिचालक क्वांटम हस्तक्षेप उपकरणों (SQUIDs) के विकास और अनुप्रयोग में, जो चुंबकीय प्रवाह के अतिसंवेदनशील संसूचक हैं।

1985 में, क्लार्क, जॉन एम. मार्टिनिस (उनके पी–एच.डी. छात्र) और मिशेल डेवोरेट (उस समय एक पोस्टडॉक्टरल शोधकर्ता) ने जोसेफसन जंक्शन के क्वांटम व्यवहार का प्रदर्शन किया। उन्होंने दिखाया कि कम तापमान पर, अतिचालकों से जुड़ी एक स्थूल इलेक्ट्रॉनिक अवस्था शून्य वोल्टेज पर क्वांटम टनलिंग से गुजरती है। उसी वर्ष, सिस्टम के माइक्रोवेव पल्स भेजकर, अनुनादों ने क्वांटाइज्ड ऊर्जा स्तर दिखाए। यह प्रयोग सर्किट क्वांटम इलेक्ट्रोडायनामिक्स का पहला प्रमाण था, जो बाद में अतिचालक क्वांटम कंप्यूटिंग का आधार बना। यह कार्य, जिसे 2025 में भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया, का अधिकांश वित्तपोषण संयुक्त राज्य अमेरिका के ऊर्जा विभाग के बुनियादी ऊर्जा विज्ञान कार्यालय द्वारा किया गया था। क्लार्क ने डार्क मैटर के संभावित घटक, एक्सियन की खोज के लिए क्वांटम–शोर सीमित एम्पलीफायरों के रूप में कॉन्फिगर किए गए (SQUIDs) के अनुप्रयोग पर भी काम किया है। क्लार्क ने अल्फ्रेड पी. स्लोअन फेलोशिप (1970) और गुगेनहाइम फेलोशिप (1977) प्राप्त की। क्लार्क 1986 में रॉयल सोसाइटी के फेलो चुने गए। उन्हें 1998 में मापन विज्ञान में प्रगति के लिए जोसेफ एफ. कीथली पुरस्कार, 1999 में भौतिकी में कॉम्स्टॉक पुरस्कार, ह्यूजेस मेडल, और 2004 में ओली वी. लौनास्मा मेमोरियल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। मई 2012 में उन्हें राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी का विदेशी सहयोगी चुना गया। 2017 में उन्हें अमेरिकन फिलॉसॉफिकल सोसाइटी के लिए चुना गया। 2021 में, क्लार्क, मिशेल डेवोरेट और यासुनोबु नाकामुरा को संयुक्त रूप से मिसियस क्वांटम पुरस्कार प्रदान किया गया।[1,2,3]

**मिशेल एच. डेवोरेट का शैक्षणिक परिचय व प्राप्त सम्मान**– 71 वर्षीय मिशेल एच. डेवोरेट का जन्म 05.03.1953 को पेरिस, फ्रांस, में हुआ। मिशेल हेनरी डेवोरेट कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, सांता बारबरा में भौतिकी के प्रोफेसर हैं, और येल विश्वविद्यालय में एप्लाइड फिजिक्स के प्रोफेसर एमेरिटस हैं। मिशेल गूगल क्वांटम एआई में क्वांटम हार्डवेयर के मुख्य वैज्ञानिक के रूप में कार्य करते हैं। उन्हें विभिन्न सुपरकंडक्टिंग क्वांटम कंप्यूटिंग आर्किटेक्चर के विकास के लिए जाना जाता है, जिसमें क्वांट्रोनियम, ट्रांसमोन और फ्लक्सोनियम शामिल हैं। डेवोरेट ने 1975 में पेरिस के इकोले नेशनेल सुपीरियर डेस टेलीकम्युनिकेशंस (ENST, जिसे अब टेलीकॉम पेरिस के नाम से जाना जाता है) से दूरसंचार में इंजीनियरिंग की डिग्री हासिल की। उन्होंने ओरसे विश्वविद्यालय (वर्तमान पेरिस–सैक्ले विश्वविद्यालय) से क्वांटम ऑप्टिक्स में स्नातक डिप्लोमा (DEA) प्राप्त किया, इसके बाद 1982 में संघनित पदार्थ भौतिकी में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने नील एस. सुलिवन की देखरेख में, अनातोले अब्रागम के समूह में CEA सैक्ले में अपना डॉक्टरेट शोध किया। डेवोरेट ने 1982 से 1984 तक कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले में जॉन क्लार्क के समूह में पोस्टडॉक्टरल शोधकर्ता के रूप में काम किया। उस समय के स्नातक छात्र जॉन एम. मार्टिनिस के साथ, उन्होंने 1985 में पहली बार जोसेफसन जंक्शन के क्वांटाइज्ड ऊर्जा स्तरों का प्रदर्शन किया। इसके बाद डेवोरेट फ्रांस लौट आए और डैनियल एस्टेव, और क्रिस्टियन उर्बिना के साथ मिलकर सीईए सैक्ले की ओर्मे डेस मेरिजियर्स प्रयोगशाला में क्वांट्रोनिक्स समूह की स्थापना की। समूह ने सुरंग खोदने के पारगमन समय को मापा, एक इलेक्ट्रॉन पंप का आविष्कार किया, कूपर युग्मों के आवेश का प्रत्यक्ष अवलोकन किया, और क्वांट्रोनियम नामक एक प्रकार का क्वाबिट विकसित किया। उन्होंने क्वांट्रोनियम के रैमसे फ्रिंज का भी अवलोकन किया। 1996 में, डेवोरेट ने डेल्फ्ट यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी में हंस मूइज की प्रयोगशाला में शोध कार्य किया। डेवोरेट 2002 में येल विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बने। येल विश्वविद्यालय में, स्टीवन गिर्विन, रॉबर्ट जे. शोलकोफ और डेवोरेट ने एक प्रकार का अतिचालक आवेशित क्वाबिट विकसित किया, जिसे ट्रांसमोन कहा जाता है। 2009 में, डेवोरेट ने फ्लक्सोनियम का भी बीड़ा उठाया, जिसे एक विशेष प्रकार के फ्लक्स क्वाबिट के रूप में समझा जा सकता है। 2010 में, उन्होंने क्वाबिट रीडआउट और सेंसिंग के लिए एक माइक्रोवेव क्वांटम लिमिटेड एम्पलीफायर भी विकसित किया। उन्होंने 2018 में एक अतिचालक कृत्रिम परमाणु में क्वांटम जंप के रुकावट और उत्क्रमण को प्रदर्शित करने वाले एक प्रयोग में भी भाग लिया, जिससे क्वांटम मापन की गतिशीलता में नई

अंतर्दृष्टि प्राप्त हुई। 2007 से 2012 तक, मिशेल डेवोरेट ने कॉलेज डी फ्रांस में मेसोस्कोपिक भौतिकी के अध्यक्ष का पद संभाला, जहाँ उनके उद्घाटन व्याख्यान, "परमाणु से क्वांटम मशीनों तक," ने मौलिक क्वांटम घटनाओं और उभरती क्वांटम प्रौद्योगिकियों के बीच संबंध को चित्रित किया। उन्होंने 2013 में इस्तीफा दे दिया। 2014 में, डेवोरेट ने मार्टिनिस और शॉलकोफ के साथ फ्रिट्ज लंदन मेमोरियल पुरस्कार साझा किया। 2021 में, डेवोरेट, क्लार्क और नाकामुरा को संयुक्त रूप से मिसियस क्वांटम पुरस्कार प्रदान किया गया। 2016 में, डेवोरेट को ओली वी. लौनास्मा मेमोरियल पुरस्कार प्रदान किया गया। 2024 का भौतिकी का कॉम्स्टॉक पुरस्कार डेवोरेट और शॉलकोफ को प्रदान किया गया। 2025 में, डेवोरेट, क्लार्क और मार्टिनिस को विद्युत परिपथ में मैक्रोस्कोपिक क्वांटम मैकेनिकल टनलिंग और ऊर्जा क्वांटीकरण की संयुक्त खोज के लिए भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया।[1,2,7]

**जॉन एम. मार्टिनिस का शैक्षणिक परिचय व प्राप्त सम्मान**– 66 वर्षीय जॉन एम. मार्टिनिस का जन्म 1958 को अमेरिका में हुआ। जॉन मैथ्यू मार्टिनिस एक अमेरिकी भौतिक विज्ञानी और कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, सांता बारबरा में भौतिकी के प्रोफेसर हैं। उन्होंने यूसी सांता बारबरा और गूगल की साझेदारी वाली गूगल क्वांटम एआई लैब में एक सुपरकंडक्टिंग क्वांटम कंप्यूटर विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व किया। साइकैमोर प्रोसेसर के साथ, उन्होंने 2019 में क्वांटम वर्चस्व का पहला प्रमाण प्राप्त किया। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले से स्नातक होने के बाद, मार्टिनिस ने 1980 में भौतिकी में विज्ञान स्नातक और 1987 में भौतिकी में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। अपने डॉक्टरेट अध्ययन के दौरान, उन्होंने एक मैक्रोस्कोपिक चर, जोसेफसन टनल जंक्शन पर कलांतर, के क्वांटम व्यवहार की जाँच की। उनके डॉक्टरेट सलाहकार जॉन क्लार्क थे। इस दौरान, उन्होंने उस समय के पोस्टडॉक्टरल शोधकर्ता मिशेल डेवोरेट के साथ सहयोग किया। 1985 में, क्लार्क, डेवोरेट और मार्टिनिस ने माइक्रोवेव स्पंदों का अपना विश्लेषण प्रस्तुत किया, जिसने जोसेफसन जंक्शन के क्वांटाइज्ड ऊर्जा स्तरों को प्रदर्शित किया। यह कार्य बाद में अतिचालक क्वांटम कंप्यूटिंग का आधार बना। 2004 से, मार्टिनिस कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, सांता बारबरा के संकाय में कार्यरत हैं। उन्होंने कई वर्षों तक प्रायोगिक भौतिकी में सुसान और ब्रूवर्स्टर चेयर की उपाधि धारण की। यूसीएसबी के सहयोगियों के साथ मिलकर उन्होंने जो क्वांटम उपकरण विकसित किया, उसे साइंस पत्रिका ने 2010 का ब्रेकथ्रू ऑफ द ईयर नामित किया। यूसी सांता बारबरा और गूगल की साझेदारी वाली गूगल क्वांटम एआई लैब ने 2014 में घोषणा की कि उसने मार्टिनिस और उनकी टीम को सुपरकंडक्टिंग क्यूबिट्स का उपयोग करके एक क्वांटम कंप्यूटर बनाने के लिए करोड़ों डॉलर के सौदे में नियुक्त किया है। उन्होंने और उनकी टीम ने 2019 में नेचर में एक पेपर प्रकाशित किया, जिसमें उन्होंने प्रस्तुत किया कि कैसे उन्होंने 53–क्यूबिट क्वांटम प्रोसेसर, साइकैमोर प्रोसेसर का उपयोग करके पहली बार क्वांटम वर्चस्व हासिल किया। सलाहकार की भूमिका में पुनः नियुक्त किए जाने के बाद मार्टिनिस ने अप्रैल 2020 में गूगल से इस्तीफा दे दिया। 2020 में, मार्टिनिस सिलिकॉन क्वांटम कंप्यूटिंग में शामिल हो गए, जो प्रोफेसर मिशेल सिमंस द्वारा ऑस्ट्रेलिया में स्थापित एक स्टार्ट–अप है। 2014 में, उन्होंने मिशेल डेवोरेट और रॉबर्ट जे. शॉल्कोफ के साथ फ्रिट्ज लंदन मेमोरियल पुरस्कार साझा किया। 2021 में, उन्हें क्वांटम यांत्रिकी और उनके अनुप्रयोगों में मूलभूत मुद्दों पर शोध के लिए जॉन स्टीवर्ट बेल पुरस्कार मिला।[1,2,7,8]

**पुरस्कार राशि**– नोबेल पुरस्कार देने वाली संस्था द्वारा बताया गया कि 10 दिसम्बर, 2025 को स्वीडन में तीनों चिकित्सा वैज्ञानिकों को सम्पूर्ण पुरस्कार राशि (11.1 मिलियन स्वीडिश क्रोनर या 11,71,938 यूएस डॉलर या करीब 10 करोड़ 36 लाख रुपये) का एक–तिहायी हिस्सा हिस्सा बराबर–बराबर प्राप्त होगा।[1,2]

3. **रसायन विज्ञान के क्षेत्र में**– वर्ष 2025 में रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा स्वीडन में दिनांकः 08.10.2025 (बुधवार) को आणविक संरचना का एक नया रूप विकसित करने के लिए तीन रसायनविदों–क्योटो विश्वविद्यालय, जापान, के प्रोफेसर **सुसुमु कितागावा**, मेलबॉर्न विश्वविद्यालय, ऑस्ट्रेलिया के प्रोफेसर **रिचर्ड रॉबसन** तथा कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले, अमेरिका, के प्रोफेसर **उमर एम0 याघी** को उनके उत्कृष्ट शोध कार्य "**फॉर द डेवेलपमेंट ऑफ मेटल–आर्गेनिक फ्रेमवर्कस**" हेतु चुना गया। इनके द्वारा खोजी गयी संरचना से ऐसी सामग्री प्राप्त होगी, जो जलवायु परिवर्तन और स्वच्छ पानी की कमी जैसी चुनौतियों से निपटने में मदद कर सकती है। इन रसायविदों का कार्य पिछली सदी के नौवें दशक में रॉबसन द्वारा किये गये प्रयोगों से प्रारम्भ हुआ और लगभग 15 वर्षों की अवधि में धीरे–धीरे विकसित हुआ। तीनों नोबेल विजेताओं ने आणविक संरचनाएं बनाने पर काम किया, जिन्हें मेटल–ऑर्गेनिक फ्रेमवर्क (एम.ओ.एफ.) के रूप में जाना जाता है। इन संरचनाओं के भीतर बड़े खाली स्थान होते हैं, जिनसे गैसें और अन्य पदार्थ प्रवाहित हो सकते हैं। भीतर की संरचना किसी होटल के कमरों जैसी होती हैं, ताकि बाहरी अणु उस पदार्थ में प्रवेश कर सकें। इनका उपयोग शुष्क रेगिस्तानी हवा से पानी इकट्ठा करने, अपशिष्ट जल से विषैले रसायनों को अलग करने, कार्बन डाई ऑक्साइड को अवशोषित करने या विशाक्त गैसों का संग्रह करने के लिए किया जा सकता है। ये धातुएं नोड्स की तरह काम करती हैं और कार्बन युक्त अणुओं से जुड़ी होती हैं।

सुसुमु कितागावा
(जन्म–1957, क्योटो, जापान)

रिचर्ड रॉबसन
(जन्म–1937, ग्लुसबर्न, यू0के0)

उमर एम0 याघी
(जन्म–1965, अम्मान, जॉर्डन)

**सुसुमु कितागावा का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 74 वर्षीय सुसुमु कितागावा का जन्म 4 जुलाई, 1957 को क्योटो, जापान, में हुआ था। सुसुमु कितागावा, एफआरएस एक जापानी नोबेल पुरस्कार विजेता रसायनज्ञ हैं, जो समन्वय रसायन विज्ञान में विशेषज्ञता रखते हैं, जिसमें कार्बनिक–अकार्बनिक संकर यौगिकों और छिद्रपूर्ण समन्वय पॉलिमर के रासायनिक और भौतिक गुणों, विशेष रूप से धातु–कार्बनिक ढांचे पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। वह क्योटो विश्वविद्यालय के एकीकृत सेल–मटेरियल साइंसेज (आईसीईएमएस) संस्थान में प्रतिष्ठित प्रोफेसर हैं, जिसकी उन्होंने सह–स्थापना की थी। उन्होंने 1979 में क्योटो विश्वविद्यालय से हाइड्रोकार्बन रसायन विज्ञान में पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की, और उसी संस्थान से अपनी स्नातक की पढ़ाई पूरी की। उसी वर्ष, उन्हें किंडाई विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर नियुक्त किया गया, जहाँ उन्हें 1983 में व्याख्याता और 1988 में एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर पदोन्नत किया गया। 1992 में, वे टोक्यो मेट्रोपॉलिटन दिश्वविद्यालय में अकार्बनिक रसायन विज्ञान के प्रोफेसर बने। वे 1998 में सिंथेटिक रसायन विज्ञान और जैविक रसायन विज्ञान विभाग में अकार्बनिक कार्यात्मक रसायन विज्ञान के प्रोफेसर के रूप में क्योटो विश्वविद्यालय लौट आए। 2007 में, उन्होंने एकीकृत कोशिका–पदार्थ विज्ञान संस्थान की सह–स्थापना की, जहाँ वे संस्थापक उप निदेशक और फिर 2013 से 2023 तक निदेशक रहे। 2024 में, उन्हें क्योटो विश्वविद्यालय में अनुसंधान संवर्धन के लिए कार्यकारी उपाध्यक्ष नियुक्त किया गया। उनकी विदेशी शैक्षणिक नियुक्तियों में टेक्सास ए एंड एम विश्वविद्यालय में एफ. अल्बर्ट कॉटन के साथ पोस्टडॉक्टरल फेलोशिप (1986–1987) और सिटी यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क (1996) में अतिथि प्रोफेसर का पद शामिल है। उन्हें 2018 में म्यूनिख तकनीकी विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट की मानद उपाधि मिली। कितागावा ने 2011 से 2023 तक जापान की विज्ञान परिषद के सदस्य और सहयोगी सदस्य के रूप में कार्य किया। सुसुमु कितागावा द्वारा प्राप्त पुरस्कारों एवं सम्मानों में ह्म्बोल्ड्ट रिसर्च प्राइज (2008), थॉमसन रायटर्स साइटेशन लॉरिएट्स (2010), मेडल विद पर्पल रिबन (2011), डी जेननीज प्राइज (2013), जापान एकेडेमी प्राइज (2016) प्रमुख हैं।[1,2,7]

**रिचर्ड रॉबरान का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 88 वर्षीय रिचर्ड रॉबसन का जन्म 4 जून 1937 में ग्लुसबर्न, वैस्ट यॉर्कशायर, यू0के0 में हुआ था। उन्होंने ऑक्सफोर्ड के ब्रासेनोज कॉलेज में रसायन विज्ञान की पढ़ाई की, 1959 में बी.ए. और 1962 में डी.फिल. की उपाधि प्राप्त की। डायसन पेरिस प्रयोगशाला में जे.ए. बार्लट्रॉप की देखरेख में उनका डॉक्टरेट शोधकार्य, जो कार्बनिक अणुओं की प्रकाश रसायन विज्ञान पर केंद्रित था, सम्पन्न हुआ। उन्होंने 1966 में मेलबर्न विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान में व्याख्याता का पद स्वीकार करने से पहले, कैलिफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (1962–64) और स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय (1964–65) में पोस्टडॉक्टरल शोध किया, जहाँ वे अपने शेष करियर के लिए रहे। रिचर्ड रॉबसन, एफआरएस, एक अंग्रेजी और ऑस्ट्रेलियाई रसायनज्ञ और मेलबर्न विश्वविद्यालय में रसायन विज्ञान के प्रोफेसर हैं। रॉबसन समन्वय पॉलिमर, विशेष रूप से धातु–कार्बनिक ढांचे में विशेषज्ञ हैं। उन्हें "संक्रमण धातुओं से जुड़े क्रिस्टल इंजीनियरिंग में अग्रणी" के रूप में वर्णित किया गया है। रिचर्ड रॉबसन के अभूतपूर्व शोध ने समन्वय बहुलकों के क्षेत्र में, विशेष रूप से अनंत बहुलक ढाँचों के लिए, आधारभूत सिद्धांतों की स्थापना की। जिन्हें बाद में धातु–कार्बनिक ढाँचे (MOF) कहा गया। इस क्षेत्र में उनकी रुचि 1974 में तब जागृत हुई जब वे प्रथम वर्ष के रसायन विज्ञान व्याख्यानों के लिए क्रिस्टलीय संरचनाओं के विशाल लकड़ी के मॉडल बना रहे थे। 1990 के दशक में, रॉबसन ने समन्वय बहुलकों का एक नया वर्ग तैयार किया जिसने रसायन विज्ञान के संपूर्ण आधुनिक क्षेत्र का आधार बनाया। उनके अभिनव दृष्टिकोण में ताम्र (I) का उपयोग किया गया, जो चतुष्फलकीय ज्यामिति को बढ़ावा देता है, और इसे एक विशेष रूप से डिजाइन किए गए टेट्रानाइट्राइल कार्बनिक लिंकर के साथ संयोजित किया गया। इस विधि ने हीरे जैसी संरचना वाले क्रिस्टलीय ढाँचे का निर्माण किया, लेकिन ढाँचे के भीतर महत्वपूर्ण, इंजीनियरित रिक्त स्थान के साथ।

रॉबसन को 1998 में द रॉयल ऑस्ट्रेलियन केमिकल इंस्टीट्यूट के इनऑर्गेनिक डिवीजन से बरोज अवार्ड मिला और 2000 में उन्हें ऑस्ट्रेलियन एकेडमी ऑफ साइंस का फेलो चुना गया। उन्हें 2022 में रॉयल सोसाइटी का फेलो चुना गया।[1,3,8]

**उमर एम0 याघी का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 60 वर्षीय उमर एम0 याघी का जन्म 9 फरवरी 1965 को अम्मान, जोर्डन, में एक फिलिस्तीन रिफ्यूजी परिवार में हुआ था। 15 साल की उम्र में, अपने पिता के प्रोत्साहन से, वे संयुक्त राज्य अमेरिका चले गए। हालाँकि

उन्हें अंग्रेजी कम आती थी, फिर भी उन्होंने हडसन वैली कम्युनिटी कॉलेज में पढ़ाई शुरू की और बाद में अल्बानी स्थित स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क चले गए, जहाँ उन्होंने अपनी स्नातक की डिग्री पूरी की। उन्होंने अर्बाना–कैंपेन स्थित इलिनोइस विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की पढ़ाई की और 1990 में वाल्टर जी. क्लेम्परर के मार्गदर्शन में पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने रिचर्ड एच. होल्म के अधीन हार्वर्ड विश्वविद्यालय (1990–1992) में राष्ट्रीय विज्ञान फाउंडेशन के पोस्टडॉक्टोरल फेलो के रूप में कार्य किया। 2021 में, याघी को शाही फरमान द्वारा सऊदी नागरिकता प्रदान की गई। याघी ने अपने शैक्षणिक जीवन की शुरुआत एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी (1992–1998) में सहायक प्रोफेसर के रूप में की। इसके बाद उन्होंने मिशिगन विश्वविद्यालय (1999–2006) में रॉबर्ट डब्ल्यू. पैरी रसायन विज्ञान के प्रोफेसर के रूप में कार्यभार संभाला, उसके बाद उन्होंने कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, लॉस एंजिल्स (2007–2012) में क्रिस्टोफर एस. फूटे रसायन विज्ञान के प्रोफेसर और भौतिक विज्ञान में इरविंग एवं जीन स्टोन चेयर के रूप में कार्यभार संभाला।

2012 में, वे कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले चले गए, जहाँ वे जेम्स एवं नील्जे ट्रेटर रसायन विज्ञान के प्रोफेसर हैं। 2012 से 2013 तक, उन्होंने लॉरेंस बर्कले राष्ट्रीय प्रयोगशाला में आणविक फाउंड्री के निदेशक के रूप में कार्य किया। वे बर्कले ग्लोबल साइंस इंस्टीट्यूट के संस्थापक निदेशक और कावली एनर्जी नैनोसाइंसेज इंस्टीट्यूट के सह–निदेशक हैं, जो यूसी बर्कले और लॉरेंस बर्कले राष्ट्रीय प्रयोगशाला के बीच एक साझेदारी है। वह BASF द्वारा कैलिफोर्निया रिसर्च अलायंस और बकर इंस्टीट्यूट ऑफ डिजिटल मैटेरियल्स फॉर द प्लैनेट का सह–निर्देशन भी करते हैं। मई 2025 में, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के रीजेंट्स बोर्ड ने याघी को विश्वविद्यालय के प्रोफेसर के पद पर पदोन्नत किया, जो सर्वोच्च अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा वाले विद्वानों के लिए आरक्षित प्रणाली का सर्वोच्च सम्मान है। याघी रेटिकुलर केमिस्ट्री के अग्रणी हैं, जो एक ऐसा क्षेत्र है जो मजबूत बंधों का उपयोग करके आणविक निर्माण खंडों को खुले, क्रिस्टलीय ढांचे में संयोजित करने के लिए समर्पित है। अंतर्राष्ट्रीय बाल्जन पुरस्कार संस्थान के अनुसार, याघी ने पहली बार 1990 के दशक की शुरुआत में क्रिस्टलीय पदार्थ बनाने के लिए आणविक निर्माण खंडों और मजबूत बंधों का उपयोग करने का प्रस्ताव रखा था। उस समय, वैज्ञानिक समुदाय इस विचार को रासायनिक रूप से अव्यावहारिक मानता था, क्योंकि इस तरह के संश्लेषण से आमतौर पर अक्रिस्टलीय, अनाकार ठोस बनते थे। हालाँकि, 1995 में, याघी ने धातु–कार्बनिक संरचनाओं का सफलतापूर्वक क्रिस्टलीकरण किया, जिसमें धातु आयन कार्बोक्सिलेट जैसे आवेशित कार्बनिक संयोजकों द्वारा मजबूत बंधों के माध्यम से जुड़े होते हैं। इस सफलता ने धातु–कार्बनिक ढाँचे (MOF) नामक पदार्थों के एक नए वर्ग के विकास को जन्म दिया, जिसने जालीदार रसायन विज्ञान के जन्म को चिह्नित किया।

याघी को कई अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार और पदक मिले हैं, जिनमें रसायन विज्ञान में नोबेल पुरस्कार (2025), अल्बर्ट आइंस्टीन विश्व विज्ञान पुरस्कार (2017), रसायन विज्ञान में वुल्फ पुरस्कार (2018), ग्रेगोरी अमीनोफ पुरस्कार (2019), विनफ्यूचर पुरस्कार (2022) और साइंस फॉर द फ्यूचर अर्नेस्ट सोल्वे पुरस्कार (2024) शामिल हैं।[1,2,3]

10 दिसम्बर 2025, को स्वीडन में इन तीनों रसायनविदों को सम्पूर्ण पुरस्कार राशि (11.1 मिलियन स्वीडिश क्रोनर या 11,80,713 यूएस डॉलर या करीब 10 करोड़ 36 लाख रुपये) का बराबर–बराबर **एक तिहायी भाग** अर्थात् लगभग 3 करोड़ 45 लाख रूपये प्राप्त होंगे।[1,2]

4. **साहित्य के क्षेत्र में**– स्वीडिश केमिस्ट इंजीनियर उद्योगपति डायनामाइट की खोज करने वाले अल्फ्रेड नोबेल द्वारा नोबेल प्राइज फाउंडेशन की स्थापना 1985 में किए जाने के बाद वर्ष 1901 से पाँच कैटेगरी में नोबेल पुरस्कार दिए जाने की शुरूआत की गई थी। इसी क्रम में वर्ष 2025 का साहित्य में नोबेल पुरस्कार हंगरी के लेखक लास्लो क्रास्नाहोरकाई को दिये जाने की घोषणा स्वीडन के स्टॉकहोम में स्वीडिश नोबेल अकादमी द्वारा 09 अक्टूबर 2025 (गुरुवार) को की गयी। निर्णायक मंडल द्वारा हंगरी के लेखक लास्लो क्रास्नाहोरकाई को मध्य यूरोपीय परंपरा का महान लेखक बताया। नोबेल समिति ने उनके बारे में बताया कि उन्हें उनके सम्मोहक और दूरदर्शी लेखन के लिए चुना गया है, जो भय के बीच कला की ताकत को बताता है। कई–कई पृष्ठ तक चलने वाले लंबे–लंबे वाक्य लिखना उनके लेखन की खास शैली है। लास्लो क्रास्नाहोरकाई की पहली कृति सैंटानटैंगो और द मेलांकली ऑफ रेसिस्टेंस सहित कई कृतियों पर हंगेरियन निर्देशक बेला टार ने फिल्में बनायी हैं। नोबेल समिति के सदस्य स्टीव सेम–सैंडबर्ग ने कहा कि पुरस्कार के निर्णायकों ने उनकी कलात्मक दृष्टि की प्रशंसा की, जो पूरी तरह से भ्रम से मुक्त है। निर्णायकों की नजर में लास्लो क्रास्नाहोरकाई मध्य यूरोपीय परंपरा के एक महान महाकाव्य लेखक हैं। यह परंपरा फ्रांज काफ्का से लेकर थामस बर्नहार्ड तक फैली हुई हैं। लास्लो क्रास्नाहोरकाई कुछ समय से नोबेल पुरस्कार की दौड़ में थे। वह एक के बाद एक उत्कृष्ट किताबें लिखते रहे हैं। नोबेल समिति के सदस्य स्टीव सेम–सैंडबर्ग के अनुसार "क्रास्नाहोरकाई में अपनी साहित्यिक दुनिया को आपके सामने साकार करने की अद्भुत क्षमता है। मेरा तात्पर्य है कि आप अपने आस–पास घटित होने वाली प्रत्येक चीज के बीच में होते हैं और यह एक बड़ी खूबी है। बहुत कम लेखक ऐसा कर पाते हैं।" स्टीव ने उनके साहित्यिक योगदान को विशुद्ध उत्कृष्टता की आधी सदी करार दिया। लास्लो क्रास्नाहोरकाई वर्ष 2002 में इमरे केर्टेज के बाद साहित्य में नोबेल पुरस्कार विजेता दूसरे हंगरीवासी हैं।[1,3]

लास्लो क्रास्नाहोरकाई
(जन्म–1954, ग्यूल, हंगरी)

**लास्लो क्रास्नाहोरकाई का शैक्षणिक परिचय व प्राप्त सम्मान**– लास्लो क्रास्नाहोरकाई का जन्म 05 जनवरी, 1954 को रोमानिया की सीमा के पास हंगरी के दक्षिण–पूर्वी शहर ग्यूला में हुआ था। अपने सघन, दार्शनिक गद्य और आधुनिक जीवन के सर्वनाशकारी दृष्टिकोण के लिए जाने जाने वाले हंगेरियन उपन्यासकार और पटकथा लेखक, लास्लो क्रास्नाहोरकाई ने अपने पहले उपन्यास, सैटान्टैंगो (1985) से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाई। यह उपन्यास एक ढहते हुए गाँव में पतन और निराशा का एक भयावह चित्रण है, जिस पर बाद में बेला तार ने एक फिल्म बनाई। उनका लेखन अक्सर अराजकता, अलगाव और अस्थिर दुनिया में अर्थ की खोज की जांच–पड़ताल करता है। उनकी प्रशंसित कृतियों में "द मेलानकॉली ऑफ रेजिस्टेंस" (1989), "वॉर एंड वॉर" (1999), और "सियोबो देयर बिलो" (2008) शामिल हैं, जिसने सर्वश्रेष्ठ अनुवादित पुस्तक का पुरस्कार जीता। बेला टार के साथ उनके सहयोग, विशेष रूप से "वर्कमेस्टर हार्मोनीज" ने उनकी गहन, चिंतनशील कहानी कहने की कला को वैश्विक दर्शकों तक पहुँचाया। लास्लो क्रास्नाहोरकाई की शैली–जो लंबे, घुमावदार वाक्यों और गहन चिंतन से चिह्नित है, ने उन्हें यूरोप के सबसे चुनौतीपूर्ण और दूरदर्शी समकालीन लेखकों में से एक के रूप में ख्याति दिलाई है। द अटलांटिक के लिए लिखते हुए वॉल्ट हंटर ने कहा: " लास्लो क्रास्नाहोरकाई एक नोबेल पुरस्कार विजेता के लिए असामान्य रूप से प्रयोगात्मक हैं, लेकिन एक अस्थिर दुनिया में, उनका चयन बिल्कुल समयानुकूल लगता है।" उपन्यासकार हरि कुंजरू ने कहा, "लास्लो क्रास्नाहोरकाई इस पुरस्कार के सच्चे हकदार हैं। यूरोपीय उच्च संस्कृति के एक सादगीपूर्ण व्यक्तित्व के रूप में उनकी प्रतिष्ठा है, और वास्तव में उनकी कुछ रचनाएँ बेहद निराशाजनक और कठिन हैं, लेकिन वे एक जिज्ञासु, चंचल और बेहद मजेदार लेखक भी हैं।"[1,2,10]

**पुरस्कार राशि**– साहित्य में नोबेल पुरस्कार स्वीडिश एकेडेमी स्टॉकहोम स्वीडन द्वारा प्रदान किया जाता है। लास्लो क्रास्नाहोरकाई को 10 दिसंबर 2025 को नोबेल पुरस्कार की सम्पूर्ण राशि (11.1 मिलियन स्वीडि ा क्रोनर या 11,80,713 यूएस डॉलर या करीब 10 करोड़ 36 लाख रुपये) के साथ एक प्रतीक चिन्ह प्रदान किया जायेगा।[1,2]

5. **शांति के क्षेत्र में**– रूस–यूक्रेन युद्ध के बीच वर्ष 2025 में शांति के नोबेल पुरस्कार हेतु दिनांक 10.10.2025 (शुक्रवार) को नॉर्वीजियन नोबेल समिति, ओस्लो, नॉर्वे, की अध्यक्ष जोर्गेन वाटने फ्राइडनेस द्वारा वेनेजुएला में पिछले 20 वर्षों से तानाशाही के विरूद्ध लड़ रही लोकतंत्र समर्थक विपक्षी नेता **मारिया कोरिना मचाडो** को इस वर्ष के नोबेल शांति पुरस्कार के लिए चुना गया। फिलहाल मचाडो अपने देश मे सुरक्षा खतरों के चलते अर्जेंटीना में छिपकर रह रही हैं। पुरस्कार की घोषणा करने वाली नार्वे नोबेल कमेटी ने मचाडो को शांति का बहादुर और समर्पित चैंपियन बताया और कहा कि ये पुरस्कार उस महिला को दिया जा रहा है, जिन्होंने गहराते अंधकार के बीच लोकतंत्र की मशाल जलाए रखी है। वहीं, इस पुरस्कार के लिए अपनी दावेदारी पेश कर रहे अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के हाथ मायूसी लगी है। नोबेल समिति के महासचिव क्रिश्चियन बर्ग हर्पवीकेन ने मचाडो को फोन करके नोबेल पुरस्कार जीतने की जानकारी दी। नॉर्वीजियन नोबेल समिति, ओस्लो, नॉर्वे, की अध्यक्ष जोर्गेन वाटने फ्राइडनेस ने उम्मीद जताई कि इस सम्मान से वेनेजुएला में विपक्ष को ताकत मिलेगी और वे नई ऊर्जा के साथ शांतिपूर्ण तरीकों से तानाशाही को लोकतंत्र में परिवर्तित कर पाने में कामयाब होंगे। 58 वर्षीय इंडस्ट्रियल इंजीनियर मचाडो वेनेजुएला में काफी लोकप्रिय हैं। मचाडो ने शांति के नोबेल पुरस्कार हेतु चुने जाने पर अपनी प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि ये पुरस्कार मेरी नहीं, बल्कि आंदोलन की उपलब्धि है, जिसे हासिल करने में पूरा समाज जुटा हुआ है। वह नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाली दूसरी वेनेजुएलाई हैं, उनसे पहले बरुज बेनासेराफ थे, जिन्होंने 1980 में जीन डौसेट और जॉर्ज डेविस स्नेल के साथ फिजियोलॉजी या मेडिसिन में नोबेल पुरस्कार साझा किया था। अब तक 112 लोगों को इस पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। शांति के ये नोबेल पुरस्कार एकमात्र पुरस्कार है जिसकी घोषणा नार्वे की राजधानी ओस्लो में की जाती है और प्रत्येक वर्ष 25 दिसंबर को ओस्लो में ही प्रदान भी किये जाते हैं।[1,2]

मारिया कोरिना मचाडो
(जन्म–1967, कराकास वेनेजुएला)

**मारिया कोरिना मचाडो का शैक्षणिक परिचय व प्राप्त सम्मान**– मारिया कोरिना मचाडो का जन्म 07 अक्टूबर, 1967 को कराकास, वेनेजुएला में स्टील कारोबारी पिता के घर हुआ था। मचाडो ने वर्ष 1992 में कराकास में बच्चों की मदद के लिए एटेनिया फाउंडेशन की स्थापना की। वर्ष 2002 में, वह चुनावी निगरानी समूह, सुमाते की संस्थापकों में से एक थीं। मचाडो 2010 से 2014 तक वेनेजुएला की नेशनल असेंबली की निर्वाचित सदस्य रहीं, जब उन्हें निकोलस मादुरो की सरकार ने निष्कासित कर दिया था। वर्ष 2023 में, उन्होंने 2024 के वेनेजुएला राष्ट्रपति चुनाव के लिए अपनी उम्मीदवारी की घोषणा की, लेकिन उन्हें चुनाव लड़ने से रोक दिया गया और उन्होंने एडमंडो गोंजालेज की वैकल्पिक उम्मीदवारी का समर्थन किया। विपक्षी दल चुनाव का व्यवस्थित रूप से दस्तावेजीकरण और निगरानी करने के लिए लामबंद हो गए। उनके परिणामों में गोंजालेज को विजेता दिखाया गया, लेकिन मादुरो के प्रशासन ने उनकी जगह जीत की घोषणा कर दी। वेनेजुएला में लोकतंत्र आंदोलन की नेता के रूप में, मारिया कोरिना मचाडो हाल के दिनों में लैटिन अमेरिका में नागरिक साहस के सबसे असाधारण उदाहरणों में से एक हैं।

सुश्री मचाडो उस राजनीतिक विपक्ष में एक प्रमुख और एकजुट करने वाली शख्सियत रही हैं जो कभी गहराई से विभाजित था– एक ऐसा विपक्ष जिसने स्वतंत्र चुनाव और प्रतिनिधि सरकार की माँग में साझा आधार पाया। यही लोकतंत्र के मूल में निहित है: लोकप्रिय शासन के सिद्धांतों की रक्षा करने की हमारी साझा इच्छा, भले ही हम असहमत हों। ऐसे समय में जब लोकतंत्र खतरे में है, इस साझा आधार की रक्षा करना पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। वेनेजुएला एक अपेक्षाकृत लोकतांत्रिक और समृद्ध देश से एक क्रूर, सत्तावादी राज्य में बदल गया है जो अब मानवीय और आर्थिक संकट से जूझ रहा है। अधिकांश वेनेजुएलावासी घोर गरीबी में जी रहे हैं, जबकि शीर्ष पर बैठे कुछ लोग खुद को समृद्ध बना रहे हैं। राज्य की हिंसक मशीनरी देश के अपने ही नागरिकों के खिलाफ निर्देशित है। लगभग 80 लाख लोग देश छोड़ चुके हैं। चुनाव में धांधली, कानूनी अभियोजन और कारावास के माध्यम से विपक्ष को व्यवस्थित रूप से दबाया गया है।

वेनेजुएला का सत्तावादी शासन राजनीतिक कार्य को बेहद कठिन बना देता है। लोकतांत्रिक विकास के लिए समर्पित संगठन, सुमाते की संस्थापक के रूप में, सुश्री मचाडो ने 20 साल से भी पहले स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों के लिए आवाज उठाई थी। जैसा कि उन्होंने कहा था: "यह गोलियों की बजाय मतपत्रों का चुनाव था।" तब से राजनीतिक पद पर और संगठनों के प्रति अपनी सेवा में, सुश्री मचाडो ने न्यायिक स्वतंत्रता, मानवाधिकारों और जन प्रतिनिधित्व के लिए आवाज उठाई है। उन्होंने वेनेजुएला के लोगों की स्वतंत्रता के लिए वर्षों तक काम किया है। 2024 के चुनाव से पहले, सुश्री मचाडो विपक्ष की राष्ट्रपति पद की उम्मीदवार थीं, लेकिन शासन ने उनकी उम्मीदवारी रोक दी। इसके बाद उन्होंने चुनाव में एक अलग पार्टी के प्रतिनिधि, एडमंडो गोंजालेज उरुतिया का समर्थन किया। राजनीतिक विभाजनों से ऊपर उठकर लाखों स्वयंसेवक जुटे। पारदर्शी और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए उन्हें चुनाव पर्यवेक्षकों के रूप में प्रशिक्षित किया गया। उत्पीड़न, गिरफ्तारी और यातना के जोखिम के बावजूद, देश भर के नागरिकों ने मतदान केंद्रों पर नजर रखी। उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि शासन द्वारा मतपत्रों को नष्ट करने और परिणामों के बारे में झूठ बोलने से पहले अंतिम गणना का दस्तावेजीकरण कर लिया जाए।

चुनाव से पहले और उसके दौरान, सामूहिक विपक्ष के प्रयास अभिनव और साहसी, शांतिपूर्ण और लोकतांत्रिक थे। विपक्ष को अंतरराष्ट्रीय समर्थन तब मिला जब उसके नेताओं ने देश के चुनावी जिलों से एकत्रित मतों की गिनती को सार्वजनिक किया, जिसमें दिखाया गया कि विपक्ष ने स्पष्ट अंतर से जीत हासिल की है। लेकिन शासन ने चुनाव परिणाम को स्वीकार करने से इनकार कर दिया और सत्ता से चिपके रहे। अपने लंबे इतिहास में, नॉर्वेजियन नोबेल समिति ने उन बहादुर महिलाओं और पुरुषों को सम्मानित किया है जिन्होंने दमन का डटकर सामना किया है, जिन्होंने जेल की कोठरियों, सड़कों और सार्वजनिक चौराहों पर आजादी की उम्मीद जगाई है, और जिन्होंने अपने कार्यों से दिखाया है कि शांतिपूर्ण प्रतिरोध दुनिया को बदल सकता है। पिछले एक साल में, सुश्री मचाडो को छिपकर रहने के लिए मजबूर होना पड़ा है। अपनी जान को गंभीर खतरों के बावजूद, वह देश में ही रहीं, एक ऐसा फैसला जिसने लाखों लोगों को प्रेरित किया है।

जब सत्तावादी सत्ता हथिया लेते हैं, तो आजादी के उन साहसी रक्षकों को पहचानना जरूरी हो जाता है जो उठ खड़े होते हैं और प्रतिरोध

करते हैं। लोकतंत्र उन लोगों पर निर्भर करता है जो चुप रहने से इनकार करते हैं, जो गंभीर जोखिम के बावजूद आगे बढ़ने का साहस करते हैं, और जो हमें याद दिलाते हैं कि आजादी को कभी भी हल्के में नहीं लेना चाहिए, बल्कि हमेशा उसकी रक्षा करनी चाहिए – शब्दों से, साहस से और दृढ़ संकल्प से। मारिया कोरिना मचाडो, शांति पुरस्कार विजेता के चयन के लिए अल्फ्रेड नोबेल की वसीयत में उल्लिखित सभी तीन मानदंडों पर खरी उतरती हैं। उन्होंने अपने देश के विपक्ष को एकजुट किया है। वे वेनेजुएला के समाज के सैन्यीकरण का विरोध करने में कभी पीछे नहीं हटीं। वे लोकतंत्र में शांतिपूर्ण परिवर्तन के लिए अपने समर्थन में अडिग रही हैं। मारिया कोरिना मचाडो ने दिखाया है कि लोकतंत्र के साधन शांति के साधन भी हैं। वे एक अलग भविष्य की आशा की प्रतीक हैं, जहाँ नागरिकों के मौलिक अधिकार सुरक्षित हों और उनकी आवाज सुनी जाए। इस भविष्य में, लोग अंततः शांति से जीने के लिए स्वतंत्र होंगे।[1,2,11]

**पुरस्कार राशि**– 10 दिसम्बर, 2025 को नार्वे की राजधानी ओस्लो में नोबेल विजेता को सम्पूर्ण पुरस्कार राशि (11.1 मिलियन स्वीडिश क्रोनर या 11,80,713 यूएस डॉलर या करीब 10 करोड़ 36 लाख रुपये) व एक प्रतीक चिन्ह प्राप्त होगा।[1,2]

6. **अर्थशास्त्र के क्षेत्र में**–रॉयल स्वीडिश एकेडेमी ऑफ साइंसेज के मुख्य सचिव प्रोफेसर गोरान के0 हैनसन् ने स्टॉकहोम, स्वीडन, में अर्थशास्त्र के नोबेल पुरस्कार की घोषणा दिनांकः 12.10.2025 (सोमवार) को की। वर्ष 2025 में, अल्फ्रेड नोबेल की स्मृति में अर्थशास्त्र विज्ञान के लिए प्रदान किया जाने वाले सवेरिजेस रिक्सबैंक पुरस्कार हेतु तीन अर्थशास्त्रियों, नॉर्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी, यू0एस0ए0, के प्रोफेसर **जोएल मोकिर**, को उनके उत्कृष्ट कार्य **"तकनीकी प्रगति के माध्यम से सतत् विकास को आवश्यक शर्तों की पहचान के लिए"**, के लिए तथा लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एण्ड पॉलिटिकल साइंस, यू0के0, के प्रोफेसर **फिलिप अघियन** एवं ब्राउन यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर **पीटर होविट** को उनके संयुक्त उत्कृष्ट कार्य **"रचनात्मक सृजन के जरिये सतत् विकास के सिद्धांत के लिए"** हेतु चुना गया। पुरस्कार विजेताओं के शोध से पता चलता है कि नवाचार से कैसे आर्थिक विकास का रास्ता खुलता है। तकनीक तेजी से बदलती है और हम सभी पर असर डालती है। नवाचार ही आर्थिक प्रगति का इंजन है। नोबेल समिति के अध्यक्ष जॉन हेसलर ने विजेताओं की घोषणा करते हुए बताया कि इन अर्थशास्त्रियों ने दिखाया कि आर्थिक विकास को हल्के में नहीं लिया जा सकता है। हमें रचनात्मकता के मूल मंत्र को बनाये रखना होगा, ताकि हम फिर से गतिरोध में न फंस जायें। वर्ष 1992 में इन अर्थशास्त्रियों ने एक गणितीय मॉडल तैयार किया था, जिसे रचनात्मक विध्वंस कहा गया। इसके मुताबिक, बाजार में जब भी नया और बेहतर उत्पाद प्रवेश करता है तो कंपनियों के पुराने उत्पाद बिकना बंद हो जाते हैं। नवाचार नयेपन का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए इसे रचनात्मक कहा जाता है। हालांकि इसमें विध्वंस भी होता है क्योंकि जिस कंपनी की तकनीक पुरानी हो जाती है, वह प्रतिस्पर्धा में पिछड़ जाती है।

जोएल मोकिर
(जन्म–1946, लीडेन, नीदरलैंड्स)

फिलिप अघियन
(जन्म–1956, पेरिस, फ्रांस)

पीटर होविट
(जन्म–1946, गुएल्फ, कनाडा)

एपी के मुताबिक अघियन और होविट का मॉडल दिखाता है कि अनुसंधान और विकास (आर एण्ड डी) में निवेश कितना आवश्यक है। नये के आने और पुराने के समाप्त होने का सिलसिला कभी खत्म नहीं होता। जोएल मोकिर ने ऐतिहासिक स्रोतों के जरिये यह सिद्ध किया कि सतत् विकास कैसे न्यू नॉर्मल बन जाता है। उन्होंने दिखाया कि यदि नवाचारों को खुद से विकसित होने की प्रक्रिया में एक दूसरे से आगे बढ़ना है, तो हमें वैज्ञानिक आधार पर ये जानना होगा कि कोई चीज क्यों है और कैसे काम करती है। औद्योगिक क्रांति से पहले वैज्ञानिक स्पष्टीकरण अक्सर कम होते थे, जिससे नई खोजों को आगे बढ़ाना मुश्किल रहता था। उन्होंने जोर दिया कि समाज को भी नये विचारों को स्वीकार करने और परिवर्तन के लिए तैयार रहना होगा।[1,2]

**जोएल मोकिर का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 79 वर्षीय जोएल मोकिर का जन्म 26 जुलाई, 1946 को नीदरलैंड्स में हुआ था। उनका जन्म डच यहूदियों के एक परिवार में हुआ था जो प्रलय से बच गए थे। उनके पिता सॉलोमन मोक, एक सिविल सेवक, कैंसर से मर गए जब मोकिर एक वर्ष के थे। वह अपनी मां गुंडा मोक (नी जैकब्स) के साथ एक बच्चे के रूप में इजराइल में आ गए, और हाइफा में पले–बढ़े। उन्होंने 1968 में यरूशलेम के हिब्रू विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र और इतिहास में बी.ए. प्राप्त किया। फिर उन्होंने 1972 में येल विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.फिल. और 1974 में येल से अर्थशास्त्र में पी–एच.डी. प्राप्त की। उनके शोध प्रबंध का शीर्षक था निम्न

देशों में औद्योगिक विकास ओर ठहराव, 1800–1850। मोकिर 1972 और 1973 के बीच येल विश्वविद्यालय में कार्यवाहक प्रशिक्षक रहे और 1974 में नॉर्थवेस्टर्न विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर बने, जहाँ वे तब से कार्यरत हैं। वे प्रिंसटन इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ द वेस्टर्न वर्ल्ड (प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा प्रकाशित एक पुस्तक श्रृंखला) के प्रधान संपादक रहे हैं और जर्नल ऑफ इकोनॉमिक हिस्ट्री के सह–संपादक भी रहे हैं। वे 2002 से 2003 तक इकोनॉमिक हिस्ट्री एसोसिएशन के अध्यक्ष रहे। मोकिर ने 2016 में प्रकाशित अपनी पुस्तक "ए कल्चर ऑफ ग्रोथ: द ओरिजिन्स ऑफ द मॉडर्न इकोनॉमी" में औद्योगिक क्रांति के लिए अपनी व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं। इस पुस्तक को सकारात्मक समीक्षाएं मिली हैं। डिएड्रे मैकक्लोस्की ने इसे "एक शानदार किताब..." बताया है। यह लंबी है, लेकिन लगातार दिलचस्प, यहाँ तक कि रुचिकर भी है। यह पृष्ठ 337 तक रुचि बनाए रखती है... यह किताब समुद्र तट पर पढ़ने लायक नहीं है। लेकिन आप इसे पढ़कर यह प्रभावशाली ढंग से सीखेंगे कि हम आधुनिक दुनिया में इस मुकाम तक कैसे पहुँचे।" अपनी समीक्षा में, मैकक्लोस्की ने मोकिर की "नोबेल–योग्य आर्थिक वैज्ञानिक" के रूप में भी प्रशंसा की। नेचर में प्रकाशित एक समीक्षा में, ब्रैड डीलॉन्ग ने पाया कि हालाँकि वे औद्योगिक क्रांति के लिए अन्य व्याख्याओं के पक्षधर थे, "मुझे बहुत आश्चर्य नहीं होगा अगर मैं गलत भी होऊँ, और मोकिर का संक्षिप्त विवरण... सबसे व्यापक रूप से सही विश्लेषण निकला..."ए कल्चर ऑफ ग्रोथ" निश्चित रूप से मुझे पुनर्विचार करने पर मजबूर कर रहा है।"

मोकिर को 1996 में अमेरिकन एकेडमी ऑफ आर्ट्स एंड साइंसेज के लिए चुना गया था, और 2011 में इकोनॉमेट्रिक सोसाइटी का फेलो चुना गया था। उन्हें 2001 में रॉयल नीदरलैंड्स एकेडमी ऑफ आर्ट्स एंड साइंसेज का विदेशी सदस्य चुना गया, जिसका इतिहास के लिए द्विवार्षिक हेनेकेन पुरस्कार उन्हें 2006 में मिला। उन्होंने आर्थिक इतिहास के लिए 2015 बलजान अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार जीता। उन्हें 2025 में आर्थिक विज्ञान में नोबेल मेमोरियल पुरस्कार का आधा हिस्सा "तकनीकी प्रगति के माध्यम से निरंतर विकास के लिए आवश्यक शर्तों की पहचान करने" के लिए दिया गया, दूसरा आधा फिलिप अघियन और पीटर हॉविट को दिया गया।[1,2,12]

**फिलिप अघियन का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 69 वर्षीय फिलिप अघियन का जन्म 17 अगस्त, 1956 को पेरिस, फ्रांस में हुआ था। वह गैबी अघियन के बेटे हैं, जो एक फ्रांसीसी फैशन डिजाइनर और फ्रांसीसी फैशन हाउस क्लो के संस्थापक हैं। कहा जाता है कि गैबी ने प्रेट–ए–पोर्टर वाक्यांश गढ़ा था। उनके पिता, रेमंड अघियन की बुलेवार्ड सेंट–जर्मेन में एक आर्ट गैलरी थी। उनके माता–पिता दोनों मिस्र के अलेक्जेंड्रिया के यहूदी परिवारों से हैं। बाद में वे पेरिस चले गए, क्वार्टियर लैटिन में, और फिर न्यूली–सुर–सीन में एक घर खरीदा। एक साक्षात्कार में, अघियन ने याद किया कि वे कार्ल लेगरफेल्ड सहित कई कलाकारों के बीच पले–बढ़े थे। अघियन ने इकोले नॉर्मले सुप्रीयर डी कैचन (अब ईएनएस पेरिस–सैकले, पेरिस–सैकले विश्वविद्यालय) के गणित अनुभाग से स्नातक की उपाधि प्राप्त की, और यूनिवर्सिटी पेरिस आई पैंथियन–सोरबोन से गणितीय अर्थशास्त्र में डिप्लोमा डी एटयूड्स एप्रोफॉन्डीज और डॉक्टरेट डी ट्रोइसिएम चक्र (तीसरा चक्र डॉक्टरेट) प्राप्त किया। उन्होंने 1987 में हार्वर्ड विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में पी–एच0डी0 प्राप्त की। फिलिप मारियो अघियन, एक फ्रांसीसी अर्थशास्त्री हैं जो कॉलेज डी फ्रांस और INSEAD में प्रोफेसर हैं, और लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में विजिटिंग प्रोफेसर हैं। इससे पहले, वे यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन (1996–2002) में प्रोफेसर, एनफील्ड कॉलेज, ऑक्सफोर्ड (1992–1996) में आधिकारिक फेलो और मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (1987–1989) में सहायक प्रोफेसर थे। 2002 से 2015 तक, वे हार्वर्ड विश्वविद्यालय में रॉबर्ट सी. वैगनर अर्थशास्त्र के प्रोफेसर थे। 2025 में, उन्होंने "रचनात्मक विनाश के माध्यम से निरंतर विकास के सिद्धांत" के लिए पीटर हॉविट के साथ आर्थिक विज्ञान में नोबेल मेमोरियल पुरस्कार का आधा हिस्सा साझा किया।

अघियन द्वारा प्राप्त सम्मानों और पुरस्कारों में नाइट ऑफ द लेगियन ऑफ ऑनर(2012), ऑफिसर ऑफ द ऑर्डर नेशनल डु मेरिट (2018), पीटर हॉविट के साथ संयुक्त रूप से प्राप्त बीबीवीए फाउंडेशन फ्रंटियर्स ऑफ नॉलेज अवार्ड इन इकोनॉमिक्स (2019) तथा नोबेल मेमोरियल प्राइज इन इकोनॉमिक साइंसेज(2025) प्रमुख हैं।[1,2,13]

**पीटर होविट का शैक्षणिक परिचय एवं प्राप्त सम्मान**– 79 वर्षीय पीटर होविट का जन्म 31 मई 1946 को गुएल्फ, ओंटारियो, कनाडा, में हुआ था। उन्होंने 1968 में मैकगिल विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में बी.ए., 1969 में वेस्टर्न ओन्टेरियो विश्वविद्यालय से एम.ए. और 1973 में रॉबर्ट डब्ल्यू. क्लोवर के तहत नॉर्थवेस्टर्न विश्वविद्यालय से पी–एच0डी0 की उपाधि प्राप्त की। हॉविट अपनी पी–एच.डी. प्राप्त करने के बाद कनाडा लौट आए और 1972 से 1996 तक वेस्टर्न ओंटारियो विश्वविद्यालय में अध्यापन किया। वे 1996 में ओहायो स्टेट यूनिवर्सिटी में संकाय सदस्य बने और 2000 में ब्राउन विश्वविद्यालय में शामिल हुए, जहाँ वे तब से कार्यरत हैं। 2013 से, हॉविट ब्राउन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एमेरिटस हैं। अपने विश्वविद्यालय से जुड़ाव के अलावा, वे कनाडा के टोरंटो स्थित एक गैर–पक्षपाती थिंक टैंक, सी. डी. हॉवे इंस्टीट्यूट से भी लंबे समय से जुड़े हुए हैं। हॉविट ने 1986 से संस्थान के माध्यम से आर्थिक नीति पर रिपोर्ट प्रकाशित करना शुरू किया और 2011 से 2015 तक फेलो–इन–रेजिडेंस रहे। पीटर विल्किंसन हॉविट (जन्म 31 मई, 1946) एक कनाडाई अर्थशास्त्री और ब्राउन विश्वविद्यालय में सामाजिक विज्ञान के लिन क्रॉस्ट एमेरिटस प्रोफेसर हैं। उन्हें आधुनिक समष्टि अर्थशास्त्र में अंतर्जात विकास सिद्धांत और रचनात्मक विनाश की अवधारणा पर फिलिप अघियन के साथ उनके सहयोगात्मक कार्य के लिए जाना जाता है। 2025 में, हॉविट, अघियन और जोएल मोकिर को "रचनात्मक विनाश के माध्यम से निरंतर विकास के सिद्धांत" के लिए संयुक्त रूप से आर्थिक विज्ञान का नोबेल पुरस्कार दिया जाएगा। उन्होंने 1993–1994 में कनाडाई अर्थशास्त्र एसोसिएशन के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया और 1997–2000 की अवधि में जर्नल ऑफ मनी, क्रेडिट और बैंकिंग के संपादक थे।

होविट को 1992 में रॉयल सोसाइटी ऑफ कनाडा का फेलो चुना गया और 1994 में इकोनॉमेट्रिक सोसाइटी का। 2019 में, उन्हें और अधियन को अर्थशास्त्र, वित्त और प्रबंधन में बीबीवीए फाउंडेशन फ्रंटियर्स ऑफ नॉलेज अवार्ड मिला। होविट द्वारा कई उच्चस्तरीय पुस्तकें भी लिखी एवं संपादित की गयी हैं, जिनमें "द केनेसियन रिकवरी एण्ड एस्सेज"(1990, फिलिप एलेन), "द इम्प्लीकेशन्स ऑफ नॉलेज–बेस्ड ग्रोथ फॉर माइक्रो–इकोनॉमिक पॉलिसीज"(1996, यूनिवर्सिटीज ऑफ कैलगरी प्रेस), "इंडोजेनस ग्रोथ थ्योरी"(1998, एम0आई0टी0 प्रेस), "मनी, मार्केट्स एण्ड मेथड्स"(1999, एडवर्ड एल्गर), "द इकोनॉमिक्स ऑफ ग्रोथ"(2008, एम0आई0टी0 प्रेस) आदि प्रमुख हैं।[12,14]

**पुरस्कार राशि**– 10 दिसम्बर, 2025 को स्वीडन में नोबेल विजेताओं को सम्पूर्ण पुरस्कार राशि (11.1 मिलियन स्वीडिश क्रोनर या 11,80,713 यूएस डॉलर या करीब 10 करोड़ 36 लाख रुपये) का आधा भाग यानि लगभग 5 करोड़ 18 लाख जोएल मोकिर को तथा दूसरे आधे भाग का आधा–आधा हिस्सा यानि लगभग 2 करोड़ 68 लाख अधियन और होविट को बराबर–बराबर प्राप्त होगा।[1,2]

उल्लेखनीय है कि विश्व के सबसे बड़े एवं प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार (चिकित्सा, भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, साहित्य एवं अर्थशास्त्र) प्रत्येक वर्ष 10 दिसम्बर को प्रसिद्ध वैज्ञानिक अल्फ्रेड नोबेल की पुण्य तिथि (10 दिसम्बर, 1896) पर स्टॉकहोम, स्वीडन में तथा नोबेल शांति पुरस्कार ओस्लो, नॉर्वे में प्रदान किये जाते हैं।[1,2]

**References**


1- www.nobelprize.org
2- Daily Hindi News Paper-Dainik Bhaskar, Dainik Jagran, Amar Ujala, Hindustan, dated: 07-14 October, 2024
3- https://en.wikipedia.org/wiki/Mary_E._Brunkow
4- https://en.wikipedia.org/wiki/Fred_Ramsdell
5- https://en.wikipedia.org/wiki/Shimon_Sakaguchi
6- https://en.wikipedia.org/wiki/John_Clarke_(physicist)
7- https://en.wikipedia.org/wiki/Michel_Devoret
7a- https://en.wikipedia.org/wiki/John_M._Martinis
8- https://en.wikipedia.org/wiki/Richard_Robson_(chemist)
9- https://en.wikipedia.org/wiki/Omar_M._Yaghi
10- https://en.wikipedia.org/wiki/2025_Nobel_Prize_in_Literature
11- https://en.wikipedia.org/wiki/2025_Nobel_Peace_Prize
12- https://en.wikipedia.org/wiki/Joel_Mokyr
13- https://en.wikipedia.org/wiki/Philippe_Aghion
14- https://en.wikipedia.org/wiki/Peter_Howitt_(economist)

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 98-102
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.15
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# First Antarctica Gallery of the Country Established in Botanical Survey of India

Pratibha Gupta
Central Botanical Laboratory, Botanical Survey of India
Ministry of Environment, Forest and Climate Change, Government of India
Botanic Garden, Howrah- 711 103, West Bengal, India
drpratibha2024@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 28-11-2025**

**Abstract -** Antarctica is a coldest, driest place and fifth-largest continent in the world. The first Indian scientific expedition to Antarctica was launched in 1981 by the National Centre for Polar and Ocean Research (NCPOR) erstwhile National Centre for Antarctic and Ocean Research (NCAOR), Goa and made a compelling presence in the harshest and the coldest continent. Botanical Survey of India has also been part of the Indian Scientific Expedition to Antarctica (ISEA). BSI actively participated in 10 Indian Scientific Expedition to Antarctica (ISEA) since 1996 up to 2005 for Schirmacher Oasis - 2nd Indian Research Station i.e. Maitri. The 3rd Indian Research Station : Bharati at Antarctica from 2013 to till date. Lots of Schools, Colleges students, Faculty Members, Visitors, etc. are coming to visit BSI regularly for different purposes. They have shown keen interest to know about the Antarctica. As Antarctica is no men's land and common people cannot visit to this place. So keeping this view in mind in public interest BSI has taken this initiative to establish this Antarctica Gallery.

**Key words -** Antarctica, Gallery, Botanical Survey of India, Maitri, Bharati

# भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण में देश की पहली अंटार्कटिका दीर्घा स्थापित

प्रतिभा गुप्ता
केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार
वनस्पति उद्यान, हावड़ा–711 103, पश्चिम बंगाल, भारत
drpratibha2024@gmail.com

**सार–** अंटार्कटिका दुनियाँ का सबसे ठंडा, सूखा स्थान एवं पाँचवा सबसे बड़ा महाद्वीप है। अंटार्कटिका के लिये पहला भारतीय वैज्ञानिक अभियान 1981 में राष्ट्रीय ध्रुवीय एवं महासागर अनुसंधान केन्द्र (एन.सी.पी.ओ.आर.) पूर्व में राष्ट्रीय अंटार्कटिक एवं महासागर अनुसंधान केन्द्र (एन.सी.ए.ओ.आर.), गोवा द्वारा आरम्भ किया गया था और सबसे कठोर एवं सबसे ठंडे महाद्वीप में अपनी प्रभावशाली उपस्थिति दर्ज कराई थी। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण भी अंटार्कटिका के भारतीय वैज्ञानिक अभियान (आई.एस.ई.) की हिसा रहा है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण भी अंटार्कटिका के भारतीय वैज्ञानिक अभियान (आई.एस.ई.) की हिसा रहा है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण ने 1996 से 2005 तक शिरमाकर ओएसिस–दूसरे भारतीय अनुसंधान केन्द्र–मैत्री के लिये तथा 2013 से अभी तक तीसरे अनुसंधान केन्द्र : भारती, अंटार्कटिका के लिये 10 भारतीय वैज्ञानिक अभियानों में सक्रिय रूप से भाग लिया अंटार्कटिका में मनुष्यों का स्थायी वास नहीं है और आम लोग वहाँ नहीं जा सकते इसलिये जनहित में इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुये, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण ने इस अंटार्कटिका दीर्घा को स्थापित करने की पहल की।

**बीज शब्द–** अंटार्कटिका, दीर्घा, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, मैत्री, भारती

**1. परिचय–** अंटार्कटिका विश्व का सबसे ठंडा, शुष्क और तेज हवाओं वाला सबसे बड़ा महाद्वीप है[1]। यह दक्षिणी गोलार्द्ध में लगभग 1,42,43000 वर्ग कि.मी. क्षेत्र में फैला हुआ है। इसे "श्वेत महाद्वीप" के नाम से भी जाना जाता है। अंटार्कटिका शब्द ग्रीक शब्द "अंटार्कटिके" से लिया गया है जिसका अर्थ है "उत्तर के विपरीत" अर्थात् आर्कटिक के विपरीत[2]। यह अंटार्कटिक वृत्त के भीतर स्थित है और दक्षिणी महासागर से घिरा हुआ है। अंटार्कटिका वृत्त को पार करते समय जेम्स कुक ने अंटार्कटिका की खोज की थी (चित्र–1)।

विश्व की सबसे बड़ी महासागरीय धारा अंटार्कटिक परिध्रुवीय धारा, अंटार्कटिक महाद्वीप के चारों ओर बहती है। इसका 98 प्रतिशत भाग 25 करोड़ वर्ष पूर्व बनी मोटी बर्फ की चादरों से ढका है। शेष 02 प्रतिशत भाग बर्फ से मुक्त क्षेत्र अंटार्कटिका में प्रमुख अनुसंधान केन्द्र स्थापित किये गये है (चित्र–2)। यह ऐसा महाद्वीप है जहाँ निवास नहीं है। लगभग 17 करोड़ वर्ष से भी पहले अंटार्कटिका, भारत गोंडवाना का हिस्सा था एवं समय अंतराल में आगे चल कर सुपर महाद्वीप पैंजिया का भी हिस्सा था। पृथ्वी के अधोभूमिक भूभाग (टेक्टोनिक प्लेट) की गति के विचलन के कारण, महाद्वीप विभाजित हुये एवं नवीन महाद्वीपों का निर्माण हुआ और इस प्रकार अंटार्कटिका का निर्माण हुआ और

यह लगभग 2.5 करोड़ वर्ष पूर्व अपना वर्तमान स्थिति में पहुँचा। अंटार्कटिका में आम जनता का पहुँच पाना संभव नहीं है इसी कारण लोग अंटार्कटिका और वहाँ क्या–क्या वैज्ञानिक अध्ययन होते रहे हैं यह सब जानने के लिये बहुत उत्साहित एवं जिज्ञासू रहते हैं। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुये केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण में अंटार्कटिका दीर्घा की स्थापना की गयी। इसका मुख्य उद्देश्य लोगों को अंटार्कटिका के विषय में अवतग कराना एवं उनको जाकरुक करना है (**चित्र–10**) जिससे लोग ज्यादा से ज्यादा इसके विषय में जाने और अंटार्कटिका में ज्यादा से ज्यादा अनुसंधान कार्य को बढ़ावा मिल सके।

2. **अंटार्कटिका दीर्घा की स्थापना**– वर्तमान में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला डा. प्रतिभा गुप्ता तत्कालीन निदेशिका (स्वंय लेखिका) जो स्वयं 33वें अंटार्कटिका अभियान में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण से भाग लेने वाली प्रथम महिला वैज्ञानिक हैं के द्वारा स्थापित की गयी (**चित्र–3, 4**)। देश की प्रथम अंटार्कटिका दीर्घा का उद्घाटन प्रोफेसर दीपक कुमार कार, कुलपति, विद्यासागर विश्वविद्यालय द्वारा दिनांक 19.09.2025 को किया गया (**चित्र–5**)। कुलपति जी अंटार्कटिका दीर्घा देखकर मंत्र मुग्ध हो गये और उन्होंने इस दीर्घा की भूरि–भूरि प्रशंशा की। इस अंटार्कटिका दीर्घा के उद्घाटन समारोह को विभिन्न टीवी चैनलों और कोलकाता से प्रकाशित होने वाले अधिकांश हिन्दी, अंग्रेजी एवं बंगला के समाचार पत्रों में दीर्घा के विषय में विस्तृत विवरण प्रसारित/प्रकाशित किया गया। इस अंटार्कटिका दीर्घा का उद्देश्य भारत में अंटार्कटिका क्षेत्र के विभिन्न स्परुपों को दर्शाते हुये भा.व.स. द्वारा अंटार्कटिका पर किये गये अनुसंधान के उत्कृष्ट शोध कार्यों को दस्तावेजीकरण एवं जलवायु परिवर्तन के विषय में अवगत करना है। यहाँ भारतीय अनुसंधान केन्द्र : भारती का त्रि–आयामी मॉडल प्रस्तुत किया गया है (**चित्र–6,7,8,9**) तथा इस दीर्घा में अंटार्कटिका की यात्रा' अंटार्कटिका के विषय में महत्वपूर्ण तथ्य, वहाँ पर स्थित स्टेशन्स दक्षिण गंगोत्री, मैत्री एवं भारती तथा भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के वैज्ञानिकों द्वारा किये गये सर्वेक्षण एवं अध्ययन का विवरण, वहाँ पर उपस्थित हिमनद, हिमशैल, झीलें एवं जमी हुई झीलों के दृश्य एवं हवाई दृश्य। मैत्री, भारती स्टेशन एवं पानी के जहाज के अन्दर दृश्य, वहाँ पर पाये जाने वाली वनस्पतियाँ एवं जीवों के विषय में[4,5] उनके सर्वेक्षण के दृश्य, वहाँ की बर्फ बारी आरोरा, अंटार्कटिका की शाम, चन्द्रमा, वहाँ पर आवागमन के साधन, सामान स्थानांतरण के साधन विभिन्न प्रकार की बर्फ के दृश्य चट्टानों में तेज हवाओं के प्रभाव से बनी विभिन्न आकृतियों का भी दर्शाया गया एवं सूक्ष्मदर्शीय छाया चित्रों को भी दर्शाया गया है जो बहुत मन मोहक है और स्वयं ही लोगों को अपना और आकर्षित करती है और अंटार्कटिका का आभासी स्वरुप प्रदान करती हैं जिससे लोग सहज ही अंटार्कटिका के परिवेश की अनुभूति कर सकते है।

3. **अंटार्कटिका से जुड़े कुछ महत्वपुर्ण तथ्य**– अंटार्कटिका पृथ्वी का सबसे ठण्डा, शुष्क और हवा वाला ऐशिया, अफ्रीका, उत्तर अमेरिका एवं दक्षिण अमेरिका के बाद पाँचवा सबसे बड़ा महाद्वीप है। यहाँ औसत वार्षिक वर्षा केवल 200 मिमी. होती है। यहा श्वेत महाद्वीप वैज्ञानिक अनुसंधान का केन्द्र है एवं पेंगुइन, सील, आदि अनुठे जीवों का घर है। 1959 में हुई अंटार्कटिक संधि के तहत शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व और वैज्ञानिक अन्वेषणों के लिये समार्पित है तथा यह क्षेत्र सैन्य गतिविधियों से मुक्त है। सन् 1981 में भारत का पहला अंटार्कटिका वैज्ञानिक अभियान आरम्भ हुआ तब से भारत ध्रुवीय विज्ञान में अग्रिम रहा है। अंटार्कटिका में बर्फ की चादरें जलवायु परिवर्तन के कारण सिकुड़ रही है, जिससे यह क्षेत्र वैश्विक पर्यावरणीय चिंताओं का प्रतीक बन गया है। यहाँ सिर्फ शीतानुकूलित पौधे और जीव ही जीवित रह सकते हैं जैसे विभिन्न प्रकार के शैवाल, हरितोदभिद्र, शैवाक, पेंगुइन, सील, निमेटोड, टार्डोग्रेड, पिस्सु, इत्यादि।

दक्षिण गंगोत्री एवं मैत्री अनुसंधान केन्द्र स्थित भारतीय अनुसंधान केन्द्र में वैज्ञानिकों को विभिन्न विषयों तथा वातावरणीय विज्ञान, जैविक विज्ञान एवं पर्यावरणीय विज्ञान के क्षेत्र में अग्रणी अनुसंधान करने में सक्षम बनाया। अंटार्कटिका पृथ्वी का सबसे ठंडा स्थान है। पृथ्वी पर सबसे ठंडा प्राकृतिक तापमान सन् 1983 में अंटार्कटिका में रुसी वोस्तोके स्टेशन में –84.2 डिग्री सेल्सिस (219.6°F) दर्ज किया गया। सर्दियों में इसके आंतरिक भागों का कम से कम तापमान -80°C (-112°F) और 90°C (130°F) के बीच तथा गर्मियों में इनके तटों का अधिकतम तापमान 5°C (41°F) से 15°C (59°F) के बीच रहता है बर्फीलो सतह पर गिरने वाली पराबैंगनी प्रकाश की किरणें साधारणतः पूरी तरह से परावर्तित हो जाती है इस कारण अंटार्कटिका में सनबर्न होता है। अंटार्कटिका का पूर्वी भाग, पश्चिमी भाग की अपेक्षा अधिक ऊँचाई में स्थिति होने के कारण अपेक्षाकृत अधिक ठंडा है। इसका केन्द्रीय भाग हमेशा ठंडा एवं शुष्क रहता है। महाद्वीप के मध्य भाग में वर्षा की कमी के कारण वहाँ बर्फ बढ़ी हुई समय अवधि के लिये रहती हैं। महाद्वीप के तटीय भागों में भारी हिमपात सामान्य बात है जहाँ 48 घंटे में 1–22 मीटर हिमपात दर्ज किया गया। पृथ्वी के अक्षीय झुकाव के कारण अंटार्कटिका में दो ऋतुये होती है सर्दी एवं गर्मी। जिसकी हवाई 6–6 महीने होती है अर्थात् गर्मियों में 6 महीने का दिन और सर्दियों में 6 महीने का रात। क्योंकि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करते समय इस झुकाव के कारण अंटार्कटिका या तो सूर्य की ओर झुका रहता हे (ग्रीष्म ऋतु) जहाँ उसे निरंतर दिन का प्रकाश और अधिक प्रत्यक्ष सूर्य का प्रकाश होती हैं या सूर्य से दूर झुकाव रहता है (शीत ऋतु) जहाँ उसे निरंतर अंधकार और अप्रत्यक्ष सूर्य का प्रकाश प्राप्त होते हैं।

4. **अंटार्कटिका में पाये जाले वाले पादप एवं जीव**– अंटार्कटिका में वनस्पतियों की विविधता कम हैं केवल कुछ समूह की वनस्पतियाँ ही यहाँ पायी जाती है क्योंकि यहाँ तापमान नमी, वर्षा, आदि अत्यन्त कम है। यहाँ पर जीवाणु, सायनाजावाणु, सायनोप्रकेरियोट्स, शैवाल, हरितोदमिद् एवं शैवाक की प्रजातियाँ पाई जाती हैं जो अत्यधिक ठंडी परिस्थितियों में रह सकती हैं। अंटार्कटिका में कोई पेड़ या झाड़ियाँ नहीं हैं लेकिन फूल वाले पौधे डेंसचैम्प्सिया अंटार्कटिका ई. डेसव., जी पेएसी कुल का सदस्य एवं एक घास है और कैरियोफिलेसी कुल का कोलोबैंथस टेन्सिक (कुंथ) बार्टल. अंटार्कटिका में पाये जाते हैं। कुछ अंटार्कटिक द्वीप पतंगो, मक्खियों और मिडज के निवास स्थान हैं। पेंगुइन, स्कुआ स्नो पेट्रेल, अल्बाट्रॉस अंटार्कटिका में पाये जाते हैं एवं अत्यधिक ठंड में जीवित रह सकते हैं। समुद्री जीवन में व्हेल महली

सेफलोपोड्स, सील, क्रिल, इत्यादि पाये जाते हैं।

5. अंटार्कटिका में भारतीय अनुसंधान केन्द्र

5.1 **दक्षिण गंगोत्री**– अंटार्कटिका में भारत की पहला वैज्ञानिक अनुसंधान केन्द्र था जिसकी स्थापन भारतीय अंटार्कटिका कार्यक्रम के तहत सन् 1983 में की गयी यह स्टेशन 1989 में बर्फ में दबने लगा और 1990 में इसे छोड़ दिया गया। दक्षिण गंगोत्री के पश्चात् भारत ने मैत्री एवं भारती दो अनुसंधान स्टेशन स्थापित किये जो अभी तक पूर्ण रूप से क्रियाशील हैं। मैत्री शिरमाकर हिल्स (ओएसिस) एवं लार्सोमान हिल्स बर्फ रहित ओएसिस हैं जिनमें भारत के दो वैज्ञानिक वर्ष भर संचालित अंटार्कटिक अनुसंधान केन्द्र हैं। पूर्व दक्षिण

5.2 **मैत्री**– भारत का दूसरा भारतीय अनुसंधान केन्द्र मैत्री (70°45'52" दक्षिण एवं 11°044'03" पूर्व) 1988 में शिरमाकर ओएसिस के एक बर्फ मुक्त चटटानी क्षेत्र में अवस्थित है। भारतीय अनुसंधान केन्द्र मैत्री शिरमाकर के दक्षिण में स्थित मध्य द्रोणंग माउड क्षेत्र की सबसे बड़ी पर्वत श्रृखंलाओं में से एक के सिंह द्वार के रुप में कार्य करता है। यह तट से लगभग 100 किलोमीटर दूर, समुद्र तल से लगभग 50 मीटर की ऊँचाई पर स्थित एक अंतद्वीपीय केन्द्र है।

5.3 **भारती**– मैत्री से लगभग 3000 किलोमीटर पूर्व में, नया भारतीय अनुसंधान केन्द्र भारती (69°24.41' दक्षिण, 76°11.72' पूर्व) अंटार्कटिका में स्टोर्नीस प्रायद्वीप के पूर्व में थाला फियोर्ड एवं क्विल्टी खाड़ी के मध्य, समुद्र तक से लगभग 35 मीटर की ऊँचाई पर स्थापित है। भारतीय अंटार्कटिक कार्यक्रम द्वारा वर्ष पर वैज्ञानिक अनुसंधान को सुगम बनाने के लिये इस बहुत छोटे आकार के केन्द्र को 18 मार्च, 2012 को आरम्भ किया गया।

5.4 **ऑरोरा**– यह एक प्राकृतिक प्रकाश दर्शन का दृश्य है जो मुख्य रुप से आर्कटिक और अंटार्कटिक के आस–पास ध्रुवी क्षेत्रों में देखा जाता है यह एक प्राकृतिक प्रकाश है जो तब उत्पन्न होता है जब सूर्य से अवशोषित कण पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करते हैं और गैसीय परमाणुओं से टकराते हैं जिससे आकाश में रंगीन रोशनी उत्पन्न होती है। इसका रंग मुख्य रूप से हरा होता है लेकिन यह लाल, बैंगनी और नीले रंग में भी दिखाई दे सकते है। इसे उत्तरी गोलार्ध में उत्तरी रोशनी ऑरोरा (ऑरोरा बोरेलिस) एवं दक्षिणी गोलार्ध में दक्षिणी रोशनी (ऑरोरा ऑसट्रेलिस) कहा जाता है।

6. **निष्कर्ष**– अंटार्कटिका दीर्घा ध्रवीय जैव विविधता का समझाने के लिये एक ज्ञान केन्द्र के रूप में कार्य कर रही हैं। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण 1996 से अंटार्कटिका में भारतीय वैज्ञानिक अभायानों में सक्रिय रुप से भाग ले रहा है इस विरासत को आम जनता तक पहुँचाने के लिये उनको जागरुक करने के लिये जिससे आने वाले समय में विज्ञान के विद्धार्थियों एवं शोद्धार्थियों में अंटार्कटिका से संबंधित विवरण देने में इस दीर्घा का महत्वपूर्ण योगदान हो रहा है एवं सामान्य जन में अंटार्कटिका के विषय में लोगों को अभिरुचि एवं जानकारी वृद्धि हो रही है।

**आभार**– लेखिका भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कोलकाता के निदेशक के प्रति सुविधाएं प्रदान करने के लिये आभारी हैं। लेखिका पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के सचिव और एनसीपीओआर के निदेशक, डॉ. राहुल मोहन, मूल सुविधाओं हेतु कार्यक्रम निदेशक विज्ञान, डॉ. जावेद बेग, कार्यक्रम निदेशक, लॉजिस्टिक, एनसीपीओआर, गोवा एवं भारतीय अनुसंधान केन्द्र: भारती में अंटार्कटिका के भारतीय वैज्ञानिक अभियान के प्रभारी के प्रति भी आभारी हैं, जिन्होंने अभियान के दौरान (लॉजास्टिक) सहायता प्रदान की।

## References

1. National Geophysical Data Centre. National Satellite, Data and Information Service Archived from the original 13th June, 2006.
2. Hince, Bernadetle (2000). The Antarctic Dictionary. CSIRO Publishing, p6. ISBN-9780957747111.
3. Gupta, Pratibha 2014. Antarctica : An Adventurous and Memorable Journey. Vanaspati Vani Vol-23, 120-126.
4. Gupta, P. 2015. Biodiversity of Larsemann Hills, Antarctica. Climate Change : 174-183.
5. Gupta Pratibha 2016. Amazing Antarctica and its plant and animal diversity : a brief Introduction. Anusandhan 4(1):42-47.

चित्र–1: कैप्टन जेम्स कुक: अंटार्कटिका की परिक्रमा करने वाले पहले व्यक्ति– ब्रिटिश खोजकर्ता, नाविक, मानचित्रकार और रॉयल नेवी के कप्तान

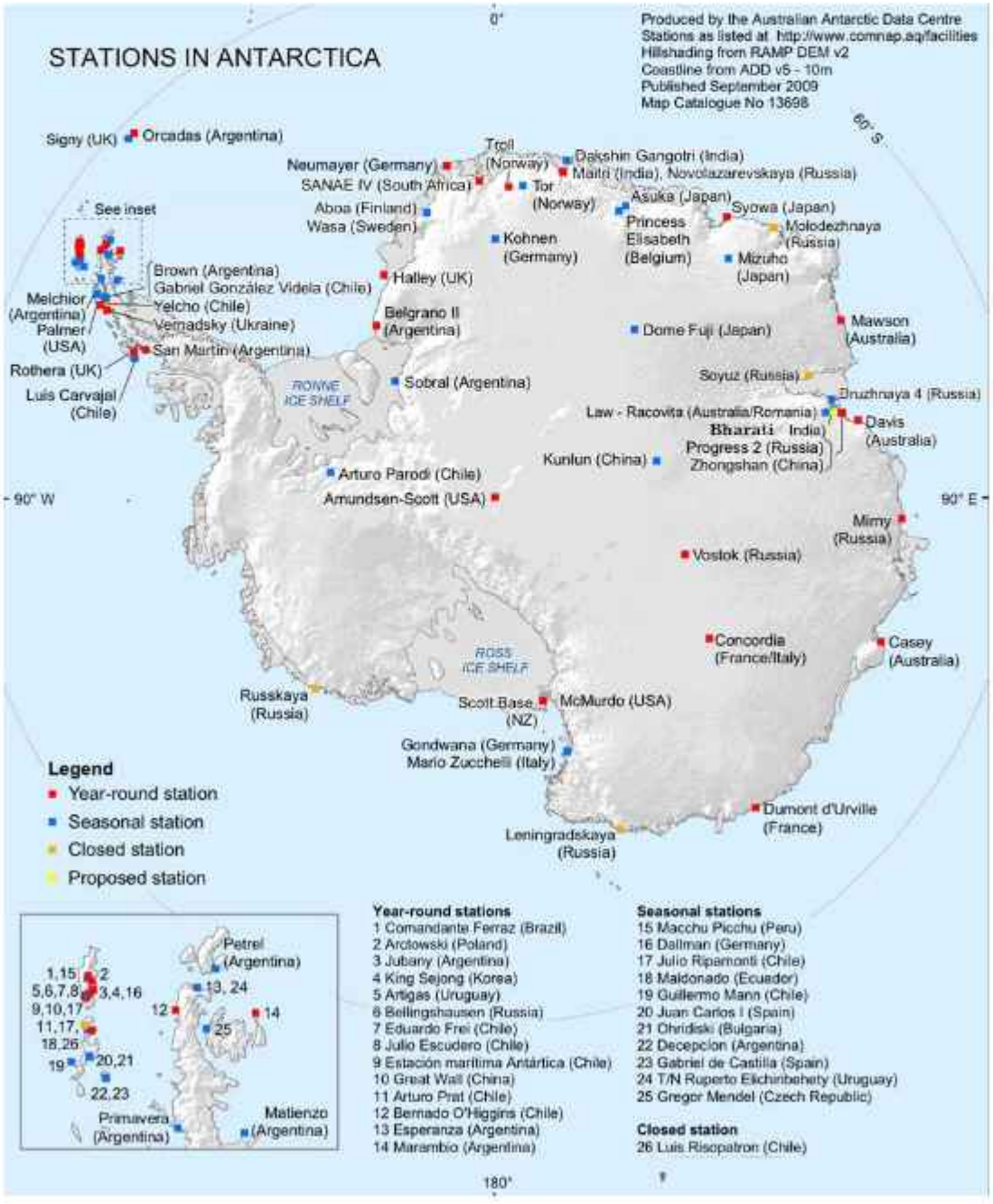

चित्र–3: अटार्कटिका दीर्घा का सामने का दृश्य

चित्र–4: अटार्कटिका दीर्घा का अंदरूनी दृश्य

चित्र–5: अटार्कटिका दीर्घा का उद्घाटन का दृश्य

चित्र–6: अटार्कटिका दीर्घा का अंदरूनी दृश्य

चित्र–7: अटार्कटिका दीर्घा का अंदरूनी दृश्य

चित्र–8: अटार्कटिका दीर्घा का अंदरूनी दृश्य

चित्र–9: अटार्कटिका दीर्घा का अंदरूनी दृश्य

चित्र–10: अंटार्कटिका दीर्घा का अवलोकन करते हुए एवं ज्ञान प्राप्त करते हुए विद्यार्थी

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 103-107
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.16
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Projects Flowing in the Rain: A Critical Study of Namami Gange and the National River Conservation Plan

A. K. Maurya[1] and Swatantra Kumar[2]
[1]Prem Chandra College, Soni, Ramaipur, Prayagraj-211 001, U.P., India
[2]Assistant Teacher, Katka, Jhunsi Prayagraj-211 001, U.P., India
thoughtoflearning@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 29-11-2025**

**Abstract-** This study provides a critical analysis of the actual progress and limitations of the Namami Gange and National River Conservation Programs implemented for river conservation in India. The problem of river pollution is exacerbated by increased rainwater flows, uncontrolled sewage, and industrial waste, resulting in many projects failing to meet their intended targets. While initiatives such as the construction of treatment plants, ghat development, and public participation are visible under the Namami Gange program, their impact remains unrealized, especially where local bodies lack adequate technical capacity. Similarly, the National River Conservation Plan achieved some improvement in its initial years, but its results were not sustained due to irregularities in financial allocation, weak monitoring mechanisms, and lack of departmental coordination. The study indicates that while the framework of the plans appears strong, practical difficulties in implementation make them vulnerable to the challenges of monsoon. This research adopts a qualitative approach, critically assessing the effectiveness of the plans based on a comparative review of previous research, analysis of relevant documents, and direct observations made on selected river banks.

**Key words-** Namami Gange Mission, National River Conservation Plan, river pollution, treatment plants, industrial waste, and sewage treatment plants (STPs)

# बरसात में बहती योजनायें : नमामि गंगे एवं राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना का आलोचनात्मक अध्ययन

अनिल कुमार मौर्य[1] एवं स्वतंत्र कुमार[2]
[1]प्रेम चन्द्र कॉलेज, सोनी, रमईपुर, प्रयागराज–211 001, उ0प्र0, भारत
[2]कटका, झूंसी, प्रयागराज–211 001, उ0प्र0
thoughtoflearning@gmail.com

**सार**– यह अध्ययन भारत में नदी संरक्षण के लिए लागू की गई नमामि गंगे एवं राष्ट्रीय नदी संरक्षण कार्यक्रमों की वास्तविक प्रगति और उनकी सीमाओं का समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वर्षा ऋतु में बढ़ते प्रवाह, अनियंत्रित सीवेज तथा औद्योगिक अपशिष्टों के कारण नदी प्रदूषण की समस्या और गंभीर हो जाती है, जिससे कई परियोजनाएँ अपने निर्धारित लक्ष्यों को पूरा नहीं कर पाती। नमामि गंगे कार्यक्रम के अंतर्गत शोधन संयंत्रों का निर्माण, घाट विकास और जन–सहभागिता जैसे कदम अवश्य दिखाई देते है परन्तु इन सबका प्रभाव अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पाता, खासकर वहाँ, जहाँ स्थानीय निकायों में तकनीकी क्षमता अभी पर्याप्त नहीं है। इसी प्रकार राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना ने प्रारम्भिक वर्षों में कुछ सुधार दर्ज किए लेकिन वित्तीय आवंटन की अनियमितता, निगरानी तंत्र की कमजोरी और विभागीय समन्वय की कमी के चलते इसके परिणाम स्थिर रूप से सामने नहीं आये। अध्ययन यह संकेत करता है कि योजनाओं का ढाँचा तो मजबूत दिखाई देता है, किन्तु क्रियान्वयन में मौजूद व्यावहारिक कठिनाइयाँ इन्हें बरसाती चुनौतियों के सामने कमजोर बना देती हैं। इस शोध में गुणात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है जिसमें पूर्व शोधों की तुलनात्मक समीक्षा एवं सम्बन्धित दस्तावेजों का विश्लेषण तथा चयनित नदी तटों पर किए गए प्रत्यक्ष अवलोकनों के आधार पर योजनाओं की प्रभावशीलता का आलोचनात्मक मूल्यांकन किया गया है।

**बीज शब्द**– नमामि गंगे मिशन, राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना, नदी प्रदूषण, शोधन संयंत्र, औद्योगिक अपशिष्ट, मलजल शोधन संयंत्र

**1. परिचय**– यह अध्ययन वस्तुतः भारत की नदी–नीतियों के व्यावहारिक स्वरूप और उनकी जटिलताओं की विवेचना का एक गंभीर प्रयास है। भारत की नदियाँ, विशेषकर गंगा, केवल भौगोलिक संरचनाएँ नहीं है, बल्कि वे सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन की धुरी की तरह कार्य करती आई हैं। हालांकि पिछले कुछ दशकों में बढ़ते शहरी विस्तार, औद्योगिक अपशिष्टों के अनियंत्रित प्रवाह और जल–प्रबंधन की कमियों ने नदियों को संकटपूर्ण अवस्था में ला दिया है। वर्षा ऋतु के आगमन पर यह संकट और भी प्रकट हो जाता है, जब नालों का अत्यधिक प्रवाह, अधूरा ड्रेनेज सिस्टम और अव्यवस्थित कचरा नदियों में सीधे मिलकर संरक्षण योजनाओं के प्रभाव को सीमित कर देते हैं।

भारत सरकार द्वारा आरम्भ की गई दो प्रमुख योजनाएँ; राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना (NRCP) और नमामि गंगे कार्यक्रम को, नदी प्रदूषण को नियंत्रित करने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास माना जा सकता है। राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना, जिसने 1980 के दशक के उत्तरार्ध में अपनी शुरुआत की, का उद्देश्य शहरी अपशिष्टों के उपचार के माध्यम से प्रदूषण के प्रमुख स्रोतों को नियंत्रित करना था। प्रारंभ में यह योजना कुछ शहरों में उपयोगी सिद्ध हुई, किन्तु इसके विस्तारित चरणों में कई कठिनाइयाँ सामने आईं। वित्तीय वितरण में विलंब, तकनीकी क्षमता की कमी, तथा स्थानीय संस्थाओं का पर्याप्त रूप से सक्रिय न होना, योजना के परिणामों को प्रभावित करते रहे। कई बार ऐसा प्रतीत हुआ कि योजना का ढाँचा चाहे मजबूत दिखाई पड़ता हो परन्तु क्रियान्वयन की वास्तविकता उससे भिन्न है। नमामि गंगे कार्यक्रम को सरकार ने एक अधिक व्यापक और आधुनिक दृष्टिकोण के साथ लागू किया। इसमें सीवेज शोधन संयंत्रों का नवीनीकरण, औद्योगिक इकाइयों पर निगरानी, घाटों का विकास और जन–सहभागिता को विशेष महत्त्व दिया गया है। लेकिन बरसात के समय अचानक बढ़ता प्रदूषण–भार और नदी प्रवाह में तीव्र परिवर्तन कई परियोजनाओं को समय पर पूरा होने से रोक देता है। कई स्थानों पर अधोसंरचना समय से पहले क्षतिग्रस्त हो जाती है या उसकी क्षमता मौसमीय दबाव सहने में सक्षम नहीं होती। इस वजह से योजना के अपेक्षित परिणामों और वास्तविक उपलब्धियों के बीच अंतर बना रहता है।

बरसात का मौसम नदी–प्रबंधन के लिए किसी कसौटी से कम नहीं होता। जिन क्षेत्रों में ड्रेनेज प्रणाली पहले से ही कमजोर है, वहाँ वर्षा के दौरान सीवेज नदियों में सीधे बहने लगता है। शोधन संयंत्र अपनी अधिकतम क्षमता पर काम नहीं कर पाते, कभी–कभी तो वे अस्थायी रूप से बंद भी करने पड़ते है। ऐसी परिस्थितियाँ यह प्रमाणित करती हैं कि केवल योजनाएँ बना देना पर्याप्त नहीं, बल्कि उन्हें मौसमीय परिस्थितियों और स्थानीय जरूरतों के अनुरूप सक्षम बनाना अत्यंत आवश्यक है। "बरसात में बहती योजनायें" वाक्यांश योजनाओं की उन खामियों की ओर संकेत करता है, जो वर्षा ऋतु में सबसे स्पष्ट रूप से सामने आती हैं। इस शोध का मुख्य उद्देश्य इन दोनों योजनाओं की वास्तविक उपलब्धियों, उनकी सीमाओं, तथा उन संरचनात्मक कारणों की पहचान करना है जिनकी वजह से वे बरसाती चुनौतियों के सामने कमजोर पड़ जाती हैं। यह शोध इस बात की जाँच करने का प्रयास भी करता है कि नीति–निर्माण और नीति–क्रियान्वयन के बीच का अंतर, नदी संरक्षण जैसे संवेदनशील विषय को किस प्रकार प्रभावित करता है।

2. अध्ययन के उद्देश्य

- नमामि गंगे मिशन योजना का आलोचनात्मक अध्ययन करना।
- राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना का आलोचनात्मक अध्ययन करना।

3. **नमामि गंगे मिशन**– गंगा को भारत की सभ्यता का आधार माना जाता है। एक ऐसी नदी जो धार्मिक आस्था, सांस्कृतिक निरंतरता और विशाल जनसमूह के जीवनयापन का प्रमुख स्रोत रही है। इसी महत्व को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2014 में केंद्र सरकार ने गंगा के संरक्षण और पुनरुद्धार के लिए 'नमामि गंगे' कार्यक्रम का आरंभ किया **(Ministry of Jal Shakti, 2023)**।[1] इसे एक व्यापक राष्ट्रीय मिशन के रूप में विकसित किया गया, जिसमें नदी की सफाई, प्रदूषण नियंत्रण, औद्योगिक अपशिष्ट प्रबंधन, घाटों का विकास, पर्यावरणीय प्रवाह, जैव–विविधता संरक्षण और जन–जागरूकता जैसे महत्वपूर्ण विषय शामिल किए गए। पूर्व में चलाए गए गंगा एक्शन प्लान की सीमाओं को देखते हुए इस परियोजना को अधिक वैज्ञानिक, संरचित और दीर्घकालिक दृष्टिकोण के साथ आगे बढ़ाया गया था। परियोजना के स्वरूप पर नजर डालें, तो यह स्पष्ट होता है कि नमामि गंगे केवल सीवेज उपचार तक सीमित नहीं है बल्कि इसके अंतर्गत नदी के संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र को पुनर्जीवित करने की अवधारणा शामिल की गई है। कार्यक्रम का संचालन राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन के माध्यम से किया जाता है जिसे विशेष कानूनी अधिकार दिए गए हैं ताकि केंद्र और राज्यों के बीच समन्वय सहजता से हो सके। इसके तहत नदी तटों की सफाई, सॉलिड–वेस्ट प्रबंधन, गंगा ग्राम का विकास, प्रदूषणकारी उद्योगों की निगरानी और विविध पर्यावरणीय अभियानों का संचालन किया गया। सीवेज शोधन संयंत्रों के निर्माण के लिए अपनाए गए नए वित्तीय मॉडल जिसमें ठेकेदारों को दीर्घकालिक जवाबदेही के आधार पर भुगतान होता है, को परियोजना की एक प्रमुख विशेषता माना गया है।

यदि उपलब्धियों पर दृष्टि डालें तो अनेक शहरों में सीवेज उपचार संयंत्रों के निर्माण में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। कानपुर, वाराणसी, पटना जैसे प्रमुख नगरों में घाटों का जीर्णोद्धार और शवदाह स्थलों का आधुनिकीकरण किया गया जिससे नदी में अपशिष्ट और अधजले अवशेषों की मात्रा कम हुई है। कुछ उद्योगों के अपशिष्ट प्रवाह पर नियंत्रण हेतु ऑनलाइन निगरानी प्रणाली लागू की गई जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष प्रदूषण में कमी आई है। कई स्थानों पर जैव–विविधता संरक्षण कार्यक्रमों की मदद से गंगा डॉल्फिन समेत कुछ जलीय जीवों की उपस्थिति में सुधार देखने को मिला है। **(Wildlife Institute of India] 2022)**[2] नदी तटों पर सफाई अभियान, वृक्षारोपण और धार्मिक संस्थाओं की भागीदारी ने भी जागरूकता बढ़ाने में भूमिका निभाई है। लेकिन इन सकारात्मक पहलुओं के साथ कई गंभीर कमियाँ भी सामने आती हैं। सबसे बड़ा प्रश्न नदी के प्राकृतिक प्रवाह का है। गंगा में मिलने वाला जल ही उसके आत्म–शुद्धिकरण की क्षमता का आधार है, परंतु ऊपरी क्षेत्रों में बने अनेक बांध और नहरें प्रवाह को बाधित करती हैं। यद्यपि पर्यावरणीय प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए दिशानिर्देश जारी किए गए हैं लेकिन वास्तविकता यह है कि कई स्थानों पर गर्मियों में पानी का स्तर अत्यंत कम रह जाता है। इससे न केवल प्रदूषकों की सांद्रता बढ़ती है, बल्कि शोधित पानी भी नदी को अपेक्षित स्तर तक स्वच्छ नहीं कर पाता।

भारतीय नदियों विशेषकर गंगा से जुड़ी धार्मिक मान्यताएँ कई बार नदी संरक्षण की योजनाओं के सामने अनजाने रूप में बाधाएँ भी उत्पन्न कर देती है। गंगा की पवित्रता पर गहरी आस्था होने के कारण कुछ लोग यह मान लेते हैं कि उसमें डाली गई पूजा सामग्री, फूल या राख से नदी की शुद्धता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता जबकि वास्तविकता इससे भिन्न होती है। त्योहारों और विशेष स्नान पर्वों के दौरान बड़ी संख्या में श्रद्धालुओं का नदी तटों पर एकत्र होना अपशिष्ट प्रबंधन को और कठिन बना देता है क्योंकि कई बार स्थानीय व्यवस्था इतनी सक्षम नहीं होती कि वह उस समय उत्पन्न होने वाले कचरे को नियंत्रित कर सके। मूर्ति विसर्जन और धार्मिक अवशेषों का जल में प्रवाह रासायनिक और जैविक प्रदूषण दोनों को बढ़ाता है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए जरूरी है कि धार्मिक नेताओं को संरक्षण प्रयासों में सक्रिय रूप से सम्मिलित किया जाये ताकि आस्था और पर्यावरणीय जिम्मेदारी के बीच संतुलन अधिक बेहतर बन सके। पूजा सामग्री के लिए पृथक संग्रह केंद्र पर्यावरण–अनुकूल मूर्तियों का प्रयोग तथा निर्धारित विसर्जन–स्थलों का निर्माण जैसे उपाय व्यवहारिक सिद्ध हो सकते है। साथ ही धार्मिक आयोजनों के लिए विशेष स्वच्छता प्रबंधन और समुदाय को यह समझाना अत्यंत आवश्यक है कि नदी की पवित्रता तभी बनी रह सकती है जब उसे प्रदूषण से बचाया जाए। कार्यान्वयन की दृष्टि से भी चुनौतियाँ कम नहीं हैं। अनेक परियोजनाएं मंजूर तो हुईं, लेकिन भूमि उपलब्धता, प्रशासनिक विलंब, तकनीकी त्रुटियों तथा ठेकेदारी प्रक्रियाओं की जटिलताओं के कारण समय पर पूरी नहीं हो सकीं **(Lok Sabha Secretariat] 2024)**।[4] कई शहरों में सीवेज शोधन संयंत्र तो तैयार हो गए, लेकिन उनसे जुड़ी सीवर लाइनें अधूरी हैं, जिसके कारण बड़ी मात्रा में गंदा पानी अब भी सीधे गंगा में गिरता है। यह स्थिति बताती है कि योजना निर्माण और अमल के बीच तालमेल की कमी एक प्रमुख बाधा है। पर्यावरणीय मानकों का मूल्यांकन करें, तो घुलित ऑक्सीजन और जैव–रासायनिक ऑक्सीजन मांग में कुछ क्षेत्रों में सुधार अवश्य दर्ज हुआ है, लेकिन मलजनित कोलिफॉर्म का स्तर आज भी चिंता का विषय है **(Central Pollution Control Board] 2024)**।[5] यह स्पष्ट संकेत देता है कि घरेलू कचरे, छोटे कस्बों और ग्रामीण क्षेत्रों से आने वाले अपशिष्ट, तथा कृषि में उपयोग होने वाले रसायन नदी को लगातार प्रदूषित कर रहे हैं। परियोजना का अधिक ध्यान बड़े शहरों की ओर रहा, जबकि असंगठित और बिखरे हुए प्रदूषण स्रोतों पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया गया।

सामाजिक भागीदारी की बात करें, तो 'गंगा प्रहरी' और अन्य जागरूकता अभियानों के माध्यम से कुछ प्रयास किए गए, परंतु नदी तटवर्ती समुदायों की भूमिका अभी भी सीमित है। नदी संरक्षण को एक जन–आंदोलन का रूप तभी दिया जा सकता है, जब स्थानीय लोगों, किसानों, मछुआरों और नदी पर निर्भर परिवारों को निर्णय प्रक्रिया में वास्तविक हिस्सेदारी मिले। इसके विपरीत, कई बार रिवरफ्रंट विकास केवल सौंदर्यीकरण तक सीमित रह जाता है, जिससे नदी के प्राकृतिक बाढ़–क्षेत्र और आर्द्रभूमियाँ प्रभावित होती हैं। यह पर्यावरणीय दृष्टि से नुकसानदायक है। इन सभी आयामों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि नमामि गंगे परियोजना ने गंगा संरक्षण को नई ऊर्जा और राष्ट्रीय महत्व दिया है तथा आधारभूत संरचना, तकनीकी नवाचार और प्रशासनिक सुधारों की दिशा में कुछ महत्वपूर्ण कदम भी उठाए गए हैं परंतु नदी का वास्तविक पुनर्जीवन केवल इंजीनियरिंग समाधान से संभव नहीं है। इसके लिए प्रवाह की निरंतरता, पारिस्थितिक संतुलन, स्थानीय समुदायों की भागीदारी, और खेत में रासायनिक प्रदूषण में कमी जैसे मुद्दों पर समान रूप से त्वरित और कड़े कदम उठाने होंगे।

4. **राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना**– भारत की नदियाँ केवल जलधाराएँ नहीं हैं, बल्कि वे हजारों वर्षों से सामाजिक, सांस्कृतिक और पारिस्थितिक जीवन का आधार रही हैं। किंतु तेजी से बढ़ते शहरी विस्तार, औद्योगिक इकाइयों और अनियंत्रित प्रदूषण ने इनको संकटग्रस्त बना दिया है। इसी पृष्ठभूमि में वर्ष 1995 में प्रारंभ की गई 'राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना (NRCP) भारतीय नदियों को प्रदूषणमुक्त करने का एक व्यापक सरकारी प्रयास माना जाता है। गंगा एक्शन प्लान से मिले सीमित अनुभवों और उसकी कमियों को देखते हुए इस योजना को पूरे देश की प्रमुख नदियों के लिए एक विस्तारित कार्यक्रम के रूप में लागू किया गया। आज यह जल शक्ति मंत्रालय के अंतर्गत संचालित होती है और विभिन्न राज्यों में दर्जनों नदियों पर कार्य कर रही है। लेकिन तीन दशकों की अवधि और बड़े पैमाने पर वित्तीय निवेश के बावजूद नदियों की वास्तविक स्थिति में अपेक्षित सुधार क्यों नहीं दिखता, इस प्रश्न पर आलोचनात्मक दृष्टि आवश्यक है।

NRCP का मूल उद्देश्य घरेलू एवं औद्योगिक अपशिष्ट जल को नदियों में प्रवेश से रोकना, उसे मोड़ना तथा वैज्ञानिक ढंग से उपचारित करना है। योजना की रणनीति मुख्यतः इंजीनियरिंग समाधानों पर आधारित रही है जिसमे नालों का इंटरसेप्शन, डायवर्जन, सीवेज शोधन संयंत्रों की स्थापना, रिवरफ्रंट विकास, वनीकरण और स्वच्छता अभियान जैसे घटक इसी दृष्टिकोण के उदाहरण हैं। प्रारंभ में यह पूर्णतः केंद्र द्वारा वित्त पोषित थी, किंतु बाद में इसे लागत–साझेदारी मॉडल में परिवर्तित किया गया, जिसमें अधिकांश राज्यों के लिए 60:40 तथा पूर्वोत्तर और पर्वतीय राज्यों के लिए 90:10 अनुपात निर्धारित है **(National River Conservation Directorate, 2010)**।[6] योजना के अंतर्गत गोदावरी, कावेरी, सतलज, साबरमती जैसी नदियों पर उल्लेखनीय कार्य किये गए और हजारों की क्षमता वाले एसटीपी विकसित किए गए। यद्यपि कागजी रूप से यह योजना विस्तृत तथा संगठित प्रतीत होती है परंतु गहन विश्लेषण कई गंभीर चुनौतियों को भी उजागर करता है। सबसे बड़ी समस्या शहरी सीवेज उत्पादन और उपचार क्षमता के बीच तेजी से बढ़ती खाई है। नगरों का विस्तार जिस दर से हो रहा है, उस गति पर किसी भी नदी संरक्षण कार्यक्रम के लिए उपचार क्षमता बढ़ाना कठिन हो जाता है। परिणामस्वरूप अनेक नगरों में उपलब्ध 'मलजल शोधन संयंत्र' (STP) कुल उत्पन्न अपशिष्ट का केवल एक भाग ही संभाल पाते हैं और शेष कच्चा मलजल सीधे नदियों में चला जाता है। यह स्थिति योजना के प्रमुख लक्ष्य को ही कमजोर बना देती है।

दूसरी बड़ी चुनौती है निर्मित अवसंरचना की परिचालन क्षगता। कई शहरों में एसटीपी समय पर बन तो गए किंतु स्थानीय निकायों की

सीमित वित्तीय स्थिति, नियमित बिजली आपूर्ति का अभाव और तकनीकी बाधाओं के कारण वे या तो बंद पड़े रहे या अपनी क्षमता से बहुत कम पर कार्य करते रहे। परिचालन एवं रखरखाव पर पर्याप्त धनराशि न खर्च किए जाने के कारण कई संयंत्र वर्षों में जर्जर स्थिति में पहुंच गए। प्रशासनिक स्तर पर भी इस योजना के सामने कई अवरोध रहे हैं। भूमि अधिग्रहण में देरी, राज्य और केंद्र के बीच समन्वय की कमी, उपयोग प्रमाण–पत्रों का समय पर प्रस्तुत न होना तथा विभिन्न संस्थाओं के बीच भूमिकाओं का अस्पष्ट होना आदि सभी तत्व परियोजनाओं के लंबित रहने और लागत बढ़ने का कारण बने (**Standing Committee on Water Resources, 2023**)।[3] यह दर्शाता है कि योजना ने निर्माण पर तो ध्यान दिया परंतु संचालन की निरंतरता पर उतनी गंभीरता नहीं दिखाई। जल–गुणवत्ता से जुड़े आंकड़ों का भी विश्लेषण चिंता उत्पन्न करता है। यद्यपि कई परियोजनाओं के बाद बीओडी स्तर में कमी दर्ज की गई परंतु फीकल कोलिफॉर्म जैसे बैक्टीरिया की उच्च मात्रा अनेक शहरों में अब भी पाई जाती है (**Central Pollution Control Board, 2022**)।[2] इसका मतलब है कि उपचार प्रक्रिया अधूरी है और कहीं–कहीं मानव मल अब भी नदी में पहुँच रहा है। इसके साथ ही, महानगरों पर केंद्रित प्रयासों के बीच छोटे कस्बों, ग्रामीण अंचलों, कृषि अपवाह, और खुले में शौच जैसे गैर–बिंदु स्रोतों पर पर्याप्त कार्य नहीं हो पाया जबकि नदी प्रदूषण में इसकी भागीदारी भी कम नहीं है। सीवर नेटवर्क का अभाव भी बड़ी बाधा है, कई स्थानों पर एसटीपी तो बन गए लेकिन सीवर लाइनें पूरी न होने के कारण उन तक गलजल पहुँच ही नहीं पाया।

इन सभी तथ्यों को समेटते हुए स्पष्ट है कि NRCP ने नदी प्रदूषण नियंत्रण के लिए आधारभूत संरचना अवश्य विकसित की है, परंतु इसकी उपलब्धियाँ इसकी महत्वाकांक्षाओं से काफी पीछे हैं। यदि भविष्य में भारतीय नदियों की स्थिति सुधारनी है, तो इंजीनियरिंग ढाँचे के विस्तार के साथ–साथ एक समग्र नदी–प्रणाली आधारित दृष्टिकोण पर कार्य करना होगा जहाँ संरक्षण को जलग्रहण क्षेत्र, बाढ़–मैदान, आर्द्रभूमि तथा जल प्रवाह आदि को समग्रता से देखा जाए।

5. **निष्कर्ष एवं सुझाव**– दोनों परियोजनाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारत में नदी संरक्षण के प्रयासों ने 'उपेक्षा' से 'सक्रियता' की ओर एक लंबी यात्रा तय की है, लेकिन परिणाम अभी भी मिश्रित हैं। 'निर्मल धारा' (सफाई) के लिए अरबों रुपये खर्च किए जा रहे हैं, लेकिन 'अविरल धारा' (प्रवाह) बाधित है। बांधों और नहरों के कारण पानी की कमी से प्रदूषकों का संकेंद्रण बढ़ जाता है, जिससे एसटीपी का शोधित जल भी नदी को साफ नहीं कर पाता। यद्यपि BOD स्तर में सुधार के दावे किए गए हैं, लेकिन फीकल कोलिफॉर्म (मलजनित बैक्टीरिया) का उच्च स्तर यह बताता है कि उपचार प्रक्रिया अधूरी है। साथ ही, कृषि अपवाह और ग्रामीण क्षेत्रों के 'गैर–बिंदु स्रोतों' (Non-point sources) को नियंत्रित करने में नीतियां अभी भी कमजोर हैं। जन–भागीदारी और रिवरफ्रंट विकास अक्सर 'सौंदर्यीकरण' और 'जागरूकता रैलियों' तक सीमित रह गए हैं। स्थानीय समुदायों को निर्णय प्रक्रिया में वास्तविक हिस्सेदार नहीं बनाया गया है और कंक्रीट के तटबंध नदी के बाढ़–क्षेत्रों (Floodplains) को नुकसान पहुंचा रहे हैं। भले ही भारत का संविधान साइंटिफिक टेम्परामेंट को बढ़ावा देने की बात करता हो किन्तु आस्था के नाम पर अभी भी पर्याप्त अप्रासंगिक रूढ़ियाँ एवं परम्पराएं जन–सामान्य में विद्यमान हैं। अध्ययन में उजागर समस्याओं के समाधान हेतु अनेक प्रयास किये जा सकते हैं जैसे–

- नदी को केवल एक जलधारा न मानकर एक 'जीवंत पारिस्थितिकी तंत्र' माना जाए। संरक्षण योजनाओं में जलग्रहण क्षेत्रों (Catchment Areas), आर्द्रभूमि (wetland) और बाढ़ के मैदानों का संरक्षण अनिवार्य रूप से शामिल होना चाहिए।
- प्रदूषण नियंत्रण के साथ–साथ नदी में न्यूनतम पर्यावरणीय प्रवाह सुनिश्चित करना होगा। बांधों से पानी छोड़ने की नीतियों की समीक्षा की जानी चाहिए ताकि नदी की अपनी 'स्वयं–शुद्धि' क्षमता जीवित रहे।
- केवल बड़े शहरों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय, छोटे कस्बों और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए विकेंद्रीकृत अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियां अपनानी होंगी। कृषि में रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैविक खेती को बढ़ावा देकर 'नॉन–पॉइंट प्रदूषण' को रोका जाना चाहिए।
- शोधित जल (Treated Water) को दोबारा नदी में बहाने के बजाय उसका उपयोग सिंचाई, औद्योगिक कार्यों या बागवानी में किया जाना चाहिए। इससे ताजे पानी की मांग घटेगी और नदी पर दबाव कम होगा।
- 'बनाओ और भूल जाओ' की नीति को त्यागकर NRCP और नमामि गंगे के तहत बनीं संपत्तियों के दीर्घकालिक रखरखाव के लिए कड़े वित्तीय और प्रशासनिक प्रावधान किए जाने चाहिए। हाइब्रिड एन्युइटी मॉडल (HAM) जैसे जवाबदेह मॉडलों का विस्तार अन्य नदियों पर भी किया जा सकता है।
- नदी संरक्षण को एक 'सरकारी प्रोजेक्ट' से बदलकर 'जन–आंदोलन' बनाना होगा। इसमें मछुआरों, किसानों और तटवर्ती निवासियों को नीति–निर्माण और निगरानी (Monitoring) में शामिल किया जाना चाहिए।

**References**


1. Ministry of Jal Shakti. (2023, December 19). Namami Gange Programme: Achievements and releases. Press Information Bureau. https://www.pib.gov.in/PressReleseDetailm.aspx?PRID=1982450
2. Wildlife Institute of India. (2022). NMCG-WII Ganga biodiversity conservation initiative phase II: Annual report 2021-2022. https://gyanganga.ai/admin//fileupload//NMCG_WII_Annual_report_2021_2022.pdf
3. Lok Sabha Secretariat. (2024). Review of Namami Gange Programme: Standing Committee on Water Resources

(2023-2024) (27th Report). Parliament of India. https://sansad.in/getFile/lsscommittee/Water%20Resources/17_Water_Resources_27.pdf?source=loksabhadocs

4. Central Pollution Control Board. (2024, May). Status report in the matter of OA No. 491 of 2024: Water quality of River Ganga. National Green Tribunal. https://www.greentribunal.gov.in/sites/default/files/news_updates/Status%20Report%20by%20CPCB%20in%20OA%20No.%20491%20of%202024%20titled%20as%20News%20item%20titled%20Ganga%20water%20unsafe%20even%20for%20bathing%20says%20Bihar%20Govt.%20report%20on%20river%20pollution.pdf
5. National River Conservation Directorate. (2010). Guidelines for National River Conservation Plan. Ministry of Environment and Forests. https://nrcd.nic.in/writereaddata/FileUpload/Guidelines_for_NRCP.pdf
6. Standing Committee on Water Resources. (2023). Review of pollution abatement projects in river basins (22nd Report). Lok Sabha Secretariat. https://sansad.in/getFile/lsscommittee/Water%20Resources/17_Water_Resources_22.pdf?source=loksabhadocs
7. Central Pollution Control Board. (2022). Polluted river stretches for restoration of water quality 2022. Ministry of Environment, Forest and Climate Change. https://cpcb.nic.in/openpdffile.php?id=TGF0ZXN0RmlsZXMvMzQ5XzE2Njk5ODAzMDVfUHJlc3NfUmVsZWFzZV9Qb2xsdXRlZF9SaXZlcl9TdHJldGNoZXMucGRm

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 108-112
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.17
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Primary Teachers Teaching Effectiveness and Digital Technology Integration in the Context of the New Education Policy 2020: A Conceptual Analysis

Sweta Kumari Sinha
Department of Education, Lucknow University, Lucknow-226 007, UP, India
swetasrivastava1073@gmail.com

**Received: 30-09-2025, Accepted: 02-12-2025**

**Abstract**- The National Education Policy 2020 has brought about a major transformation in the field of Indian primary education. Its primary objective is to promote quality and innovation in education, with a special emphasis on the role of digital technology. This paper is a conceptual study that deeply explores how primary teachers can make their teaching more effective by using digital tools, e-content, and modern technological strategies. This study demonstrates that the role of the teacher has changed in the current scenario. They are no longer merely a "traditional knowledge imparter," but have become a "digital mentor" and a guide for developing 21st-century skills. The research also analyzes the principles of technology integration, the TPACK model, teachers' competencies, and the practical challenges they face. In conclusion, this paper underlines that the appropriate and balanced use of technology can enliven the classroom environment and improve student learning. Finally, this conceptual model suggests that the actual success of NEP 2020 depends largely on how effectively we integrate digital technology with teaching effectiveness.

**Key words**- New Education Policy 2020, digital technology integration, primary teachers, teaching effectiveness, online teaching, conceptual analysis

# नई शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता और डिजिटल तकनीक एकीकरण एक अवधारणात्मक विश्लेषण

श्वेता कुमारी सिन्हा
शिक्षा शास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
swetasrivastava1073@gmail.com

**सार**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ा बदलाव लेकर आई है। इसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा में गुणवत्ता और नवाचार को बढ़ावा देना है, जिसमें डिजिटल तकनीक की भूमिका पर विशेष जोर दिया गया है। प्रस्तुत शोधपत्र एक अवधारणात्मक अध्ययन है, जो इस बात की गहराई से पड़ताल करता है कि प्राथमिक स्तर के शिक्षक किस प्रकार डिजिटल उपकरणों, ई कंटेंट और आधुनिक तकनीकी रणनीतियों का उपयोग करके अपने शिक्षण को और अधिक प्रभावी बना सकते हैं। यह अध्ययन दर्शाता है कि वर्तमान परिदृश्य में शिक्षक की भूमिका अब बदल चुकी है। वह अब केवल "पारंपरिक ज्ञान देने वाला" शिक्षक नहीं रहा, बल्कि एक डिजिटल मेंटर और 21वीं सदी के कौशल विकसित करने वाला मार्गदर्शक बन गया है। शोध में तकनीकी एकीकरण के सिद्धांतों, शिक्षकों की दक्षताओं और उनके सामने आने वाली व्यावहारिक चुनौतियों का भी विश्लेषण किया गया है। निष्कर्षतः, यह पत्र रेखांकित करता है कि तकनीक का सही और संतुलित उपयोग कक्षा के माहौल को सजीव बना सकता है और छात्रों के सीखने के स्तर को सुधार सकता है। अंत में, यह अवधारणात्मक मॉडल सुझाव देता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की वास्तविक सफलता काफी हद तक इस बात पर निर्भर करती है कि हम शिक्षण प्रभावशीलता के साथ डिजिटल तकनीक का तालमेल कितनी कुशलता से बिठाते हैं।

**बीज शब्द**– नई शिक्षा नीति 2020 डिजिटल तकनीक एकीकरण, प्राथमिक शिक्षक, शिक्षण प्रभावशीलता, ऑनलाइन शिक्षण, अवधारणात्मक विश्लेषण

**1. परिचय**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा व्यवस्था के इतिहास में एक निर्णायक मोड़ है। यह नीति केवल दस्तावेजों तक सीमित न रहकर व्यापक बदलाव का एक खाका प्रस्तुत करती है, जिसके केंद्र में हमारी प्राथमिक शिक्षा है। आज 21वीं सदी के शिक्षण अधिगम परिवेश में तकनीक की घुसपैठ ने यह स्पष्ट कर दिया है कि शिक्षा की गुणवत्ता अब काफी हद तक आधुनिक शिक्षण पद्धतियों और डिजिटल दक्षता पर निर्भर करती है। इस बदलते परिदृश्य में, प्राथमिक शिक्षक की भूमिका अब केवल सूचना देने वाले की नहीं रही, बल्कि वे अब तकनीक के माध्यम से सीखने का अनुकूल वातावरण बनाने वाले सुगमकर्ता बन गए हैं। इस अध्ययन का मूल उद्देश्य इसी बदलाव की गहराई में जाना है कि आखिर डिजिटल तकनीकों का समावेश एक प्राथमिक शिक्षक की प्रभावशीलता को कैसे बढ़ाता है और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसमें क्या दिशा निर्देश देती है। इस शोध की आवश्यकता इसलिए भी अधिक है क्योंकि भारत जैसे विशाल देश में

डिजिटल संसाधनों और प्रशिक्षण को लेकर भारी असमानता है। कहीं अत्याधुनिक स्मार्ट क्लास हैं, तो कहीं शिक्षकों में डिजिटल साक्षरता की कमी। ऐसे में, यह विश्लेषण करना अनिवार्य हो जाता है कि उपलब्ध तकनीकों का सही प्रयोग किस प्रकार बच्चों की सीखने की गति, कक्षा में उनकी सहभागिता और अवधारणात्मक स्पष्टता को बेहतर बना सकता है। वस्तुतः, आज डिजिटल तकनीक ज्ञान को केवल सरल नहीं बनाती, बल्कि उसे रोचक और इंटरैक्टिव भी बनाती है। स्मार्ट क्लासरूम, ई कंटेंट और लर्निंग मैनेजमेंट सिस्टम का उपयोग बच्चों में रटने की जगह आलोचनात्मक चिंतन और स्व अधिगम को बढ़ावा देता है। अतः, प्रस्तुत अध्ययन इस बात का तार्किक विश्लेषण करता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए डिजिटल एकीकरण और शिक्षण प्रभावशीलता का तालमेल कितना आवश्यक और प्रासंगिक है। समस्या का कथन वर्तमान प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था शिक्षण प्रभावशीलता के संदर्भ में अनेक चुनौतियों से जूझ रही है। इनमें पुरानी शिक्षण विधियों पर निर्भरता, छात्रों की कम भागीदारी और शिक्षक प्रशिक्षण का अपर्याप्त होना प्रमुख हैं। साथ ही, डिजिटल तकनीक को अपनाने में भी कई बाधाएँ हैं, जैसे संसाधनों का अभाव, डिजिटल साक्षरता की कमी और तकनीक के सही शैक्षिक उपयोग की समझ न होना। इसके अलावा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रावधानों और विद्यालयों में उनके वास्तविक क्रियान्वयन के बीच एक स्पष्ट अंतर दिखाई देता है, जिससे नीति के अपेक्षित परिणाम धरातल पर पूर्णतः फलित नहीं हो पा रहे हैं।

### 3. अध्ययन के उद्देश्य

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता को समझना।
- डिजिटल तकनीक एकीकरण की अवधारणा का विश्लेषण करना।
- दोनों के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करना।

### 4. शोध प्रश्न

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता को कैसे प्रभावित करती है?
- डिजिटल तकनीक एकीकरण शिक्षण प्रभावशीलता को कैसे बढ़ा सकता है?
- दोनों कारकों के बीच किस प्रकार का वैचारिक संबंध स्थापित किया जा सकता है?

5. **शोध विधि**– प्रस्तुत शोधपत्र में मुख्य रूप से विषय वस्तु विश्लेषण विधि का प्रयोग किया गया है। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्राथमिक शिक्षा, डिजिटल तकनीक के समावेश और शिक्षण प्रभावशीलता से जुड़े सिद्धांतों एवं अवधारणाओं का तार्किक व व्यवस्थित विश्लेषण किया गया है।

6. **संबंधित साहित्य**– झा एवं घटक[1] द्वारा किए गए अध्ययन में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में भारतीय शिक्षा व्यवस्था में होने वाले डिजिटल परिवर्तनों और उससे जुड़ी चुनौतियों का गहन विश्लेषण किया गया है। शोधकर्ताओं ने यह रेखांकित किया कि यद्यपि नीति में डिजिटल इंडिया का दृष्टिकोण अत्यंत स्पष्ट और दूरदर्शी है, तथापि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के मध्य विद्यमान डिजिटल अंतराल विशेषकर इंटरनेट और उपकरणों की असमानता इसके जमीनी क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा है। इस अध्ययन का मुख्य निष्कर्ष यह सुझाव देता है कि शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिए शिक्षकों को केवल तकनीकी उपकरणों के संचालन का प्रशिक्षण देना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उन्हें तकनीक के शैक्षणिक अनुकूलन में दक्ष बनाया जाना अनिवार्य है, ताकि वे तकनीक का उपयोग शिक्षण विधियों को प्रभावी बनाने में कर सकें। गुप्ता एवं पाठक[2] ने अपने अवधारणात्मक अध्ययन में तर्क दिया कि प्राथमिक स्तर पर रटने की पारंपरिक पद्धति को गेमिफिकेशन और "वीडियो आधारित अधिगम" के माध्यम से प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। उनका निष्कर्ष है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु शिक्षक की भूमिका को केवल अनुदेशक तक सीमित न रखकर, उसे एक सुगमकर्ता के रूप में पुनर्परिभाषित करना अनिवार्य है। कुमार एवं भाटिया[3] ने अपने विश्लेषण में स्पष्ट किया कि ग्रामीण भारत में बुनियादी ढांचे–जैसे बिजली और इंटरनेट के अभाव में केवल उपकरणों का वितरण शिक्षण प्रभावशीलता सुनिश्चित नहीं कर सकता है। उन्होंने समाधान स्वरूप हाइब्रिड लर्निंग मॉडल का सुझाव दिया, जिसमें पारंपरिक शिक्षण और तकनीक का संतुलित समन्वय हो।

7. **अवधारणात्मक ढाँचा**– प्रस्तुत अवधारणात्मक ढाँचा इस अध्ययन के तीन प्रमुख स्तंभों शिक्षण प्रभावशीलता, डिजिटल तकनीक का समावेश और नई शिक्षा नीति 2020 के तकनीकी प्रावधानों के आपसी संबंधों को रेखांकित करता है। इसका मूल उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि ये तीनों घटक मिलकर प्राथमिक शिक्षा को कैसे प्रभावित करते हैं और इनके फलस्वरूप शिक्षकों की भूमिका, पढ़ाने के तरीकों तथा सीखने के परिणामों में किस प्रकार के सकारात्मक बदलाव आते हैं।

8. **शिक्षण प्रभावशीलता**– शिक्षण प्रभावशीलता शिक्षक की वह क्षमता है जिसके द्वारा वह छात्रों के लिए सीखने की प्रक्रिया को सहज, रोचक और गुणवत्तापूर्ण बनाता है। इसके अंतर्गत शिक्षक का विषय ज्ञान, पढ़ाने का कौशल, कक्षा प्रबंधन, संवाद कला और मूल्यांकन की दक्षता समाहित है। एक प्रभावी शिक्षक केवल पाठ पूरा नहीं करता, बल्कि विद्यार्थियों में जिज्ञासा, अवधारणात्मक समझ, आलोचनात्मक

सोच और रचनात्मकता को भी विकसित करता है।

9. **डिजिटल तकनीक एकीकरण** – डिजिटल तकनीक के एकीकरण का अर्थ शिक्षणअधिगम प्रक्रिया में आईसीटी उपकरण जैसे स्मार्ट कक्षा, ईसामग्री, ऑनलाइन मंच, डिजिटल मूल्यांकन और वीडियो पाठकृका योजनाबद्ध और उद्देश्यपूर्ण उपयोग है। यह केवल उपकरणों के इस्तेमाल तक सीमित नहीं है, बल्कि यह शिक्षण विधियों, विषयवस्तु के प्रस्तुतीकरण और छात्रों की भागीदारी को तकनीकी माध्यमों से और अधिक समृद्ध बनाने की एक सतत प्रक्रिया है।

10. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रावधान**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्राथमिक शिक्षा में डिजिटल तकनीक को एक अनिवार्य अंग मानती है। इसके तहत आईसीटीयुक्त शिक्षा के विस्तार, स्मार्ट कक्षाओं और ईलर्निंग मंचों के उपयोग पर जोर दिया गया है। इसमें शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए दीक्षा और निष्ठा जैसे मंचों का निर्माण, बहुभाषीय ई सामग्री का विकास तथा तकनीकआधारित मूल्यांकन विधियाँ शामिल हैं। साथ ही, डिजिटल समानता सुनिश्चित करने का लक्ष्य रखा गया है ताकि सभी बच्चों को समान अवसर मिल सकें, जिससे अंततः शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार हो सके।

11. **नई शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्राथमिक शिक्षा के ढांचे में शिक्षक की भूमिका और उनकी शिक्षण प्रभावशीलता को सर्वोपरि मानती है। नीति स्पष्ट करती है कि एक शिक्षक का दायित्व केवल ज्ञान का आदान–प्रदान करना नहीं है, बल्कि वह एक ऐसा मार्गदर्शक है जो विद्यार्थियों में जिज्ञासा, आधारभूत साक्षरता, संवाद कौशल, गणनात्मक व तार्किक सोच और सामाजिक भावनात्मक मूल्यों को विकसित करता है।[4] नीति में शिक्षकों को तकनीक में दक्ष और नवाचारी बनाने पर विशेष बल दिया गया है, ताकि वे मिश्रित अधिगम ई शिक्षाशास्त्र और बहुआयामी शिक्षण सामग्री का कुशलतापूर्वक उपयोग कर सकें। शिक्षण प्रभावशीलता में शिक्षक के पढ़ाने का कौशल, कक्षा प्रबंधन, मूल्यांकन की क्षमता और नई तकनीकों को अपनाने की तत्परता शामिल है। इस संदर्भ में, टीपैक फ्रेमवर्क अत्यंत प्रासंगिक है, जो यह बताता है कि एक प्रभावी शिक्षक के लिए विषय के ज्ञान, शिक्षण विधियों और तकनीकी ज्ञान के बीच संतुलन बनाना कितना आवश्यक है। डिजिटल साक्षरता और आईसीटी के समावेश से शिक्षक अपनी कक्षा को अधिक छात्रकेंद्रित, सहभागी और तथ्यों पर आधारित बना सकते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के नजरिए से देखें, तो शिक्षक की यही प्रभावशीलता अंततः सीखने के स्तर में सुधार, छात्रों की रुचि बढ़ाने तथा प्राथमिक शिक्षा में गुणवत्ता और समानता सुनिश्चित करने में निर्णायक सिद्ध होती है।

12. **राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में प्राथमिक शिक्षा में डिजिटल तकनीक का महत्व**– राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा व्यवस्था में तकनीक को मात्र एक सहायक साधन नहीं, बल्कि प्राथमिक शिक्षा में आमूलचूल सुधार और नवाचार का आधार स्तंभ मानती है। नीति में इस बात को रेखांकित किया गया है कि 21वीं सदी की शिक्षा व्यवस्था को डिजिटल संचालित होना अनिवार्य है, ताकि शिक्षा की गुणवत्ता, पहुँच और गति के साथ–साथ समानता भी सुनिश्चित की जा सके। प्राथमिक स्तर पर इसका महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है, क्योंकि यह बच्चों में शुरुआती दौर से ही डिजिटल साक्षरता, तार्किक क्षमता, समस्या समाधान और रचनात्मकता जैसे कौशल विकसित करने में सहायक है। नीति का स्पष्ट मत है कि तकनीक का उद्देश्य केवल पढ़ाई को आसान बनाना भर नहीं है, बल्कि उसे अधिक आकर्षक, सहभागी और परिणाममूलक बनाना है। 2020 के अंतर्गत प्राथमिक शिक्षा में तकनीकी एकीकरण को मुख्य रूप से पाँच आयामों में समझा जा सकता है। डिजिटल अधिगम इसका उद्देश्य स्मार्ट कक्षाओं, डिजिटल बोर्ड और ईलर्निंग ऐप्स के माध्यम से पढ़ाई को रोचक बनाना है। इससे कठिन अवधारणाओं को दृश्यात्मक रूप में प्रस्तुत कर बच्चों की समझ को गहरा किया जाता है। प्रशिक्षण मंच दीक्षा पोर्टल शिक्षकों और छात्रों को क्यूआर कोड युक्त पाठ्यपुस्तकों और वीडियो सामग्री के रूप में संसाधन उपलब्ध कराता है। वहीं, निष्ठा कार्यक्रम शिक्षकों को कक्षा प्रबंधन और डिजिटल शिक्षण शास्त्र में प्रशिक्षित करता है। ई सामग्री का विकास एनसीईआरटी और एससीईआरटी के सहयोग से बहुभाषीय और खेल आधारित शिक्षण सामग्री तैयार की जा रही है, ताकि पढ़ाई बोझिल न लगे। तकनीक आधारित मूल्यांकन इसमें रटने की बजाय समझ को परखने के लिए ऑनलाइन क्विज और डाटा आधारित फीडबैक का उपयोग किया जाता है, जिससे छात्र की प्रगति का सटीक और त्वरित आकलन संभव हो पाता है। डिजिटल समानता इसका लक्ष्य ग्रामीण और दूरदराज के वंचित बच्चों तक डिजिटल संसाधन पहुँचाकर डिजिटल अंतराल को समाप्त करना है। निष्कर्षतः, 2020 शिक्षकों की डिजिटल दक्षता को एक अनिवार्य योग्यता मानती है। यह अपेक्षा की जाती है कि शिक्षक तकनीक को एक रणनीति के रूप में अपनाएं। एक डिजिटल साक्षर शिक्षक ही मिश्रित शिक्षण और व्यक्तिगत अधिगम जैसी विधियों का सही प्रयोग कर सकता है। इस प्रकार, डिजिटल तकनीक और शिक्षक दक्षता का यह समन्वय ही प्राथमिक शिक्षा को सही मायनों में छात्रकेंद्रित और प्रभावी बनाने की कुंजी है।

13. **डिजिटल तकनीक एकीकरण संकल्पना और प्रक्रिया**– डिजिटल तकनीक एकीकरण से तात्पर्य शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में तकनीकी उपकरणों, डिजिटल संसाधनों और ऑनलाइन विधियों के सुव्यवस्थित एवं उद्देश्यपूर्ण उपयोग से है। इसका मूल लक्ष्य शिक्षा की गुणवत्ता, पहुँच और सीखने के परिणामों को बेहतर बनाना है। प्राथमिक स्तर पर यह प्रक्रिया विद्यार्थियों में शुरू से ही डिजिटल साक्षरता, समस्या समाधान, तार्किक सोच और आत्म निर्देशित अधिगम जैसी क्षमताओं का विकास करती है। इसका उद्देश्य तकनीक को मात्र एक उपकरण की तरह इस्तेमाल करना नहीं है, बल्कि इसे शिक्षण का एक प्रभावी और छात्र केंद्रित शैक्षणिक घटक बनाना है। इस प्रक्रिया में आईसीटी का समावेश एक प्रमुख आयाम है। इसके अंतर्गत डिजिटल बोर्ड, टैबलेट, कंप्यूटर लेब, ई कंटेंट, एनीमेशन और 'लर्निंग मैनेजमेंट

सिस्टम' का प्रयोग शामिल है। आईसीटी का यह सुविचारित उपयोग न केवल पढ़ाई को रोचक बनाता है, बल्कि कठिन और अमूर्त अवधारणाओं को छात्रों के लिए सुगम भी बनाता है। इसी संदर्भ में ई पेडागॉजी शिक्षण का एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण बनकर उभरा है। इसमें डिजिटल साधनों का प्रयोग केवल सूचना देने के लिए नहीं, बल्कि एक शिक्षण विधि के रूप में किया जाता है जैसे गेम आधारित अधिगम, ऑनलाइन सहयोगात्मक कार्य और वर्चुअल चर्चाएँ। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने "ब्लेंडेड लर्निंग" को प्राथमिक शिक्षा की एक मुख्य रणनीति माना है। यह विधि कक्षा के पारंपरिक शिक्षण और ऑनलाइन गतिविधियों का सुंदर समन्वय करती है, जिससे शिक्षा अधिक लचीली और व्यक्तिगत बन जाती है। तकनीक को अपनाने की यह प्रक्रिया प्रौद्योगिकी स्वीकार्यता मॉडल से भी प्रभावित होती है, जो यह मानता है कि शिक्षक द्वारा तकनीक का उपयोग उनकी मानसिकता, प्रशिक्षण, संसाधनों की उपलब्धता और तकनीकी आत्मविश्वास पर निर्भर करता है। अतः शिक्षक की डिजिटल साक्षरता जिसमें ई कंटेंट का निर्माण, ऑनलाइन सुरक्षा और वर्चुअल कक्षाओं का संचालन शामिल है एकीकरण का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है। दीक्षा और निष्ठा जैसे मंचों के माध्यम से शिक्षक इस दक्षता को बढ़ा सकते हैं। निष्कर्षतः, डिजिटल तकनीक एकीकरण केवल संसाधनों की उपलब्धता नहीं, बल्कि शिक्षण में गुणवत्ता और नवाचार लाने वाला एक व्यवस्थित दृष्टिकोण है।

14. **डिजिटल तकनीक एकीकरण और शिक्षण प्रभावशीलता का पारस्परिक संबंध**– डिजिटल तकनीक का एकीकरण और शिक्षण प्रभावशीलता एक दूसरे से गहरे, बहुआयामी और अन्योन्याश्रित रूप से जुड़े हुए हैं। आधुनिक प्राथमिक शिक्षा के परिदृश्य में तकनीक अब मात्र एक उपकरण नहीं रह गई है, बल्कि यह शिक्षण की गुणवत्ता, विद्यार्थी की सहभागिता और शिक्षक की पेशेवर दक्षता को बढ़ाने वाला एक 'परिवर्तनकारी कारक' सिद्ध हो रही है। जहाँ एक ओर प्रभावी तकनीकी एकीकरण शिक्षक को अधिक रचनात्मक, संसाधन संपन्न और तथ्यों (डाटा) के आधार पर पढ़ाने में सक्षम बनाता है, वहीं दूसरी ओर शिक्षण की वास्तविक प्रभावशीलता इस बात पर निर्भर करती है कि उस तकनीक का प्रयोग कितनी समझदारी और शैक्षणिक उपयुक्तता के साथ किया गया है। डिजिटल माध्यमों का प्रयोग जटिल अवधारणाओं को स्पष्ट करने, छात्रों की प्रेरणा बढ़ाने और ब्लेंडेड व फ्लिप्ड क्लासरूम के जरिए सीखने में लचीलापन लाने में सहायक होता है। इससे शिक्षकों के शिक्षण कौशल और टीपैक क्षमता में भी निखार आता है। यद्यपि, संसाधनों का अभाव, सीमित डिजिटल साक्षरता, तकनीकी बाधाएं और साइबर सुरक्षा जैसी चुनौतियाँ शिक्षण प्रभावशीलता को प्रभावित कर सकती हैं, तथापि डिजिटल तकनीक नवाचार और सामावेशी शिक्षा के असीम द्वार खोलती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलोक में, यह सामन्वय आधारभूत साक्षरता और संख्याज्ञान में सुधार लाने और एक 'तकनीक सक्षम समग्र शिक्षण प्रणाली' के निर्माण में निर्णायक है। अंततः, तकनीक और शिक्षण कौशल का यह संतुलित तालमेल ही प्राथमिक शिक्षा को अधिक गुणवत्तापूर्ण और न्यायसंगत बनाता है।

15. **निष्कर्ष**– यह अवधारणात्मक अध्ययन इस तथ्य को स्थापित करता है कि प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में डिजिटल तकनीक का एकीकरण और शिक्षण प्रभावशीलता परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक दूसरे के पूरक और अन्योन्याश्रित घटक हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रावधानों विशेषकर दीक्षा, निष्ठा, ई कंटेंट और वर्चुअल प्रयोगशालाओं ने प्राथमिक शिक्षकों की भूमिका को पारंपरिक अध्यापन की सीमाओं से बाहर निकालकर उन्हें एक तकनीक और नवाचारी सुगमकर्ता के रूप में प्रतिष्ठित किया है। डिजिटल उपकरणों का प्रयोग न केवल विषयवस्तु को अधिक स्पष्ट और ग्राह्य बनाता है, बल्कि ब्लेंडेड लर्निंग और डेटा आधारित मूल्यांकन जैसी विधियाँ शिक्षण की गुणवत्ता को कई गुना बढ़ा देती हैं। यद्यपि बुनियादी ढांचे की कमी और डिजिटल साक्षरता जैसी व्यावहारिक चुनौतियाँ आज भी विद्यमान हैं, तथापि नीति इनका एक दूरदर्शी समाधान प्रस्तुत करती है। इस शोध का सैद्धांतिक महत्व इस बात में निहित है कि यह टीपैक फ्रेमवर्क, टैम मॉडल और सरकारी नीति के प्रावधानों का संश्लेषण कर एक वैज्ञानिक और नीतिगत समझ विकसित करता है। अंततः, यह विश्लेषण इस बात की पुष्टि करता है कि एक सशक्त डिजिटल वातावरण ही 21वीं सदी की प्राथमिक शिक्षा को प्रासंगिक और परिणाममूलक बना सकता है।

**सुझाव**– डिजिटल तकनीक एकीकरण और शिक्षण प्रभावशीलता के संदर्भ में प्रस्तुत सुझाव इस बात को रेखांकित करते हैं कि इस दिशा में प्राथमिक शिक्षकों, नीतिनिर्माताओं और प्रशिक्षण संस्थानों तीनों की समन्वित भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। सर्वप्रथम, प्राथमिक शिक्षकों के लिए अब यह अनिवार्य है कि वे डिजिटल साक्षरता और आईसीटी उपकरणों के प्रयोग में निपुणता हासिल करें। उन्हें टीपैक फ्रेमवर्क के अनुसार अपने विषयज्ञान, शिक्षणविधि और तकनीक के बीच एक संतुलन बनाना होगा। कक्षा को नीरस होने से बचाने के लिए शिक्षकों को मिश्रित अधिगम और फिलप्ड क्लासरूम जैसी आधुनिक पद्धतियों को अपनाना चाहिए। दूसरी ओर, नीति निर्माताओं का दायित्व है कि वे विद्यालयों में तकनीकी बुनियादी ढांचे को मजबूत करें और स्मार्ट उपकरणों व इंटरनेट की उपलब्धता सुनिश्चित करें। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत शिक्षकों का डिजिटल प्रशिक्षण सतत् और अनिवार्य होना चाहिए। साथ ही, दीक्षा और निष्ठा जैसे राष्ट्रीय मंचों को स्थानीय भाषाओं में उपलब्ध कराकर उन्हें क्षेत्रीय आवश्यकताओं से जोड़ा जाना चाहिए। अंत में, शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों को अपने पाठ्यक्रम में डिजिटल पाठ योजनाओं, कंटेंट निर्माण और आईसीटी आधारित अभ्यास को अनिवार्य रूप से शामिल करना चाहिए, ताकि भावी शिक्षकों में तकनीक के प्रति आत्मविश्वास जागृत हो सके। इन तीनों स्तरों पर किए गए साझा प्रयासों से ही शिक्षण की गुणवत्ता में वास्तविक और स्थाई सुधार संभव है।

## References

1. Jha, S., Ghatak, S. (2023). NEP 2020 and the digital transformation of education in India: Opportunities and

challenges. *Journal of Indian Education, 48*(4), 15–28.
2. Gupta, A., Pathak, V. (2021). Implementation of NEP 2020: The road ahead for primary education. *University News, 59*(12). 8–14.
3. Kumar, K., Bhatia, R. (2021). Challenges in digital education in rural India: A post-pandemic analysis. *Indian Journal of Educational Technology, 3*(1). 45–58.
4. https://www.researchgate.net/publication/372085081_Integration_of_Digital_Technology_in_the Learning_Process_Through_Problem-Based_Learning_Models
5. Ministry of Education. (2020). *National Education Policy 2020*. Government of India.
6. Mishra, P., & Koehler, M. J. (2006). Technological pedagogical content knowledge: A framework for teacher knowledge. Teachers College Record, 108(6), 1017–1054. https://doi.org/10.1111/j.1467-9620.2006.00684.x
7. NCERT. (2020). Digital education in India: A report. National Council of Educational Research and Training.
8. Ertmer, P. A. (1999). Addressing first- and second-order barriers to change: Strategies for technology integration. Educational Technology Research and Development, 47(4), 47–61. https://doi.org/10.1007/BF02299597
9. Davis, F. D. (1989). Perceived usefulness, perceived ease of use, and user acceptance of information technology. MIS Quarterly, 13(3), 319–340. https://doi.org/10.2307/249008

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 113-117
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.18
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Challenges of Data Privacy in the Digital Age: An Analytical Study

Rozy Varshney
Department of Education, Lucknow University, Lucknow-226 007, UP, India
rozyvarshney58@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 02-12-2025**

**Abstract-** In the digital age, data use is growing so rapidly that it impacts almost every aspect of human life. Consequently, data privacy has become a major global concern. Technologies such as smartphones, social media, cloud storage, and artificial intelligence have made the process of collecting, using, and sharing personal information extremely easy. However, problems such as privacy violations, data theft, cybercrime, and unauthorized data access are also rapidly increasing. This study focuses on understanding the risks associated with data privacy in the digital world, evaluating the effectiveness of current security measures, and assessing the level of privacy awareness among users. The findings show that despite the existence of data protection laws, encryption technologies, and multi-layered security systems, protecting data on digital platforms remains a significant challenge. The analysis also shows that alongside technological advancements, improving policies, digital literacy, and increasing transparency in the use of personal data is crucial to building a safe and trustworthy digital society.

**Key words-** data privacy, cybersecurity, encryption, digital literacy, artificial intelligence, data protection law

# डिजिटल युग में डेटा गोपनीयता की चुनौतियाँ: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

रोजी वार्ष्णेय
शिक्षा शास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
rozyvarshney58@gmail.com

**सार–** डिजिटल युग में डाटा का इस्तेमाल इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि यह आज मानव जीवन के लगभग हर हिस्से को प्रभावित कर रहा है। इसी कारण डाटा गोपनीयता अब एक बड़ी वैश्विक चिंता बन गई है। स्मार्टफोन, सोशल मीडिया, क्लाउड स्टोरेज और कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी तकनीकों ने व्यक्तिगत जानकारी को इकट्ठा करने, उपयोग करने और साझा करने की प्रक्रिया को बेहद आसान बना दिया है। लेकिन इसके साथ ही गोपनीयता उल्लंघन, डाटा चोरी, साइबर अपराध और अनधिकृत डेटा उपयोग जैसी समस्याएँ भी तेजी से बढ़ रही हैं। यह अध्ययन डिजिटल दुनिया में डाटा गोपनीयता से जुड़े जोखिमों को समझने, वर्तमान सुरक्षा उपायों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने और उपयोगकर्ताओं में गोपनीयता को लेकर जागरूकता के स्तर को जानने पर केंद्रित है। निष्कर्ष बताते हैं कि भले ही डाटा संरक्षण कानून, एन्क्रिप्शन तकनीकें और बहुस्तरीय सुरक्षा व्यवस्था मौजूद हों, फिर भी डिजिटल प्लेटफॉर्म पर डाटा को सुरक्षित रखना एक बड़ी चुनौती बना हुआ है। विश्लेषण यह भी दर्शाता है कि तकनीकी प्रगति के साथ साथ नीतियों में सुधार, डिजिटल साक्षरता और व्यक्तिगत डाटा के उपयोग में पारदर्शिता बढ़ाना बेहद जरूरी है, ताकि एक सुरक्षित और भरोसेमंद डिजिटल समाज का निर्माण किया जा सके।

**बीज शब्द–** डाटा गोपनीयता, साइबर सुरक्षा, एन्क्रिप्शन, डिजिटल साक्षरता, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डाटा संरक्षण कानून

**1. परिचय–** डिजिटल युग ने हमारे जीवन, समाज और जानकारी के आदान–प्रदान की पूरी प्रकृति को बदलकर रख दिया है। इंटरनेट, स्मार्टफोन, सोशल मीडिया, क्लाउड कंप्यूटिंग, बिग डाटा और कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसी तकनीकों ने संचार, शिक्षा, व्यवसाय, शासन और व्यक्तिगत कार्यों को पहले की तुलना में कहीं अधिक आसान और तेज बना दिया है। आज लगभग हर व्यक्ति रोजमर्रा में बिना महसूस किए अपनी कई तरह की निजी जानकारियाँ जैसे लोकेशन, ब्राउजिंग पैटर्न, संपर्क विवरण, वित्तीय सूचनाएँ और सोशल मीडिया गतिविधियाँ विभिन्न डिजिटल प्लेटफॉर्म के साथ साझा कर रहा है। तकनीक की इन सुविधाओं के साथ लोगों के डिजिटल फुटप्रिंट तेजी से बढ़े हैं, जिसके चलते डाटा सुरक्षा और गोपनीयता एक गंभीर वैश्विक मुद्दा बन चुकी है। डाटा गोपनीयता की चिंता इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि डिजिटल माध्यमों में संग्रहीत व्यक्तिगत जानकारी का दुरुपयोग, अनधिकृत साझा करना, हैकिंग, पहचान की चोरी और विभिन्न साइबर अपराध लगातार बढ़ रहे हैं। व्यक्तिगत डाटा केवल किसी व्यक्ति की पहचान नहीं बताता, बल्कि उसके मानस, सामाजिक पृष्ठभूमि और आर्थिक स्थिति को भी उजागर करता है। ऐसे में यह जानकारी गलत हाथों में जाने पर व्यक्ति की स्वतंत्रता, अधिकार और सुरक्षा तक प्रभावित हो सकते हैं। इसी कारण विश्व के कई देशों ने डाटा संरक्षण से जुड़े कानूनों और नीतियों को मजबूत करने की दिशा में गंभीर

कदम उठाए हैं। वर्तमान अध्ययन इसलिए अत्यंत आवश्यक है क्योंकि डिजिटल तकनीकों के व्यापक उपयोग के बावजूद उपयोगकर्ताओं में डेटा गोपनीयता को लेकर जागरूकता अभी भी पर्याप्त नहीं है। साथ ही, डिजिटल प्लेटफॉर्म भले ही सुरक्षा उपाय प्रदान करते हों, किंतु तकनीकी खामियाँ और नीतिगत सीमाएँ अब भी मौजूद हैं, जो प्रभावी डाटा संरक्षण में बाधा बनती हैं। यह अध्ययन डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता से जुड़ी मुख्य चुनौतियों, वर्तमान सुरक्षा उपायों की कमियों और भविष्य में आवश्यक सुधारों का विश्लेषण प्रस्तुत करता है, ताकि सुरक्षित, जवाबदेह और विश्वसनीय डिजिटल समाज के निर्माण की दिशा में सार्थक योगदान दिया जा सके।

## 2. अध्ययन का उद्देश्य

- डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता से संबंधित प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण करना।
- डाटा संरक्षण के वर्तमान उपायों का अध्ययन करना।
- उपयोगकर्ताओं की गोपनीयता संबंधी जागरूकता का सैद्धांतिक मूल्यांकन।

## 3. शोध प्रश्न

- डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता को प्रभावित करने वाली प्रमुख चुनौतियाँ क्या हैं?
- वर्तमान समय में डाटा संरक्षण के लिए उपलब्ध सुरक्षा उपाय कितने उपयोगी और प्रभावी हैं?
- उपयोगकर्ता डाटा गोपनीयता और उससे जुड़े जोखिमों के प्रति कितनी जागरूकता रखते हैं?

**4. शोध विधि**– प्रस्तुत अध्ययन का स्वरूप विश्लेषणात्मक और संकल्पनात्मक है, जिसमें डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता से जुड़ी प्रमुख चुनौतियों, सुरक्षा उपायों और उपयोगकर्ता जागरूकता का सैद्धांतिक रूप से विस्तृत विश्लेषण किया गया है। यह शोध मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिनमें उपलब्ध साहित्य, शोधपत्र, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय रिपोर्टें, सरकारी दस्तावेज, नीतिगत ढाँचे तथा विश्वसनीय ऑनलाइन संसाधनों का व्यवस्थित अध्ययन सम्मिलित है।

**5. संबंधित साहित्य की समीक्षा**– डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता तेजी से एक महत्वपूर्ण वैश्विक मुद्दा बन गई है, विशेषकर तब जब आधुनिक डिजिटल तकनीकों ने व्यक्तिगत जानकारी के संग्रह, विश्लेषण और उपयोग को अत्यंत सरल कर दिया है। कश्यप (2024)[4] ने डिजिटल व्यक्तिगत डाटा संरक्षण अधिनियम, 2023 का विस्तृत मूल्यांकन करते हुए यह स्पष्ट किया कि भारत में एक व्यापक डाटा संरक्षण कानून की आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही थी। उनके अनुसार, तीव्र डिजिटलकरण और ऑनलाइन सेवाओं के बढ़ते प्रयोग ने व्यक्तिगत जानकारी को कई स्तरों पर जोखिमग्रस्त बना दिया है, जिसके समाधान के रूप में एक सुदृढ़ कानूनी व्यवस्था आवश्यक थी। इसी संदर्भ में अनॉनिमस (2025)[2] के अध्ययन ने यह दर्शाया कि यद्यपि यह अधिनियम उपयोगकर्ताओं के अधिकारों को अधिक सुरक्षित बनाता है, परंतु इसके प्रभावी क्रियान्वयन में डिजिटल साक्षरता की कमी, संस्थागत कमजोरियाँ और डाटा प्रबंधन संस्थाओं की जवाबदेही जैसी व्यावहारिक चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं। संवेदनशील क्षेत्रों में डेटा संरक्षण की स्थिति को समझने के लिए सेठी (2025)[3] का अध्ययन अत्यंत उल्लेखनीय है। उन्होंने स्वास्थ्य क्षेत्र में डाटा सुरक्षा की वास्तविक चुनौतियों को उजागर करते हुए पाया कि यद्यपि नया डाटा संरक्षण अधिनियम स्वास्थ्य से जुड़े संवेदनशील डाटा की गोपनीयता को मजबूत करता है, तकनीकी संरचना की सीमाएँ और डिजिटल प्लेटफॉर्मों की असंगतियाँ डाटा लीक होने की संभावनाओं को पूरी तरह समाप्त नहीं कर पातीं। यह निष्कर्ष स्पष्ट करता है कि केवल कानून बना देना पर्याप्त नहीं हैय स्वास्थ्य संस्थानों में तकनीकी और प्रशासनिक क्षमता–विकास भी समान रूप से आवश्यक इन सभी अध्ययनों के संयुक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता एक बहुआयामी विषय है, जिसमें तकनीकी प्रगति के साथ–साथ कानूनी, नीतिगत और संस्थागत पहलू समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। साथ ही, यह शोध–अंतर भी सामने आता है कि भारत में डाटा संरक्षण कानूनों के व्यावहारिक प्रभाव, उपयोगकर्ता जागरूकता और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित जोखिमों पर अभी और अधिक गहन तथा विस्तृत शोध किए जाने की आवश्यकता है।

**6. डाटा गोपनीयता की प्रमुख चुनौतियाँ**– डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता कई प्रकार की जटिल और बहुआयामी चुनौतियों का सामना कर रही है। तकनीकी प्रगति ने जहाँ जानकारी को तुरंत उपलब्ध कर दिया है, वहीं संवेदनशील डाटा की सुरक्षा पहले से कहीं अधिक जोखिमपूर्ण हो गई है। वर्तमान डिजिटल माहौल में पाँच प्रमुख चुनौतियाँ विशेष रूप से महत्तवपूर्ण मानी जाती हैं।

**7. डाटा चोरी और डाटा लीक**– डाटा चोरी आज की डिजिटल दुनिया की सबसे गंभीर समस्याओं में से एक है। संगठित साइबर हमलों के जरिए अपराधी बैंकिंग विवरण, पासवर्ड, पहचान संबंधी जानकारी, स्वास्थ्य रिकॉर्ड और वित्तीय डाटा जैसी अत्यंत संवेदनशील सूचनाएँ चुरा लेते हैं। यदि किसी बड़े संगठन की सुरक्षा प्रणाली कमजोर हो, तो लाखों उपयोगकर्ताओं का डाटा एक साथ जोखिम में पड़ सकता है। डाटा लीक अक्सर तब होता है जब किसी संगठन के डाटाबेस में तकनीकी कमजोरियाँ हों या कर्मचारियों की लापरवाही से संवेदनशील जानकारी उजागर हो जाए। इसके प्रभाव आर्थिक नुकसान, पहचान की चोरी, व्यक्तिगत सुरक्षा जोखिम और संस्थानों की प्रतिष्ठा को क्षति

के रूप में सामने आते हैं। यह संकेत देता है कि पारंपरिक सुरक्षा उपाय आधुनिक साइबर अपराधों का सामना करने में अब पर्याप्त नहीं हैं।

**8. साइबर अपराध**– साइबर अपराध लगातार नए रूप धारण कर रहे हैं। फिशिंग, रैनसमवेयर, मैलवेयर, स्पाइवेयर, ट्रोजन और सोशल इंजीनियरिंग जैसी तकनीकों के माध्यम से अपराधी उपयोगकर्ताओं को धोखे में डालकर उनकी निजी जानकारी हासिल कर लेते हैं। रैनसमवेयर हमलों में उपयोगकर्ता का डाटा एन्क्रिप्ट कर लिया जाता है और उसे वापस पाने के लिए भारी फिरौती मांगी जाती है। वहीं सोशल इंजीनियरिंग व्यक्ति के भरोसे को हथियार बनाकर संवेदनशील जानकारी निकलवाने का तरीका है। डिजिटल सेवाओं और इंटरनेट उपयोग में तेज वृद्धि ने साइबर अपराधियों के लिए नए अवसर पैदा किए हैं। इसका असर न केवल व्यक्तिगत उपयोगकर्ताओं पर पड़ता है बल्कि सरकारी और निजी संस्थानों की डेटा सुरक्षा भी गंभीर रूप से प्रभावित होती है।

**9. थर्ड पार्टी डाटा साझाकरण**– कई डिजिटल प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ताओं का डाटा थर्ड पार्टी संस्थाओं जैसे विज्ञापन एजेंसियों, विश्लेषण कंपनियों और विपणन संगठनों के साथ साझा करते हैं। समस्या तब बढ़ जाती है जब उपयोगकर्ता स्पष्ट रूप से यह नहीं जानते कि उनका डाटा किस सीमा तक और किस उद्देश्य से उपयोग किया जा रहा है। अनेक मोबाइल ऐप और वेबसाइटें आवश्यकता से अधिक अनुमतियाँ मांगती हैं, जिससे उनकी डाटा संग्रहण प्रक्रिया संदेहास्पद बन जाती है। पारदर्शिता के अभाव में उपयोगकर्ता यह समझ ही नहीं पाता कि उसका डाटा किस प्रकार उपयोग हो रहा है। परिणामस्वरूप यह प्रक्रिया गोपनीयता अधिकारों को कमजोर करती है और डिजिटल प्लेटफॉर्म पर भरोसा घटाती है।

**10. सोशल मीडिया डाटा का दुरुपयोग**– सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ताओं से फोटो, वीडियो, लोकेशन, रुचियाँ, संवाद शैली और सामाजिक नेटवर्क जैसी अत्यधिक व्यक्तिगत जानकारी एकत्र करते हैं। यह डाटा कई तरह से दुरुपयोग किया जा सकता है जैसे– व्यवहारिक प्रोफाइलिंग, राजनीतिक माइक्रो–टारगेटिंग, गलत सूचना का प्रसार, फर्जी खाते बनाना या पहचान की चोरी करना। सोशल मीडिया कंपनियाँ उपयोगकर्ता गतिविधियों का विस्तृत विश्लेषण कर लक्षित विज्ञापन दिखाती हैं, जिससे उपयोगकर्ता लगातार निगरानी के दायरे में रहता है। यह स्थिति न केवल व्यक्तिगत गोपनीयता बल्कि व्यक्गित स्वतंत्रता के लिए भी गंभीर खतरा उत्पन्न करती है।

**11. क्लाउड और कृत्रिम बुद्धिमत्ता से जुड़े जोखिम**– क्लाउड कंप्यूटिंग ने डाटा प्रबंधन को सरल बनाया है, लेकिन इसकी सुरक्षा चुनौतियाँ भी उतनी ही गंभीर हैं। क्लाउड में डाटा अलग–अलग सर्वरों पर संग्रहीत रहता है, जिससे साइबर हमलों की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं। यदि क्लाउड सेवा प्रदाता मजबूत सुरक्षा न दे सके, तो बड़े पैमाने पर डाटा लीक होने का खतरा बना रहता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मशीन लर्निंग विशाल डाटा सेट पर आधारित होते हैं। ये तकनीकें उपयोगकर्ता व्यवहार का विश्लेषण कर विस्तृत प्रोफाइल तैयार कर सकती हैं, जिससे गोपनीयता जोखिम बढ़ जाते हैं। कई बार कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित स्वचालित निर्णय पक्षपातपूर्ण हो सकते हैं, जो नैतिक और कानूनी चुनौतियाँ पैदा करते हैं।

12. **डिजिटल प्लेटफॉर्म पर सुरक्षा उपाय**– डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता से जुड़ी बढ़ती चुनौतियों का समाधान करने के लिए अनेक तकनीकी, नीतिगत और व्यवहारिक सुरक्षा उपाय विकसित किए गए हैं। इन उपायों का मुख्य उद्देश्य व्यक्तिगत जानकारी की सुरक्षा सुनिश्चित करना, अनधिकृत पहुँच को रोकना और साइबर जोखिमों को न्यूनतम करना है। आधुनिक डिजिटल वातावरण में निम्नलिखित प्रमुख सुरक्षा उपाय अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं

13. **एन्क्रिप्शन**– एन्क्रिप्शन को डिजिटल सुरक्षा की सबसे प्रभावी तकनीकों में से एक माना जाता है। इसमें डाटा को ऐसी कूटबद्ध भाषा (क्रिप्टोग्राफिक कोड) में बदल दिया जाता है, जिसे केवल अधिकृत व्यक्ति ही सही कुंजी की सहायता से पढ़ सकता है। एंड टू एंड एन्क्रिप्शन का उपयोग मैसेजिंग सेवाओं, ऑनलाइन बैंकिंग और डेटा ट्रांसफर में व्यापक रूप से किया जाता है। यह सुनिश्चित करता है कि संचार के दौरान कोई बाहरी व्यक्ति न तो डाटा को पढ़ सके और न ही उसमें बदलाव कर सके। इस प्रकार एन्क्रिप्शन डाटा की गोपनीयता, अखंडता और उपलब्धता तीनों को सुरक्षित रखता है।

14. **द्वि–स्तरीय प्रमाणीकरण**– द्वि स्तरीय प्रमाणीकरण उपयोगकर्ता खातों को अतिरिक्त सुरक्षा प्रदान करता है। केवल पासवर्ड के बजाय इसमें एक और सत्यापन चरण शामिल होता है जैसे ओटीपी, बायोमेट्रिक स्कैन या विशेष पिन। यह उपाय विशेष रूप से तब उपयोगी होता है जब पासवर्ड चोरी होने का जोखिम अधिक हो। द्वि स्तरीय प्रमाणीकरण अनधिकृत लॉगिन की संभावना को काफी हद तक कम करता है और बैंकिंग, ईमेल तथा सोशल मीडिया जैसे संवेदनशील खातों को मजबूत सुरक्षा प्रदान करता है।

15. **साइबर सुरक्षा प्रथाएँ**– सुरक्षित डिजिटल व्यवहार उपयोगकर्ताओं और संगठनों दोनों के लिए अत्यंत आवश्यक है। प्रभावी साइबर सुरक्षा प्रथाओं में शामिल हैं

- ✓ नियमित अंतराल पर पासवर्ड बदलना
- ✓ मजबूत, विशिष्ट और कठिन पासवर्ड का उपयोग

- ✓ एंटीवायरस एवं फायरवॉल का प्रयोग
- ✓ सुरक्षित ब्राउजिंग आदतें
- ✓ संदिग्ध लिंक, अज्ञात ईमेल और अविश्वसनीय वेबसाइटों से बचना

साइबर हाइजीन की अवधारणा इस बात पर जोर देती है कि सॉफ्टवेयर अपडेट, नियमित सुरक्षा जाँच, डाटा बैकअप और सिस्टम की निगरानी जैसे छोटे–छोटे कदम भी बड़े सुरक्षा जोखिमों को प्रभावी रूप से कम कर सकते हैं। कई संस्थाएँ साइबर सुरक्षा ऑडिट और जोखिम मूल्यांकन के माध्यम से अपने डिजिटल ढाँचे को लगातार मजबूत बनाती रहती हैं।

**16. सैद्धांतिक विश्लेषण**– डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता की जटिलताओं को समझने के लिए विभिन्न सैद्धांतिक ढाँचे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये सिद्धांत न केवल गोपनीयता के नैतिक और दार्शनिक पहलुओं को उजागर करते हैं, बल्कि डिजिटल सुरक्षा के तकनीकी और व्यवहारिक पक्षों को भी स्पष्ट करते हैं। इस अध्ययन में मुख्यतः गोपनीयता सिद्धांत, जोखिम मूल्यांकन मॉडल और सी.आई.ए. ढाँचा का उपयोग कर डेटा गोपनीयता का विश्लेषण किया गया है।

**17. गोपनीयता सिद्धांत**– गोपनीयता सिद्धांत इस धारणा पर आधारित है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी निजी जानकारी पर नियंत्रण का मौलिक अधिकार होना चाहिए। वेस्टिन 1967 के अनुसार, गोपनीयता व्यक्ति की स्वतंत्रता और स्वायत्तता की आधारशिला है। डिजिटल संदर्भ में यह सिद्धांत यह समझने में मदद करता है कि उपयोगकर्ता किस सीमा तक अपनी जानकारी साझा करने के लिए तैयार होते हैं और किन परिस्थितियों में उनकी गोपनीयता जोखिमग्रस्त हो सकती है। आधुनिक डिजिटल प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ताओं के व्यवहार, पसंद, गतिविधियों और संचार पैटर्न पर बड़ा डाटा एकत्र करते हैं, जिससे उनकी स्वायत्तता चुनौतीपूर्ण स्थिति में आ जाती है विशेषकर तब, जब उन्हें यह स्पष्ट जानकारी नहीं होती कि उनका डाटा कहाँ और कैसे उपयोग किया जा रहा है। इस सिद्धांत का महत्वपूर्ण पहलू यह है कि उपयोगकर्ता की सहमति सूचित, स्पष्ट और वास्तविक हो, ताकि उनके व्यक्तिगत अधिकार सुरक्षित रह सकें।

**18. सी.आई.ए. ढाँचा (कॉनफिडेनशैलिटी, इंटीग्रिटी, अवेलेबिलिटी)**

सी.आई.ए. ढाँचा डिजिटल सुरक्षा का एक व्यापक और व्यवहारिक मॉडल है, जो किसी भी डिजिटल प्रणाली के तीन मूल सिद्धांतों को रेखांकित करता है–

- ➢ गोपनीयता (कॉनफिडेनशैलिटी) : डाटा केवल अधिकृत उपयोगकर्ताओं के लिए उपलब्ध हो।
- ➢ अखंडता (इंटीग्रिटी) : डाटा सुरक्षित रहे और उसमें किसी प्रकार का अनधिकृत परिवर्तन न हो।
- ➢ उपलब्धता (अवेलेबिलिटी) : आवश्यकता पड़ने पर अधिकृत उपयोगकर्ताओं को डाटा समय पर और सरलता से प्राप्त हो सके।

यह ढाँचा साइबर सुरक्षा नीतियों, रणनीतियों और तकनीकी उपायों के विकास का आधार बनता है और डिजिटल वातावरण को विश्वसनीय बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

**19. परिणाम**– अध्ययन के निष्कर्ष स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता कई स्तरों पर प्रभावित हो रही है। एक ओर उन्नत डिजिटल तकनीकें उपयोगकर्ताओं के दैनिक जीवन को अधिक सुविधाजनक और कुशल बना रही हैं, वहीं दूसरी ओर डाटा चोरी, साइबर अपराध, थर्ड पार्टी डाटा साझाकरण और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्रोफाइलिंग जैसे जोखिम लगातार बढ़ते जा रहे हैं। तुलनात्मक विश्लेषण से यह सामने आता है कि डाटा चोरी और साइबर हमलों की बढ़ोतरी मुख्य रूप से सुरक्षा प्रणालियों की कमजोरियों से जुड़ी है, जबकि थर्ड पार्टी डाटा साझाकरण और सोशल मीडिया डाटा के दुरुपयोग की जड़ में पारदर्शिता की कमी और उपयोगकर्ता जागरूकता का अभाव है। क्लाउड तकनीक और कृत्रिम बुद्धिमत्ता से जुड़े जोखिम अपेक्षाकृत अधिक जटिल हैं, क्योंकि उनका प्रभाव व्यक्तिगत स्तर से आगे बढ़कर संगठनों, स्वास्थ्य प्रणालियों, वित्तीय संरचनाओं और अन्य संस्थागत प्रणालियों पर भी गहराई से पड़ता है। विशेष रूप से एआई आधारित प्रोफाइलिंग और स्वचालित निर्णय–निर्माण से गोपनीयता, निष्पक्षता और डिजिटल नैतिकता संबंधी महत्वपूर्ण चिंताएँ उत्पन्न होती हैं, जो इस अध्ययन को और अधिक प्रासंगिक बनाती हैं। सुरक्षा उपायों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि एन्क्रिप्शन, द्वि–स्तरीय प्रमाणीकरण, साइबर सुरक्षा अभ्यास, साइबर हाइजीन और नियमित सुरक्षा ऑडिट जैसे उपाय डिजिटल सुरक्षा को मजबूत करने में प्रभावी हैं। लेकिन इन उपायों की वास्तविक सफलता उपयोगकर्ताओं की सतर्कता, तकनीकी कुशलता, संस्थागत जिम्मेदारी और नीतिगत क्रियान्वयन पर निर्भर करती है। सरकारी कानून जैसे GDPR और भारत का डिजिटल व्यक्तिगत डाटा संरक्षण अधिनियम, 2023 ने डाटा गोपनीयता को कानूनी संरक्षण अवश्य प्रदान किया है, लेकिन इनके प्रभावी तथा व्यापक क्रियान्वयन में अभी भी कई चुनौतियाँ मौजूद हैं, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ डिजिटल साक्षरता सीमित है या संसाधनों की कमी है। इन परिस्थितियों का डिजिटल समाज पर व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है। एक ओर उपयोगकर्ता डिजिटल सेवाओं पर निर्भरता बढ़ाते जा रहे हैं, जिससे उनका ऑनलाइन सहभाग अधिक

सक्रिय होता जा रहा है; वहीं दूसरी ओर डाटा दुरुपयोग और गोपनीयता उल्लंघन की घटनाएँ उनके विश्वास को कमजोर करती हैं। यह स्थिति उपभोक्ता अधिकारों, डिजिटल लोकतंत्र, सामाजिक पारदर्शिता और साइबर नैतिकता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकती है। समग्र रूप से अध्ययन यह संकेत करता है कि एक सुरक्षित, पारदर्शी और विश्वसनीय डिजिटल समाज के निर्माण के लिए तीन तत्वों का संतुलित विकास अत्यंत आवश्यक है तकनीकी नवाचार, सुदृढ़ नीतिगत ढाँचे, और डिजिटल उपयोगकर्ताओं की जागरूकता। इन तीनों के प्रभावी समन्वय से ही डाटा गोपनीयता संबंधी चुनौतियों का समाधान संभव है।

**सुझाव**– डिजिटल युग में डाटा गोपनीयता को अधिक मजबूत और प्रभावी बनाने के लिए बहुस्तरीय तथा समन्वित रणनीतियों का अपनाया जाना अत्यंत आवश्यक है। सर्वप्रथम, सरकार और विभिन्न संस्थानों को यह सुनिश्चित करना होगा कि डाटा संरक्षण कानूनों का सुदृढ़ और प्रभावी क्रियान्वयन हो। इससे डिजिटल प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ता डाटा के संग्रहण, उपयोग और साझाकरण के संबंध में अधिक पारदर्शिता प्रदान कर सकेंगे। साथ ही, तकनीकी सुरक्षा उपायों जैसे एंड टू–एंड एन्क्रिप्शन, बहुदृस्तरीय प्रमाणीकरण (मल्टी फैक्टर ऑथेंटिकेशन), नियमित सुरक्षा ऑडिट, और कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित जोखिम पहचान प्रणालियाँ को और अधिक उन्नत, विश्वसनीय तथा व्यापक रूप से लागू करना आवश्यक है। इन तकनीकों को निरंतर अद्यतन करते रहना भी उतना ही महत्वपूर्ण है, ताकि बदलते साइबर जोखिमों का प्रभावी रूप से सामना किया जा सके। उपयोगकर्ता स्तर पर डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देना इस दिशा में सबसे महत्वपूर्ण कदमों में से एक है। उपयोगकर्ताओं को सुरक्षित पासवर्ड निर्माण, साइबर हाइजीन, संदिग्ध लिंक एवं अज्ञात स्रोतों से आने वाले संदेशों से सतर्क रहने, और गोपनीयता सेटिंग्स का सही उपयोग करने के बारे में शिक्षित किया जाना चाहिए। बढ़ी हुई जागरूकता उपयोगकर्ताओं को अपने डिजिटल अधिकारों को बेहतर ढंग से समझने और सुरक्षित डिजिटल व्यवहार अपनाने में सक्षम बनाती है। इसके अनुरूप, सोशल मीडिया कंपनियों और अन्य डिजिटल सेवा प्रदाताओं को पारदर्शी और उपयोगकर्ता–हितैषी डाटा नीतियाँ अपनानी चाहिए। उन्हें "डार्क पैटर्न" जैसी भ्रामक तकनीकों से परहेज करते हुए उपयोगकर्ताओं को स्पष्ट, सरल और वास्तविक जानकारी उपलब्ध करानी चाहिए, ताकि उपयोगकर्ता सूचित निर्णय ले सकें। अंततः, शैक्षणिक संस्थानों, उद्योगों और सरकारी संगठनों के बीच प्रभावी सहयोग स्थापित करना आवश्यक है। ऐसा सहयोग एक ऐसा डिजिटल इकोसिस्टम तैयार कर सकता है जिसमें तकनीकी नवाचार और गोपनीयता संरक्षण एक–दूसरे के पूरक रूप में कार्य करें। इस प्रकार एक सुरक्षित, विश्वसनीय और उत्तरदायी डिजिटल समाज का निर्माण संभव हो सकेगा, जो उपयोगकर्ताओं के अधिकारों की रक्षा करते हुए डिजिटल विकास को भी प्रोत्साहित करेगा।

## References


1. Kashyap, P. K. (2024). Digital Personal Data Protection Act, 2023: A new light into the data protection and privacy law in India. ICREP Journal of Interdisciplinary Studies. https://icrep.cusat.ac.in/journal/d/76abb866-4d9d-4ab8-ab85-8401383e99d1
2. Anonymous. (2025). Analysis of India's Digital Personal Data Protection Act, 2023. Comparative Legal Study. https://www.researchgate.net/publication/382266877_Analysis_of_India%27s_Digital_Personal_Data_Protection_Act_2023
3. Sethi, M. I. (2025). The Digital Personal Data Protection Act 2023: Implications for healthcare and confidentiality. PMC Publications. https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC12423081/
4. Data Privacy Management in India: Challenges, Examples and Best Practices." (n.d.). The Legal School – Blog Article. https://thelegalschool.in/blog/data-privacy-management
5. Smith, J., Duffy, A., & Chen, L. (2020). Social media data and privacy risks. Journal of Digital Society, 14(2), 45–59.
6. Ritchie, P. (2021). Cloud computing vulnerabilities. International Journal of Cloud Computing, 7(3), 89–103.
7. Ministry of Electronics and IT. (2023). Digital Personal Data Protection Act (DPDP Act). https://www.meity.gov.in/
8. Weber, A. (2022). Two-factor authentication as a security mechanism. Journal of Cyber Defense, 11(1), 92–106.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 118-122
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.19
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Teachers' Understanding of the Sustainable Development Goals and Its Reflection in Their Teaching Practices: A Conceptual Analysis

Rinku Kumar
Department of Education, University of Lucknow, Lucknow-226 001, U.P., India
srivastavarinku79@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 23-11-2025**

**Abstract-** In today's global context, the Sustainable Development Goals are becoming an increasingly important part of the education system. These goals aim not only to impart curriculum knowledge, but also to develop sensitive, responsible, and environmentally conscious citizens who understand and fulfill their role in society. In this regard, the role of teachers is considered central, as they directly shape students' values, thinking, and behavior within the classroom. The primary objective of this conceptual research is to understand the extent to which teachers possess the Sustainable Development Goals, the depth to which they understand them, and how this understanding is reflected in their daily teaching practices. The study emphasizes that when teachers truly embrace the objectives and human significance of these goals, they are able to incorporate aspects such as environmental protection, ethical values, gender equality, social harmony, and global citizenship into their teaching. This study presents a conceptual framework that clarifies the relationship between teachers' understanding, their attitudes, and their actual classroom behavior. The findings suggest that if the Sustainable Development Goals are properly incorporated into teacher training programs, it is possible to develop students at the school level who are responsible, aware, and have a sustainable development-oriented mindset. This research thus provides useful guidance for education policymakers, teacher educators, and school administrators.

**Key words-** Sustainable Development Goals, teacher awareness, teaching behavior, value-based education, educational accountability

# शिक्षकों में सतत् विकास लक्ष्यों के प्रति समझ और उनके शिक्षण व्यवहार में उसका प्रतिबिंब : एक वैचारिक विश्लेषण

रिंकू कुमार
शिक्षाशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
srivastavarinku79@gmail.com

**सार–** आज की वैश्विक परिस्थितियों में सतत् विकास लक्ष्य शिक्षा व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बनते जा रहे हैं। इन लक्ष्यों का उद्देश्य सिर्फ पाठ्यज्ञान देना नहीं है, बल्कि ऐसे संवेदनशील, जिम्मेदार और पर्यावरण जागरूक नागरिक तैयार करना है, जो समाज के प्रति अपनी भूमिका को समझें और निभाएँ। इस दिशा में शिक्षक की भूमिका सबसे केंद्रीय मानी जाती है, क्योंकि वही कक्षा के भीतर छात्रों के मूल्यों, सोच और व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप से आकार देते हैं। इस संकल्पनात्मक शोध का मुख्य उद्देश यह समझना है कि शिक्षकों के पास सतत् विकास लक्ष्यों से जुड़ी कितनी जानकारी है, वे इन्हें किस गहराई तक समझते हैं और यह समझ उनके दैनिक शिक्षण व्यवहार में कैसे दिखाई देती है। अध्ययन इस बात पर जोर देता है कि जब शिक्षक इन लक्ष्यों के उद्देश्यों और मानवीय महत्त्व को वास्तविक रूप से आत्मसात कर लेते हैं, तो वे सहज ही अपने शिक्षण में पर्यावरण संरक्षण, नैतिक मूल्यों, लैंगिक समानता, सामाजिक सद्भाव और वैश्विक नागरिकता जैसे पहलुओं को शामिल कर पाते हैं। साहित्य समीक्षा से पता चलता है कि कई शिक्षक सतत् विकास लक्ष्यों को लेकर उत्साहित तो हैं, पर प्रशिक्षण, संसाधन और पाठ्यचर्या के पर्याप्त सहयोग के अभाव में वे अपनी शिक्षण प्रथाओं में इन्हें प्रभावी रूप से लागू नहीं कर पाते। यह अध्ययन एक ऐसी वैचारिक रूपरेखा प्रस्तुत करता है जो शिक्षक की समझ, उनके दृष्टिकोण और उनके वास्तविक कक्षा व्यवहार के बीच संबंध स्पष्ट करती है। निष्कर्ष बताते हैं कि यदि शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सतत् विकास लक्ष्यों को उचित स्थान दिया जाए, तो विद्यालय स्तर पर ऐसे विद्यार्थियों का निर्माण संभव है, जो जिम्मेदार, जागरूक और सतत् विकास उन्मुख सोच रखते हों। इस प्रकार यह शोध शिक्षा नीति निर्माताओं, शिक्षक प्रशिक्षकों और विद्यालय प्रशासकों के लिए उपयोगी दिशा निर्देश प्रदान करता है।

**बीज शब्द–** सतत् विकास लक्ष्य, शिक्षक जागरूकता, शिक्षण व्यवहार, मूल्य आधारित शिक्षा, शैक्षिक उत्तरदायित्व

**1. परिचय–** आज के वैश्विक परिवेश में सतत् विकास मानव समाज की संतुलित, न्यायपूर्ण और दीर्घकालिक प्रगति का मूल आधार बन चुका है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित सतत् विकास लक्ष्य दुनिया के देशों को एक साझा दिशा देते हैं, जिसमें सामाजिक समानता, पर्यावरण

संरक्षण, आर्थिक स्थिरता और वैश्विक शांति जैसे व्यापक उद्देश्यों की प्राप्ति शामिल है। इन लक्ष्यों को व्यवहार में लागू करने का सबसे प्रभावी माध्यम शिक्षा मानी जाती है, क्योंकि शिक्षा ही व्यक्ति के विचारों, दृष्टिकोण, आचरण और नैतिक जिम्मेदारियों को आकार देती है। इस संदर्भ में शिक्षक सिर्फ ज्ञान प्रदान करने वाले नहीं, बल्कि मूल्यों और सामाजिक संवेदनशीलता को विकसित करने वाले प्रमुख मार्गदर्शक होते हैं। इसलिए यह समझना महत्वपूर्ण है कि शिक्षक सतत् विकास लक्ष्यों को कितनी गहराई से जानते और समझते हैं और वे इन्हें अपने शिक्षण व्यवहार में किस प्रकार सम्मिलित करते हैं। जब शिक्षक इन लक्ष्यों के उद्देश्यों, सिद्धांतों और सामाजिक महत्व को वास्तविक रूप से आत्मसात कर लेते हैं, तो वे अपने शिक्षण में पर्यावरण संरक्षण, लैंगिक समानता, सामाजिक समावेशन, शांति संबंधी मूल्यों और उत्तरदायी नागरिकता जैसे तत्वों को सहज रूप से जोड़ पाते हैं। इसके विपरीत, यदि प्रशिक्षण, जागरूकता या संसाधनों की कमी हो, तो शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया समाज में अपेक्षित सकारात्मक परिवर्तन लाने की अपनी क्षमता को पूरी तरह विकसित नहीं कर पाती। इसी कारण विषय ज्ञान के साथ साथ शिक्षकों के लिए सतत् विकास उन्मुख दृष्टिकोण और व्यावहारिक कौशल का होना अत्यंत आवश्यक है। प्रस्तुत संकल्पनात्मक अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि शिक्षक सतत् विकास लक्ष्यों के प्रति कितनी जागरूकता रखते हैं और उनकी यह समझ उनके वास्तविक शिक्षण व्यवहार में कैसे प्रकट होती है। यह अध्ययन विद्यालयी शिक्षा को अधिक उत्तरदायी, मूल्य आधारित और वैश्विक अपेक्षाओं के अनुरूप बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान कर सकता है।

2. **अध्ययन का औचित्य**– शैक्षिक परिदृश्य में सतत् विकास लक्ष्य केवल अंतरराष्ट्रीय घोषणाएँ भर नहीं रह गए हैं, बल्कि शिक्षा प्रणाली की एक केंद्रीय जिम्मेदारी बन चुके हैं। विद्यालय स्तर पर इन लक्ष्यों को प्रभावी रूप में लागू करने में शिक्षक की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है, क्योंकि वही विद्यार्थियों तक ज्ञान, मूल्य और सकारात्मक व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप से पहुँचाते हैं। यदि शिक्षकों के पास सतत् विकास लक्ष्यों से संबंधित पर्याप्त समझ, जागरूकता और स्पष्ट दृष्टिकोण न हो, तो शिक्षा का प्रभाव केवल विषय ज्ञान तक सीमित रह जाता है और विद्यार्थियों में सामाजिक, नैतिक तथा पर्यावरणीय संवेदनशीलता अपेक्षित रूप से विकसित नहीं हो पाती। वर्तमान परिस्थितियाँ यह संकेत देती हैं कि कई शिक्षक इन लक्ष्यों के महत्व को समझते तो हैं, पर अपने दैनिक शिक्षण व्यवहार में उन्हें प्रभावी रूप से शामिल करने में सक्षम नहीं हो पाते। इसके पीछे शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की सीमाएँ, उचित संसाधनों का अभाव तथा पाठ्यचर्या में सतत् विकास लक्ष्यों का पर्याप्त समावेशन न होना प्रमुख कारण हो सकते हैं। इन्हीं चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है। यह न केवल यह स्पष्ट करता है कि सतत् विकास लक्ष्यों के प्रति शिक्षकों की अवधारणात्मक समझ उनके वास्तविक शिक्षण व्यवहार को किस प्रकार प्रभावित करती है, बल्कि यह विद्यालयी शिक्षा को अधिक उत्तरदायी, मूल्य प्रधान और सतत् विकास उन्मुख बनाने के लिए आवश्यक सुधारों एवं हस्तक्षेपों की दिशा भी सुझाता है।

3. **अध्ययन के उद्देश्य**

- शिक्षकों की सतत् विकारा लक्ष्य के प्रति समझ का विश्लेषण करना।
- एस.डी.जी. आधारित शिक्षण व्यवहार का अध्ययन करना।
- एस.डी.जी. समझ और शिक्षण व्यवहार के बीच संबंध की व्याख्या करना।

4. **शोध प्रश्न**

- शिक्षकों में सतत् विकास लक्ष्यों के प्रति समझ का स्तर क्या है?
- शिक्षक अपने शिक्षण व्यवहार में सतत् विकास के मूल्यों को किस प्रकार सम्मिलित करते हैं?
- शिक्षकों की एस.डी.जी. समझ और उनके शिक्षण व्यवहार के बीच क्या संबंध है?

5. **शोध विधि**– प्रस्तुत अध्ययन अवधारणात्मक तथा वर्णनात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। इस शोध में किसी प्रकार का प्रत्यक्ष क्षेत्र अध्ययन या प्रायोगिक परीक्षण नहीं किया गया, बल्कि विषय से संबंधित उपलब्ध साहित्य, सिद्धांतों, नीतिगत दस्तावेजों और पूर्व शोधों के आधार पर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

6. **संबंधित साहित्य सर्वेक्षण**– ढाका (2024)[1] ने सतत् विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में शिक्षको और उच्च शिक्षा की भूमिका पर अध्ययन किया और यह पाया की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करके असमानताओ से लड़कर, स्वास्थ्य को बढ़ावा देकर, सतत् ता को अपनाकर एक उज्जवल और अधिक निष्पक्ष भूमिका के लिए सतत् विकास लक्ष्य को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एलेना और मरीना (2024)[2] ने सतत् विकास लक्ष्यों के सम्बन्ध में भावी शिक्षको का ज्ञान, दृष्टिकोण और अभ्यास पर शोध कार्य किया और पाया कि सतत् विकास लक्ष्य से सम्बंधित भावी शिक्षकों के ज्ञान माध्यम स्तर और सकारात्मक दृष्टिकोण है इन लक्ष्यों के प्रति व्यवहारिक अनुप्रयोग में उनका प्रदर्शन थोड़ा कम है। गोमेज–गोमेज और अन्य (2023)[3] ने शिक्षक प्रशिक्षण में सतत् विकास लक्ष्यों के बारे में जागरूकता और ज्ञान बढ़ाना का

अध्ययन किया और पाया की विश्वविद्यालय शिक्षक प्रशिक्षण में एसडीजी के बारे में जागरूकता प्रशिक्षण और प्रशिक्षण और कार्यान्वयन में सुधार की आवश्यकता है पूर्व और बाद के परिक्षण ज्ञान की तुलना करने पर कुछ सुधार देखा गया है ज्ञान और शैक्षणिक वर्ष के बीच एक महत्वपूर्ण सम्बन्ध पाया गया। गार्शिया–गोजलेज और अन्य (2020)* ने स्थिरता के लिए शिक्षा और सतत् विकास लक्ष्य : सेवापूर्व शिक्षकों की धारणाये और ज्ञान के सन्दर्भ में अध्ययन किया और पाया की सतत् विकास लक्ष्यों का ज्ञान के सम्बन्ध में सबसे महत्वपूर्ण परवर्तन पाए गए सतत् शिक्षा के प्रति उनकी उनकी धारणाये अधिक जटिल दृष्टिकोण की ओर विकशित हुई जबकि प्रशिक्षण प्रक्रिया के अंत में प्रस्तावित पद्धति रणनीतिया प्रारंभिक रणनीतियो से भिन्न नहीं थी।

**7. प्रमुख शब्दों की परिचालन परिभाषाएँ–**

**7.1 सतत् विकास लक्ष्य**– ये वैश्विक स्तर पर निर्धारित समन्वित उद्देश्य हैं, जिनका लक्ष्य सामाजिक न्याय, आर्थिक संतुलन, पर्यावरण संरक्षण और मानव कल्याण के बीच संतुलित विकास सुनिश्चित करना है। इस अध्ययन में सतत् विकास लक्ष्यों को संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित 17 उद्देश्यों के रूप में स्वीकार किया गया है, जिन्हें विद्यालयी शिक्षा के माध्यम से व्यवहारिक रूप में विकसित किया जा सकने वाला माना गया है।

**7.2 सतत् विकास लक्ष्यों की समझ**– इससे आशय शिक्षक की उस बौद्धिक क्षमता से है, जिसके माध्यम से वह सतत् विकास लक्ष्यों के उद्देश्यों, घटकों, शैक्षिक महत्व और शिक्षण में उनके व्यावहारिक उपयोग को समझ पाता है। इसमें शिक्षक की अवधारणात्मक स्पष्टता, जागरूकता, सकारात्मक दृष्टिकोण तथा इन लक्ष्यों को शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शामिल करने की क्षमता सम्मिलित है।

**7.3 शिक्षक जागरूकता**– यह शब्द उस स्तर को दर्शाता है, जिस पर शिक्षक सतत् विकास लक्ष्यों के बारे में जानकारी, संवेदनशीलता और उनके महत्त्व को पहचानते हैं। यहाँ जागरूकता का अर्थ केवल सूचना ज्ञान तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें शिक्षक का दृष्टिकोण संवेदनशीलता और इन लक्ष्यों के प्रति अपनाया गया व्यवहारिक रुख भी शामिल है।

**7.4 शिक्षण व्यवहार**– अध्ययन में शिक्षण व्यवहार से तात्पर्य उन पद्धतियों, गतिविधियों, रणनीतियों और मूल्य आधारित दृष्टिकोण से है, जिनका शिक्षक कक्षा में उपयोग करते हैं। इन्हीं माध्यमों से शिक्षक सतत् विकास लक्ष्यों से जुड़े विचारों, मूल्यों और अपेक्षित व्यवहार को विद्यार्थियों तक पहुँचाते हैं और कक्षा परिवेश में उन्हें वास्तविक रूप से लागू करते हैं।

**7.5 मूल्य आधारित शिक्षा**– यह वह शिक्षण प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत शिक्षक नैतिकता, संवेदनशीलता, समानता, उत्तरदायित्व और पर्यावरण अनुकूल दृष्टिकोण जैसे मूल्यों को शिक्षण अधिगम अनुभवों में सम्मिलित करते हैं। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों में समाजोपयोगी, जिम्मेदार और सकारात्मक व्यवहार विकसित करना है।

**8. सतत् विकारा लक्ष्य (एस.डी.जी.)**– सतत् विकास लक्ष्य, जिन्हें संक्षेप में एस.डी.जी. कहा जाता है, संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2015 में निर्धारित 17 वैश्विक लक्ष्यों का एक व्यापक और सर्वसमावेशी ढाँचा हैं। इन लक्ष्यों का उद्देश्य विश्व को सामाजिक रूप से अधिक न्यायपूर्ण, आर्थिक रूप से संतुलित और पर्यावरणीय दृष्टि से सुरक्षित बनाना है। एस.डी.जी. का मूल विचार यह है कि विकास केवल वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करने तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के संसाधनों और जीवन स्तर को सुरक्षित रखते हुए होना चाहिए। इन लक्ष्यों में गरीबी उन्मूलन, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, लैंगिक समानता, स्वच्छ जल और स्वच्छता, स्वच्छ ऊर्जा, सम्मानजनक कार्य, असमानताओं में कमी, जलवायु परिवर्तन का समाधान, शांति और न्याय, तथा वैश्विक साझेदारी जैसे महत्वपूर्ण आयाम शामिल हैं- जो आधुनिक समाज के समग्र विकास के लिए अनिवार्य माने जाते हैं। एस.डी.जी. केवल अंतरराष्ट्रीय नीतियों या औपचारिक कार्यक्रमों तक सीमित नहीं हैं, इनका प्रभाव शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक नीति, संसाधन प्रबंधन और सामाजिक ढाँचे के हर स्तर पर देखा जा सकता है। विशेष रूप से शिक्षा को इन लक्ष्यों की प्राप्ति का सबसे शक्तिशाली माध्यम माना गया है, क्योंकि शिक्षा ही जिम्मेदार, संवेदनशील, पर्यावरण जागरूक और नैतिक मूल्यों से युक्त नागरिकों का निर्माण करती है। विद्यालयी शिक्षा के माध्यम से सहयोग, समानता, पर्यावरण संरक्षण, जिम्मेदार उपभोग, वैश्विक नागरिकता और शांति जैसे एस.डी.जी. आधारित मूल्यों को प्रभावी रूप से विद्यार्थियों में विकसित किया जा सकता है। सतत् विकास लक्ष्य यह भी स्पष्ट करते हैं कि विकास का अर्थ केवल आर्थिक वृद्धि नहीं है। वास्तविक विकास तभी सार्थक है जब समाज के सभी लोगों को समान अवसर, सुरक्षित पर्यावरण और गुणवत्तापूर्ण जीवन उपलब्ध हो। इसी दृष्टि से एस.डी.जी. आज आधुनिक विश्व के विकास का मार्गदर्शक ढाँचा बन चुके हैं, जो राष्ट्रों, समुदायों, विद्यालयों और शिक्षकों को एक साझा दिशा प्रदान करते हैं– एक ऐसे समाज की ओर, जो स्थायी, समतामूलक और मानव केंद्रित हो।

**9. एस.डी.जी. 4 गुणवत्तापूर्ण शिक्षा**– सतत् विकास लक्ष्य 4 का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि प्रत्येक बच्चा, युवा और वयस्क समावेशी, समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर सके तथा जीवनपर्यंत सीखने के अवसर पा सके। यह लक्ष्य इस विचार पर आधारित है कि शिक्षा केवल सामाजिक और आर्थिक प्रगति का साधन नहीं है, बल्कि व्यक्तित्व विकास, सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व और वैश्विक नागरिकता की भावना को भी मजबूत करती है। एस.डी.जी. 4 यह अपेक्षा करता है कि शिक्षा केवल ज्ञान तक

सीमित न रहे, बल्कि विद्यार्थियों में कौशल, मूल्य, जीवन योग्यताएँ, समस्या समाधान क्षमता और सहयोगात्मक व्यवहार को भी विकसित करे। इस लक्ष्य के तहत विद्यालयों में प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता, सुरक्षित और अनुकूल शिक्षण वातावरण, समावेशी शिक्षा, तकनीकी और व्यावसायिक कौशलों का विकास, समान अवसर तथा वंचित समूहों के लिए विशेष सहायता जैसी व्यवस्थाओं को अत्यावश्यक माना गया है। यह लक्ष्य शिक्षा प्रणाली को अधिक न्यायसंगत, लचीला और भविष्य केंद्रित बनाने की दिशा प्रदान करता है। एस.डी.जी. 4 का सार यह है कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थी केवल ज्ञानवान ही न बनें, बल्कि उत्तरदायी, संवेदनशील और सतत् विकास के मूल्यों से संपन्न नागरिक भी बनें जो अंततः समाज और विश्व के संतुलित एवं स्थायी विकास में सक्रिय योगदान दे सकें।

10. **एस.डी.जी. 4 और शिक्षण व्यवहार**— सतत् विकास लक्ष्य 4 का मूल केंद्र सभी को समावेशी, समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है। इस लक्ष्य को वास्तविक रूप में लागू करने में शिक्षक का शिक्षण व्यवहार सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा केवल पाठ्य सामग्री के प्रसारण पर निर्भर नहीं होती, बल्कि इस बात पर भी निर्भर करती है कि शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया में किन पद्धतियों, गतिविधियों, मूल्यों और संवाद शैली का उपयोग करता है। एस.डी.जी. 4 शिक्षण व्यवहार को मूल्य आधारित, कौशल उन्मुख, सहयोगात्मक और जीवन केंद्रित बनाने की दिशा में बल देता है, ताकि शिक्षा केवल जानकारी प्रदान करने की प्रक्रिया न रहकर व्यवहारिक कौशल और जिम्मेदार नागरिकता के विकास का माध्यम बन सके। एस.डी.जी. 4 के अनुरूप शिक्षण व्यवहार में शिक्षक विद्यार्थियों की विविध आवश्यकताओं और क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए समावेशी पद्धतियों का प्रयोग करता है। इसमें गतिविधि आधारित शिक्षण, परियोजना आधारित अधिगम, समस्या समाधान, आलोचनात्मक चिंतन और समूह सहयोग जैसी प्रक्रियाएँ प्रमुख स्थान रखती हैं। इसके साथ ही शिक्षण में समान अवसर, लैंगिक संवेदनशीलता, पर्यावरण जागरूकता और सामाजिक न्याय जैसे मूल्यों का समावेश आवश्यक माना जाता है। इस प्रकार शिक्षक का शिक्षण व्यवहार ही एस.डी.जी. 4 का वास्तविक क्रियान्वयन है, क्योंकि उसी के माध्यम से विद्यार्थी ज्ञान के साथ साथ संवेदनशीलता, उत्तरदायित्व, कौशल और जीवन उन्मुख दृष्टिकोण विकसित करते हैं। इसलिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए शिक्षकों का जागरूक, आधुनिक, समावेशी और सतत् विकास आधारित शिक्षण व्यवहार अत्यंत आवश्यक है।

11. **एस.डी.जी. 4 का भारत में कार्यान्वयन**— भारत में सतत् विकास लक्ष्य 4 के क्रियान्वयन को शिक्षा से संबंधित नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों के माध्यम से लगातार मजबूत किया जा रहा है। गुणवत्तापूर्ण, समावेशी और समान शिक्षा को राष्ट्रीय प्राथमिकता मानते हुए भारत ने विद्यालयी स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक अनेक सुधारात्मक पहलें प्रारंभ की हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण कदम माना जाता है, क्योंकि यह शिक्षा को मूल्य आधारित, कौशल उन्मुख, लचीला, समावेशी और बहुविषयक बनाने पर विशेष बल देती है। इसके अंतर्गत मातृभाषा में प्रारंभिक शिक्षा, समग्र मूल्यांकन, कौशल एवं व्यावसायिक शिक्षा, डिजिटल अधिगम, तथा शिक्षक प्रशिक्षण जैसे क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गई है। भारत सरकार "समग्र शिक्षा अभियान" के माध्यम से विद्यालयों में आधारभूत ढाँचे, तकनीकी सुविधाओं, छात्रवृत्तियों, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के समर्थन और शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को सुदृढ़ करने के दिशा में कार्य कर रही है। इसी तरह राष्ट्रीय डिजिटल शिक्षा पहलों—जैसे "स्वयं पोर्टल", "दीक्षा प्लेटफॉर्म" और "विद्या प्रवेश" ने शिक्षा की उपलब्धता, गुणवत्ता और समानता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। एस.डी.जी. 4 की प्राप्ति में शिक्षक प्रशिक्षण को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है, इसलिए राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर विभिन्न संस्थान शिक्षकों में आधुनिक शिक्षण पद्धतियों, मूल्यों और आवश्यक कौशलों का विकास कर रहे हैं। यद्यपि भारत में सामाजिक आर्थिक विषमता, शैक्षणिक संसाधनों की कमी और क्षेत्रीय असमानताओं जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं, फिर भी नीतिगत सुधारों, डिजिटल पहलों और समावेशी कार्यक्रमों के माध्यम से देश सतत् विकास लक्ष्य 4 की दिशा में निरंतर प्रगति कर रहा है।

12. **एस.डी.जी. 4 के संदर्भ में शिक्षक प्रशिक्षण**— सतत् विकास लक्ष्य 4 गुणवत्तापूर्ण, समावेशी और समान शिक्षा के विस्तार पर बल देता है, और इस उद्देश्य की प्राप्ति में शिक्षक प्रशिक्षण की भूमिका अत्यंत केंद्रीय है। शिक्षक प्रशिक्षण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से शिक्षक न केवल विषय ज्ञान प्राप्त करते हैं, बल्कि मूल्य आधारित सोच, समावेशी दृष्टिकोण, कौशल आधारित शिक्षण और सतत् विकास से संबंधित व्यवहारिक दक्षताएँ भी विकसित करते हैं। एस.डी.जी. 4 के अनुरूप शिक्षक प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य ऐसे शिक्षकों का निर्माण करना है जो विद्यार्थियों में आलोचनात्मक सोच, सहयोग, समस्या समाधान क्षमता, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व और वैश्विक नागरिकता जैसे आवश्यक गुणों का विकास कर सकें। भारत में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षक प्रशिक्षण को आधुनिक, लचीला और बहुआयामी बनाने की स्पष्ट दिशा प्रदान की है। इस नीति के अंतर्गत शिक्षक शिक्षा को चार वर्षीय समग्र पाठ्यक्रम, अनुभवात्मक अधिगम, डिजिटल प्रशिक्षण और विद्यालय केंद्रित व्यावहारिक अनुभवों से जोड़ने पर जोर दिया गया है। "समग्र शिक्षा अभियान", "एनसीटीई मॉडल पाठ्यक्रम" और डिजिटल प्लेटफॉर्म जैसे "दीक्षा" के माध्यम से शिक्षकों को निरंतर व्यावसायिक विकास के अवसर प्रदान किए जा रहे हैं। एस.डी.जी. 4 के संदर्भ में शिक्षक प्रशिक्षण का एक महत्वपूर्ण आयाम यह भी है कि शिक्षक समानता, पर्यावरण संरक्षण, जीवन कौशल, सामाजिक न्याय और जिम्मेदार नागरिकता जैसे सतत् विकास से जुड़े मूल्यों को अपने दैनिक शिक्षण व्यवहार में शामिल करें। इसी उद्देश्य से प्रशिक्षण कार्यक्रमों में पर्यावरण शिक्षा, गतिविधि आधारित अधिगम, समावेशी कक्षा प्रबंधन, मूल्य शिक्षा और स्थानीय संदर्भों से संबद्ध शिक्षण सामग्री को सम्मिलित किया जा रहा है। स्पष्ट है कि मजबूत, आधुनिक और सतत् विकास उन्मुख शिक्षक प्रशिक्षण के बिना एस.डी.जी. 4 की पूर्ण प्राप्ति संभव नहीं

है। शिक्षक ही वे वास्तविक परिवर्तनकारी माध्यम हैं, जो इस लक्ष्य को कक्षा स्तर पर प्रभावी रूप में लागू कर सकते हैं।

13. **एस.डी.जी. समझ और शिक्षण व्यवहार के बीच संबंध**– सतत् विकास लक्ष्यों की समझ और शिक्षक के शिक्षण व्यवहार के बीच एक गहरा और प्रत्यक्ष संबंध पाया जाता है। जब शिक्षक सतत् विकास लक्ष्यों–जैसे पर्यावरण संरक्षण, समावेशिता, सामाजिक समानता, वैश्विक नागरिकता और उत्तरदायी जीवन शैली को गहराई से समझते हैं, तो वे स्वाभाविक रूप से इन मूल्यों को अपनी कक्षा की गतिविधियों, उदाहरणों, शिक्षण पद्धतियों और दैनिक व्यवहार में शामिल करने लगते हैं। शिक्षक की समझ जितनी व्यापक और स्पष्ट होती है, उनका शिक्षण व्यवहार उतना ही अधिक मूल्य आधारित, गतिविधि उन्मुख, समस्या समाधान केंद्रित और संवेदनशील दृष्टिकोण वाला बनता जाता है। इसके विपरीत, यदि शिक्षक की एस.डी.जी. संबंधी समझ सीमित या सतही होती है, तो उनके शिक्षण व्यवहार में स्थिरता आधारित तत्वों का समावेश कम हो जाता है और वे अक्सर पारंपरिक तथा रटंत आधारित पद्धतियों तक ही सीमित रह जाते हैं। विभिन्न शोध यह संकेत देते हैं कि एस.डी.जी. की स्पष्ट समझ शिक्षकों में सकारात्मक दृष्टिकोण, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व और सामाजिक न्याय के प्रति संवेदनशीलता विकसित करती है, जो सीधे उनके शिक्षण व्यवहार पर प्रभाव डालती है। अतः यह कहा जा सकता है कि सतत् विकास लक्ष्यों की गहरी समझ शिक्षक के शिक्षण व्यवहार को रूपांतरित करती है और शिक्षा को अधिक गुणवत्तापूर्ण, समावेशी तथा स्थिरता उन्मुख बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

14. **निष्कर्ष**– सतत् विकास लक्ष्य आज की शिक्षा प्रणाली का एक आवश्यक और अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं। कक्षा स्तर पर इन लक्ष्यों के प्रभावी क्रियान्वयन में शिक्षक की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि वही विद्यार्थियों के विचारों, मूल्यों और सामाजिक व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप से आकार देते हैं। अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि जब शिक्षक सतत् विकास लक्ष्यों की गहन समझ रखते हैं और उनके सामाजिक महत्व को महसूस करते हैं, तो वे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में पर्यावरणीय चेतना, समानता, न्याय, शांति, सहयोग और वैश्विक नागरिकता जैसे मूल्यों को सहज रूप से शामिल कर पाते हैं। साथ ही, यदि शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सतत् विकास लक्ष्यों पर आधारित मॉड्यूल जोड़े जाएँ, विद्यालयी नीतियों में स्पष्ट दिशा निर्देश उपलब्ध हों और उपयुक्त शिक्षण सामग्री प्रदान की जाए, तो गुणवत्तापूर्ण शिक्षा अर्थात् एस.डी.जी. 4 की प्राप्ति और अधिक प्रभावी रूप से संभव हो सकेगी। इस वैचारिक अध्ययन का मुख्य निष्कर्ष यह है कि सतत् विकास लक्ष्यों के प्रति शिक्षक की अवधारणात्मक समझ ही उसके शिक्षण व्यवहार को दिशा देती है। जब शिक्षक इन लक्ष्यों को समझते, अपनाते और अपने व्यवहार में लागू करते हैं, तब शिक्षा वास्तव में समाज को स्थायी विकास, न्याय, समानता और नैतिकता की ओर अग्रसर करने का सशक्त माध्यम बन जाती है।

**References**


1. Dhaka, R. (2024). Role of teachers and higher Education achieving the Sustainable Development Goals. International Journal for multidisciplinary Research. 6(1). E-ISSN:2582-2160. http://doi.org/10.36948/ijfmr.2024.v06i01.11792
2. Alena, L. & Marina D. (2024). Future Teacher's knowledge attitudes and practice regarding Sustainable new Development Goals. Education and Development 2024. 31-35. https://doi.org/10.36315/2024v/end007
3. Gomez-Gomez M. & Garia-Lazaro, D. (2023). Awareness and Knowledge of the Sustainable Development Goals in teacher training. 27(3). ISSN:1138-414X. 243-264. http://orcid.org/0000-003-3253-6822
4. Garicia-Gazale, E., Jimenez-Fontana, R. &Azcarate, R. (2020). Education for Sustainability and Sustainable Development Goals: Pre-Service Teacher's Perceptions and Knowledge. Sustainability 12(18). Faculty of Education, Universidad de Cadiz Puerto Road, 11519, Spain. http://doi.org/103390/su12187741
5. https://www.orfonline.org/hindi/expert-speak/sdg-4-quality-education-and-its-significance-in-the-developing-world
6. United Nations. (2020). The sustainable development goals report 2020. United Nations Publications.
7. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-analysis/niti-aayog-sdg-india-index-2023-24.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 123-128
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.20
SJIF (2025) : 8.749

समीक्षा आलेख

# Snake Venomand its Importance

Richa Shukla[1] and Sanjive Shukla[2]
[1]Department of Zoology, Navyug Kanya P.G. College, Lucknow-226 004, U.P., India
[2]Department of Zoology, BSNV PG College, Lucknow-226 001, U.P., India
dr.s.richa@gmail.com, sanjiveshukla@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 29-11-2025**

**Abstract-** Snake venom is a biological substance made up of a complex mixture of enzyme, peptide & protein which affect human body in various ways. Conventionally, it is considered as poisonous but now days it is important in various field like medical research, antivenom production and drug designing. Present article deals with types of venom and various standard method of processing and storage of venom along with critical analysis of importance of venom in various fields. For analysis secondary causes from toxicity, Zoology Handbooks, research literature and data of WHO has been utilized. It address that for conservation of biological activity of venom, filtration and Freeze Drying techniques are required. It appears that snake venom is very costly commonly known as 'liquid gold' which is used in areas like medical field as well as in Environmental Science.

**Key words-** Snake venom, Venom processing and storage, Antivenom production, Liquid gold

# सर्प विष एवं इसका महत्व

ऋचा शुक्ला[1] एवं संजीव शुक्ल[2]
[1]प्राणि विज्ञान विभाग, नवयुग कन्या पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226 004, उ0प्र0, भारत
[2]प्राणि विज्ञान विभाग, बीएसएनवी पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226 001, उ0प्र0, भारत
dr.s.richa@gmail.com, sanjiveshukla@gmail.com

**सार**– साँप का जहर एंजाइम, पेप्टाइड और प्रोटीन के जटिल मिश्रण से बना एक खास तरह का बायोलॉजिकल स्राव होता है। जो शरीर को कई तरह से प्रभावित करता है। पारंपरिक रूप में जहाँ साँप के जहर को केवल जहरीला माना जाता है, वहीं अब चिकित्सकीय अनुसंधान, एंटीवेनम उत्पादन, औषधि निर्माण आदि क्षेत्रों में साँप के जहर का बहुत महत्व है। प्रस्तुत शोध में साँप के जहर के प्रभाव के आधार पर प्रकारों, जहर की प्रोसेसिंग और संरक्षण के लिए उपयोग किए जाने वाले मानक तरीकों का विश्लेषण किया गया है। साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में साँप के जहर के महत्व की एक व्यवस्थित समीक्षा प्रस्तुत की गयी है। इसके लिए द्वितीयक स्रोतों जैसे–विषविज्ञान व प्राणिविज्ञान से संबंधित हैन्डबुक, संबंधित शोध साहित्य एवं विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी दिशानिर्देश से प्राप्त आंकड़ों को शामिल किया गया है। विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि साँप के जहर की जैविक सक्रियता को संरक्षित रखने के लिए फिल्ट्रेशन, फ्रीज–ड्राइंग जैसी उचित प्रसंस्करण तकनीकें अत्यंत आवश्यक होती हैं। शोध के निष्कर्ष यह भी बताते हैं कि साँप का जहर बहुत मूल्यवान संसाधन है जिसे "तरल सोना" भी कहा जाता है तथा इसका उपयोग चिकित्सा से लेकर पर्यावरणीय विज्ञान तक विभिन्न क्षेत्रों में किया जा रहा है।

**बीज शब्द**– साँप का जहर, जहर का प्रसंस्करण एवं भंडारण एंटीवेनम उत्पादन, तरल सोना

1. **परिचय**– सर्प विष अत्यंत मूल्यावन है। बाजार भाव के हिसाब से इसे "तरल सोना" भी कहा जाता है। सांप के जहर की संरचना काफी जटिल होती है। यह अपने शक्तिशाली प्रभावों के कारण सदियों से वैज्ञानिकों को अपनी ओर आकर्षित करता आ रहा है। कुछ विकसित साँप जैसे–Caenophidia के अंतर्गत ऐसे जीवित साँपों का समूह आता है जिनमें चिकित्सकीय रूप से महत्वपूर्ण जहरीले साँप पाए जाते हैं। इसका जहर एक अत्यधिक विषैली लार होती है जिसमें जूटॉक्सिन पाया जाता हैं। इस जहर से यह खुद को बाहरी खतरों से भी बचाता है। साँप अपना जहर काटने के दौरान अनोखे नुकीले दांतों से इंजेक्ट करता है, हालाँकि इसकी कुछ प्रजातियाँ जहर उगलने में भी सक्षम होती हैं। साँप का जहर कितना जहरीला है यह उसमें मौजूद प्रोटीन के द्वारा पता चलता है। जहर के प्रोटीन में कई अनुक्रम होते हैं जिसकी लंबाई कुछ दर्जन से लेकर सैकड़ों अमीनो एसिड रेसिड्यू तक अलग–अलग हो सकती है। एक प्रोटीन का अनुक्रम उसकी एक्टिविटी के बारे में बताता है और इसके कार्य को थ्री–डाइमेंशनल स्ट्रक्चर (फोल्ड) ही तय करता है। ऐसे प्रोटीन जिसमें कंजर्व्ड फोल्ड (conserved fold) हों उन्हें structural homolog कहा जाता है और आमतौर पर यही विष के विषैले घटक में पाए जाते हैं। इसके जहर में 20 से अधिक यौगिक उपस्थित होते हैं, जिनमें अधिकतर प्रोटीन और पॉलीपेप्टाइड होते हैं। इस मिश्रण में कई विषैले और घातक गुण भी होते हैं। साँप का जहर शिकार को स्थिर करने का काम करता है। इसके जहर में मौजूद एंजाइम शिकार को पचाने में मदद करते हैं और इसके जहर में मौजूद कुछ प्रोटीन जैविक कार्यों पर बहुत विशिष्ट प्रभाव डालते हैं, जिसमें रक्त का जमना, रक्तचाप का नियमन (Blood

Pressure Regulation) और तंत्रिका या मांसपेशियों के आवेगों का संचरण (transmission of nerve or muscle impulses) शामिल है। इन सभी कारणों से सांप का जहर चिकित्सकीय अनुसंधान और विकास में बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। इसका इस्तेमाल नैदानिक उपकरण (diagnostic equipment) और कई तरह की दवाओं को बनाने में भी किया जाने लगा हैं। प्रस्तुत शोध लेख में साँप के जहर की प्रकृति, संगठन प्रकार का अध्ययन किया गया हैं। साथ ही यह जानने का प्रयास किया गया है कि इसको अनुसंधान के लिए कैसे तैयार किया जाता है और विभिन्न क्षेत्रों में इसका क्या महत्व है।

## 2. शोध का उद्देश्य

1. साँप के जहर की प्रकृति और घटक का अध्ययन करना।
2. प्रभाव के आधार पर साँप के जहर के प्रकारों का अध्ययन करना।
3. अनुसंधान के लिए इसको तैयार करने की प्रक्रिया का अध्ययन करना।
4. विभिन्न क्षेत्रों में साँप के जहर के महत्व का अध्ययन करना।

3. **शोध प्रविधि**– प्रस्तुत शोध अध्ययन में गुणात्मक, वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि को सम्मिलित किया गया है, जिसके अंतर्गत द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त आँकड़ों जैसे– विषविज्ञान व प्राणिविज्ञान से संबंधित हेन्ड्बुक, संबंधित शोध साहित्य एवं विश्व स्वास्थ्य संगठन के आधिकारिक प्रकाशन से प्राप्त लेखों का उपयोग किया गया है। साँप के जहर की प्रकृति और घटक– साँप का जहर एक बदला हुआ लार होता है जो एक खास तरह की ग्लैंड्स में बनता है। यह नुकीले दांतों से निकलता है जिन्हें फैंग्स कहते हैं। इस जहर का इस्तेमाल यह शिकार पकड़ने और खुद के बचाव के लिए करता है। इसमें बहुत खास टॉक्सिन मिक्सचर बनते हैं जो शिकार को जल्दी से स्थिर कर देते हैं और निगलने से पहले ही उसका पाचन शुरू कर देते हैं। जहर हल्के पीले रंग का होता है। रासायनिक रूप से कई जहरों के सूखे वजन का 90–95% हिस्सा प्रोटीन से बना होता है, जिसमें एंजाइम और non–enzymatic toxins शामिल होते हैं, जबकि मेटल आयन और छोटे पेप्टाइड जैसे कम आणविक भार वाले कॉम्पोनेंट इसका एक छोटा हिस्सा बनाते हैं। इसकी बनावट और असर अलग अलग प्रजातियों में अलग अलग होता है। कुछ में जहर तेजी से काम करता है, जिससे जरूरी शारीरिक क्रियाएं जैसे कि तंत्रिका संचरण, खून का थक्का जमना और कोशिका की बनावट खराब हो जाती है, जिससे लकवा, रक्तस्राव, या टिशू का गलना हो सकता है।

साँप के जहर में कई घटक पाए जाते हैं। इन घटकों का विस्तृत वर्णन इस प्रकार है–

## 4. मुख्य प्रोटीन घटक

4.1 कई जहर में एंजाइम मुख्य घटक होते हैं, जो वाइपरिड जहर (अपचमतपक अमदवउ) का 80–90% और एलापिड जहर (elapid venom) का 25–70% बनाते हैं, और इनमें फॉस्फोलिपेज $A_2$, मेटालोप्रोटीनेज, सेरीन प्रोटीनेज, L–अमीनो एसिड ऑक्सीडेज और हाइलूरोनिडेज शामिल होते हैं। ये एंजाइम कोशिका झिल्लियों को तथा वाह्य कोशिकीय मैट्रिक्स को नष्ट कर देते हैं तथा रक्त के थक्के जमने की प्रक्रिया को भी बदल देते है।

4.2 गैर–एंजाइमेटिक टॉक्सिन (Non–enzymatic toÜins) में α- और β- न्यूरोटॉक्सिन, साइटोटॉक्सिन (कार्डियोटॉक्सिन), डिसइंटीग्रिन और C- टाइप लेक्टिन–जैसे प्रोटीन शामिल होते हैं जो विशेष रूप से receptor या चैनलों से जुड़ते हैं और न्यूरोट्रांसमिशन, प्लेटलेट फंक्शन और vascular integrity (रक्त वाहिकाओं की स्वस्थ और सुदृढ़ स्थिति) में दखल देते हैं। कुछ elapid venoms में, साइटोटॉक्सिक थ्री–फिंगर टॉक्सिन (cytotoxic three–finger toxin) जहर का 40–70% हिस्सा हो सकता है, जिससे सीधे कोशिका झिल्ली का नुकसान और गंभीर स्थानीय ऊतक क्षति होता है।

5. **कम आणविक वजन वाले घटक**– प्रोटीन के अलावा, सांप के जहर में मेटल आयन, एमाइन, न्यूक्लियोसाइड, लिपिड, कार्बोहाइड्रेट और छोटे पेप्टाइड जैसे छोटे अणु भी पाए जाते हैं, जो आमतौर पर 1.5 kDals कम होते हैं।

6. **साँप के जहर के प्रकार**– सांप का जहर विशेष ग्रंथियों द्वारा निर्मित होता है । शरीर पर इस जहर का प्रभाव अलग–अलग पड़ता हैं। अपने प्रभाव के अनुसार यह विष तीन प्रकार के होते हैं–

1. हेमोटॉक्सिक विष (Hemotoxic Venom)
2. न्यूरोटॉक्सिक विष (Neurotoxic Venom)
3. साइटोटॉक्सिक विष (Cytotoxic Venom)

6.1. हेमोटॉक्सिक विष (Hemotoxic Venom)– हेमोटॉक्सिक विष मुख्य रूप से संचार प्रणाली को निशाना बनता हैं, जिससे जीव की रक्त

कोशिकाओं और ऊतकों को नुकसान पहुंचता है। इस प्रकार के विष से जीवों के शरीर में कई समस्याएं हो सकती हैं जैसे रक्त का थक्का जमना (blood clotting disorders), आंतरिक रक्तस्राव (internal bleeding) और ऊतकों का विनाश (tissue destruction) होना आदि। hemotoxic venom जिन सापों में पाया जाता हैं उन्हें hemotoxic snakes कहा जाता हैं। ऐसे कुछ सापों के नाम हैं वाइपर (जैसे रसेल वाइपर) और पिट वाइपर (जैसे रैटलस्नेक)। इस जहर से शरीर पर कई अन्य प्रभाव भी पड़ते हैं जैसे– दर्द, सूजन, अत्यधिक रक्तस्राव, अंग क्षति इत्यादि।

6.2 **न्यूरोटॉक्सिक विष** (Neurotoxic Venom)– न्यूरोटॉक्सिक विष तंत्रिका तंत्र को प्रभावित करता है और nerve signals के संचरण को भी बाधित करता है। जब यह विष किसी जीव के शरीर में पहुँचता हैं तो उसमें कई तरह के लक्षण दिखाई देते हैं जैसे– लकवा मारना, दृष्टि धुंधली होना, सांस लेने में कठिनाई होना आदि। इसके कुछ समय बाद व्यक्ति धीरे अपनी चेतना खोने लगता है और कुछ समय बाद उसकी मृत्यु हो जाती है। न्यूरोटॉक्सिक विष कोबरा, कोरल सांप और समुद्री सांपों की कुछ प्रजातियों में पाया जाता है।

6.3 **साइटोटॉक्सिक विष** (Cytotoxic Venom)– साइटोटॉक्सिक एक ऐसा विष है जो उस जगह की कोशिकाओं और ऊतकों को नष्ट कर देता है जहाँ पर साँप हमला करता है। इस विष से व्यक्ति को अधिक नुकसान नहीं होता हैं सिर्फ स्थानीय क्षति ही होती है, जैसे– गंभीर सूजन, नेक्रोसिस, तथा कोशिकाओं का टूटना आदि। साइटोटॉक्सिक विष स्पिटिंग कोबरा, black-necked spitting cobra और कुछ वाइपर में पाया जाता है।

7. **साँप के जहर को इकट्ठा करने तथा तैयार करने का तरीका**– साँप के जहर को इकट्ठा करने की प्रक्रिया को snake milking कहते है। यह एक नाजुक प्रक्रिया होती है जिसमें जीवित साँप का जहर निकला जाता है और उसका इस्तेमाल वैज्ञानिक अध्ययन या एंटीवेनम उत्पादन के लिए किया जाता है। इस प्रक्रिया को करने के लिए एक प्रशिक्षित पेशेवर अर्थात् एक हर्पेटोलॉजिस्ट की आवश्यकता होती है। इस प्रक्रिया को करने के लिए कई कदम उठाये जाते हैं जो निम्नलिखित हैं–

7.1. **साँप को पकड़ने और उसका जहर निकालने का सही तरीका** (The right way to catch a snake and extract its venom)–साँप का जहर निकालने के लिए उसके सिर को और उसके शरीर को सावधानी से पकड़ना बहुत आवश्यक है। यदि उसे उचित तरीके से नहीं पकड़ा जाए तो यह काट भी सकता है इसीलिए इस कार्य को करने के लिए एक प्रशिक्षित पेशेवर की आवश्यकता होती है जिससे साँप और हैंडलर दोनों की सुरक्षा सुनिश्चित हो सके। इसका जहर निकालने के लिए एक शीशी का इस्तेमाल किया जाता है जिस पर पतली झिल्ली लगी रहती है जिसमें वह आसानी से काट सकता है। जैसे ही साँप उस पर काटता है उसका जहर कंटेनर में इंजेक्ट हो जाता है। जिसे इकट्ठा करके आगे की प्रक्रिया के लिए सुरक्षित तरीके से संग्रहित कर दिया जाता है।

7.2. **जहर का प्रसंस्करण करना** (Processing the Venom)– जहर को इकट्ठा करने के बाद इसे फिल्टर किया जाता है। इसके बाद इसे freeze-dried या लिक्विड नाइट्रोजन वाले वातावरण में संग्रहीत किया जाता है। फ्रीज–ड्राइंग (Freeze-drying) को लाइओफिलाइजेशन (lyophilization) के नाम से भी जाना जाता है। इस प्रक्रिया से विष को लंबे समय तक सुरक्षित रखने में मदद मिलती है। इससे विष की जैविक गतिविधि बनी रहती है, जिससे इसका इस्तेमाल शोध और एंटीवेनम उत्पादन के लिए किया जाता है।

यह प्रक्रिया विस्तार से कैसे होती है–

1. **छानना** (Filtration)– विष प्रसंस्करण में सबसे पहले हम एकत्र किए गए साँप के जहर को छानते हैं जिससे उसमें उपस्थित सभी तरह के बैक्टीरिया और अन्य प्रदूषकों को अलग किया जा सके। इस प्रक्रिया से यह सुनिश्चित होता है कि विष शुद्ध है और बाद की प्रक्रिया के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

2. **फ्रीज–ड्राइंग (लाइओफिलाइजेशन)** (Freeze-Drying -Lyophilization)– फिल्टरेशन और वैकल्पिक सेंट्रीफ्यूजेशन की प्रक्रिया के बाद, विष के बायोएक्टिव यौगिकों को संरक्षित करने के लिए इसे फ्रीज–ड्राय (freeze&Dry) किया जाता है। फ्रीज–ड्राइंग, या लाइओफिलाइजेशन में विष को जमाया जाता है और फिर ऊर्ध्वपातन (ठोस बर्फ का सीधे वाष्प में बदलना) की क्रिया द्वारा इसमें उपस्थित पानी को हटा दिया जाता है। इस विधि के द्वारा विष की वास्तविक संरचना और जैविक गतिविधि बनी रहती हैं तथा इसे बिना खराब हुए लंबे समय तक संग्रहीत किया जा सकता है। फ्रीज–ड्राई किए गए विष को उसके तरल रूप की तुलना में आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पंहुचाया जा सकता है। इसके लिए किसी विशेष कंटेनर की भी आवश्यकता नहीं होती है।

8. **कुछ वैकल्पिक चरण** (Optional steps)– छानने की प्रक्रिया के बाद कुछ ऐसे चरण होते हैं जो वैकल्पिक होते हैं जिन्हें वैज्ञानिक कुछ विशेष उत्पाद प्राप्त करने के लिए ही करते हैं। इनका वर्णन इस प्रकार है–

8.1. **सेंट्रीफ्यूजेशन** (Centrifugation)– इस चरण की आवश्यकता हमेशा नहीं होती है। यह प्रक्रिया तभी की जाती है जब शोधकर्ताओं को विष से किसी विशिष्ट प्रोटीन या एंजाइम की आवश्यकता होती है। इस प्रक्रिया में विष को उनके आणविक भार के आधार पर विभिन्न प्रकार के घटकों को अलग–अलग करने के लिए सेंट्रीफ्यूज किया जाता हैं। इस प्रक्रिया को छानने के बाद किया जाता है।

8.2. **तरल नाइट्रोजन में भंडारण** (Storage in Liquid Nitrogen)– तरल नाइट्रोजन में विष को संग्रहित करना भी एक वैकल्पिक चरण ही हैं। इसमें साँप के जहर को उसके तरल रूप में अल्ट्रा–कम तापमान पर तरल नाइट्रोजन का उपयोग करके संग्रहीत किया जाता है।

इस तापमान पर विष स्थिर रहता है, क्योंकि अत्यधिक ठंडा तापमान उन एंजाइमेटिक प्रतिक्रियाओं को रोक देता हैं जो विष के सक्रिय यौगिक को तोड़ सकता है। इसके साथ ही यह बैक्टीरिया और फंगल संदूषण के जोखिम को भी कम करता हैं।

8.3. **विखंडन एवं शुद्धिकरण** (Fractionation and Purification)– विष से विशेष प्रकार की जैविक गतिविधियों को करने वाले विशिष्ट प्रोटीन, एंजाइम या पेप्टाइड्स को अलग करने के लिए इसका विखंडन एवं शुद्धिकरण किया जाता है। यह निम्न तकनीकों के माध्यम से होता है–

8.3.1 **क्रोमैटोग्राफी**– इस प्रक्रिया के द्वारा जहर के घटकों को उनके आकार, आवेश या कुछ पदार्थों के प्रति आकर्षण के आधार पर अलग किया जाता है।

8.3..2 **इलेक्ट्रोफोरेसिस**– यह एक ऐसी विधि है जिसमें जहर के अणुओं को उनके आकार और आवेश के आधार पर अलग करने के लिए विद्युत क्षेत्र का उपयोग किया जाता है।

9. **कीटाणुनाशन** (Sterilization)– संसाधित विष (processed venom) से शेष रोगजनक को हटाने के लिए उसे sterilized करने की आवश्यकता होती है। यह प्रक्रिया तब महत्वपूर्ण होती है जब विष का उपयोग चिकित्सा अनुप्रयोगों, जैसे anti–venom के उत्पादन में या दवा अनुसंधान में किया जाता है।

10. **साँप के जहर का महत्व** (Importance of Snake Venom)– साँप के जहर का इस्तेमाल चिकित्सा से लेकर पर्यावरणीय विज्ञान तक विभिन्न क्षेत्रों में किया जाता है। नीचे ऐसे ही कुछ प्रमुख क्षेत्र दिए गए हैं जहाँ साँप के जहर का इस्तेमाल विभिन्न रूपों में किया जाता है–

10.1 **चिकित्सा अनुसंधान में** (In medical research)– साँप के जहर में एंजाइम, प्रोटीन और पेप्टाइड जैसे कई बायोएक्टिव अणु होते हैं जिनका उपयोग दवा बनाने में किया जाता है। उदाहरण के लिए, वाइपर के जहर में पाए जाने वाले घटकों का उपयोग उन anticoagulants को विकसित करने के लिए किया गया है जो रक्त के थक्के को जमने से रोकते हैं। जबकि अन्य जहरों के अध्ययन द्वारा उनकी उन क्षमताओं को जानने का प्रयास किया जा रहा हैं जिससे कि कैंसर, उच्च रक्तचाप और तंत्रिका संबंधी विकारों का बेहतर इलाज किया जा सके। वर्तमान समय में चिकित्सा अनुसंधान द्वारा साँप के जहर का इस्तेमाल ऐसी कई दवाइयाँ बनाई गई जिसका इस्तेमाल कई तरह की बीमारियों को दूर करने में किया गया है। इनमें से कुछ का वर्णन इस प्रकार है–

1. Captopril एक एंटीहाइपरटेंसिव दवा है। इसे बोथ्रोप्स जारारका (Bothropsjararaca) सांप के जहर में पाए जाने वाले bradykinin-potentiating peptides (BPPs) से बनाया गया था। यह ब्लड वेसल्स को आराम देता है जिससे ब्लड प्रेशर कम करने में मदद मिलती है।

2) Eptifibatide दवा को Sistrurusmiliarius साँप के जहर से बनाया जाता है और Tirofiban को Echiscarinatus साँप के जहर से बनाया जाता है। इनका उपयोग हार्ट अटैक की स्थितियों में रक्त का थक्का बनने से रोकने के लिए ब्लड थिनर के रूप में किया जाता है।

3) Batroxobin दवा को Bothropsmoojeni सांप के जहर से अलग किया गया है। यह फाइब्रिनोजेन को तोड़ने और थ्रोम्बोलिसिस (thrombolysi) को बढ़ावा देने में मदद करता है। चिकित्सकीय रूप से इसका इस्तेमाल bleeding disorders और thrombosis को प्रबंधित करने के लिए किया जाता है।

4) Crotalusdurissuscollineatus सांप से Collinein–1 मिलता है जो कैंसर कोशिकाओं में पोटेशियम चैनलों को ब्लॉक करता है, जिससे ट्यूमर कोशिकाओं की जीवित रहने की क्षमता कम हो जाती है। इसके अलावा Crotalusdurissusterrificus सांप से Crotamine मिलता है जो कोशिका विभाजन के दौरान कैंसर कोशिकाओं में प्रवेश करके कैंसर रोधी दवा के रूप में कार्य करता है।

10.2 **एंटीवेनम के उत्पादन में** (In Anti venom Production)– साँप के जहर का प्राथमिक और सबसे महत्वपूर्ण उपयोग एंटीवेनम के उत्पादन में होता है। एंटीवेनम बनाने के लिए साँप के जहर को घोड़े, भेड़ जैसे जानवरों में थोड़ी मात्रा में इंजेक्ट किया जाता है। इन जानवरों का शरीर जीवित एंटीबॉडी फैक्ट्रियों की तरह काम करते हैं, जिनसे हाइपरइम्यून प्लाज्मा बनता है जिससे एंटीबॉडी बनाया जाता है। इन एंटीबॉडीज को जानवर के खून से निकाला जाता है और एंटीवेनम में संसाधित किया जाता है। सांप के काटने के बाद उसके जहर से बचने के लिए एंटीवेनम ही एकमात्र प्रभावी उपचार होता है।

10.3 **पारिस्थितिकी महत्व** (Ecological Importance)– पारिस्थितिकी तंत्र में, साँप, कृंतक जीवों तथा अन्य छोटे जानवरों की आबादी को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विषैले सांप खाद्य श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होते हैं, और उनका जहर उन्हें शिकार को जल्दी से स्थिर करने में मदद करता है।

10.4 **जैव प्रौद्योगिकी और औषधि विज्ञान में** (In Biotechnology and Pharmacology)– साँप के जहर ने जैव प्रौद्योगिकी में कई क्षेत्रों को प्रेरित किया है। साँप के विष के घटक मानव प्रोटीन और कोशिकाओं के साथ मिलकर किस प्रकार क्रिया करते हैं, इसका अध्ययन करके वैज्ञानिक इन अन्तः क्रिया की नकल करके या उनका संशोधन करके नये उपचार बना सकते हैं। इससे नवीन दवाओं और उपचारों के विकास को बढ़ावा मिल सकता है।

11. **निष्कर्ष**– प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि साँप का जहर एक खतरनाक और जटिल पदार्थ होता है, फिर भी ये जैविक रूप से अत्यधिक सक्रिय और वैज्ञानिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण जैव–संसाधन है। इसमें चिकित्सा विज्ञान को आगे बढ़ाने की

अविश्वसनीय क्षमता है। वर्तमान में चल रहे अनुसंधान कार्यों के साथ–साथ आने वाले समय में उन्नत तकनीकों एवं उच्च स्तर के अनुसंधान के माध्यम से साँप का जहर हमारे समय की कुछ सबसे गंभीर स्वास्थ्य चुनौतियों के लिए नए समाधान पेश करके विष आधारित उपचारों की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान एवं प्रगति कर सकता है।

**References**


1. Alonso, L. L., Slagboom, J., Casewell, N. R., Samanipour, S., & Kool, J. (2025). Categorization and Characterization of Snake Venom Variability through Intact Toxin Analysis by Mass Spectrometry. Journal of proteome research, 24(3), 1329–1341. https://doi.org/10.1021/acs.jproteome.4c00923
2. Alves, Á. E. F., Barros, A. B. C., Silva, L. C. F., Carvalho, L. M. M., Pereira, G. M. A., Uchôa, A. F. C., Barbosa-Filho, J. M., Silva, M. S., Luna, K. P. O., Soares, K. S. R., & Xavier-Júnior, F. H. (2025). Emerging Trends in Snake Venom-Loaded Nanobiosystems for Advanced Medical Applications: A Comprehensive Overview. *Pharmaceutics*, *17*(2), 204. https://doi.org/10.3390/pharmaceutics17020204
3. B., Melisa & et al. (2015). *Venomous Reptiles and Their Toxins Evolution, Pathophysiology and Biodiscovery*. Oxford University Press. Retrieved from https://www.researchgate.net/publication/277719111_Venomous_Reptiles_and_Their_Toxins_Evolution_Pathophysiology_and_Biodiscovery#:~:text=Venomous%20Reptiles%20and%20Their%20Toxins,Evolution%2C%20Pathophysiology%20and%20Biodiscovery&text=Publisher%3A%20Oxford%20University%20Press,Authors%3A
4. Bittenbinder, M. A., van Thiel, J., Cardoso, F. C., Casewell, N. R., Gutiérrez, J. M., Kool, J., &Vonk, F. J. (2024). Tissue damaging toxins in snake venoms: mechanisms of action, pathophysiology and treatment strategies. Communications biology, 7(1), 358. https://doi.org/10.1038/s42003-024-06019-6
5. Bordon, K. D. C. F., Cologna, C. T., Fornari-Baldo, E. C., Pinheiro-Júnior, E. L., Cerni, F. A., Amorim, F. G., ... &Arantes, E. C. (2020). From animal poisons and venoms to medicines: achievements, challenges and perspectives in drug discovery. *Frontiers in pharmacology*, *11*, 1132.https://doi.org/10.3389/fphar.2020.01132
6. Coulter-Parkhill, A., McClean, S., Gault, V. A., & Irwin, N. (2021). Therapeutic potential of peptides derived from animal venoms: current views and emerging drugs for diabetes. *Clinical Medicine Insights: Endocrinology and Diabetes*, *14*, 11795514211006071.https://doi.org/10.1177/11795514211006071
7. Ferraz CR, Arrahman A, Xie C, Casewell NR, Lewis RJ, Kool J and Cardoso FC (2019) Multifunctional Toxins in Snake Venoms and Therapeutic Implications: From Pain to Hemorrhage and Necrosis. Front. Ecol. Evol. 7:218. https://doi.org/10.3389/fevo.2019.00218
8. Gasanov, S. E., Dagda, R. K., & Rael, E. D. (2014). Snake Venom Cytotoxins, Phospholipase A2s, and Zn2+-dependent Metalloproteinases: Mechanisms of Action and Pharmacological Relevance. Journal of clinical toxicology, 4(1), 1000181. https://doi.org/10.4172/2161-0495.1000181
9. Greener, M. (2020). The next generation of venom-based drugs. *Prescriber*, *31*(4), 28-32.https://doi.org/10.1002/psb.1837
10. Jenner, R., &Undheim, E. (2017). *Venom: the secrets of nature's deadliest weapon*. Smithsonian Institution.
11. Kang, T. S., Georgieva, D., Genov, N., Murakami, M. T., Sinha, M., Kumar, R. P., Kaur, P., Kumar, S., Dey, S., Sharma, S., Vrielink, A., Betzel, C., Takeda, S., Arni, R. K., Singh, T. P., &Kini, R. M. (2011). Enzymatic toxins from snake venom: structural characterization and mechanism of catalysis. FEBS Journal, 278, 4544-4576. https://doi.org/10.1111/j.1742-4658.2011.08115.x
12. Kasturiratne, A., Wickremasinghe, A. R., de Silva, N., Gunawardena, N. K., Pathmeswaran, A., Premaratna, R., Savioli, L., Lalloo, D. G., & de Silva, H. J. (2008). The global burden of snakebite: A literature analysis and modelling based on regional estimates of envenoming and deaths. PLoS Medicine, 5(11), e218. https://doi.org/10.1371/journal.pmed.0050218
13. Lan, D., Song, S., Liu, Y., Jiao, B., &Meng, R. (2021). Use of batroxobin in central and peripheral ischemic vascular diseases: a systematic review. *Frontiers in Neurology*, *12*, 716778.https://doi.org/10.3389/fneur.2021.716778

14. Roldán-Padrón, O., Castro-Guillén, J. L., García-Arredondo, J. A., Cruz-Pérez, M. S., Díaz-Peña, L. F., Saldaña, C., Blanco-Labra, A., &García-Gasca, T. (2019). Snake Venom Hemotoxic Enzymes: Biochemical Comparison between Crotalus Species from Central Mexico. Molecules (Basel, Switzerland), 24(8), 1489. https://doi.org/10.3390/molecules24081489
15. Slagboom, J., Kool, J., Harrison, R. A., &Casewell, N. R. (2017). Haemotoxic snake venoms: their functional activity, impact on snakebite victims and pharmaceutical promise. British journal of haematology, 177(6), 947–959. https://doi.org/10.1111/bjh.14591
16. Snake venom overview: Snake venom – Chemistry and biology. Retrieved from https://en.wikipedia.org/wiki/Snake_venom
17. Tu, A. T. (1991). Handbook of natural toxins: Vol. 5. Reptile venoms and toxins. Marcel Dekker. Retrieved from https://redtox.org/sites/default/files/toxiblog/descargables/2010-handbook-of-venoms-and-toxins-of-reptiles-a_1.pdf
18. Warrell, D. A. (2010). Snake bite. The Lancet, 375(9708), 77–88. https://doi.org/10.1016/S0140-6736(09)61754-2
19. World Health Organization. (2016). Guidelines for the production, control and regulation of snake antivenom immunoglobulins. WHO Press. Retrieved from https://cdn.who.int/media/docs/default-source/biologicals/blood-products/document-migration/antivenomglrevwho_trs_1004_web_annex_5.pdf? sfvrsn=ef4b2aa5_3 &download=true
20. World Health Organization. (2017). Guidelines for the production, control, and regulation of snake antivenom immunoglobulins: Annex 5 (WHO Technical Report Series, No. 1004), 211. Retrieved from https://cdn.who.int/media/docs/default-source/biologicals/blood-products/document-migration/antivenomglrevwho_trs_1004_web_annex_5.pdf?sfvrsn=ef4b2aa5_3&download=true
21. Image Source: Pixabayhttps://pixabay.com/ and Freepikhttps://www.freepik.com/

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 129-131
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.21
SJIF (2025) : 8.749



# Destruction of Dharali: adverse consequences of unbalanced development

Deepak Kohli
5/104, Vipul Khand, Gomti Nagar, Lucknow- 226 010, India
deepakkohli64@yahoo.in

**Received: 09-08-2025, Accepted: 10-11-2025**

**Abstract-** What recently happened on 5 August 2025 in Dharali village of Uttarkashi district in Uttarakhand state, was not just a natural disaster, but it was an explosion of the combined effects of the environment, and human negligence. Dozens of lives were lost in this tragedy, hundreds of people went missing, and the entire village was engulfed in a deluge of water, debris and rocks within 20 seconds. Dharali, a small but tourist destination situated on the Gangotri road in Uttarkashi district and an important village from pilgrimage point of view. Dharali is situated only 18 km away from Gangotri Dham, and is a major center of pilgrimage for pilgrims.There is a halt. This region is located in the middle ranges of the Himalayas and is situated at an altitude of more than 2500 meters. Nearby is Bhagirathi, head of Ganga. The stream and several glacial streams flow through it. The rocks here are relatively young, brittle and unstable. This entire geographical situation makes it extremely sensitive.

**Key words-** Climate change, Global warming, geographical location, human interference, natural disaster

# धराली की विनाशलीला असंतुलित विकास का दुष्परिणाम

दीपक कोहली
5104, विपुल खंड, गोमती नगर लखनऊ–226 010,उ0प्र0, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

**सार**– 5 अगस्त 2025 को उत्तराखंड राज्य स्थित उत्तरकाशी जनपद के धराली गांव में जो घटित हुआ, वह केवल एक प्राकृतिक आपदा नहीं, बल्कि, पर्यावरण और मानवीय लापरवाही के सम्मिलित प्रभावों का विस्फोट था (चित्र–1, 2)। इस त्रासदी में दर्जनों जानें गईं, सैकड़ों लोग लापता हुए, और पूरा गांव लगभग 20 सेकंड में पानी, मलबे और चट्टानों के सैलाब में समा गया। धराली, उत्तरकाशी जिले में गंगोत्री मार्ग पर स्थित एक छोटा लेकिन पर्यटन और तीर्थ दृष्टि से महत्वपूर्ण गांव है। धराली, गंगोत्री धाम से केवल 18 किमी दूर स्थित है एवं तीर्थयात्रियों का एक प्रमुख पड़ाव रहा है। यह क्षेत्र हिमालय की मध्य श्रेणियों में स्थित है और 2500 मीटर से अधिक ऊंचाई पर बसा हुआ है। पास में ही भगीरथी, गंगा की प्रमुख धारा और कई ग्लेशियल धाराएँ बहती हैं। यहां की चट्टानें अपेक्षाकृत युवा, भंगुर और अस्थिर हैं। यह संपूर्ण भौगोलिक स्थिति इसे अत्यंत आपदा–संवेदनशील बनाती है।

**बीज शब्द**– जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वॉर्मिंग, भौगोलिक स्थिति, मानवीय हस्तक्षेप, प्राकृतिक आपदा

1. **परिचय**– धराली जैसे गांव वर्षों से प्राकृतिक आपदाओं के खतरे में हैं। उनकी भौगोलिक स्थिति ऐसी घाटी में है, जहाँ विशाल चढ़ाव–उतार, संकरी नालियों–नदियों और अत्यधिक बारिश की संभावना रहती है। 5 अगस्त को जब बादल फटा तो बाजार की दुकानें, मकान, होटल, होमस्टे सब तबाह हो गए और देखते ही देखते 30 फीट तक मलबा जमा हो गया। तीर्थ, पर्यटन, खेती, सेब–बगीचे और बाजार जीवन की धड़कन हैं, परन्तु जब इस तरह बादल फटते हैं तो सब कुछ मिनटों में मिट्टी में मिल जाता है। सड़कों का संपर्क टूट जाता है, बिजली, पानी, टेलीफोन, इंटरनेट जैसी बुनियादी सुविधाएं ठप हो जाती हैं, लोग अपने परिजनों की खोज में भटकने को मजबूर हो जाते हैं। धराली की घटना अविस्मरणीय है क्योंकि यह न केवल प्राकृतिक त्रासदी की तस्वीर है बल्कि मानवजनित असंतुलित निर्माण और जलवायु परिवर्तन के भयानक इशारे भी हैं।'

2. **वैज्ञानिक दृष्टिकोण**– वैज्ञानिक परिभाषा के अनुसार, जब सीमित क्षेत्र, आमतौर पर कुछ किलोमीटर दायरे में, बेहद कम समय अर्थात् एक घंटा या उससे कम के लिए 100 एमएम या उससे अधिक बारिश होती है तो उसे बादल फटना या क्लाउड बर्स्ट कहते हैं। इससे एकाएक बाढ़ जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसा तब होता है, जब नमी से भरी गर्म हवा पहाड़ों, खासकर हिमालय–श्रृंखला के ऊंचे इलाकों से टकराकर ऊपर उठती है, वहाँ अचानक ठंडी होकर स्कंधीकृत (कंसोलिडेटेड) भारी वजपातीय बादलों में बदल जाती है। जब पानी का भार बादलों में बहुत अधिक हो जाता है तो वे अचानक गुरुत्वाकर्षण की वजह से भारी जलवर्षा के रूप में फूट पड़ते हैं। फटने की इसी प्रक्रिया में महज कुछ ही मिनटों में लाखों लीटर पानी धरती पर गिरता है, पहाड़ी ढलान होने के कारण यह पानी बहुत तेज बहाव के

साथ मिट्टी, चट्टान, पेड़, घर, इंसान और जानवर तक, सब कुछ बहा ले जाता है। पहाड़ों की ढ़लानें पानी को रोक नहीं सकती, इसलिए बरसात का सैलाब तेजी से नीचे की ओर बहता है और प्रलय का दृश्य बन जाता है। जलपीड़ित गांव, टूरिस्ट, खेती, परिवहन, बाजार, सब कुछ मिनटों में बर्बाद हो जाता है। हादसे वाले दिन सुबह अत्यधिक आर्द्रता और स्थानीय तापमान असंतुलन के कारण संवहनीय बादल बने थे जिससे 3 से अधिक स्थानों पर एक साथ बादल फटने की पुष्टि हुई। इस कारण मलबे के साथ पानी की अत्यधिक मात्रा ने पूरे क्षेत्र को तबाह कर दिया।

3. **प्राकृतिक घटना**– इस बात में कोई दो राय नहीं कि बादल फटना एक प्राकृतिक घटना है, जिस पर इंसानों का कोई जोर नहीं। लेकिन, यह भी एक उद्वेलित करने वाला तथ्य है कि जब पानी के निकलने के रास्तों, नालों–गदेरों के मुहानों पर कंक्रीट के बड़े–बड़े स्ट्रक्चर खड़े हो चुके हैं, तो फिर उन तमाम जगहों पर, जिन रास्तों से पानी को बहना था, आखिर वह कैसे निकलेगा। क्योंकि उन रास्तों पर तो प्रकृति प्रेमी इंसान बस चुका है। स्पष्ट है कि यह जानबूझकर आफत बुलाने जैसा है। इसी के चक्कर में भारी धन–जन की हानि झेलनी पड़ती है। वैज्ञानिकों का एक अन्य अनुमान है कि धराली के पास स्थित एक ग्लेशियर झील भी फटी हो सकती है, जिससे झील में जमा बर्फ और पानी एक साथ नीचे की ओर बहा। यदि यह सच है, तो यह एक हिमनद झील के फटने से बाढ़ की घटना थी, जो हिमालयी क्षेत्रों में ग्लोबल वॉर्मिंग के कारण तेजी से बढ़ रही है। 2025 तक भारत में 300 से अधिक संभावित हिमनद झील के फटने से बाढ़ की घटना के स्पॉट चिन्हित किए जा चुके हैं। इसके अलावा धराली की त्रासदी को जलवायु परिवर्तन से अलग करके नहीं देखा जा सकता। पिछले दो दशकों में हिमालयी क्षेत्र में औसत तापमान 1.3 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ चुका है। इससे ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं और ग्लेशियर झीलें बन रही हैं। वर्षा का पैटर्न अनियमित हुआ है, कभी बहुत कम, तो कभी बहुत अधिक वर्षा। मानसून अब हिमालय में ज्यादा तीव्र और अस्थिर हो गया है। जलवायु परिवर्तन पर अंतर–सरकारी पैनल की रिपोर्ट्स पहले ही इस क्षेत्र को "हॉटस्पॉट ऑफ हाइड्रो–क्लाइमेटिक रिस्क" घोषित कर चुकी हैं।

4. **मानवीय हस्तक्षेप**– धराली त्रासदी की एक बड़ी वजह अनियंत्रित मानवीय हस्तक्षेप भी रही। सड़क चौड़ीकरण परियोजनाएँ, भारी मशीनों से पहाड़ों की कटाई, पर्याप्त रिटेनिंग वॉल न होना, मलबा नदियों में डाला जाना, इससे प्राकृतिक जल निकासी तंत्र अवरुद्ध हुआ। अवैध होटल और निर्माण कार्य, बिना पर्यावरणीय स्वीकृति के निर्माण,नदी किनारे और ढलानों पर होटल, सीवेज और कचरा सीधे नदियों में, पेड़ों की कटाई और भूमि अपरदन, भूमि की जलधारण क्षमता कम हुई, जड़ें मिट्टी को पकड़ नहीं सकीं, भूस्खलन की संभावना बढ़ी। सुप्रीम कोर्ट ने विभिन्न जनहित याचिकाओं में समय–समय पर गाइड लाइन जरूर दी हैं, मगर इन्हें ताक पर रखकर अनाप–शनाप निर्माण तो जैसे पहाड़ों में रिवाज हो चला है। यदि जलवायु परिवर्तन और मौसमी बदलावों के बीच हम पर्यावरण और पारिस्थितिकी से तालमेल बनाने की बजाय हालात को मनमाने ढंग से रौंदते चले जाएंगे तो निश्चित ही ऊपरी हिमालय में होने वाली हलचलें धराली जैसे मंजर दोहराती रहेंगी। मौसमी बदलावों के कारण ऊपरी हिमालय में ग्लेशियरों के गलन की बढ़ती गति और भूगर्भीय हलचलें बड़े पैमाने पर मलबा जुटा रही हैं। वहाँ वर्षा और हिमस्खलन से अस्थायी झीलें बन रही हैं। बादल फटने और अतिवृष्टि जैसे प्रकोपों के दौरान मौका पाते ही सारा मलबा बाढ़ और भूस्खलन को साथ लेकर कई गुना ताकत से बहकर नीचे तबाही मचा डालता है। धराली की जल प्रलय के पीछे भी विशेषज्ञ यही अनुमान लगा रहे हैं कि पानी का ऐसा रौद्र रूप ऊपर किसी अस्थायी ताल अथवा झील के टूटने से ही संभव है।

पुराने समय में लोगों को प्रकृति के साथ रहने और उसका मिजाज समझने का गहरा और व्यावहारिक सलीका आता था। हिमालय में उच्च पथों पर धार्मिक और सांस्कृतिक यात्राओं का उद्देश्य ही यह था कि वहाँ होने वाली हर हलचल से अवगत रहें। अब खासकर पहाड़ों में पर्यटन के बढ़ते रुझान ने नए तरह के दबाव पैदा किए हैं। पुरानी परंपराएं और परिपाटियां पर्यटन का आधुनिक चोला ओढ़कर उद्देश्यों से भटक चुकी हैं। यद्यपि पर्यटन से लोगों की आजीविका के रिश्ते को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता, पर क्या इसे इतनी हद तक छूट दे दी जाए कि आपदा और मनुष्य के बीच बचाव की गुंजाइशें न रहें। भू–गर्भशास्त्री धराली को पहले ही बारूद का ढेर बताते रहे हैं लेकिन इन चेतावनियों को अनसुना कर सरकारें यहाँ पर्यटन संबंधी व्यापार का सपना संजोती आई हैं।

5. **भारत सरकार द्वारा उठाये जा रहे कदम**– वर्तमान में सुप्रीम कोर्ट ने हिमाचल प्रदेश में अनियंत्रित और अराजक पर्यटन को लेकर यहां तक कह डाला कि सूरते–हाल यही रहा तो हिमाचल देश के नक्शे से मिट जाएगा। अदालत ने वहाँ आई आपदाओं को कुदरती कोप नहीं, मानवीय कारस्तानी बताया है। सर्वोच्च अदालत 2013 में लगभग यही बातें उत्तराखंड के बारे में भी कह चुकी है। केदारनाथ की विनाशलीला के फौरन बाद 13 अगस्त 2013 को 'अलकनंदा हाइड्रो पावर प्रोजेक्ट बनाम अनुज जोशी व अन्य' के केस में फैसला सुनाते हुए जस्टिस के.एस. राधाकृष्णन और जस्टिस दीपक मिश्रा ने उत्तराखंड के सूरत–ए–हाल के लिए जलविद्युत परियोजनाओं को जिम्मेदार ठहराया था जो कि अदालत के ही शब्दों मे 'बगैर किसी ठोस अध्ययन के आनन–फानन मंजूर की जा रही हैं।' यह देखा गया था कि केदारनाथ की त्रासदी पर पूरा देश एकजुट दिखा था और केंद्र सरकार, राज्य सरकारें, निजी घराने, समाचार पत्र समूह, न्यास, सामाजिक संगठन और विद्यार्थियों समेत देश का हर तबका तन–मन–धन से सहायता को आगे आया था। तब सरकारें चाहतीं तो सहानुभूति के इस जज्बे को हिमालय और इसके पारिस्थितिक–तंत्र की चिंताओं से जोड़कर देख सकती थीं। हिमालय की हिफाजत से संबंधित सिफारिशों, निर्णयों और नीतियों को अमली जामा पहनाने का इससे सटीक अवसर कोई और नहीं हो सकता था। यह देशभर से मिली सहायता और सहानुभूति का संतोषप्रद विनिमय होता। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। हादसों के बावजूद सरकारें हिमालय की इकोलॉजी के अंतर्गत भू–वैज्ञानिकों की दीर्घकालिक चिन्ताओं से आंखें मूंद लेना चाहती हैं। वे ऊपरी हिमालय में होने वाली हलचलों और इसके खतरों के गहन

वैज्ञानिक विश्लेषणों में नहीं जाना चाहतीं। हिमालय के संरक्षण को नियोजन का केंद्र बिन्दु बनाए बिना बात नहीं बनने वाली। धराली इस कड़ी में एक और नसीहत है।

6. **निष्कर्ष**– धराली की विनाशलीला केवल एक प्राकृतिक दुर्घटना नहीं है, यह हिमालय के साथ हमारी विकास की असंतुलित होड़ का दुष्परिणाम है। जब तक हम प्रकृति के संतुलन को नहीं समझेंगे और विज्ञान आधारित नीतियों को लागू नहीं करेंगे, तब तक ऐसी घटनाएँ बार–बार होती रहेंगी। हमें न सिर्फ राहत और बचाव पर ध्यान देना है, बल्कि पूर्वानुमान, तैयारी और सतत् विकास की ओर बढ़ना होगा। धराली की घटना एक चेतावनी है, अब भी समय है संभलने का। उत्तरकाशी हादसा सिर्फ एक दुखद घटना नहीं, बल्कि भविष्य के लिए एक चेतावनी है। यह हमें यह सोचने पर मजबूर करता है कि विकास के नाम पर हम प्रकृति से कितना दूर जा चुके हैं। यदि समय रहते हमने अपने तरीके नहीं बदले, तो आने वाले समय में ऐसी घटनाएं और अधिक विध्वंसकारी हो सकती हैं। हमें याद रखना होगा, पहाड़ों को काटकर विकास नहीं होता, बल्कि उन्हें सुरक्षित रखकर ही सच्ची प्रगति संभव है।

## References

1. Indian News Papers-Times of India, The Hindu, Hindustan Times and Others Dated: 06-08-2025

चित्र–1: धराली त्रासदी का दृश्य

चित्र–2: धराली त्रासदी का दृश्य

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 132-135
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.22
SJIF (2025) : 8.749



# Importance of scientific research in space

Deepak Kohli
5/104, Vipul Khand, Gomti Nagar, Lucknow- 226 010, U.P., India
deepakkohli64@yahoo.in

**Received: 29-07-2025, Accepted: 10-09-2025**

**Abstract-** Scientific research in space is of great importance. It not only increases understanding about our universe, but also of new technologies and techniques to improve life on Earth, and also stimulates development. Scientific research in space is an important investment that not only provides scientific not only advances knowledge, but also helps improve life on Earth. Recently Captain Shubhanshu Shukla, the first Indian to enter the International Space Station under the Axiom 4 mission created history by becoming an astronaut. This mission is important for India's upcoming Gaganyaan program.It serves as preparation for the country's first independent human spaceflight, planned for 2026.

**Key words-** Space, India, Scientific Research, Innovation, Axiom 4 Mission, Captain Shubhanshu Shukla

# अंतरिक्ष में वैज्ञानिक अनुसंधान का महत्व

दीपक कोहली
5104, विपुल खंड, गोमती नगर लखनऊ–226 010,उ0प्र0, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

सार– अंतरिक्ष में वैज्ञानिक अनुसंधान का बहुत महत्व है। यह न केवल हमारे ब्रह्मांड के बारे में हमारी समझ को बढ़ाता है, बल्कि पृथ्वी पर जीवन को बेहतर बनाने के लिए नई प्रौद्योगिकियों और तकनीकों के विकास को भी प्रेरित करता है। अंतरिक्ष में वैज्ञानिक अनुसंधान एक महत्वपूर्ण निवेश है जो न केवल वैज्ञानिक ज्ञान को आगे बढ़ाता है, बल्कि पृथ्वी पर जीवन को बेहतर बनाने में भी मदद करता है। हाल ही में कैप्टन शुभांशु शुक्ला, ने एक्सिओम 4 मिशन के तहत अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन में प्रवेश करने वाले पहले भारतीय अंतरिक्ष यात्री बनकर इतिहास रच दिया। यह मिशन भारत के आगामी गगनयान कार्यक्रम के लिये महत्वपूर्ण तैयारी के रूप में कार्य करता है, जो वर्ष 2026 के लिये नियोजित देश का पहला स्वतंत्र मानव अंतरिक्ष यान मिशन है।

**बीज शब्द**– अंतरिक्ष, भारत, वैज्ञानिक अनुसंधान, नवाचार,एक्सिओम 4 मिशन, कैप्टन शुभांशु शुक्ला

1. **परिचय**– अंतरिक्ष अनुसंधान बाह्य अंतरिक्ष में और बाह्य अंतरिक्ष का अध्ययन करके किया जाने वाला वैज्ञानिक अध्ययन है। अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के उपयोग से लेकर प्रत्यक्ष ब्रह्मांड तक, अंतरिक्ष अनुसंधान एक व्यापक शोध क्षेत्र है। पृथ्वी विज्ञान, पदार्थ विज्ञान, जीव विज्ञान, चिकित्सा और भौतिक विज्ञान सभी अंतरिक्ष अनुसंधान के परिवेश से संबंधित हैं। इस शब्द में गहरे अंतरिक्ष से लेकर पृथ्वी की निचली कक्षा तक किसी भी ऊंचाई पर वैज्ञानिक पेलोड शामिल हैं, साथ ही ऊपरी वायुमंडल में ध्वनि अनुसंधान और उच्च ऊंचाई वाले गुब्बारे भी शामिल हैं। अंतरिक्ष अन्वेषण भी अंतरिक्ष अनुसंधान का एक रूप है। आने वाले समय में कैप्टन शुक्ला और उनका दल वैज्ञानिक प्रयोग करेंगे, जिनमें इसरो द्वारा डिजाइन किये गए आठ प्रयोग शामिल हैं, जो रोजमर्रा की जिंदगी में सीधे अनुप्रयोगों के साथ नवाचार ला सकते हैं। यह ऐतिहासिक उपलब्धि न केवल राष्ट्रीय गौरव का प्रतिनिधित्व करती है, बल्कि अंतरिक्ष–आधारित अनुसंधान का प्रवेश द्वार है जो आम नागरिकों के लिये स्वास्थ्य सेवा, कृषि, सामग्री विज्ञान और प्रौद्योगिकी को बदलने का वादा करता है।[1–8]

2. **एक्सिओम–4 मिशन**– इस मिशन के अंतर्गत अंतरिक्ष में किये गये वैज्ञानिक प्रयोग भारत के अंतरिक्ष अनुसंधान और अनुप्रयोग को बढ़ा सकते हैं। सूक्ष्मगुरुत्व में अंकुरों का विकास संबंधी यह प्रयोग अंतरिक्ष यात्रा के दौरान फसल बीजों के अंकुरण और वृद्धि पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करता है, जो लंबे अंतरिक्ष अभियानों पर गये अंतरिक्ष यात्रियों के लिये सतत् खाद्य स्रोत उपलब्ध कराने हेतु अनिवार्य है। यह शोध अंतरिक्ष में प्रभावी रूप से खाद्य उत्पादन की प्रक्रिया को समझने में सहायक होगा। इस अध्ययन के निष्कर्षों का व्यापक उपयोग शहरी कृषि तथा इनडोर कृषि में हो सकता है, जिससे नगरों में संधारणीय खाद्य उत्पादन को बढ़ावा मिलेगा और शहरी आबादी को स्वयं अपना भोजन उगाने की प्रेरणा मिलेगी, जिससे बाह्य आपूर्ति पर निर्भरता कम होगी। सायनोबैक्टीरिया अंतरिक्ष यानों के जीवन–समर्थन प्रणालियों के विकास में अत्यंत उपयोगी हैं क्योंकि वे प्रकाश–संश्लेषण करने में सक्षम होते हैं। यह प्रयोग अंतरिक्ष में उनकी वृद्धि और जैव रासायनिक गतिविधि का अध्ययन करेगा, जिससे अंतरिक्ष में ऑक्सीजन और खाद्य उत्पादन के लिये बंद लूप प्रणाली के निर्माण में सहायता मिलेगी। इस प्रयोग से प्राप्त ज्ञान पृथ्वी पर पर्यावरण नियंत्रण प्रणालियों को बेहतर बनाने में सहायक हो सकता है, विशेषकर सतत् भवन–डिजाइन, जल–शोधन और शहरी या पृथक क्षेत्रों में वायु गुणवत्ता प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में।

3. **मिशन का उद्देश्य**– अंतरिक्षीय सूक्ष्मशैवाल वृद्धि के अंतर्गत सूक्ष्मशैवाल आहार, ईंधन और जीवन–समर्थन का एक संभावित संसाधन हैं। इस प्रयोग में यह अध्ययन किया गया कि सूक्ष्मगुरुत्व सूक्ष्मशैवाल की वृद्धि और चयापचय को किस प्रकार प्रभावित करता है, जिसका उपयोग अंतरिक्ष मिशनों के लिये जैव–पुनर्योजी जीवन समर्थन प्रणालियों में किया जा सकता है। सूक्ष्म शैवाल का उपयोग पृथ्वी पर पहले से ही जैव ईंधन, अपशिष्ट प्रबंधन और पोषण संबंधी पूरकों के लिये किया जा रहा है। इस शोध से हरित ऊर्जा स्रोतों एवं सतत् खाद्य विकल्पों की खोज हो सकती है, जो खाद्य उत्पादन और नवीकरणीय ऊर्जा के बारे में हमारी सोच में क्रांतिकारी बदलाव ला सकते हैं।अंतरिक्ष में मांसपेशियों की हानि या मायोजेनेसिस के अध्ययन सूक्ष्म गुरुत्वाकर्षण में उत्पन्न होने वाली मांसपेशीय अक्षमता को समझने का प्रयास करता है, जो अंतरिक्ष यात्रियों में मांसपेशियों के क्षय का कारण बनती है। इसमें सम्मिलित आणविक प्रक्रियाओं का अभिनिर्धारण कर, लंबी अंतरिक्ष यात्राओं के दौरान मांसपेशियों की हानि को रोकने के उपाय विकसित किये जा सकते हैं। इस शोध से पृथ्वी पर मांसपेशियों के क्षय से पीड़ित रोगियों, विशेष रूप से वृद्धजनों तथा मांसपेशीय दुर्विकास या दीर्घकालीन निष्क्रियता से जूझ रहे लोगों के लिये उपचार पद्धतियों में सुधार संभव हो सकेगा।

अंतरिक्ष में वॉयेजर डिस्प्ले इंटरैक्शन संबंधित प्रयोग यह जानने के लिये किया गया कि माइक्रोग्रैविटी का प्रभाव इलेक्ट्रॉनिक डिस्प्ले के प्रयोग से जुड़े संज्ञानात्मक तथा शारीरिक कार्यों पर क्या पड़ता है। इसका उद्देश्य अंतरिक्ष यान की प्रौद्योगिकी की बनावट तथा उसके उपयोग की प्रणाली को और अधिक उपयुक्त बनाना है। यह शोध पृथ्वी पर स्मार्ट उपकरणों, गेमिंग प्रणालियों तथा स्वास्थ्य सेवाओं से जुड़ी तकनीकों में उपयोगकर्ता–अनुभव तथा उत्पादकता को बेहतर बनाने में सहायक हो सकता है, जिससे दैनिक जीवन की तकनीकों के लिये अधिक कार्यकुशल एवं तनाव–रहित डिजाइन तैयार हो सकेंगे। टार्डीग्रेड, जिन्हें "वाटर बेयर" या "मॉस पिगलेट" भी कहा जाता है, एक प्रकार के सूक्ष्मजीव हैं जो आठ पैरों वाले होते हैं और पानी में रहते हैं। ये जीव चरम स्थितियों में जीवित रहने की अपनी क्षमता के लिए जाने जाते हैं, जैसे कि अत्यधिक तापमान, दबाव, विकिरण और निर्जलीकरण। टार्डीग्रेड लगभग 600 मिलियन वर्षों से पृथ्वी पर मौजूद हैं और जलवायु परिवर्तन सहित किसी भी बड़े बदलाव का सामना करने में सक्षम हैं। टार्डीग्रेड्स पर अध्ययन उनके अंतरिक्ष में जीवित रहने, पुनर्जीवन और प्रजनन की प्रक्रियाओं को समझने का प्रयास करेगा, जिससे इनकी अनुकूलन से जुड़ी आणविक क्रियाविधियों की पहचान की जा सके। इन तत्वों को समझने से पृथ्वी पर जैव–प्रौद्योगिकी तथा चिकित्सकीय अनुसंधान में प्रगति हो सकती है, विशेष रूप से जैव–संरक्षण, अत्यधिक वातावरण में सहनशीलता और संभवतः पुनरुत्पादक चिकित्सा के क्षेत्र में।

4. **अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में प्रगति**–अंतरिक्ष अन्वेषण प्रगति से अनेक प्रमुख प्रौद्योगिकियाँ उभरी हैं।अंतरिक्ष अनुसंधान ने स्वास्थ्य देखभाल को काफी उन्नत किया है, विशेष रूप से दूरस्थ रोगी निगरानी प्रणालियों के विकास के माध्यम से। ये नवाचार नासा की लंबी अवधि के अंतरिक्ष मिशनों के दौरान अंतरिक्ष यात्रियों के स्वास्थ्य पर नजर रखने की आवश्यकता से उत्पन्न हुए। उदाहरण के लिये नासा द्वारा विकसित टेलीमेडिसिन प्रणालियों का पृथ्वी पर व्यापक उपयोग हुआ है, जबकि इसरो का टेलीमेडिसिन कार्यक्रम ग्रामीण भारत को शहरी अस्पतालों से जोड़ता है तथा वास्तविक काल में निदान और उपचार उपलब्ध कराता है। इसके अतिरिक्त, अंतरिक्ष यात्रियों के लिये पोषक तत्वों से समृद्ध शैवाल पर नासा के अनुसंधान ने शिशु आहार में सुधार किया, जिसमें दूध में पाये जाने वाले डीएचए और एआरए जैसे पोषक तत्वों को जोड़ा गया। इन नवाचारों ने शिशु आहार को एक महत्वपूर्ण पोषण बढ़त प्रदान की है जिससे शिशुओं के विकास में सहायता मिली है। अंतरिक्ष अन्वेषण के लिये विकसित उपग्रह संचार प्रौद्योगिकियों ने वैश्विक संचार में क्रांति ला दी है, जिससे तीव्र और अधिक विश्वसनीय कनेक्शन की सुविधा मिली है। प्रारंभ में अंतरिक्ष मिशनों के लिये बनाई गई ये प्रणालियाँ वैश्विक कनेक्टिविटी का अभिन्न अंग बन गई हैं। इसका एक प्रमुख उदाहरण जीपीएस तकनीक है, जो सैन्य उपग्रह नेविगेशन प्रणालियों से विकसित हुई है और अब नेविगेशन और लॉजिस्टिक्स जैसे रोजमर्रा के अनुप्रयोगों में अपरिहार्य है।

अंतरिक्ष अनुसंधान ने खाद्य संरक्षण में नवाचारों को बढ़ावा दिया है, विशेष रूप से फ्रीज–ड्रायिंग और वैक्यूम सीलिंग, जिन्हें प्रारंभ में अंतरिक्ष यात्रियों के अंतरिक्ष मिशनों के लिये विकसित किया गया था। इन प्रौद्योगिकियों ने खाद्य पदार्थों की शेल्फ लाइफ को बहुत हद तक बढ़ा दिया है, बर्बादी को कम किया है और खाद्य सुरक्षा में सुधार किया है। फ्रीज–ड्राई फल, वैक्यूम–सील भोजन और अंतरिक्ष–प्रेरित पैकेजिंग प्रौद्योगिकियाँ अब उपभोक्ता बाजारों में प्रमुखता से शामिल हैं, जो सुविधा प्रदान करती हैं तथा खाद्य अपशिष्ट को कम करती हैं। अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन पर 'वेजी' प्रयोग जैसे अंतरिक्ष में उगाए गए खाद्य पदार्थों ने अंतरिक्ष कृषि अनुसंधान को बढ़ावा देने में मदद की है। अंतरिक्ष यानों में छोटे और हल्के उपकरणों की आवश्यकता के कारण जब इलेक्ट्रॉनिक घटकों का लघुकरण आरंभ हुआ, तब इसने उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र में अनेक नवाचारों का मार्ग प्रशस्त किया। अंतरिक्ष अभियानों के लिये ऐसे इलेक्ट्रॉनिक्स की आवश्यकता होती है जो आकार में छोटे किंतु कार्यक्षमता में अत्यंत सक्षम हों और इसने लघुकरण की सीमाओं को लगातार आगे बढ़ाया। ये प्रौद्योगिकियाँ अब स्मार्टफोन, पहनने योग्य उपकरणों व अन्य व्यक्तिगत इलेक्ट्रॉनिक्स में प्रयुक्त हो रही हैं, जिससे यंत्र और भी हल्के तथा कुशल बन सके हैं। उदाहरणार्थ कैमरा फोन कॉम्प्लिमेंट्री मेटल–ऑक्साइड–सेमीकंडक्टर इमेज सेंसर, जिसे प्रारंभ में नासा ने अंतरिक्ष अन्वेषण के लिये विकसित किया था, आज आधुनिक स्मार्टफोन कैमरों का मूलाधार बन चुका है, जिसने हमारे छवियों को कैप्चर करने के तरीकों में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है।

इसके अलावा, नासा को पोर्टेबल उपकरणों की जरूरत थी, जिसके कारण ब्लैक एंड डेकर के साथ साझेदारी में पहला कॉर्डलेस वैक्यूम

क्लीनर, डस्टबस्टर बनाया गया। इसे अंतरिक्ष यात्रियों को चंद्रमा पर सैंपल एकत्र करने में सहायता करने के लिये विकसित किया गया था। अंतरिक्ष अनुसंधान ने पोर्टेबल वैक्यूम प्रौद्योगिकी के परिशोधन को प्रेरित किया, जिससे सफाई के लिये घरेलू अनुप्रयोगों का विकास हुआ। अंतरिक्ष मिशनों के लिये नासा द्वारा विकसित उन्नत जल निस्पंदन प्रणालियों का उपयोग पृथ्वी पर जल शोधन प्रौद्योगिकियों में सुधार के लिये किया गया है। ये नवाचार दूरदराज या आपदाग्रस्त क्षेत्रों में स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने के लिये आवश्यक रहे हैं।

अंतरिक्ष अनुसंधान ने उच्च दक्षता वाली बैटरियों के विकास को गति दी है, विशेष रूप से अंतरिक्ष यान में उपयोग के लिये जहाँ वजन और ऊर्जा दक्षता महत्त्वपूर्ण होती है। इन नवाचारों को इलेक्ट्रिक वाहनों और नवीकरणीय ऊर्जा भंडारण प्रणालियों पर लागू किया गया है।उदाहरण के लिये, नासा के अत्याधुनिक ठोस–अवस्था बैटरी अनुसंधान ने ऐसी ऊर्जा प्रणालियाँ बनाई हैं, जिनका वजन नियमित बैटरियों की तुलना में 30–40 प्रतिशत कम है और वे तीन गुना अधिक ऊर्जा संग्रहित करती हैं, जिससे वे अधिक कुशल, लंबे समय तक चलने वाले ऊर्जा समाधान प्रदान करती हैं। सोलर पैनल मूलतः अंतरिक्ष अनुप्रयोगों के लिये विकसित किये गए थे, नासा ने वर्ष 1958 में पहली सोलर सेल प्रौद्योगिकी को आगे बढ़ाया था। आज, सबसे उन्नत सौर पैनल कार्बन नैनोट्यूब का उपयोग करके बनाए जाते हैं, जो अधिक प्राकृतिक प्रकाश को ग्रहण करके तथा परावर्तित प्रकाश को कम करके दक्षता बढ़ाते हैं। भारत वैकल्पिक नवीकरणीय स्रोत के रूप में सौर ऊर्जा की सक्रिय रूप से खोज कर रहा है, इसका एक प्रमुख उदाहरण अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन में इसकी नेतृत्वकारी भूमिका है। अंतरिक्ष मिशनों में उन्नत इमेजिंग प्रौद्योगिकियों की आवश्यकता के कारण पृथ्वी पर चिकित्सा इमेजिंग में सफलता मिली है। मूलतः अंतरिक्ष यात्रियों के आंतरिक स्वास्थ्य का अध्ययन करने के लिये विकसित प्रौद्योगिकियाँ अब चिकित्सा निदान में आम हो गई हैं। अंतरिक्ष में उपयोग के लिये विकसित कॉम्पैक्ट अल्ट्रासाउंड मशीनों का उपयोग अब आपातकालीन कक्षों और एम्बुलेंसों में किया जाता है, जो त्वरित, ऑन–साइट निदान क्षमता प्रदान करती हैं। पोर्टेबल अल्ट्रासाउंड बाजार वर्ष 2030 तक 3.8 बिलियन डॉलर तक पहुँचने की उम्मीद है, जिसमें अंतरिक्ष–प्रेरित प्रौद्योगिकियाँ इस वृद्धि में महत्त्वपूर्ण योगदान देंगी।

5. **अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का योगदान**– अंतरिक्ष प्रौद्योगिकियों ने बाढ़, तूफान और वनाग्नि जैसी प्राकृतिक आपदाओं की निगरानी एवं पूर्वानुमान के लिये उपग्रहों के उपयोग के माध्यम से आपदा प्रबंधन प्रयासों को काफी बढ़ाया है। ये उपग्रह समय पर आपदा प्रतिक्रिया के लिये रियल टाइम डाटा प्रदान करते हैं। इसरो के आपदा प्रबंधन सहायता कार्यक्रम ने आपदाओं पर नजर रखने तथा बचाव एवं पुनर्प्राप्ति कार्यों में सहायता के लिये महत्त्वपूर्ण जानकारी प्रदान करने के लिये उपग्रह डेटा का उपयोग किया है। विशेष उपयोगों जैसे– अंतरिक्ष अन्वेषण के लिये विकसित की गई सुविधा तथा सहायक सामग्री में तकनीकी प्रगति ने उपभोक्ता उत्पादों पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डाला है। "मेमोरी फोम" जैसी सामग्री, जिसे आरंभ में नासा ने उच्च गुरुत्व बल के दौरान अंतरिक्ष यात्रियों को आराम देने हेतु विकसित किया था, अब गद्दों से लेकर जूतों तक के उद्योगों में क्रांति ला चुकी है। अपोलो स्पेससूट पर नासा के कार्य ने 'नाइकी एयर' जैसी गद्देदार 'इनसोल' के विकास में योगदान दिया, जो खिलाड़ियों को एक्स्ट्रा लिफ्ट तथा झटके से सुरक्षा प्रदान करती हैं। वर्ष 1968 में, प्यूमा और रीबॉक जैसी जूता कंपनियों ने जूतों में वेल्क्रो का उपयोग करना शुरू किया, जिसका श्रेय नासा को जाता है। इन नवाचारों ने आराम व सुविधा को बढ़ाया है, स्वास्थ्य परिणामों में सुधार किया है और बेहतर दैनिक उपयोग के लिये डिजाइन किये गए उत्पादों के विकास में योगदान दिया है।

भारत आगामी अंतरिक्ष मिशनों का व्यापक उपयोग करने वाला देश है। नासा और इसरो की एक संयुक्त परियोजना, निसार, पहला द्वि–आवृत्ति सिंथेटिक एपर्चर रडार युक्त पहला उपग्रह होगा, जिसे उच्च स्तरीय रिमोट सेंसिंग के लिये विकसित किया गया है। निसार से प्राप्त हाई–रिजॉल्यूशन अर्थ ऑब्जर्वेशन डाटा वास्तविक समय बाढ़ निगरानी से लेकर वनाग्नि का पता लगाने तक आपदा प्रबंधन क्षमताओं को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकता है। यह मृदा नमी, फसल स्वास्थ्य आदि पर विस्तृत, रियल टाइम डेटा प्रदान करके कृषि उत्पादकता को भी बढ़ा सकता है। रडार इमेजरी से फसल स्वास्थ्य की सटीक निगरानी और जल संसाधन प्रबंधन में भी सहायता मिलेगी, जिससे परिशुद्ध कृषि, शहरी नियोजन एवं पर्यावरण संरक्षण में योगदान मिलेगा। गगनयान का मानव अंतरिक्ष उड़ान कार्यक्रम न केवल अंतरिक्ष यात्रियों को अंतरिक्ष में भेजेगा, बल्कि इसरो को उन्नत जीवन समर्थन प्रणाली और स्वास्थ्य निगरानी प्रौद्योगिकियों को विकसित करने में भी सहायता करेगा। अंतरिक्ष में मानव स्वास्थ्य निगरानी के लिये विकसित प्रौद्योगिकियों, जैसे बायोमेडिकल सेंसर, टेलीमेडिसिन सिस्टम और रिमोट डायग्नोस्टिक्स का उपयोग पृथ्वी के सुदूर व कम सुविधा वाले क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा की पहुँच में सुधार लाने में किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, अंतरिक्ष यात्रियों की मांसपेशीय पुनरुत्पत्ति और अस्थि स्वास्थ्य से संबंधित जैव–प्रौद्योगिकी नवाचारों का प्रयोग वृद्धावस्था–संबंधी रोगों व दीर्घकालिक गतिशीलता समस्याओं से पीड़ित मरीजों के उपचार में किया जा सकता है, जिससे वृद्धजनों तथा अस्थि–मांसपेशीय रोगियों के लिये चिकित्सा सेवा की गुणवत्ता में वृद्धि संभव होगी।

वीनस ऑर्बिटर मिशन शुक्र के वायुमंडल का अध्ययन करेगा, जो अपने अत्यधिक ग्रीनहाउस प्रभावों के लिये जाना जाता है। शुक्र की चरम जलवायु प्रणालियों से प्राप्त आँकड़े पृथ्वी पर जलवायु मॉडलिंग और कार्बन उत्सर्जन की बेहतर समझ प्रदान कर सकते हैं। शुक्र ग्रह के ग्रीनहाउस गैस–आधारित जलवायु तंत्र को समझना, पृथ्वी पर जलवायु परिवर्तन शमन रणनीतियों को सुधारने में सहायक हो सकता है। अंतरिक्ष–आधारित तकनीकें, जैसे राष्ट्रीय महासागरीय और वायुमंडलीय प्रशासन की "अर्थ ऐंड स्पेस ऑब्जर्विंग डिजिटल ट्विन्स", जलवायु परिवर्तन शमन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। उपग्रह आँकड़ों और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के माध्यम से, ये तकनीकें समय रहते चेतावनी प्रणालियों को मजबूत बनाती हैं, जिससे जलवायु जनित प्रभावों को कम करने तथा समयोचित हस्तक्षेप सुनिश्चित करने में

सहायता मिलती है। यह प्रयास नवीकरणीय ऊर्जा प्रौद्योगिकियों, विशेष रूप से सौर ऊर्जा के अनुकूलन में भी योगदान दे सकता है तथा जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में मौसम प्रतिरूपों की गहन समझ प्रदान कर सकता है, जिससे कृषि, जल संसाधन एवं ऊर्जा खपत का बेहतर प्रबंधन संभव हो सकेगा।

6. **मार्स ऑर्बिटर मिशन–2 का उद्देश्य**– इस मिशन का उद्देश्य अंतर–ग्रहीय संप्रेषण तथा दिशा–निर्देशन प्रणालियों को सशक्त बनाना है। मंगल ग्रह के लिये विकसित ये उन्नत संप्रेषण प्रणालियाँ और नेविगेशन तकनीकें पृथ्वी पर भी तत्काल अनुप्रयोग पा सकती हैं, जैसे– वैश्विक स्थिति निर्धारण प्रणाली, उपग्रह संचार तथा दिशा–निर्देशन आधारित प्रणालियाँ। ये प्रगति लॉजिस्टिक्स, कृषि और परिवहन जैसे क्षेत्रों में स्वायत्त वाहनों एवं ड्रोनों के लिये नेविगेशन सटीकता में सुधार करेगी, जिससे सुरक्षित, अधिक कुशल यात्रा तथा वितरण प्रणाली सुनिश्चित होगी। इसके अतिरिक्त, संचार नवाचारों से 5 जी नेटवर्क क्षमताओं और ग्रामीण कनेक्टिविटी में वृद्धि होगी, जिससे वंचित क्षेत्रों में इंटरनेट पहुँच में सुधार होगा। जापान एयरोस्पेस एक्सप्लोरेशन एजेंसी, जैक्सा के साथ सहयोग में प्रस्तावित "लूनर पोलर एक्सप्लोरेशन मिशन" चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव की पड़ताल करेगा, जो जल–बर्फ और खनिजों से समृद्ध माना जाता है। चंद्रमा से जल तथा संसाधनों की खोज व निष्कर्षण पृथ्वी पर संसाधन प्रबंधन से जुड़ी उन्नत तकनीकों को विकसित करने में सहायक सिद्ध हो सकता है। यह मिशन पृथ्वी के लिये जल–शुद्धिकरण, खनिज निष्कर्षण और सतत् संसाधन प्रबंधन तकनीकों में योगदान दे सकता है। इसके अलावा, चंद्रमा पर निवास के लिये विकसित प्रौद्योगिकियों को ऑफ–ग्रिड जीवन और सतत् शहरी बुनियादी अवसंरचना के लिये अनुकूलित किया जा सकता है, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ संसाधनों की कमी व पर्यावरणीय तनाव है।

उन्नत अनुसंधान के लिये अंतरिक्ष स्टेशन स्थापित करने के परिप्रेक्ष्य में भारत का अंतरिक्ष स्टेशन वैज्ञानिक अनुसंधान, सूक्ष्मगुरुत्व प्रयोगों और मानव अंतरिक्ष अन्वेषण के लिये जीवन रक्षक प्रणालियों के विकास का केंद्र होगा। इसके अलावा, अंतरिक्ष स्टेशन नई प्रौद्योगिकियों के लिये एक परीक्षण स्थल के रूप में काम कर सकता है, जिससे चिकित्सा, ऊर्जा और भौतिक विज्ञान जैसे उद्योगों को लाभ हो सकता है, जिससे उन्नत स्वास्थ्य देखभाल प्रौद्योगिकियों एवं धारणीय जीवन समाधान में सफलता मिल सकती है। अर्थ ओब्जर्वेशन और डाटा–संचालित निर्णय लेने में क्रांतिकारी बदलाव के संबंध में चंद्रयान–4 एक चंद्र–नमूना–वापसी अभियान होगा, जिसका उद्देश्य चंद्रमा से नमूने एकत्र करना तथा उन्हें पृथ्वी पर लाकर उनका विश्लेषण करना है। चंद्रमा की मिट्टी की संरचना और चंद्रमा की भूवैज्ञानिक प्रक्रियाओं को समझकर, इसरो पृथ्वी–आधारित संसाधन प्रबंधन को परिष्कृत कर सकता है, विशेष रूप से खनिज अन्वेषण एवं भूवैज्ञानिक अध्ययन के लिये। यह अनुसंधान अंतरिक्ष मौसम पूर्वानुमान प्रणालियों में भी सुधार कर सकता है, जिससे सौर ज्वालाओं और अन्य ब्रह्मांडीय घटनाओं के लिये बेहतर तैयारी सुनिश्चित हो सकेगी, जो पृथ्वी की संचार एवं ऊर्जा प्रणालियों को प्रभावित करती हैं।

7. **निष्कर्ष**– अंतरिक्ष अन्वेषण का तात्पर्य केवल नई ऊँचाइयों को छूना नहीं है, बल्कि इसका मतलब है पृथ्वी पर जीवन को उन्नत करने के लिये अज्ञात का दोहन करना। गगनयान कार्यक्रम, निसार और चंद्रयान 3 सहित भारत के अंतरिक्ष अन्वेषण मिशनों में स्वास्थ्य सेवा, प्रौद्योगिकी एवं पर्यावरणीय संवहनीयता में वैश्विक प्रगति के लिये परिवर्तनकारी क्षमताएँ हैं। ये नवाचार न केवल अंतरिक्ष अनुसंधान में भारत की स्थिति को बढ़ाएँगे बल्कि पृथ्वी पर चुनौतियों के समाधान को भी बढ़ावा देंगे।

## References


1. A Brief History of High-Energy Astronomy 1900-1958, NASA Web Page.
2. Willmore, Peter Cosper, The First 50 Years of Public Lectures.
3. A Brief History of Space Exploration by The Aerospace Corporation (n.d.). The Aerospace Corporation to ensure the success of the space mission.
4. ESA Science and Technology Fact Sheet (ND). ESA Science and Technology.
5. Salute 1 Archived 2008-05-09 at the Wayback Machine. (n.d.). Encyclopedia Astronautica.
6. Report of the Inter-Agency Meeting on Outer Space Activities. New York, 28 and 31 October 2024, and Vienna, 20 November 2024.
7. Report of the Sixty-Second Session of the Scientific and Technical Subcommittee held in Vienna, 3 to 14 February 2025
8. Long-term strategy on space and global health for the period 2025-2035, working paper prepared by the Coordinator of the Space and Global Health Network.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 136-138
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.23
SJIF (2025) : 8.749



# Green Jobs in India

Deepak Kohli
5/104, Vipul Khand, Gomti Nagar, Lucknow- 226 010, India
deepakkohli64@yahoo.in

**Received: 26-06-2025, Accepted: 23-09-2025**

**Abstract-** Green jobs are jobs that help to maintain, improve, or restore the quality of the environment. These jobs will not only promote economic development but also help in environmental protection. Green jobs have now emerged as a key component of the Sustainable Development Goals. More on the role of green jobs in driving economic growth while reducing environmental degradation. Idea of green jobs is now emerging as a key component of sustainable development. Sustainable development means meeting the needs of the present and ensuring that future generations can meet their own needs. In this way, green jobs are now becoming a new type of our way of life i.e. by becoming a confluence of economic life and environment. They are becoming important factors in bringing about order and appropriate changes in our behaviour. Present article indicates the future of Green Jobs in India.

**Key words-** Environment, renewable energy sources, green jobs, Indian economy

# भारत में हरित नौकरियाँ

दीपक कोहली
5104, विपुल खंड, गोमती नगर लखनऊ–226 010,उ0प्र0, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

**सार**– हरित नौकरियाँ उन नौकरियों को कहते हैं, जो पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाए रखने, सुधारने, या पुनर्स्थापित करने में मदद करती हैं। ये नौकरियाँ आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सतत् विकास के लक्ष्यों में हरित नौकरियाँ अब एक प्रमुख घटक के रूप में उभर रही हैं। पर्यावरण क्षरण को कम करते हुए आर्थिक विकास को गति देने में हरित नौकरियों की भूमिका पर अधिक जोर दिया गया है। इसलिये हरित नौकरी का विचार अब सतत् विकास के एक प्रमुख घटक के रूप में उभर रहा है। सतत् विकास का अर्थ है, वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करना तथा यह सुनिश्चित करना कि भावी पीढ़ियाँ अपनी आवश्यकताओं को स्वयं पूरा कर सकें। इस तरह से सतत् विकास संबंधी हरित नौकरियाँ अब हमारे जीने के तरीके यानी आर्थिक जीवन के संजाल और पर्यावरण का संगम बनकर नई तरह की व्यवस्था को लाने और हमारे व्यवहार में समुचित परिवर्तन लाने के लिये महत्त्वपूर्ण घटक बन रही हैं। प्रस्तुत आलेख भारत में हरित नौकरियों के भविष्य को इंगित करता है।

**बीज शब्द**– पर्यावरण, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत, हरित रोजगार, भारत की अर्थव्यवस्था

1. **परिचय**– स्किल काउंसिल फॉर क्लीन जॉब्स के अनुसार, हरित नौकरियाँ रोजगार की एक श्रेणी हैं, जो हमें प्रत्यक्ष लाभ पहुँचाती है और पर्यावरण संरक्षण में योगदान देती है। इन नौकरियों में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग या विकास, संसाधनों का संरक्षण, ऊर्जा दक्षता को बढ़ावा देना, कचरे का जिम्मेदारी से प्रबंधन करना और सतत् विकास का समर्थन करना शामिल है। इस प्रकार से हरित नौकरियाँ पर्यावरण की रक्षा, अपशिष्ट को कम करने, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, जीवन और काम करने के अधिक संधारणीय तरीके बनाने पर ध्यान केंद्रित करती हैं। ये नौकरियाँ कई उद्योगों में फैली हो सकती हैं और पर्यावरण के अनुकूल परिवहन में काम करने से लेकर अक्षय ऊर्जा में विशेषज्ञता तक कई तरह की भूमिकाएँ निभा सकती हैं। हमारी वर्तमान पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने और आने वाली पीढ़ियों के लिये एक संधारणीय भविष्य सुनिश्चित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। हरित नौकरियों के क्षेत्र में काम करने से न केवल पर्यावरण संरक्षण होता है, बल्कि आर्थिक विकास भी होता है।[1–3]

हरित नौकरियाँ आर्थिक गतिविधियों के नकारात्मक प्रभावों को कम करके पर्यावरणीय स्तर पर सुधार लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इससे न केवल पर्यावरण को लाभ होता हैं, बल्कि अर्थव्यवस्था पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। हरित उद्योगों की वृद्धि से नए रोजगार के अवसर पैदा होते हैं और आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है। हरित नौकरियाँ पर्यावरण पर मानवीय गतिविधियों के नकारात्मक प्रभाव को कम करने में भी मदद करती हैं। उदाहरण के लिये, सौर पैनल इंस्टॉलर और पवन टरबाइन तकनीशियन जैसी नवीकरणीय ऊर्जा नौकरियाँ उस जीवाश्म ईंधन पर हमारी निर्भरता को कम करने में मदद करती हैं, जो वायु और जल प्रदूषण में योगदान करते हैं। हरित नौकरियाँ नवीकरणीय ऊर्जा के उपयोग को बढ़ावा देकर पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के पर्यावरणीय प्रभावों को कम करने में मदद करती हैं।

हरित नौकरियों में निवेश करने से पर्यावरण और अर्थव्यवस्था दोनों को दीर्घकालिक लाभ होता है। संधारणीय प्रथाओं को बढ़ावा देने और नवीकरणीय संसाधनों पर निर्भरता कम करके हम एक अधिक लचीली और संधारणीय अर्थव्यवस्था बना सकते हैं । इससे पर्यावरण की रक्षा होती है और भविष्य की पीढ़ियों के लिये संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित होती है।

2. **भारत सरकार द्वारा उठाये जा रहे कदम**– भारत की अर्थव्यवस्था तेजी से विकास कर रही है, लेकिन इसके साथ ही विविध पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना भी कर रहा है। ऐसे में हरित नौकरियों को बढ़ावा देना और उनका विस्तार करना अवसर तथा चुनौतियाँ दोनों को प्रस्तुत करता है। हाल ही में भारत सरकार के केंद्रीय बजट 2024–25 में हरित नौकरियों पर जोर दिया गया है, जो एक सकारात्मक कदम है। यह पहल कई क्षेत्रों में हरित नौकरियों के विकास की नींव रखती है, जो भारत के एक स्थायी और समावेशी अर्थव्यवस्था में परिवर्तन के लिये महत्वपूर्ण है। हरित नौकरियों की अवधारणा भारत में सतत् विकास को बढ़ावा देने के लिये अपार संभावनाएँ रखती हैं और इससे संबंधित बाधाओं की जटिल श्रृंखला का समाधान करना उनकी पूरी क्षमता का दोहन करने के लिये आवश्यक है। भारत दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है और उसने वैश्विक जलवायु समझौतों पर हस्ताक्षर करने वाले देश के रूप में अपनी छवि बनाई है, किंतु वह कार्बन उत्सर्जन को कम करने और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ाने के साथ–साथ आर्थिक विकास को बनाए रखने की दोहरी चुनौती का सामना कर रहा है। इसलिये हरित नौकरियों की अवधारणा भारत की राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के साथ निकटता से जुड़ी हुई है।

भारत में हरित नौकरियों का विस्तार कई चुनौतियों का सामना कर रहा है, जिनमें नीतिगत ढाँचे की कमी, वित्तीय संसाधनों की कमी, कौशल बेमेल और तकनीकी बुनियादी ढाँचे की कमी शामिल हैं। इन बाधाओं को दूर करने से ही हरित नौकरियों को बढ़ावा दिया जा सकता है और आर्थिक विकास के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण किया जा सकता है। हरित प्रौद्योगिकियों और प्रथाओं के तेजी से विकास के लिये नवीकरणीय ऊर्जा, ऊर्जा दक्षता और टिकाऊ कृषि जैसे क्षेत्रों में विशेष कौशल से युक्त कार्यबल की आवश्यकता होती है। हालाँकि, वर्तमान शिक्षा और प्रशिक्षण प्रणालियाँ उभरते हरित क्षेत्रों में कैरियर के लिये श्रमिकों को पर्याप्त रूप से तैयार करने में अपना योगदान तो दे रही हैं पर यह योगदान आनुपातिक रूप से विफल प्रतीत होता है, जिससे श्रम बाजार में असंतुलन बढ़ता है और हरित अर्थव्यवस्था की ओर संक्रमण में बाधा आती है। अपर्याप्त तकनीकी अवसंरचना हरित उद्योगों के विकास और स्थायी रोजगार अवसरों के सृजन के लिये एक बड़ी चुनौती है। उन्नत प्रौद्योगिकियों तक सीमित पहुँच, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, हरित उद्यमों के विकास रोकती है और वैश्विक बाजारों में उनकी प्रतिस्पर्धा क्षमता को सीमित करती है।

3. **उद्योग द्वारा उठाये जा रहे कदम**– हरित नौकरी देने वाले क्षेत्रों और उद्यमों को समर्थन देने के लिये डिजाइन किये गए मजबूत नीतिगत ढाँचों की अनुपस्थिति एक महत्वपूर्ण बाधा बनी हुई है। भारत ने पर्यावरण संबंधी नीतियाँ बनाने और नवीकरणीय ऊर्जा लक्ष्य निर्धारित करने में प्रगति की है, लेकिन इन प्रतिबद्धताओं को प्रभावी रूप से हरित रोजगार सृजन और स्थिरता को बढ़ावा देने वाली कार्य–योग्य रणनीतियों में बदलने में कमियाँ बनी हुई हैं। इसके अलावा, विभिन्न सरकारी विभागों और अधिकार क्षेत्रों में सुसंगत नीति में समन्वय की कमी हरित रोजगार पहलों को बढ़ाने के प्रयासों को जटिल बना दे रही है। साथ ही साथ वित्तीय बाधाएँ भी हरित उद्यमों के विकास और नई हरित नौकरियों के सृजन में बाधा डालती रही हैं। हरित क्षेत्रों में काम करने वाले छोटे और मध्यम आकार के उद्यमों के लिये वित्त तक पहुँच एक बड़ी चुनौती है। कम लागत वाले ऋण कमी, विनियामक अनिश्चितताएँ और उच्च लेन–देन लागतें हरित व्यवसायों के विकास और करने और रोजगार के अवसरों को बढ़ाने में बाधा उत्पन्न कर रही हैं। भारत में हरित नौकरियों की पूर्ण क्षमता को प्राप्त करने के लिये एक नई बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। इसमें निजी क्षेत्र, सरकार और अन्य हितधारकों को शामिल करते हुए व्यापक प्रयास करने होंगे। निजी क्षेत्र को हरित प्रौद्योगिकियों और नवाचार में निवेश बढ़ाना चाहिये, जबकि सरकार को नीतिगत समर्थन और वित्तीय संस्थानों को हरित परियोजनाओं के लिये वित्त प्रदान करना चाहिये। शैक्षणिक संस्थानों के सहयोग से कार्यबल कौशल में सुधार करना और सार्वजनिक–निजी भागीदारी को बढ़ावा देना महत्वपूर्ण है।

4. **अतिरिक्त सुझाव**– सरकार को मजबूत नीतिगत ढाँचे स्थापित और करने हरित उद्योगों का समर्थन करने के लिये कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाने होंगे, जिनमें समर्पित हरित निधि बनाना, विनियामक बाधाओं को कम करना, वित्त तक पहुँच को सुगम बनाना, शिक्षा और प्रशिक्षण में निवेश करना, तकनीकी अवसंरचना में सुधार करना और डिजिटल परिवर्तन को बढ़ावा देना शामिल है। इन कदमों से हरित उद्यमों का समर्थन होगा और हरित नौकरियों के अवसर बढ़ेंगे। इसके अलावा गैर–सरकारी संगठनों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों और शिक्षाविदों के नीति संवादों में भाग लेकर, साथ ही तकनीकी सहायता प्रदान करके नीति और विनियामक सुधारों की वकालत करनी चाहिये। प्रशिक्षण कार्यक्रमों और ज्ञान साझाकरण के माध्यम से क्षमता निर्माण के प्रयास आवश्यक हैं। अंतर्राष्ट्रीय निधि जुटाकर और एमएसएमई विकास का समर्थन करके वित्त और संसाधनों तक पहुँच को सुगम बनाना हरित क्षेत्रों के विकास को बढ़ावा देगा। अनुप्रयुक्त अनुसंधान और उद्योग सहयोग के माध्यम से अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देने से चुनौतियों का समाधान होगा और हरित रोजगार सृजन के अवसरों का लाभ उठाया जा सकेगा। सामूहिक रूप से ये कार्य भारत को हरित नौकरियों की बाधाओं को दूर करने और सतत् विकास हासिल करने में सक्षम बनाएंगे।

भारत में कई क्षेत्र हरित रोजगार सृजन के लिये बड़े अवसर प्रदान करते हैं। केंद्रीय बजट 2024–25 में ऐसे कई उपायों की घोषणा की गई है, जिनमें विभिन्न क्षेत्रों में हरित रोजगार सृजन की क्षमता है। एक आकलन के अनुसार देश में एक करोड़ तक हरित रोजगार सृजित हो सकते हैं। छतों पर सौर ऊर्जा संयंत्र लगाने की योजना और पंप संबंधी परियोजनाओं की नीति नवीकरणीय ऊर्जा की ओर मजबूत कदम का संकेत देती है, जिससे अधिक संख्या में हरित रोजगार सृजित हो सकते हैं तथा नवीकरणीय ऊर्जा आपूर्ति श्रृंखला में सुधार हो सकता है। साथ ही बुनियादी ढाँचे में निवेश से टिकाऊ निर्माण, ऊर्जा–कुशल भवन डिजाइन तथा स्मार्ट ग्रिड और टिकाऊ परिवहन नेटवर्क जैसे हरित बुनियादी ढाँचे के रखरखाव में हरित रोजगार सृजित करने के अवसर उपलब्ध होते हैं। इसके अलावा पारगमन–उन्मुख विकास और 'विकास केंद्रों के रूप में शहरों' के निर्माण पर जोर देने से शहरी नियोजन, टिकाऊ परिवहन प्रबंधन और शहरों के भीतर हरित स्थानों के विकास में हरित रोजगार सृजन हो सकता है। पर सबसे अधिक ध्यान पर्यावरण अनुकूल वस्तुओं के उत्पादन पर देकर एमएसएमई और श्रम–प्रधान विनिर्माण को बढ़ावा देने से टिकाऊ उत्पादन, पुनर्चक्रण और स्वच्छ प्रौद्योगिकियों के विकास में हरित नौकरियों के सृजन को बढ़ाया जा सकता है। तीर्थयात्रा और पर्यटन स्थलों का विस्तार करने से पारिस्थितिकी पर्यटन, विरासत संरक्षण और टिकाऊ आतिथ्य सेवाओं में हरित रोजगार सृजित हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त अनुसंधान और प्रौद्योगिकी विकास में निवेश से उच्च–कुशल हरित नौकरियों का सृजन हो सकता है ।

5. **निष्कर्ष**– इन पहलुओं को कौशल विकास कार्यक्रमों के साथ जोड़ना महत्वपूर्ण है, जो कार्यबल को हरित प्रौद्योगिकियों और संधारणीय प्रथाओं में आवश्यक दक्षताओं से लैस करेगा। सरकार का कर संरचनाओं को सरल बनाने और व्यवसायों के लिये अनुपालन बोझ को कम करने ध्यान केंद्रित करने से नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में निजी निवेश को बढ़ावा मिलेगा और हरित रोजगार सृजन में तेजी आएगी। व्यक्तियों, संगठनों और सरकारों को हरित नौकरियों के महत्व को पहचानना होगा तथा अधिक टिकाऊ भविष्य के लिये उनके विकास को बढ़ावा देने की दिशा में काम करना होगा।

## References

1. https://www.greenjobsindia.in/
2. https://sscgj.in/
3. https://recircle.in/green-jobs-in-india-start-your-career-with-recircle/

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 139-142
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.24
SJIF (2025) : 8.749



# Artificial Intelligence is revolutionizing healthcare

Deepak Kohli
5/104, Vipul Khand, Gomti Nagar, Lucknow- 226 010, U.P., India
deepakkohli64@yahoo.in

**Received: 04-05-2025, Accepted: 13-08-2025**

**Abstract-** The use of Artificial Intelligence (AI) in healthcare services is the beginning of a new era, which is helping in making healthcare services more effective and efficient. Artificial intelligence is a technology that provides machines with human-like intelligence, allowing them to solve complex problems. There has been a growing interest in leveraging artificial intelligence to address healthcare gaps in India's healthcare system in recent years. Artificial intelligence technologies are pivotal in increasing efficiency, improving access to medical facilities, and potentially revolutionizing healthcare delivery in a country where resources are often scarce. Artificial intelligence is excellent at processing data and automating repetitive tasks.

**Key words-**Artificial intelligence, healthcare service, telemedicine, medical system

# कृत्रिम बुद्धिमत्ता से स्वास्थ्य सेवाओं में क्रांतिकारी परिवर्तन

दीपक कोहली
5104, विपुल खंड, गोमती नगर लखनऊ–226 010,उ0प्र0, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

**सार** –स्वास्थ्य सेवाओं में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग एक नए युग का आरंभ है, जो स्वास्थ्य सेवाओं को अधिक प्रभावी और कुशल बनाने में मदद कर रहा है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक ऐसी तकनीक है जो मशीनों को मानव जैसी बुद्धिमत्ता प्रदान करती है, जिससे वे जटिल समस्याओं का समाधान कर सकती हैं। भारत की स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में हाल के वर्षों में स्वास्थ्य सेवा में कमियों को दूर करने के लिये कृत्रिम बुद्धिमत्ता का लाभ उठाने में रुचि बढ़ रही है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता तकनीकें दक्षता बढ़ाने, चिकित्सा सुविधाओं तक पहुँच में सुधार करने और संभावित रूप से ऐसे देश में स्वास्थ्य सेवा वितरण में क्रांतिकारी बदलाव लाने में निर्णायक हैं जहाँ संसाधन प्रायः कम होते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता डाटा को संसाधित करने और दोहराए जाने वाले कार्यों को स्वचालित करने में उत्कृष्ट है ।

**बीज शब्द**–कृत्रिम बुद्धिमत्ता, स्वास्थ्य सेवा, टेलीमेडिसिन, चिकित्सा प्रणालियां

1. **परिचय**– स्वास्थ्य सेवा में स्वास्थ्य सेवा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के कार्यान्वयन से कई लाभ मिलते हैं, विशेषतः सटीकता, दक्षता और लागत–प्रभावशीलता को बढ़ाने में। ये लाभ न केवल रोगी के परिणामों में सुधार करते हैं बल्कि स्वास्थ्य सेवा संचालन को भी सुव्यवस्थित करते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता सिस्टम में बड़ी मात्रा में डाटा को तेजी से और सटीक रूप से प्रोसेस और विश्लेषण करने की क्षमता होती है। इसमें मेडिकल रिकॉर्ड, इमेजिंग डाटा, लैब परिणाम और आनुवंशिक जानकारी सम्मिलित है, जो सटीक निदान और उपचार योजनाओं के लिए महत्वपूर्ण हैं। उन्नत एल्गोरिदम के साथ, एआई चिकित्सा डाटा में सूक्ष्म पैटर्न और विसंगतियों का पता लगा सकता है जिन्हें मनुष्य अनदेखा कर सकते हैं। यह सटीकता रेडियोलॉजी, पैथोलॉजी और जेनेटिक्स जैसे क्षेत्रों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। अधिक सटीक निदान संबंधी जानकारी प्रदान करके, कृत्रिम बुद्धिमत्ता त्रुटियों को कम करने में सहायता करता है। गलत निदान और देरी से निदान का रोगी की देखभाल पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है, और इन त्रुटियों को कम करने में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की भूमिका एक महत्वपूर्ण प्रगति है। इसके अलावा एआई चिकित्सकों के लिए एक सहायक उपकरण के रूप में कार्य करता है, जो साक्ष्य–आधारित सिफारिशें और अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। इससे अधिक सूचित निर्णय लेने और अनुरूप उपचार रणनीतियों की ओर अग्रसर होता है।[1–4]

2. **कृत्रिम बुद्धिमत्ता अभूतपूर्व सटीकता और गति के साथ चिकित्सा निदान में भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में परिवर्तन ला रही है–**

2.1 **रेडियोलॉजी में**–रेडियोलॉजी में कृत्रिम बुद्धिमत्ता एल्गोरिदम से सूक्ष्म असामान्यताओं का पता लग सकता है जिसे मानव आँख से नहीं देखा जा सकता है। उदाहरण के लिये नेचर में प्रकाशित एक अध्ययन से पता चला है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता सिस्टम के परिणामस्वरूप

बायोप्सी–स्तन कैंसर की पुष्टि से संबंधित फाल्स–पॉजिटिव और फाल्स–निगेटिव पहचान की त्रुटियों की दरों में 1.2 प्रतिशत और 2.7 प्रतिशत की कमी आई है। जैसे–जैसे कृत्रिम बुद्धिमत्ता का विकास जारी है इसके द्वारा नेत्र विज्ञान से लेकर पैथोलॉजी तक विभिन्न चिकित्सा क्षेत्रों में निदान सटीकता देने की संभावना है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता व्यक्तिगत उपचार योजनाएँ बनाने के लिये बड़ी मात्रा में रोगी डाटा का विश्लेषण करके सटीक चिकित्सा के युग की शुरुआत कर रहा है। किसी व्यक्ति की आनुवंशिक संरचना, जीवनशैली कारकों और चिकित्सा इतिहास पर विचार करके कृत्रिम बुद्धिमत्ता से उच्च प्रभावकारिता और कम दुष्प्रभावों के साथ लक्षित उपचारों को बढ़ावा मिल सकता है। उदाहरण के लिये आईबीएम वाटसन ऑन्कोलॉजी का उपयोग विश्व भर में 230 से अधिक अस्पतालों में किया गया है जो ऑन्कोलॉजिस्टों को व्यक्तिगत कैंसर उपचार योजनाएँ विकसित करने में सहायता करता है। यह अनुकूलित दृष्टिकोण न केवल रोगी के परिणामों में सुधार करता है बल्कि स्वास्थ्य देखभाल प्रणालियों में संसाधन आवंटन को भी अनुकूलित करता है।

2.2 **दवाओं की खोज में**– कृत्रिम बुद्धिमत्ता से दवा की खोज और विकास प्रक्रिया को बढ़ावा मिल रहा है, जिससे संभावित रूप से जीवन रक्षक दवाओं को तेजी से और कम लागत पर बाजार में लाया जा सकता है। मशीन लर्निंग एल्गोरिदम जैविक डाटा का विश्लेषण कर सकते हैं, लक्षित–दवा अंतःक्रियाओं की भविष्यवाणी कर सकते हैं और आणविक संरचनाओं को अनुकूलित कर सकते हैं जिससे प्रारंभिक चरण की दवा खोज के लिये आवश्यक समय और संसाधनों में काफी कमी आ सकती है। उदाहरणतः इंसिलिको मेडिसिन ने केवल 46 दिनों में फाइब्रोसिस के लिये एक नई दवा को डिजाइन करने, संश्लेषित करने और मान्य करने के लिये कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग किया। जबकि पारंपरिक रूप से ऐसी प्रक्रिया में वर्षों लगते हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता क्लिनिकल प्रणाली को सुव्यवस्थित कर रहा है, प्रशासनिक बोझ को कम कर रहा है और स्वास्थ्य पेशेवरों को रोगी देखभाल पर अधिक ध्यान केंद्रित करने की अनुमति दे रहा है। प्राकृतिक भाषा प्रसंस्करण एल्गोरिदम स्वचालित रूप से डॉक्टर–रोगी वार्तालाप को लिपिबद्ध और सारांशित कर सकता है, इलेक्ट्रॉनिक स्वास्थ्य रिकॉर्ड को अद्यतन कर सकता है और नैदानिक नोट्स तैयार कर सकता है। इसके अतिरिक्त कृत्रिम बुद्धिमत्ता संचालित शेड्यूलिंग प्रणालियाँ रोगी के लिये सुलभता कर सकती हैं, प्रतीक्षा समय को कम कर सकती हैं और अस्पतालों में संसाधन आवंटन में सुधार कर सकती हैं।

2.3 **जनमानस तक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच बढ़ाने में**– कृत्रिम बुद्धिमत्ता रिमोट मॉनिटरिंग और टेलीमेडिसिन समाधानों के माध्यम से स्वास्थ्य सेवा की पहुँच का विस्तार करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता संचालित पहनने योग्य उपकरण और आई ओ टी डिवाइस, रोगी के महत्वपूर्ण संकेतों की निगरानी कर सकते हैं, विसंगतियों का पता लगा सकते हैं और स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं को संभावित समस्याओं के बारे में सचेत कर सकते हैं। कोविड महामारी के दौरान टेलीमेडिसिन में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग बढ़ गया, बेबीलोन हेल्थ जैसे प्लेटफार्म ने मरीजों को प्राथमिकता देने और प्रारंभिक परामर्श प्रदान करने के लिये कृत्रिम बुद्धिमत्ता युक्त चौटबॉट का उपयोग किया। यह तकनीक विशेष रूप से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों के लिये महत्त्वपूर्ण है, जहाँ विशेषज्ञों तक पहुँच सीमित है,कृत्रिम बुद्धिमत्ता व्यक्तिगत शिक्षण अनुभव प्रदान करके और जटिल नैदानिक परिदृश्यों का अनुकरण करके चिकित्सा शिक्षा और प्रशिक्षण में क्रांति ला रहा है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा संचालित आभासी वास्तविकता और संवर्धित वास्तविकता प्लेटफॉर्म मेडिकल छात्रों और पेशेवरों के लिये इमर्सिव प्रशिक्षण वातावरण बना सकते हैं। उदाहरण के लिये फंडामेंटलवीआर जैसी कंपनियाँ कृत्रिम बुद्धिमत्ता संचालित हैप्टिक आभासी वास्तविकता सिस्टम प्रदान करती हैं जो सर्जनों को यथार्थवादी फीडबैक के साथ बेहतर प्रक्रियाओं को अपनाने की अनुमति देती हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता संचालित अनुकूली शिक्षण प्रणालियाँ चिकित्सा पाठ्यक्रम को व्यक्तिगत छात्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार कर सकती हैं जिससे सीखने की प्रक्रिया में तेजी आएगी और अधिक सक्षम स्वास्थ्य देखभाल पेशेवर तैयार होंगे।

2.4 **भारत में स्वास्थ्य सेवाओं के बुनियादी ढांचे में सुधार हेतु**– भारत के स्वास्थ्य सेवा बुनियादी ढाँचे को प्रमुख बाधाओं का सामना करना पड़ रहा है जो कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रौद्योगिकियों को व्यापक रूप से अपनाने में चुनौती दे रहे हैं। कई स्वास्थ्य देखभाल सुविधाओं में, विशेष रूप से ग्रामीण और अर्ध–शहरी क्षेत्रों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रणालियों को समर्थन देने के लिये आवश्यक बुनियादी तकनीकी अवसंरचना का अभाव है। एक हालिया अध्ययन में कहा गया है कि ग्रामीण भारत में 7,821 स्वास्थ्य एवं कल्याण केंद्रों में से केवल 3,496 ( 45 प्रतिशत) में बिजली बैक–अप की सुविधा है। यह बुनियादी ढाँचागत अंतर परिष्कृत कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रणालियों को लागू करना और बनाए रखना कठिन बनाता है। प्रभावी कृत्रिम बुद्धिमत्ता मॉडल के प्रशिक्षण के लिये आवश्यक स्वास्थ्य देखभाल डाटा की उपलब्धता और गुणवत्ता में भारत को बाधा का सामना करना पड़ रहा है। सार्वजनिक और निजी दोनों प्रकार के प्रदाताओं वाली खंडित स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली के परिणामस्वरूप असंगत डेटा संग्रहण प्रथाएँ उत्पन्न होती हैं। भारत के कई स्वास्थ्य केंद्रों में इलेक्ट्रॉनिक स्वास्थ्य रिकॉर्ड रखा जाता है लेकिन विश्लेषण के लिये इस डेटा को एकीकृत करने के लिये कोई प्रावधान नहीं हैं, न ही इस बारे में कोई स्पष्ट दिशानिर्देश हैं कि स्वास्थ्य रिकॉर्ड को कितने समय तक रखा जाना चाहिये। डाटा की गुणवत्ता, मानकीकरण और अंतर–संचालन से संबंधित समस्याओं के कारण यह समस्या और भी गंभीर हो जाती है। भारत स्वास्थ्य सेवा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता को प्रभावी ढंग से लागू करने हेतु कतिपय और प्रभावी प्रयास कर सकता है। यथा–भारत उन्नत एआई प्रौद्योगिकियों को शामिल करके अपने राष्ट्रीय स्वास्थ्य संसाधन भंडार को बढ़ा सकता है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य संसाधन भंडार के माध्यम से राष्ट्रीय डिजिटल स्वास्थ्य मिशन को एआई रेडी डेटा प्रोटोकॉल के साथ एकीकृत

करके, भारत एक मजबूत एआई हेल्थकेयर मॉडल का निर्माण कर सकता है। एस्टोनिया की ई–स्वास्थ्य प्रणाली की सफलता, जो जनसंख्या के 95 प्रतिशत स्वास्थ्य डेटा को कवर करती है, इस दृष्टिकोण की व्यवहार्यता को प्रदर्शित करती है। इसके अलावा एआई मॉडल भारतीय आबादी के लिये उपयुक्त नहीं होने की चुनौती का समाधान करने के लिये सरकार भारत–विशिष्ट एआई मॉडल विकसित करने के लिये शैक्षणिक संस्थानों और तकनीकी कंपनियों के साथ सहयोग कर सकती है। इन मॉडलों को विविध भारतीय डाटासेट पर प्रशिक्षित किया जाना चाहिये जिसमें आनुवंशिक विविधता, क्षेत्रीय रोग प्रतिरूप और स्वास्थ्य के सामाजिक–आर्थिक निर्धारकों जैसे कारकों पर विचार किया जाना चाहिये। उदाहरण के लिये आईआईटी–दिल्ली के शोधकर्ताओं ने मलेरिया, टीबी, सर्वाइकल कैंसर के लिये एआई आधारित डिटेक्टर विकसित किये हैं। सरकार भारतीय स्वास्थ्य सेवा के लिये एआई चैलेंज की स्थापना कर सकती है, जो कि सामाजिक कल्याण के क्रम में सफल गूगल एआई कार्यक्रम के समान है जिसमें भारत की अद्वितीय स्वास्थ्य सेवा चुनौतियों के अनुरूप समाधान विकसित करने के लिये शोधकर्ताओं और स्टार्टअप को आमंत्रित किया जा सकता है।

2.5 **भारत में जन मानस को स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करने हेतु**– नियामक बाधाओं को दूर करने के लिये भारत स्वास्थ्य देखभाल एआई हेतु एक 'नियामक सैंडबॉक्स' बना सकता है, जिससे नियामक पर्यवेक्षण के तहत वास्तविक परिस्थितियों में एआई समाधानों के नियंत्रित परीक्षण की अनुमति मिल सके। यह दृष्टिकोण नवाचार को बढ़ावा देते हुए उचित विनियमन विकसित करने में मदद करेगा। सैंडबॉक्स को भारतीय रिजर्व बैंक के फिनटेक सैंडबॉक्स के अनुरूप तैयार किया जा सकता है, जिसने कई नवीन वित्तीय समाधानों को सफलतापूर्वक विकसित किया है। स्वास्थ्य सेवा एआई हेतु सैंडबॉक्स द्वारा प्रारंभ में प्रशासनिक प्रक्रियाओं या कम जोखिम वाले नैदानिक उपकरणों जैसे गैर–महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित किया जा सकता है। कौशल अंतराल को दूर करने के लिये भारत को चिकित्सा और नर्सिंग शिक्षा पाठ्यक्रम में एआई तथा डाटा विज्ञान मॉड्यूल को एकीकृत करना चाहिये। इसमें स्वास्थ्य सेवा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता पर अनिवार्य पाठ्यक्रम, एआई उपकरणों पर व्यावहारिक प्रशिक्षण और स्वास्थ्य–तकनीक कंपनियों के साथ इंटर्नशिप शामिल हो सकती है। इसके अतिरिक्त सरकार अभ्यासरत व्यवसायियों के लिये स्वास्थ्य सेवा में प्रमाणित कृत्रिम बुद्धिमत्ता पाठ्यक्रम प्रदान करने के लिये ऑनलाइन शिक्षण प्लेटफार्मों के साथ साझेदारी कर सकती है। स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय, यूनाईटेड स्टेटस के हेल्थकेयर में एआई ऑनलाइन पाठ्यक्रम जैसी पहल की सफलता, इस दृष्टिकोण की क्षमता को प्रदर्शित करती है। इसके अतिरिक्त मरीजों के विश्वास और स्वीकृति संबंधी चुनौती से निपटने के लिये भारत को स्वास्थ्य सेवा में एआई के बारे में व्यापक जन जागरूकता अभियान शुरू करना चाहिये। इन अभियानों द्वारा सरल एवं सुगम शब्दों में कृत्रिम बुद्धिगत्ता के लाभों और सीमाओं को समझाने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिये। सोशल मीडिया, टेलीविजन और सामुदायिक आउटरीच कार्यक्रमों सहित विभिन्न मीडिया चौनलों का उपयोग करना चाहिये। उदाहरण के लिये पल्स पोलियो अभियान की सफलता में सेलिब्रिटी समर्थन और जमीनी स्तर पर लामबंदी का उपयोग किया गया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता जागरूकता के लिये भी एक मॉडल हो सकता है।

3. **भविष्य की संभावनायें**– स्वास्थ्य सेवाओं में बुद्धिमत्ता (एआई) का भविष्य अपार संभावनाओं से भरा है, उम्मीद है कि इसकी प्रगति से चिकित्सा प्रणालियों की क्षमताएं और बढ़ेंगी तथा वैश्विक स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। स्वास्थ्य सेवा में भविष्य की एआई प्रणालियों को उन्नत सतत् शिक्षण क्षमताओं से लैस होने का अनुमान है। इसका मतलब है कि वे नए डाटा, शोध और परिणामों के आधार पर अपने ज्ञान के आधार और एल्गोरिदम को लगातार अपडेट करेंगे। जैसे–जैसे ये प्रणालियां विविध चिकित्सा मामलों और स्थितियों के प्रति अधिक जागरूक होती जाएंगी, उनकी निदान और उपचार संबंधी सिफारिशें अधिक सटीक और विश्वसनीय होती जाएंगी। निरंतर सीखने से एआई सिस्टम को समय के साथ रोगी–विशिष्ट कारकों को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलती है, जिससे अधिक व्यक्तिगत और प्रभावी स्वास्थ्य देखभाल समाधान प्राप्त होते हैं। ये प्रणालियाँ वास्तविक समय में डाटा का विश्लेषण करने, नई स्थितियों के लिए शीघ्रता से अनुकूलन करने तथा स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं को अद्यतन जानकारी प्रदान करने में सक्षम होंगी। एआई मानसिक स्वास्थ्य देखभाल में महत्वपूर्ण प्रगति करने के लिए तैयार है, जो मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं का शीघ्र पता लगाने, व्यक्तिगत चिकित्सा अनुशंसाएं और मानसिक स्वास्थ्य पेशेवरों के लिए सहायता के लिए उपकरण प्रदान करेगा। एआई रोगी के स्वास्थ्य संकेतकों की निगरानी, बीमारी के बढ़ने की भविष्यवाणी, तथा उपचार योजनाओं में निवारक उपाय या समायोजन का सुझाव देकर दीर्घकालिक रोगों के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। टेलीमेडिसिन में भी एआई की भूमिका बढ़ने की उम्मीद है, जिससे विभिन्न स्वास्थ्य स्थितियों का अधिक प्रभावी दूरस्थ निदान और प्रबंधन संभव हो सकेगा, जिससे स्वास्थ्य सेवा अधिक सुलभ हो सकेगी। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) स्वास्थ्य सेवा में प्रशासनिक कार्यों को और अधिक सुव्यवस्थित करेगा, रोगी निर्धारण और बिलिंग से लेकर संसाधन आवंटन तक, जिससे समग्र स्वास्थ्य सेवा प्रणाली की दक्षता में सुधार होगा। सीमित संसाधनों वाले क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवा की पहुँच और गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार करने की क्षमता एआई में है। सटीक निदान और प्रभावी उपचार योजनाएँ प्रदान करके, एआई स्वास्थ्य सेवा असमानताओं में अंतर को पाटने में मदद कर सकता है।

4. निष्कर्ष– कृत्रिम बुद्धिमत्ता वैश्विक रोग निगरानी, प्रकोप की भविष्यवाणी करने और प्रभावी सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रतिक्रियाओं को तैयार करने में सहायता कर सकता है, जो संक्रामक रोगों के प्रबंधन के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। स्वास्थ्य सेवाओं में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का भविष्य सिर्फ तकनीकी प्रगति के बारे में नहीं है, बल्कि दुनिया भर में स्वास्थ्य सेवा को अधिकाधिक व्यक्तिगत, कुशल और सुलभ बनाने की क्षमता के बारे में भी है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता का निरंतर विकास, विभिन्न स्वास्थ्य सेवा क्षेत्रों में उनके बढ़ते अनुप्रयोग और वैश्विक स्वास्थ्य प्रभाव की संभावना स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र में एआई की परिवर्तनकारी भूमिका को इंगित करती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि स्वास्थ्य सेवाओं में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग संपूर्ण मानव जाति के लिये एक विशिष्ट वरदान से कम नहीं है, जो जटिल बीमारियों के उपचार में सहायक सिद्ध हो रहा है ।

## References


1. https://indiaai.gov.in/article/artificial-intelligence-in-healthcare-a-new-era-for-india
2. https://www.mohfw.gov.in/?q=en/pressrelease/measures-taken-government-use-ai-public-health-system
3. https://www.weforum.org/stories/2025/04/india-healthcare-ai-innovation/
4. https://www.isb.edu/faculty-and-research/isb-institute-of-data-science/research/artificial-intelligence-ai-in-healthcare-a-promising-start-in-india

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 143-145
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.25
SJIF (2025) : 8.749



# Microgreen Cultivation- Green Revolution in India (2025)

Soni Singh and Anjali Sahu
Department of Botany, B.S.N.V. P.G. College Lucknow-226 001,UP. India
0522soni4444@gmail.com

**Submitted: 28-09-2025, Accepted: 21-10-2025**

**Abstract-** Rising urbanization, environmental degradation, and nutritional insecurity pose critical threats to public health Microgreens-young edible seedlings harvested within 7-14 days offer a sustainable, nutrient-dense solution. Rich in photochemical, antioxidants, and essential micronutrients, they surpass mature plants in functional value. Their cultivation requires minimal space, water, and inputs, making them ideal for urban and indoor farming. As a climate-resilient, eco-friendly innovation, microgreen farming holds potential for enhancing food security, promoting agricultural literacy, and building a self-reliant, nutrition-sensitive society, particularly in resource-limited settings.

**Key words**:-Microgreen, Phytochemicals, Medicinal, Antioxidants, Agricultural literacy

# माइक्रोग्रीन खेती- भारत में हरित क्रांति (2025)

सोनी सिंह एवं अंजली साहू
वनस्पति विज्ञान विभाग, बी.एस.एन.वी. पी.जी. कॉलेज, लखनऊ–226 001, उ0प्र0, भारत
0522soni4444@gmail.com

**सार**– तेजी से बढ़ते शहरीकरण पर्यावरणीय क्षरण और पोषण असुरक्षा ने जनस्वास्थ्य के लिए गंभीर चुनौती उत्पन्न कर दी है। माइक्रोग्रीन जो वो युवा पौधे हैं, जो कि अंकुरण के 7–14 दिनों के भीतर काटे जाने योग्य हो जाते हैं। माइक्रोग्रीन्स एक टिकाऊ और पोषण समृद्ध समाधान के रूप में उभर रहे हैं। ये अपने परिपक्व पौधों की तुलना में अधिक मात्रा में फाइटोकैमिकल्स, एंटीऑक्सीडेंट्स और सूक्ष्म पोषण तत्वों से भरपूर होती हैं। माइक्रोग्रीन पौधों की खेती अल्पजल और सीमित स्थान में पर्यावरण के अनुकूल पोषण संम्पन्न औषधीय और जैविक पौधों के उत्पादन को बढावा देती है जिससे यह शहरी और घरेलू कृषि के लिए उपयुक्त बनती है। माइक्रोग्रीन खेती पोषण सुरक्षा कृषि साक्षरता और आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक सशक्त कदम है।

**बीज शब्द**– माइक्रोग्रीन, फाइटोकैमिकल्स, एंटीऑक्सीडेंट्स, औषधीय, कृषि साक्षरता

1. **परिचय**– आज का युग तेजी से बदलती जीवन शैली बढते प्रदूषण घटती पोषकता और जलवायु परिवर्तन की चुनौती से जूझ रहा है ऐसे में माइक्रो ग्रीन की खेती एक सरल, सुलभ और टिकाऊ समाधान के रूप में सामने आई है, जो न केवल स्वास्थ्य वर्धक है बल्कि पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक सशक्तिरण में भी सहायक है। माइक्रोग्रीन ऐसे पौधे होते हैं जिन्हें बीज अंकुरण के 7 से 14 दिनों के भीतर कटाई के लिए तैयार किया जाता है। यह छोटे आकार के होते हैं लेकिन इनके अन्दर पोषण औषधीय तत्व और पर्यावरणीय लाभों की बड़ी क्षमता छिपी होती है।[1-11]

2. **पोषण मूल्य और औषधीय क्षमता**– माइक्रोग्रीन में मौजूद फाइटोकेमिकल्स, एंटीऑक्सीडेंट्स और विटामिन्स न केवल रोग प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करते हैं, बल्कि कई गंभीर रोगों की रोकथाम में भी सहायक होते हैं। माईक्रोग्रीन्स में विटामिन सी, ई, के और बीटा कैरेटीन की मात्रा पूर्ण विकसित पौधों से कई गुना अधिक होती है। अतः माइक्रोग्रीन्स को सुपरफूड की श्रेणी मे रखा जा सकता है।[5,10] माइक्रोग्रीन्स में उपस्थित फ्लैवोनोइड्स, टैनिन्स, और ग्लूकोसिनोलेट्स में कैंसररोधी, सूजनरोधी और हृदय –रक्षक गुण होते हैं। न्यूरोडीजेनेरेटिव रोगों जैसे अल्जाइमर व पार्किंसन में माइक्रोग्रीन विशेषतः मेथी, सूजरमुखी, मूंग में उपस्थित फोलेट, विटामिन के और पॉलीफेनॉल्स मस्तिष्क कोशिकाओं को ऑक्सीडेटिव क्षति से बचाते हैं और न्यूरोप्रोटेक्टिव प्रभाव डालते हैं। मूली और ब्रोकली माइक्रोग्रीन्स के अध्ययन से पता चलता है कि इनमें ग्लूकोसिनोलेट्स की उच्च मात्रा होती है, जो लीवर डिटॉक्सिफिकेशन और ट्यूमर नियंत्रण मे सहायक होती है। हृदय–स्वास्थ्य के लिए पालक और चुकन्दर के माइक्रोग्रीन्स में मौजूद नाइट्रेट्स और फ्लैवोनोइड्स रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद करते हैं और धमनियों का लचीनापन बनाए रखते हैं। ये छोटे पौधे (माइक्रोग्रीन्स) वजन नियंत्रण ब्लड शुगर बैलेंस, और पाचन में सुधार लाकर जीवन शैली विकारों से लड़ने में योगदान देते हैं। मूंग माइक्रोग्रीन्स में सैपोनिन्स और क्लोरोफिल होते हैं, जो

यकृत (लीवर) को डिटॉक्स करने और सूजन को कम करने में सहायक होते हैं। माइक्रोग्रीन्स शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं और जीवन शैली से जुड़ी बीमारियों से लड़ने में मदद करते हैं। ये छोटे पौधे कोलेस्टॉल को कम करने, गुदा संबधित बीमारियों को दूर करने और त्वचा व आंखो की रक्षा में भी लाभकारी हैं।[1] इनके नियमित सेवन से शरीर को प्राकृतिक डिटॉक्स मिलता है। अतः माइक्रोग्रीन्स पोषण का सुलभ, ताजा और जैविक स्रोत हैं।[10] इनके नियमित सेवन से शरीर को प्राकृतिक डिटॉक्स मिलता है। ये न केवल शरीर को आन्तरिक मजबूती प्रदान करतें है वरन मानसिक ताजगी और ऊर्जा भी प्रदान करते हैं।[1] माइक्रोग्रीन्स आकार में छोटे लेकिन स्वास्थ्य पर बड़ा असर डालने वाले युवा पौधे होते हैं,[2] वास्तव में माइक्रोग्रीन्स से प्राप्त फाइटो–संश्लेषित नैनोपार्टिकल्स न्यरोडिजेनेरेटिव रोलों में प्रभावी एंटीऑक्सीडेंट और न्यूरोप्रेटेक्टिव एजेन्ट के रूप में कार्य करते हैं।

3. **पर्यावरणीय स्थिरता में योगदान**– माइक्रोग्रीन की खेती न केवल स्वास्थ्यवर्धक है बल्कि पर्यावरण संरक्षण की दिशा में भी एक सकारात्मक और व्यवहारिक पहल है। इसे, घर ,स्कूल, छत, बालकनी या शहरी अपार्टमेन्ट में बिना मिट्टी या रासायनिक उर्वरकों के, केवल जैविक माध्यमों में उगाया जा सकता है।[6] पारंपरिक कृषि की तुलना में माइक्रोग्रीन्स को बहुत कम पानी की आवश्यकता होती है। इससे जल संकट झेल रहे क्षेत्रों में भी खेती संभव हो पाती है। माइकोग्रीन्स स्थानीय स्तर पर उगाए जाते हैं, परिवहन की आवश्यकता नहीं होती है, जिससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम होता है और कार्बन फुटप्रिन्ट में कमी आती है। माइक्रोग्रीन उगाने में किचन वेस्ट पुराने कपड़े या काडबोर्ड जैसी वस्तुओं का पुनः उपयोग हो सकता है, जिससे जैविक कचरे का बोझ भी घटता है। छतों, खिड़कियों और दीवारों पर माइक्रोग्रीन उगाने से शहरी क्षेत्र में हरियाली बढ़ती है, जिससे माईक्रोक्लाइमेट ठन्डा रहता है और वायु गुणवत्ता सुधरती है। माइक्रोगीन्स में रासायनिक स्प्रे की आवश्यता नहीं होती, जिससे मिट्टी और जल प्रदूषण नहीं होता है तथा जैव विविधता सुरक्षित रहती है। इस प्रकार माइक्रोग्रीन कल्टीवेशन एक ऐसी पर्यावण–संवेदनशील तकनीक है जो कम संसाधनो में अधिक उत्पादन देती है, और जलवायु परिवर्तन से जूझते विश्व को एक हरित विकल्प प्रदान करती है यह खेती प्रकृति के साथ संतुलन बनाकर स्वस्थ मनुष्य सुरक्षित पर्यावरण की संकल्पना को साकार करती है।

4. **प्रदूषण नियन्त्रण और माइकोग्रीन कल्टीवेशन**– माइक्रोग्रीन्स की खेती आज के प्रदूषित वातावरण में एक हरित समाधान के रूप में उभर रही है। यें छोटे पौधे न केवल पोषण का स्रोत है बल्कि प्रदूषण नियंत्रण में भी प्रभावशाली भूमिका निभाते हैं। माइक्रोग्रीन कार्बन–डाई ऑक्साइड जैसे हानिकारक गैसों को अवशोषित कर वायुमंडल में ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ाते हैं। शहरी बालकनी या खिड़की पर उगाए गए ये पौधे आसपास की वायु गुणवता में सुधार करते हैं और पी एम 2.5 जैसे कणों को प्राकृतिक रूप से फिल्टर करने में मद्द करते हैं। छोटे स्तर पर ही सही माइक्रोग्रीन की हरी परत ध्वनि तरगों को अवशोषित करने में सक्षम होती है। इससे घर या ऑफिस जैसे स्थानों पर ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव घटाया जा सकता है। माइक्रोग्रीन उगानें में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों की आवश्यकता नहीं होती है। जिससे जल स्रोतों में रसायनों के रिसाव की संभावना समाप्त हो जाती है। क्योंकि माइक्रोग्रीन हाइड्रोपोनिक या जैविक माध्यमों जैसे नारियल का भूसा या वर्मीकम्पोस्ट में उगाए जाते हैं ये मिट्टी को प्रदूषित नहीं करते और ना ही भारी धातु जैसे जहरीले अवशेष छोडतें हैं। माइक्रोग्रीन कल्टीवेशन का हरियाली से सीधा संबंध है। यह शहरी प्रदूषण को घटाने घरों को ऑक्सीजन समृद्ध बनाने और टिकाऊ जीवन शैली को बढ़ावा देने की दिशा में एक सरल परंतु प्रभावशाली कदम है। यह छोटे प्रयासों के माध्यम से प्रदूषण मुक्त भारत की ओर बड़ा योगदान है।

5. **वैश्विक ऊष्मीकरण**– वैश्विक ऊष्मीकरण (global warming) वह प्रक्रिया है जिसमें पृथ्वी का औसत तापमान मानव गतिविधियों के कारण धीरे–धीरे बढ़ रहा है। ग्रीन हाउस गैसों (कार्बन–डाई ऑक्साइड,मिथेन, नाईट्रोजन डाई ऑक्साइड)के अत्यधिक उत्सर्जन से यह जलवायु परिवर्तन, समुद्र स्तर में वृद्धि, सूखा, बाढ़ और जैव विविधता हानि जैसी समस्याएं उत्पन्न करता है। माइक्रोग्रीन की खेती अपने लघु पैमाने जैविक तकनीकि, और पर्यावरणीय लाभों के चलते इस संकट से लड़ने में एक सूक्ष्म लेकिन शक्तिशाली हथियार के रूप में सामने आती है। लाभों के चलते इस संकट से लड़ने में एक सूक्ष्म लेकिन शक्तिशाली हथियार के रूप में सामने आती है। माइक्रोग्रीन पौधें, जैसे अन्य हरे पौधें, प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से वायुमण्डलीय कार्बनडॉइऑक्साईड को अवशोषित करतें है और आक्सीजन उत्सर्जित करते हैं। इनका जीवन चक्र छोटा होता है, परन्तु उच्च जैविक उत्पादकता (Biomass efficiency)के कारण यह कम समय मे अधिक कार्बनडॉइऑक्साईड शोषित करते हैं। रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का निर्माण और उपयोग दोनों ही नाइट्रोजनस जैसी शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैसों का उत्सार्जन करते हैं। माइक्रोग्रीन की खेती में इनका उपयोग न के बराबर होता है। माइक्रोग्रीन की सिंचाई के लिए बहुत ही कम जल की आश्यकता होती है। जल के दोहन और विवरण मे जो ऊर्जा लगती है, वह भी इससे बचती है, जिससे अप्रत्यक्ष रूप से ग्रीनहाउस उत्सर्जन घटता है।

6. **हरियाली बढ़ाने में योगदान**– शहरी क्षेत्रों में माइक्रोग्रीन उगाना, हरियाली की मात्रा बढ़ाकर स्थानीय तापमान को नियंत्रित करने में सहायक होती है।

7. **प्रयोगात्मक**– सूरज मुखी माइक्रोग्रीन तेजी से बढ़ने वाले और छोटे समय में अधिक कार्बन अवशोषित करते हैं। मूंग और मेथी, जैविक अपशिष्ट पर भी उग सकते हैं, जिससे खाद्य उत्पादन और अपशिष्ट प्रबन्धन दोनों एकसाथ संभव होते हैं।

8. **निष्कर्ष**– माइक्रोग्रीन कल्टीवेशन 21 वीं सदी की चुनौतियों– जैसे कुपोषण, पर्यावरणीय क्षरण, वैश्विक ऊष्मीकरण और शहरीकरण का सरल, प्रभावशाली और वैज्ञानिक समाधान है। ये छोटे से दिखने वाले पौधे अपने अंदर पोषण, औषधीय तत्व, सामाजिक नवाचार और शैक्षित क्रांति की विशाल क्षमता समेटे हुए हैं। औषधीय दृष्टि से,माइक्रोग्रीन प्राकृतिक एंटी ऑक्सिडेंट्स, फाइटोकेमिकल्स और सूक्ष्म पोषक तत्वों के शक्तिशाली स्रोत हैं जो न्यूरोडीजेनेरेटिव रोगों, हृदय रोगों , और जीवनशैली संबधी विकारों में लाभकारी सिद्ध हैं। उदाहरण स्वरूप, मूँग और सूरजमुखी माइक्रोग्रीन में मौजूद पॉलीफेनोल्स और सैपोनिन्स मस्तिष्क की रक्षा और कोलेस्ट्रॉल नियंत्रण में सहायक हैं। पर्यावरणीय दृष्टि, से, माइक्रोग्रीन खेती पारंपरिक कृषि के मुकाबले बहुत ही कम जल, भूमि और संसाधनों में संभव है। यह कीटनाशकमुक्त होती है, स्थानीय स्तर पर उत्पादित की जा सकती है, और जैविक कचरे का पुनः उपयोग करके सर्कुलर ग्रीन इकोनॉमी को बल देती है।वैश्विक ऊष्मीकरण और प्रदूषण नियंत्रण की दिशा में , यह खेती कार्बन अवशोषण, ग्रीनहाउस उत्सर्जन में कमी और शहरी हरियाली को बढावा देती है। शहरी घरों, छतों और बालकनियों में उगाए गए माइक्रोग्रीन वायु की गुणवत्ता को सुधारने में मद्द करते हैं।

सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से, माइक्रोग्रीन कल्टीवेशन आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देती है, विशेषतः महिलाओं, बुजुर्गों और बेरोजगार युवाओं को आय और सम्मान का स्रोत देती है। वही शिक्षा के क्षेत्र में यह छात्रों को विज्ञान, पर्यावरण और पोषण के प्रत्यक्ष प्रयोगात्मक ज्ञान से जोड़ती है। अतः माइक्रोग्रीन कल्टीवेशन एक अभियान नहीं हैं, बल्कि एक हरित क्रांति है, जो पोषण, रोजगार, शिक्षा और पर्यावरण संरक्षण को एक साथ जोड़ती है। अगर हर घर एक ट्रे में भी माइक्रोग्रीन उगाए, तो भारत पोषण और आत्मनिर्भरता के युग में प्रवेश कर सकता है। माइक्रोग्रीन कल्टीवेशन एक ऐसा क्रांतिकारी कदम है जो स्वास्थ्य पर्यावरण और भारतीय परिवेश समाज तीनों क्षेत्रों में सकारात्मक बदलाव लाने की क्षमता रखता है। यह न केवल एक पौध उगाने की प्रक्रिया है, बल्कि यह एक स्वस्थ भविष्य की नींव है।

**आभार**– लेखक वनस्पति विज्ञान विभाग बी.एस.एन.वी. पी.जी. कॉलेज, लखनऊ की पूर्व प्रभारी श्रीमती सजनी मिश्रा, वर्तमान प्रभारी श्रीमती रश्मि गुप्ता, असिस्टेन्ट प्रोफेसर, श्री लल्लन प्रसाद, डॉ0 मृदुला सिंह, डॉ0 प्रमिला पाण्डेय, डॉ0 सारिका श्रीवास्तव एवं सदस्य श्री सोमेन्द्र, श्री विनोद और श्रीमती निशा का उनके अतुलनीय सहयोग के लिए धन्यवाद देती हूँ।

**References**

1. Bulgari, R., Baldi, A., Tabaldi, L. A., & Ferrante, A. (2017). Microgreens production with low potassium content for patients with impaired kidney function. Nutrients, 9(7), 735. https://doi.org/10.3390/nu9070735
2. Choe, U., Yu, L. L., & Wang, T. T. Y. (2018). The science behind microgreens as functional foods. Journal of Functional Foods, 40, 103-111. https://dos.org/10.1016/j.jff2017 10.025
3. Di Gioia, F., & Santamaria, P. (2015). Microgreens: A new food product with nutritional and health benefits. Acta Horticulturae, 1106, 579-586. https://doi.org/10.17660/Acta Hortic. 2015.1106.78
4. Di Gioia, F., Renna, M., Santamaria, P., & Serio, F. (2017). Nutritional potential and bioactive compounds of microgreens for human health. Horticulture International Journal, 1(1), 00004.
5. Ghoora, M. D., Srividya, N., & Bansal, S. (2020). Nutritional and phytochemical characterization of different microgreens of India. Journal of Food Science and Technology, 57(12), 4239-4249. https://doi.org/10.1007/s13197-020-04506-9
6. International Plant Genetic Resources Institute (IPGRI). (2020). Home-grown microgreens for urbannutrition. https://www.bioversityinternational.org/publications
7. Mehta, R. S., & Sharma, S. (2021). Microgreens: Emerging functional food. Journal of Pharmacognosy and Photochemistry, 10(2), 1882-1886.
8. Poudel, P. B., Sah, N. K., & Chaudhary, N. (2021). Production potential and health benefits of microgreens: A review. International Journal of Environment, Agriculture and Biotechnology, 6(3), 534-541. https://doi.org/10.22161/ijeab.63.55
9. Sharma, A., Chaurasia, S., & Sinha, R. (2021). Microgreens: A sustainable approach towards nutritional security. Current Research in Nutrition and Food Science, 9(2), 688-696. https://doi.org/10.12944/CRNFSJ.9.2.24
10. Varela, P., & Fiszman, S. (2011). Exploring consumers' knowledge and perceptions of microgreens as a healthy food option. Food Quality and Preference, 22(6), 547-553. https://doi.org/10.1016/j.foodqual. 2011.03.005
11. Xiao, Z., Lester, G. E., Luo, Y., & Wang, Q. (2012). Assessment of vitamin and carotenoid concentrations of emerging food products: Edible microgreens. Journal of Agricultural and Food Chemistry, 60(31), 7644-7651. https://doi.org/10.1021/jf300459b

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 146-148
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.26
SJIF (2025) : 8.749



# Green Hydrogen: The Key to a Balanced Future for the Earth

Deepak Kohli
5/104, Vipul Khand, Gomti Nagar, Lucknow-226 010, U.P., India
deepakkohli64@yahoo.in

**Received: 14-10-2025, Accepted: 21-11-2025**

**Abstract-** In the present era, human civilization stands at a turning point where development and establishing a balance between the environments became the greatest need. Increasing demand for energy, limitation of fossil fuels and climate change is serious challenges force us to think that in the times to come in which direction will the progress be? In this background, green hydrogen is a hope emerging as a ray. It is not only a source of energy, but also helps the earth. The key to moving on the path of pollution-free and sustainable development green hydrogen is a clean energy medium that produces no carbon emissions or does it harm the environment. Renewable energy in its production sources, such as solar, wind and hydropower, are used to thus become sustainable and eco-friendly. This energy not only presents a viable option for industry, transportation and power generation, but energy also opens new doors to self-reliance and economic development. Today, when the whole world is moving towards the goal of net zero carbon emissions, green hydrogen can become the most powerful basis for this effort. This technology leads humanity towards an energy culture where progress is the meaning will not be related to the destruction of nature, but to its conservation.

**Key words-** Green Hydrogen, technology, environment, Indian economy

# हरित हाइड्रोजन पृथ्वी के संतुलित भविष्य की कुंजी

दीपक कोहली
5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ–226010, उ0प्र0, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

**सार**–वर्तमान युग में मानव सभ्यता एक ऐसे निर्णायक मोड़ पर खड़ी है, जहाँ विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन स्थापित करना सबसे बड़ी आवश्यकता बन गया है। ऊर्जा की बढ़ती मांग, जीवाश्म ईंधनों की सीमितता और जलवायु परिवर्तन की गंभीर चुनौतियाँ हमें यह सोचने पर विवश करती हैं कि आने वाले समय की प्रगति किस दिशा में होगी। इसी पृष्ठभूमि में हरित हाइड्रोजन एक आशा की किरण बनकर उभर रही है। यह केवल ऊर्जा का स्रोत नहीं, बल्कि पृथ्वी को प्रदूषण से मुक्त और स्थायी विकास की राह पर अग्रसर करने की कुंजी है। हरित हाइड्रोजन वह स्वच्छ ऊर्जा माध्यम है जो न तो कार्बन उत्सर्जन करता है, न ही पर्यावरण को क्षति पहुँचाता है। इसके उत्पादन में नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों, जैसे सौर, पवन और जलविद्युत का उपयोग किया जाता है, जिससे यह पूरी तरह सतत् और पर्यावरण–हितैषी बन जाता है। यह ऊर्जा न केवल उद्योग, परिवहन और बिजली उत्पादन के लिए एक व्यवहारिक विकल्प प्रस्तुत करती है, बल्कि ऊर्जा आत्मनिर्भरता और आर्थिक विकास के नए द्वार भी खोलती है। आज जब पूरी दुनिया नेट जीरो कार्बन उत्सर्जन के लक्ष्य की ओर बढ़ रही है, हरित हाइड्रोजन इस प्रयास का सबसे सशक्त आधार बन सकता है। यह तकनीक मानवता को ऐसी ऊर्जा संस्कृति की ओर ले जाती है जहाँ प्रगति का अर्थ प्रकृति के विनाश से नहीं, बल्कि उसके संरक्षण से जुड़ा होगा।

**बीज शब्द**– हरित हाइड्रोजन, प्रौद्योगिकी, पर्यावरण, भारत की अर्थव्यवस्था

1. **परिचय**– हाइड्रोजन वह तत्व है जो ब्रह्मांड में सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है, परंतु पृथ्वी पर यह स्वतंत्र रूप में नहीं मिलता। इसे पानी या हाइड्रोकार्बन यौगिकों से अलग करना पड़ता है। पारंपरिक रूप से यह कार्य कोयले या प्राकृतिक गैस जैसे जीवाश्म ईंधनों की सहायता से किया जाता रहा है, जिससे बड़ी मात्रा में कार्बन डाईऑक्साइड का उत्सर्जन होता है। ऐसी हाइड्रोजन को ग्रे हाइड्रोजन कहा जाता है। यदि इस प्रक्रिया में उत्सर्जित कार्बन को पकड़ लिया जाए और उसे भूमिगत भंडारण में जमा कर दिया जाए, तो वह ब्लू हाइड्रोजन कहलाती है। लेकिन जब हाइड्रोजन का निर्माण पूरी तरह स्वच्छ स्रोतों, जैसे सौर, पवन या जलविद्युत से प्राप्त बिजली द्वारा जल के इलेक्ट्रोलिसिस से किया जाता है, तब वह हरित हाइड्रोजन कहलाती है। इस प्रक्रिया में कोई भी कार्बन उत्सर्जन नहीं होता, केवल ऑक्सीजन और हाइड्रोजन उत्पन्न होते हैं।

हरित हाइड्रोजन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके उपयोग से केवल जलवाष्प उत्सर्जित होती है, न कि कार्बन डाईऑक्साइड या कोई अन्य प्रदूषक। जब इसे ईंधन सेल में प्रयोग किया जाता है, तो यह रासायनिक रूप से ऑक्सीजन के साथ प्रतिक्रिया कर बिजली

उत्पन्न करती है। यह बिजली किसी भी वाहन, उद्योग या मशीन को चला सकती है, और प्रक्रिया का एकमात्र उपोत्पाद होता है, शुद्ध जल। इसीलिए हरित हाइड्रोजन को भविष्य का जीरो–कार्बन फ्यूल कहा जा रहा है। ऊर्जा की दृष्टि से भी हाइड्रोजन अत्यंत प्रभावशाली है। एक किलोग्राम हाइड्रोजन से लगभग 33 किलोवॉट–घंटे तक ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है, जो समान मात्रा के पेट्रोल या डीजल से तीन गुना अधिक है। यह उच्च ऊर्जा घनत्व इसे परिवहन और औद्योगिक उपयोग के लिए अत्यंत उपयोगी बनाता है। भारी वाहनों, जहाजों, रेलगाड़ियों और विमानों के लिए हाइड्रोजन ईंधन का उपयोग न केवल प्रदूषण घटा सकता है, बल्कि ऊर्जा दक्षता को भी बढ़ा सकता है। कई देशों में हाइड्रोजन ईंधन सेल आधारित बसें और ट्रक पहले से चलने लगे हैं। जापान और जर्मनी इस दिशा में अग्रणी हैं, और भारत भी अब इस तकनीक को अपनाने की तैयारी में है।[1-3]

2. **हरित हाइड्रोजन की उपयोगिता**– आज भारत विश्व की तीसरी सबसे बड़ी ऊर्जा उपभोक्ता अर्थव्यवस्था है, और इसकी ऊर्जा मांग निरंतर बढ़ रही है। देश अपनी आवश्यकताओं का लगभग 85 प्रतिशत हिस्सा आयातित तेल और गैस से पूरा करता है, जिससे विदेशी मुद्रा पर भारी दबाव पड़ता है और ऊर्जा सुरक्षा पर भी खतरा उत्पन्न होता है। इस परिप्रेक्ष्य में हरित हाइड्रोजन भारत के लिए ऊर्जा स्वतंत्रता की दिशा में एक ऐतिहासिक अवसर प्रस्तुत करता है। हरित हाइड्रोजन भारत को तीन प्रमुख लाभ प्रदान कर सकती है– ऊर्जा सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक प्रगति।सबसे पहले, यह भारत को तेल और गैस के आयात पर निर्भरता से मुक्त कर सकती है। यदि भारत अपने विशाल सौर और पवन ऊर्जा संसाधनों का उपयोग करके हरित हाइड्रोजन का उत्पादन करता है, तो वह अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं को घरेलू स्तर पर पूरा कर सकता है। इससे विदेशी मुद्रा की बचत के साथ–साथ ऊर्जा आपूर्ति भी स्थायी रूप से सुनिश्चित होगी। दूसरा, यह जलवायु परिवर्तन से निपटने का एक प्रभावी उपाय है। भारत ने 2070 तक नेट जीरो उत्सर्जन का लक्ष्य निर्धारित किया है। हरित हाइड्रोजन इस लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रमुख साधन बन सकती है, क्योंकि इसके उपयोग से कोई भी कार्बन उत्सर्जन नहीं होता। यह उद्योगों, परिवहन और बिजली उत्पादन के क्षेत्रों में जीवाश्म ईंधनों का स्वच्छ विकल्प बनकर प्रदूषण को कम करेगी। तीसरा, हरित हाइड्रोजन भारत के लिए एक विशाल आर्थिक अवसर भी है। राष्ट्रीय हरित हाइड्रोजन मिशन के तहत भारत ने 2030 तक 5 मिलियन टन हरित हाइड्रोजन उत्पादन का लक्ष्य रखा है। इससे देश में अनुसंधान, विनिर्माण, इलेक्ट्रोलाइजर उत्पादन, ऊर्जा भंडारण और परिवहन के क्षेत्रों में लाखों नए रोजगार सृजित होंगे। गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडु और लद्दाख जैसे राज्य इस हरित क्रांति के प्रमुख केंद्र बन रहे हैं, जहाँ विशाल सौर–पवन संयंत्र स्थापित हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त, हरित हाइड्रोजन भारत को वैश्विक ऊर्जा निर्यातक देश के रूप में भी स्थापित कर सकती है। यूरोप, जापान और दक्षिण कोरिया जैसे देशों को भविष्य में स्वच्छ ऊर्जा की भारी आवश्यकता होगी, और भारत इस मांग को पूरा करने में अग्रणी भूमिका निभा सकता है। साथ ही यह ग्रामीण और तटीय क्षेत्रों के विकास का भी माध्यम बनेगी क्योंकि अधिकांश नवीकरणीय ऊर्जा संयंत्र इन्हीं क्षेत्रों में स्थापित होंगे। इससे ग्रामीण युवाओं को स्थानीय स्तर पर रोजगार मिलेगा और क्षेत्रीय असमानता घटेगी।

हरित हाइड्रोजन केवल एक ऊर्जा स्रोत नहीं बल्कि एक संपूर्ण आर्थिक अवसर है। इसके माध्यम से भारत में हजारों नए रोजगार उत्पन्न हो सकते हैं, विशेष रूप से ग्रामीण और तटीय क्षेत्रों में, जहाँ नवीकरणीय ऊर्जा संयंत्र स्थापित किए जा रहे हैं। इससे हरित प्रौद्योगिकी, अनुसंधान, इलेक्ट्रोलाइजर निर्माण और ऊर्जा भंडारण के क्षेत्र में नई औद्योगिक क्रांति संभव होगी। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी सशक्त बना सकता है क्योंकि इससे जुड़े कार्यस्थल स्थानीय स्तर पर उपलब्ध होंगे। फिर भी, इस तकनीक के सामने कई चुनौतियाँ हैं। सबसे बड़ी चुनौती है लागत। वर्तमान में हरित हाइड्रोजन की कीमत पारंपरिक हाइड्रोजन की तुलना में दो से तीन गुना अधिक है। इसका कारण है इलेक्ट्रोलाइजर उपकरणों की ऊँची लागत और नवीकरणीय बिजली की सीमित उपलब्धता। परंतु जैसे–जैसे तकनीक में सुधार होगा और नवीकरणीय ऊर्जा का प्रसार बढ़ेगा, इसकी लागत में उल्लेखनीय गिरावट आएगी अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी के अनुसार, 2030 तक हरित हाइड्रोजन की लागत वर्तमान की आधी हो सकती है। दूसरी चुनौती है इसका भंडारण और परिवहन। हाइड्रोजन अत्यंत हल्की गैस है, जिसे उच्च दाब पर संपीड़ित करके या अत्यधिक ठंड में तरल रूप में संग्रहित किया जाता है। यह प्रक्रिया ऊर्जा–सघन और महंगी होती है। वैज्ञानिक अब ऐसे समाधानों पर काम कर रहे हैं जिनसे हाइड्रोजन को अमोनिया या तरल जैविक यौगिकों में परिवर्तित कर सुरक्षित रूप से स्थानांतरित किया जा सके। इससे इसका निर्यात भी आसान होगा। जल की उपलब्धता भी एक महत्वपूर्ण कारक है। हरित हाइड्रोजन उत्पादन के लिए पर्याप्त जल की आवश्यकता होती है, जबकि भारत के कई हिस्सों में पहले से ही जल संकट मौजूद है। इस समस्या के समाधान के लिए समुद्री जल से हाइड्रोजन बनाने की तकनीक विकसित की जा रही है। इसके साथ ही, जल पुनर्चक्रण संयंत्रों को भी इस प्रक्रिया का अभिन्न अंग बनाया जा सकता है ताकि पर्यावरणीय संतुलन बना रहे।

3. **भविष्य की आवश्यकतायें**– विश्व के अनेक देश आज हरित हाइड्रोजन को अपनी ऊर्जा नीति का प्रमुख आधार बना रहे हैं। विकसित राष्ट्रों से लेकर उभरती अर्थव्यवस्थाओं तक, सभी इस स्वच्छ ऊर्जा स्रोत में भविष्य की संभावनाएँ देख रहे हैं। यूरोपीय संघ ने हाइड्रोजन इकोनॉमी रोडमैप के अंतर्गत अरबों यूरो का निवेश आरंभ किया है, जिसके माध्यम से महाद्वीप को जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता से मुक्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। जर्मनी और जापान जैसे तकनीकी रूप से उन्नत देशों ने हाइड्रोजन सोसाइटी की अवधारणा को अपनाते हुए परिवहन, उद्योग और घरेलू ऊर्जा प्रणालियों में हाइड्रोजन–आधारित समाधान लागू करना प्रारंभ कर दिया है। ऑस्ट्रेलिया, सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात जैसे ऊर्जा–संपन्न देश हरित अमोनिया के रूप में हाइड्रोजन के उत्पादन और निर्यात की दिशा में तेजी से कार्य कर रहे हैं, ताकि वैश्विक स्तर पर स्वच्छ ईंधन की आपूर्ति श्रृंखला स्थापित की जा सके। भारत ने भी इन देशों के साथ अनेक द्विपक्षीय समझौते किए हैं, जिनके अंतर्गत तकनीकी सहयोग, निवेश और ज्ञान–साझेदारी के प्रावधान शामिल हैं। इस अंतर्राष्ट्रीय सहभागिता से

भारत को न केवल आधुनिक इलेक्ट्रोलाइजर तकनीक और भंडारण प्रणालियों तक पहुँच मिलेगी, बल्कि वैश्विक हरित हाइड्रोजन आपूर्ति श्रृंखला में उसकी सक्रिय भागीदारी भी सुनिश्चित होगी। इन वैश्विक प्रयासों से यह स्पष्ट है कि हरित हाइड्रोजन केवल एक राष्ट्रीय पहल नहीं, बल्कि एक अंतर्राष्ट्रीय आंदोलन का रूप ले चुकी है या ऐसा आंदोलन जो आने वाले दशकों में पृथ्वी को ऊर्जा और पर्यावरणीय दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में निर्णायक भूमिका निभाएगा।

हरित हाइड्रोजन न केवल ऊर्जा सुरक्षा की दृष्टि से लाभकारी है, बल्कि यह पर्यावरणीय संतुलन को पुनः स्थापित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यदि इसे व्यापक स्तर पर अपनाया गया, तो इससे कार्बन उत्सर्जन में भारी कमी आएगी, वायु गुणवत्ता सुधरेगी और पृथ्वी को ग्लोबल वार्मिंग से राहत मिलेगी। यह ऊर्जा का ऐसा माध्यम है जो विकास, उद्योग और पर्यावरण, तीनों को साथ लेकर चल सकता है। भविष्य की ऊर्जा नीति का आधार हरित हाइड्रोजन होना चाहिए। सरकार को अनुसंधान, निवेश और उत्पादन के क्षेत्र में निजी कंपनियों तथा स्टार्टअप्स को प्रोत्साहन देना चाहिए। विश्वविद्यालयों और वैज्ञानिक संस्थानों को भी इस दिशा में अनुसंधान बढ़ाने की आवश्यकता है। यदि यह सब योजनाबद्ध ढंग से किया गया, तो भारत आने वाले दशकों में न केवल अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं को स्वदेशी रूप से पूरा करेगा, बल्कि विश्व को भी हरित ऊर्जा निर्यात कर सकेगा।

हरित हाइड्रोजन के माध्यम से मानव सभ्यता एक नए युग में प्रवेश करने जा रही है, ऐसा युग जहाँ प्रगति और पर्यावरण में कोई विरोध नहीं रहेगा। यह ईंधन केवल मशीनों को नहीं, बल्कि मानवता की आशाओं को भी ऊर्जा प्रदान करेगा। स्वच्छ हवा, निर्मल जल और सतत विकास की दिशा में हरित हाइड्रोजन वह सेतु बन सकता है जो हमें प्रदूषण से मुक्त, आत्मनिर्भर और समृद्ध भविष्य की ओर ले जाएगा। यह केवल तकनीक नहीं, बल्कि पृथ्वी के प्रति मानवता की नई प्रतिज्ञा है, एक हरित, संतुलित और टिकाऊ जीवन की प्रतिज्ञा। हरित हाइड्रोजन आज केवल एक ऊर्जा विकल्प नहीं, बल्कि मानव सभ्यता के सतत और संतुलित भविष्य की सबसे बड़ी आशा बन चुकी है। यह स्वच्छ, अक्षय और पर्यावरण–अनुकूल ऊर्जा का वह माध्यम है जो न केवल जलवायु परिवर्तन की गति को धीमा कर सकता है, बल्कि वैश्विक अर्थव्यवस्था को भी हरित मार्ग पर अग्रसर करने में सक्षम है। इसके माध्यम से हम ऊर्जा सुरक्षा, औद्योगिक प्रगति और पर्यावरणीय संरक्षण, तीनों उद्देश्यों को एक साथ प्राप्त कर सकते हैं। भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह तकनीक आत्मनिर्भरता की दिशा में एक निर्णायक कदम है। राष्ट्रीय हरित हाइड्रोजन मिशन इस दिशा में एक दूरदर्शी पहल है जो आने वाले समय में भारत को वैश्विक ऊर्जा नेता बना सकती है। यदि अनुसंधान, निवेश और नीति–निर्माण के स्तर पर योजनाबद्ध सहयोग सुनिश्चित किया जाए, तो हरित हाइड्रोजन भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं को स्वदेशी रूप से पूरा करने के साथ–साथ विश्व को स्वच्छ ऊर्जा निर्यात करने की क्षमता भी प्रदान करेगी।

4. **निष्कर्ष**– इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि हरित हाइड्रोजन एक ऐसी ऊर्जा अवधारणा है जो प्रौद्योगिकी, पर्यावरण और मानवीय मूल्यों को एक सूत्र में बाँधती है। यह न केवल प्रदूषण–मुक्त भविष्य की नींव रखती है, बल्कि पृथ्वी के प्रति हमारी जिम्मेदारी का प्रतीक भी है। अब आवश्यकता है सामूहिक संकल्प, वैज्ञानिक नवाचार और वैश्विक सहयोग की, ताकि यह स्वच्छ ऊर्जा क्रांति केवल प्रयोगशालाओं तक सीमित न रहे, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यावहारिक रूप से लागू हो सके। वास्तव में, हरित हाइड्रोजन वह सेतु है जो हमें विकास और प्रकृति के मध्य संतुलन स्थापित करने में सहायता करेगा। यह ईंधन नहीं, बल्कि भविष्य की दिशा है, एक ऐसा भविष्य जहाँ प्रगति और पर्यावरण एक–दूसरे के पूरक बनेंगे। इसीलिए हरित हाइड्रोजन को सही अर्थों में पृथ्वी के संतुलित भविष्य की कुंजी कहा जा सकता है या एक ऐसी कुंजी जो हमें स्वच्छ वायु, निर्मल जल और सतत् जीवन की ओर ले जाती है।

**References**

1. https://mnre.gov.in/en/national-green-hydrogen-mission/
2. https://www.iberdrola.com/sustainability/green-hydrogen

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 149-155
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.27
SJIF (2025) : 8.749



# Educational Status, Challenges, and Empowerment of Tribal Women in India

Abha Sharma
Department of Education, Sam Higginbottom University of Agriculture, Technology, and Sciences
Prayagraj-211 001, U.P., India
abha43866@gmail.com

**Submitted: 28-10-2025, Accepted: 27-11-2025**

**Abstract-** The educational condition of tribal women in India has been a complex and long-standing challenge. This research paper presents a comprehensive and analytical study on this crucial issue. To gain a deeper understanding of the subject, we conducted an in-depth analysis of various government reports, census data, previous research studies, and policy documents. Our study reveals an alarming reality: despite several constitutional provisions and government schemes, the literacy rate among tribal women remains significantly low. This rate is not only much lower than the national average and that of the general female population, but also lags far behind tribal men. The research highlights the interlinked barriers—social, cultural, and economic—that restrict tribal girls from accessing education. These obstacles operate at multiple levels: Social and cultural factors, Economic constraints, Educational barriers. In this paper, we have also critically evaluated key government initiatives such as the *Midday Meal Scheme*, *Residential Schools*, and various *Scholarship Programs*. Our findings indicate a significant gap between policy intentions and ground-level implementation. Ultimately, this research emphasizes that education is not merely the acquisition of academic knowledge—it is a powerful tool for the economic, social, political, and psychological empowerment of tribal women. The paper urges for a holistic, inclusive, and culturally sensitive educational policy that addresses the real needs of tribal girls. We must strive to create a socio-economic environment that values education and ensures that tribal girls remain connected to the educational system rather than being left behind.

**Key words-** Tribal women, education, literacy rate, women empowerment, government policies, socio-economic barriers, motivation, dropout rate

# भारत में आदिवासी महिलाओं की शैक्षिक स्थिति, चुनौतियाँ और सशक्तिकरण

आभा शर्मा
शिक्षा शास्त्र विभाग, सैम हिगिंबॉटम यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर टेक्नोलॉजी एंड साइंसेस
प्रयागराज–211 001, उ0प्र0, भारत
abha43866@gmail.com

**सार**– भारत में आदिवासी महिलाओं की शैक्षिक स्थिति एक गंभीर और लंबे समय से चली आ रही चुनौती है। यह शोध पत्र इसी महत्वपूर्ण मुद्दे का एक व्यापक और विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। हमने इस विषय को गहराई से समझने के लिए सरकारी रिपोर्टों, जनगणना के आँकड़ों, अकादमिक शोध और नीतिगत दस्तावेजों जैसे मौजूदा स्रोतों का गहन विश्लेषण किया है। हमारा अध्ययन एक चिंताजनक सच्चाई को उजागर करता है– तमाम संवैधानिक प्रावधानों और विभिन्न सरकारी योजनाओं के बावजूद, आदिवासी महिलाओं की साक्षरता दर निराशाजनक रूप से कम बनी हुई है। यह दर न केवल राष्ट्रीय औसत और सामान्य महिला आबादी से, बल्कि आदिवासी पुरुषों की तुलना में भी काफी पीछे है।यह शोध उन जटिल और एक–दूसरे से जुड़ी बाधाओं की पड़ताल करता है जो आदिवासी लड़कियों को शिक्षा से दूर रखती हैं। इन बाधाओं को हम कई स्तरों पर देख सकते हैं– सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक ढाँचागत शैक्षणिक। इस पत्र में, हमने एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालयों और विभिन्न छात्रवृत्ति योजनाओं जैसी प्रमुख सरकारी पहलों का भी आलोचनात्मक मूल्यांकन किया है। हमने पाया कि अक्सर नीतियों के नेक इरादों और जमीनी हकीकत के बीच एक बड़ी खाई है। अंततः, यह शोध इस बात पर जोर देता है कि शिक्षा केवल अक्षर ज्ञान नहीं है, यह आदिवासी महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण व आत्मनिर्भरता की कुंजी है। यह पत्र केवल अधिक स्कूल बनाने से आगे बढ़कर एक समग्र, एकीकृत और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील नीति अपनाने की वकालत करता है। हमें एक ऐसा सामाजिक–आर्थिक माहौल बनाने पर ध्यान केंद्रित करना होगा जो शिक्षा की माँग पैदा करे और आदिवासी लड़कियों को शिक्षा प्रणाली में बनाए रखने में मदद करे।

**बीज शब्द**– आदिवासी महिला, शिक्षा, साक्षरता दर, महिला सशक्तिकरण, सरकारी नीतियां, सामाजिक–आर्थिक बाधाएं, आत्मनिर्भरता, सकल नामांकन अनुपात, स्कूल छोड़ने की दर

## वैज्ञानिक ज्ञानवर्धक आलेख

1. **परिचय**– भारत की जनसंख्या में अनुसूचित जनजातियाँ (Scheduled Tribes – ST) एक महत्वपूर्ण समूह हैं, जो 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुल आबादी का लगभग 8–6 प्रतिशत हिस्सा बनाती हैं। ये समुदाय प्रायः ग्रामीण, वनांचल और दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करते हैं तथा ऐतिहासिक रूप से सामाजिक एवं आर्थिक विकास की मुख्यधारा से वंचित रहे हैं। इस समुदाय के भीतर आदिवासी महिलाएँ सबसे अधिक असुरक्षित वर्गों में से एक मानी जाती हैं। वे "दोहरी असमानता" का अनुभव करती हैं–एक ओर जातीय पहचान के कारण सामाजिक बहिष्कार और भेदभाव का सामना, तथा दूसरी ओर लैंगिक असमानता जो उनके अपने समुदाय और बाहरी समाज दोनों में व्याप्त है। उनका सामाजिक–आर्थिक जीवन अत्यधिक गरीबी, पोषणहीनता, अस्वस्थ जीवन परिस्थितियों और सीमित आजीविका विकल्पों से प्रभावित है। वे पुरुषों की तुलना में अधिक परिश्रम करती हैं और पारिवारिक आय में महत्त्वपूर्ण योगदान देती हैं, किंतु संसाधनों, संपत्ति और निर्णय–निर्धारण पर उनका नियंत्रण नगण्य रहता है। मेहनत के बावजूद उन्हें कम वेतन और सम्मान मिलता है, जिससे उनका श्रम अक्सर अदृश्य और अवमूल्यित रह जाता है। यही स्थिति उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक उन्नति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा बनती है, जिसके परिणामस्वरूप वे वंचना और शोषण के एक अंतहीन चक्र में फँसी रहती हैं।

2. **सशक्तिकरण के साधन के रूप में शिक्षा का महत्व**– शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन, समानता और सशक्तिकरण का सबसे प्रभावी माध्यम माना गया है। विशेष रूप से आदिवासी महिलाओं के संदर्भ में, शिक्षा केवल साक्षरता का साधन नहीं, बल्कि आत्मनिर्भरता और सामाजिक चेतना का आधार है। यह उन्हें आत्मविश्वास, ज्ञान और कौशल प्रदान करती है, जिससे वे अपने अधिकारों के प्रति सजग होकर जीवन के विविध निर्णयों में सक्रिय भूमिका निभा सकें। शिक्षित महिला न केवल अपने परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारती है, बल्कि समुदाय के सामाजिक एवं स्वास्थ्य स्तर को भी ऊपर उठाती है। शिक्षा का प्रभाव पीढ़ियों तक जाता है–एक शिक्षित माँ अपने बच्चों के स्वास्थ्य, शिक्षा और भविष्य के प्रति अधिक सजग रहती है, जिससे गरीबी और अशिक्षा का चक्र टूटने लगता है। इसलिए आदिवासी महिलाओं की शिक्षा में निवेश करना केवल लैंगिक समानता का प्रश्न नहीं, बल्कि संपूर्ण समुदाय के सतत विकास की दिशा में एक निर्णायक कदम है।

3. **शोध की समस्या**– भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए अनेक प्रावधान किए गए हैं। स्वतंत्रता के बाद केंद्र एवं राज्य सरकारों ने आदिवासी समुदायों की शैक्षिक स्थिति सुधारने हेतु अनेक योजनाएँ लागू कीं। इसके बावजूद, आदिवासी महिलाओं की साक्षरता दर आज भी न केवल राष्ट्रीय औसत से, बल्कि आदिवासी पुरुषों की तुलना में भी कम बनी हुई है। यह स्थिति शिक्षा के क्षेत्र में गहरे लैंगिक एवं सामाजिक विभाजन को उजागर करती है। मुख्य शोध समस्या यह है कि इतने वर्षों के प्रयासों और नीतिगत हस्तक्षेपों के बावजूद यह शैक्षिक असमानता क्यों बनी हुई है। यह समस्या केवल विद्यालयों तक पहुँच या संसाधनों की कमी का परिणाम नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और संरचनात्मक बाधाओं के जटिल तंत्र से जुड़ी है। आदिवासी बालिकाएँ अपनी शैक्षिक यात्रा के हर चरण में– नामांकन से लेकर शिक्षा पूर्ण करने तक–अनेक अवरोधों का सामना करती हैं। उच्च ड्रॉपआउट दर यह संकेत देती है कि केवल नामांकन पर्याप्त नहीं, बल्कि शिक्षा प्रणाली में निरंतरता और अनुकूल वातावरण का निर्माण भी उतना ही आवश्यक है।

4. **शोध के उद्देश्य**

1.भारत में आदिवासी महिलाओं की शैक्षिक स्थिति की समग्र समीक्षा करना

2.उन प्रमुख सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं संस्थागत बाधाओं को समझना जो आदिवासी महिलाओं की शिक्षा में अवरोध उत्पन्न करती हैं।

3.आदिवासी महिला शिक्षा से संबंधित सरकारी नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना।

4.शिक्षा के माध्यम से आदिवासी महिलाओं में सशक्तिकरण, आत्मनिर्भरता, सामाजिक जागरूकता और जीवन की गुणवत्ता में आने वाले परिवर्तनों का विश्लेषण करना।

5. **शोध विधि**– यह शोध वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। इसका उद्देश्य द्वितीयक स्रोतों के आधार पर भारत में आदिवासी महिलाओं की शिक्षा, चुनौतियों और सशक्तिकरण की स्थिति का समग्र विश्लेषण करना है। अध्ययन किसी प्राथमिक डेटा पर आधारित नहीं है– इसमें उपलब्ध रिपोर्टों, जनगणना आँकड़ों, शोध लेखों और नीतिगत दस्तावेजों का संश्लेषण व विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले गए हैं।

6. **संबंधित साहित्य सर्वेक्षण**– नैर, 2020 के अध्ययन "ट्राइबल वूमन ऐंड एजुकेशन इन इंडिया: इश्यूज ऐंड चैलेंजेज" में भारत के आदिवासी समुदायों में महिला शिक्षा की स्थिति और उससे जुड़ी प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण किया गया है। शोध में पाया गया कि सामाजिक परंपराएँ, आर्थिक विषमताएँ और शिक्षा के प्रति सीमित जागरूकता, महिला शिक्षा के विकास में मुख्य बाधक हैं। लेखक का निष्कर्ष है कि यदि शिक्षा नीतियों में सांस्कृतिक संदर्भों को ध्यान में रखकर योजनाएँ बनाई जाएँ, तो आदिवासी महिलाओं की साक्षरता में

उल्लेखनीय सुधार संभव है।[1] चौधरी 2019 ने अपने शोध "एजुकेशनल डेवलपमेंट अमंग शेड्यूल्ड ट्राइब्स इन इंडिया–ए स्टडी ऑफ डिस्पेरिटीज" में अनुसूचित जनजातियों में शिक्षा की क्षेत्रीय और लैंगिक असमानताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि यद्यपि कुछ क्षेत्रों में साक्षरता दर में सुधार हुआ है, परंतु महिला साक्षरता अब भी अपेक्षाकृत पिछड़ी हुई है।[2]

राव और सिंह 2017 के शोध "एम्पॉवरिंग ट्राइबल वूमन थ्रू एजुकेशन: ए सोशिया–इकॉनॉमिक एनालिसिस" में शिक्षा को महिला सशक्तिकरण का प्रमुख साधन बताया गया है। लेखकों ने यह प्रतिपादित किया कि शिक्षा न केवल आत्मनिर्भरता बढ़ाती है, बल्कि सामाजिक भागीदारी और नेतृत्व क्षमता को भी प्रोत्साहित करती है।[3] शर्मा 2018 के अध्ययन "जेंडर ऐंड ट्राइबल एजुकेशन इन इंडिया: बेरियर्स ऐंड ऑपर्च्यूनिटीज" में यह बताया गया है कि आदिवासी समाजों में पारंपरिक लैंगिक भूमिकाएँ और सांस्कृतिक परंपराएँ, विशेष रूप से लड़कियों की शिक्षा में बड़ी बाधा उत्पन्न करती हैं। अध्ययन में यह सुझाव दिया गया कि शिक्षा प्रणाली को इन सांस्कृतिक संदर्भों के साथ सामंजस्य स्थापित करने की आवश्यकता है ताकि लिंग आधारित असमानताओं को कम किया जा सके।[4] भारत सरकार के योजना आयोग 2014 द्वारा प्रकाशित "इवैल्यूएशन स्टडी ऑन एजुकेशनल डेवलपमेंट ऑफ शेड्यूल्ड ट्राइब्स" रिपोर्ट में आदिवासी शिक्षा विकास योजनाओं की प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया गया है। अध्ययन में पाया गया कि अनेक योजनाएँ अपने लक्ष्यों तक सीमित रूप से पहुँच पा रही हैं, और वास्तविक लाभार्थियों को अपेक्षित सहयोग नहीं मिल रहा। रिपोर्ट में नीति–स्तर पर अधिक समन्वय और स्थानीय सहभागिता की अनुशंसा की गई है।[5]

**7. डाटा संग्रह**– इस अध्ययन के लिए डाटा विश्वसनीय द्वितीयक स्रोतों से एकत्र किया गया है। प्रमुख स्रोतों में भारत सरकार की जनगणना रिपोर्टें (2001, 2011), पीरियोडिक लेबर फोर्स सर्वे यू.डी.आई.एस.ई. रिपोर्टें, तथा राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के आँकड़े शामिल हैं। इसके साथ ही, आदिवासी महिलाओं की शिक्षा और सशक्तिकरण से संबंधित शैक्षणिक शोध पत्रों, सरकारी नीतिगत दस्तावेजों, वार्षिक रिपोर्टों और नीति आयोग व संसदीय समितियों की मूल्यांकन रिपोर्टों का भी विश्लेषण किया गया है।[6]

**8. साक्षरता दर तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य**– साक्षरता किसी भी समाज के विकास का मूल संकेतक मानी जाती है। आदिवासी महिलाओं के संदर्भ में यद्यपि साक्षरता दर में निरंतर सुधार हुआ है, फिर भी यह वृद्धि अपेक्षाकृत धीमी और असमान रही है। 1961 में आदिवासी साक्षरता दर मात्र 8.53% थी, जो 2001 में बढ़कर 47.10% और 2011 में 59% तक पहुँची। परंतु जब लिंग के आधार पर विश्लेषण किया जाता है, तो गहरा अंतर दिखाई देता है। 2001 में आदिवासी महिलाओं की साक्षरता दर केवल 25.5% थी, जबकि आदिवासी पुरुषों की 48.2%। 2011 तक यह बढ़कर क्रमशः 49.4% और 68.5% हो गई – अर्थात् लगभग 20 प्रतिशत अंकों का लैंगिक अंतर अब भी बना रहा। यह अंतर सामान्य महिला आबादी की तुलना में और भी स्पष्ट होता है, क्योंकि 2011 में देश की कुल महिला साक्षरता दर 64.46% थी। इसका अर्थ है कि आदिवासी महिलाएँ शिक्षा के क्षेत्र में "दोहरे नुकसान" का सामना कर रही हैं– एक अपने समुदाय के पुरुषों की तुलना में, और दूसरा सामान्य समाज की महिलाओं की तुलना में। राज्यवार तुलना भी व्यापक असमानता को दर्शाती है। उदाहरण के लिए, 2011 में हिमाचल प्रदेश में आदिवासी महिला साक्षरता दर 65.4% थी, जबकि राजस्थान (2001 में 42.2%) और आंध्र प्रदेश (40.9%) जैसे राज्यों में यह काफी कम थी। यह स्थिति दर्शाती है कि राष्ट्रीय औसत क्षेत्रीय विविधताओं को छुपा देता है और स्थानीय स्तर पर असमानताएँ अब भी गहरी हैं।[7]

**9. स्कूल छोड़ने की दर एक गंभीर चिंता**– आदिवासी बालिकाओं के सामने सबसे गंभीर शैक्षिक चुनौतियों में से एक है उच्च ड्रॉपआउट दर। यद्यपि साक्षरता और नामांकन दर में सुधार हुआ है, फिर भी बड़ी संख्या में लड़कियाँ प्राथमिक या उच्च प्राथमिक स्तर तक पहुँचने से पहले ही शिक्षा से वंचित हो जाती हैं। एक अध्ययन के अनुसार, प्राथमिक स्तर पर प्रवेश लेने वाली लगभग 24.82% आदिवासी बालिकाएँ कक्षा पाँच तक नहीं पहुँच पातीं, जबकि उच्च प्राथमिक स्तर पर यह दर बढ़कर 50.76% तक हो जाती है। यह स्थिति शिक्षा व्यवस्था में "लीकी पाइपलाइन" की समस्या को स्पष्ट रूप से दर्शाती है।[8] सरकारी योजनाएँ और नामांकन अभियान जहाँ लड़कियों को स्कूल तक लाने में सफल हुए हैं, वहीं उन्हें विद्यालय में बनाए रखना एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। इसका कारण केवल पहुँच की कमी नहीं, बल्कि प्रतिधारण (Retention) और शिक्षा की गुणवत्ता (Quality) से जुड़ी प्रणालीगत कमजोरियाँ हैं। परिणामस्वरूप, शिक्षा पर किया गया प्रारंभिक निवेश निष्फल हो जाता है और अनेक बालिकाएँ पुनः गरीबी और वंचना के उसी दुष्चक्र में फँस जाती हैं, जिससे निकलने का साधन शिक्षा स्वयं है। शिक्षा की राह में बाधाएँ एक बहुआयामी विवेचना आदिवासी महिलाओं की निम्न शैक्षिक स्थिति के पीछे कोई एक कारण नहीं, बल्कि यह सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक, अवसंरचनात्मक और शैक्षणिक बाधाओं के परस्पर जुड़े तंत्र का परिणाम है। ये कारक एक–दूसरे को मजबूत करते हुए एक ऐसा दुष्चक्र बनाते हैं जिसे तोड़ना अत्यंत कठिन हो जाता है।

**10. सामाजिक–सांस्कृतिक बाधाएँ लैंगिक भेदभाव**– अनेक आदिवासी समुदायों में पारंपरिक लिंग भूमिकाएँ अब भी प्रबल हैं, जहाँ लड़कों की शिक्षा को लड़कियों पर प्राथमिकता दी जाती है। बालिकाओं को प्रायः घरेलू कार्य, छोटे भाई–बहनों की देखभाल और कृषि श्रम में

संलग्न रहना पड़ता है, जिससे उनकी शिक्षा को गैर–जरूरी व्यय के रूप में देखा जाता है।

**11. बाल विवाह**– कम उम्र में विवाह आदिवासी लड़कियों की शिक्षा में प्रत्यक्ष और गंभीर बाधा है। विवाह के बाद उनसे घरेलू और पारिवारिक दायित्व निभाने की अपेक्षा की जाती है, जिसके परिणामस्वरूप उनकी शिक्षा अचानक समाप्त हो जाती है और उनके स्वास्थ्य व विकास पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

**12. सांस्कृतिक प्रतिरोध और परंपरागत मानसिकता**– कुछ आदिवासी समुदाय औपचारिक शिक्षा को अपनी भाषा, संस्कृति और पारंपरिक पहचान के लिए खतरा मानते हैं। बाहरी सांस्कृतिक प्रभावों के भय से वे औपचारिक शिक्षा की अपेक्षा पारंपरिक ज्ञान और कौशल को अधिक महत्व देते हैं, जिससे विशेषकर महिला शिक्षा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण विकसित होता है।

**13. आदिवासी महिलाओं की शिक्षा में प्रमुख बाधाएँ**– आर्थिक विवशताएँ– आदिवासी समुदायों में व्याप्त गहरी गरीबी शिक्षा की सबसे बड़ी रुकावट है। परिवारों के लिए यूनिफॉर्म, किताबें और आने–जाने का खर्च उठाना कठिन होता है। कई बार बेटियों को स्कूल भेजने का अर्थ होता है घर के काम या श्रम में एक सहयोगी का अभाव, इसलिए माता–पिता शिक्षा के बजाय उन्हें काम में लगाना उचित समझते हैं। इस तरह की आर्थिक मजबूरियाँ लड़कियों के स्कूल छोड़ने का प्रमुख कारण बनती हैं।

**14. भौगोलिक और अवसंरचनात्मक कठिनाइयाँ**– अधिकांश आदिवासी बस्तियाँ दुर्गम और दूरदराज इलाकों में हैं जहाँ स्कूलों तक पहुँचना कठिन है। परिवहन सुविधाओं की कमी और असुरक्षित मार्ग लड़कियों के लिए शिक्षा को और चुनौतीपूर्ण बनाते हैं। वहीं, कई स्कूलों में भवन, पुस्तकालय, स्वच्छ पेयजल और विशेषकर लड़कियों के लिए अलग शौचालय जैसी बुनियादी सुविधाएँ भी नहीं हैं, जिससे उनकी उपस्थिति पर नकारात्मक असर पड़ता है।

**15. शैक्षणिक एवं प्रणालीगत चुनौतियाँ**– भाषा की बाधा भी एक बड़ी समस्या है, क्योंकि अधिकांश स्कूलों में शिक्षण माध्यम स्थानीय आदिवासी भाषाओं से भिन्न होता है। इससे छात्राएँ पाठ को ठीक से समझ नहीं पातीं और धीरे–धीरे शिक्षा से उनका लगाव कम हो जाता है। साथ ही, पाठ्यक्रम में आदिवासी जीवन या संस्कृति का प्रतिबिंब न होने से उन्हें शिक्षा अप्रासंगिक लगती है। प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी और उनकी अनुपस्थिति से यह स्थिति और जटिल हो जाती है।[9] इन सभी कारकों की परस्पर जुड़ी प्रकृति बताती है कि केवल एक पहल पर्याप्त नहीं होगी। शिक्षा को सुलभ, प्रासंगिक और समावेशी बनाने के लिए बहु–आयामी दृष्टिकोण आवश्यक है, जो आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सभी पहलुओं को एक साथ संबोधित करे।

**16. सरकारी नीतियाँ और योजनाएँ**– भारत में आदिवासी छात्रों, विशेष रूप से लड़कियों की शिक्षा को सशक्त बनाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों ने कई योजनाएँ चलाई हैं। इनका मुख्य उद्देश्य शिक्षा तक पहुँच बढ़ाना, आर्थिक सहयोग देना और स्कूल छोड़ने की दर को घटाना है।[10]

**17. मुख्य योजनाएँ**– सबसे उल्लेखनीय योजना है एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय जिसे जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा संचालित किया जाता है। इन विद्यालयों में कक्षा 6 से 12 तक के छात्रों को गुणवत्तापूर्ण और निःशुल्क शिक्षा दी जाती है, जिनमें 50% सीटें बालिकाओं के लिए आरक्षित हैं। इसी तरह आश्रम स्कूल दूरस्थ आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाले बच्चों को आवासीय सुविधा के साथ शिक्षा प्रदान करते हैं ताकि वे भौगोलिक या आर्थिक कारणों से शिक्षा से वंचित न रहें। छात्रवृत्ति योजनाएँ भी इस दिशा में अहम भूमिका निभाती हैं।

प्री–मैट्रिक छात्रवृत्ति से कक्षा 9–10 के छात्रों को वित्तीय सहायता दी जाती है ताकि वे प्राथमिक शिक्षा के बाद भी पढ़ाई जारी रख सकें।

पोस्ट–मैट्रिक छात्रवृत्ति कक्षा 11 से लेकर उच्च शिक्षा स्तर तक के विद्यार्थियों को सहायता प्रदान करती है।

वहीं, नेशनल ओवरसीज स्कॉलरशिप जैसी योजनाएँ योग्य आदिवासी छात्रों को विदेश में उच्च शिक्षा के अवसर देती हैं, जिनमें 30% सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।

बालिकाओं के लिए विशेष रूप से कम साक्षरता वाले जिलों में आदिवासी बालिकाओं की शिक्षा को प्रोत्साहित करने की योजना चलाई गई है

जो गैर–सरकारी संगठनों के सहयोग से शैक्षिक परिसर स्थापित कर नामांकन और निरंतरता दोनों बढ़ाने पर केंद्रित है। इसके अलावा, आदिवासी महिला सशक्तिकरण योजना उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए सस्ते ऋण उपलब्ध कराती है।

**18. योजनाओं का मूल्यांकन और सीमाएँ**– इन योजनाओं की भावना सराहनीय है, परंतु उनके क्रियान्वयन में कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं। संसदीय समितियों और अन्य मूल्यांकन रिपोर्टों ने बताया है कि धन वितरण में देरी, राज्य सरकारों की उदासीनता और निगरानी की कमी जैसी समस्याएँ इनके प्रभाव को सीमित करती हैं। कई विद्यालयों में बुनियादी ढाँचे की कमी, योग्य शिक्षकों की अनुपस्थिति और भोजन की निम्न गुणवत्ता जैसी शिकायतें आम हैं। इसके अलावा, अनेक समुदायों को इन योजनाओं की जानकारी ही नहीं होती। प्रचार–प्रसार और मार्गदर्शन की कमी के कारण वास्तविक लाभार्थी तक सहायता पहुँच ही नहीं पाती। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अधिकांश योजनाएँ "आपूर्ति–पक्ष" यानी संसाधन उपलब्ध कराने पर केंद्रित हैं, जबकि "मांग–पक्ष" की चुनौतियाँ जैसे गरीबी, सामाजिक पूर्वाग्रह और शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी अभी भी उपेक्षित है। स्पष्ट है कि शिक्षा में वास्तविक परिवर्तन तभी संभव होगा जब सरकार केवल ढाँचे और वित्त पर नहीं, बल्कि समुदाय के भीतर शिक्षा की आवश्यकता और मूल्य के प्रति विश्वास जगाने पर भी समान रूप से ध्यान दे।

**19. शिक्षा, सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता एक वैचारिक रूपरेखा**– आदिवासी महिलाओं की शिक्षा के वास्तविक महत्व को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम शिक्षा, सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता के बीच के परस्पर संबंधों को स्पष्ट रूप से देखें। ये तीनों अवधारणाएँ एक–दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई हैं–शिक्षा सशक्तिकरण का आधार है, और सशक्तिकरण आत्मनिर्भरता की दिशा में पहला कदम।"महिला सशक्तिकरण की अवधारणामहिला सशक्तिकरण एक बहुआयामी प्रक्रिया है जो महिलाओं को अपने जीवन से जुड़े निर्णयों पर नियंत्रण स्थापित करने में सक्षम बनाती है। यह केवल आर्थिक सुधार तक सीमित नहीं, बल्कि मानसिक, सामाजिक, और राजनीतिक सभी स्तरों पर परिवर्तन की बात करती है।

**20. आत्मनिर्भरता का वैचारिक मॉडल**– आत्मनिर्भरता का अर्थ केवल बाहरी सहायता से मुक्त होना नहीं है, बल्कि अपनी आवश्यक जरूरतों को स्थायी और सम्मानजनक तरीके से पूरा करने की क्षमता विकसित करना है। इसे एक व्यक्ति, परिवार या समुदाय की सामाजिक और आर्थिक आत्मसंतुष्टि के रूप में देखा जा सकता है।

इस मॉडल में तीन प्रमुख घटक शामिल हैं

1-बुनियादी जरूरतें जैसे भोजन, आवास, स्वास्थ्य और शिक्षा की उपलब्धता।

2-संसाधन इन जरूरतों को पूरा करने के लिए आवश्यक साधन जैसे रोजगार, वित्तीय संसाधन और ऋण की पहुँच।

3-स्थिरता के संकेतक जैसे बचत, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक पूंजी और शारीरिक–मानसिक स्वास्थ्य, जो दीर्घकालिक स्थिरता को सुनिश्चित करते हैं। इस प्रकार, शिक्षा आदिवासी महिलाओं के सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता दोनों की आधारशिला है। यह न केवल ज्ञान का माध्यम है, बल्कि उस चेतना का भी स्रोत है जो उन्हें अपने जीवन और समाज में परिवर्तन लाने की शक्ति प्रदान करती है।

21. **शिक्षा और सशक्तिकरण के बीच अंतर्संबंध**– शिक्षा महिलाओं के सशक्तिकरण और आत्मनिर्भरता की नींव है। यह केवल ज्ञान का माध्यम नहीं बल्कि यह उत्प्रेरक शक्ति है जो महिलाओं को अपनी क्षमता पहचानने और अपने जीवन पर नियंत्रण स्थापित करने का अवसर देती है।[12] शिक्षा से महिलाओं में संज्ञानात्मक सशक्तिकरण आता है–वे अपने अधिकारों, अवसरों और सामाजिक असमानताओं को समझने लगती हैं। ज्ञान और कौशल प्राप्त करने से उनमें मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण विकसित होता है, जो आत्मविश्वास, आत्म–सम्मान और आत्मनिर्णय की भावना को सुदृढ़ करता है।इसके साथ ही शिक्षा महिलाओं के लिए आर्थिक सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त करती है। बेहतर रोजगार और आय के अवसर उन्हें वित्तीय स्वतंत्रता प्रदान करते हैं, जिससे वे संसाधनों पर नियंत्रण प्राप्त कर सकती हैं और आत्मनिर्भर बन सकती हैं। अंततः, एक शिक्षित और आर्थिक रूप से सशक्त महिला न केवल अपने परिवार में, बल्कि समाज और राजनीति के क्षेत्र में भी सक्रिय भूमिका निभाती है। वह निर्णय लेने में सक्षम होती है और अपने समुदाय में परिवर्तन की वाहक बनती है। इस प्रकार, शिक्षा केवल जानकारी प्रदान करने की प्रक्रिया नहीं, बल्कि महिलाओं के आत्मबोध और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में एक परिवर्तनकारी यात्रा है।

22. **शिक्षा का प्रभाव सामाजिक**– जब आदिवासी महिलाओं को शिक्षा के समान अवसर मिलते हैं, तो उसका प्रभाव केवल व्यक्तिगत उन्नति तक सीमित नहीं रहता। यह उनके परिवार, समुदाय और आने वाली पीढ़ियों के सामाजिक और आर्थिक ढांचे को गहराई से बदल देता है।[13]

23. **आर्थिक सशक्तिकरण**– शिक्षा आदिवासी महिलाओं को पारंपरिक सीमाओं से बाहर निकलने और बेहतर रोजगार या उद्यमिता के अवसरों का लाभ उठाने में सक्षम बनाती है। इससे वे केवल अपनी आर्थिक स्थिति सुधारती ही नहीं, बल्कि अपने परिवार की स्थिरता और सुरक्षा में भी योगदान देती हैं। वित्तीय साक्षरता के साथ वे अपनी आय का बेहतर प्रबंधन कर सकती हैं, बचत कर सकती हैं और आर्थिक निर्णयों में आत्मविश्वास से भाग ले सकती हैं।

24. **सामाजिक और राजनीतिक सशक्तिकरण**– शिक्षा महिलाओं में अधिकारों की जागरूकता और सामाजिक न्याय के प्रति संवेदनशीलता पैदा करती है। एक शिक्षित महिला बाल विवाह, दहेज या घरेलू हिंसा जैसी सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध आवाज उठाने का साहस रखती है। वह समुदाय में अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा का स्रोत बनती है और सामूहिक परिवर्तन की दिशा में नेतृत्व करती है। राजनीतिक रूप से भी शिक्षित महिलाएँ अधिक भागीदारी करती हैं–मतदान से लेकर स्थानीय शासन में नेतृत्व तक। अतः स्पष्ट है कि शिक्षा केवल व्यक्तिगत प्रगति का साधन नहीं, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन, आर्थिक उन्नति और लैंगिक समानता की दिशा में सबसे सशक्त औजार है।

25. **मनोवैज्ञानिक परिवर्तन**– शिक्षा का सबसे गहरा असर महिलाओं के मनोवैज्ञानिक विकास पर दिखाई देता है। यह आत्मविश्वास, आत्म–सम्मान और आत्म–प्रभावकारिता की भावना को मजबूत बनाती है। शिक्षित महिलाएँ अपने जीवन पर नियंत्रण महसूस करती हैं, अपने लक्ष्यों को स्पष्ट रूप से निर्धारित करती हैं और उन्हें हासिल करने की दिशा में सक्रिय कदम उठाती हैं। शिक्षा उन्हें सामाजिक सीमाओं और परंपरागत रूढ़ियों को चुनौती देने का साहस देती है, जिससे वे अपने और अपने परिवार के लिए एक बेहतर भविष्य गढ़ पाती हैं।

26. **स्वास्थ्य और कल्याण पर प्रभाव**– शिक्षा और स्वास्थ्य के बीच गहरा संबंध है। शिक्षित महिलाएँ स्वच्छता, पोषण और स्वास्थ्य सेवाओं के महत्व को बेहतर समझती हैं। वे टीकाकरण, परिवार नियोजन और चिकित्सा सलाह को अपनाने में अधिक सक्रिय रहती हैं। इससे मातृ और शिशु मृत्यु दर में कमी आती है और पूरे परिवार का स्वास्थ्य सुधरता है। शिक्षा आदिवासी महिलाओं में एक "गुणक प्रभाव" उत्पन्न करती है– वे न केवल अपना जीवन सुधारती हैं, बल्कि अपने बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य में भी निवेश करती हैं। यह परिवर्तन गरीबी, अशिक्षा और अस्वास्थ्य के चक्र को तोड़ते हुए आने वाली पीढ़ियों को बेहतर जीवन की दिशा में अग्रसर करता है। इसलिए, आदिवासी महिला शिक्षा केवल सामाजिक सुधार का माध्यम नहीं, बल्कि एक दीर्घकालिक विकास रणनीति है जो पूरे समाज को सशक्त बनाती है।

27. **निष्कर्ष एवं सुझाव**– इस अध्ययन से स्पष्ट है कि आदिवासी महिलाएँ शिक्षा के क्षेत्र में अब भी गहरी असमानताओं का सामना कर रही हैं। साक्षरता और उच्च शिक्षा में उनकी भागीदारी सीमित है, और सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक व अवसंरचनात्मक बाधाएँ उनके मार्ग में प्रमुख रुकावट बनी हुई हैं। सरकारी योजनाएँ तो बनी हैं, पर उनका प्रभाव जमीनी स्तर पर सीमित रहा है। फिर भी जहाँ भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के अवसर मिले हैं, वहाँ शिक्षा ने आदिवासी महिलाओं और उनके समुदायों में वास्तविक परिवर्तन लाया है–आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक सभी स्तरों पर।

### नीतिगत सुझाव

1-सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक शिक्षाः पाठ्यक्रम में आदिवासी संस्कृति, भाषा और परंपराओं को शामिल किया जाए ताकि बच्चे शिक्षा से भावनात्मक रूप से जुड़ सकें।
2-बुनियादी ढाँचा सुदृढ़ करें–आदिवासी क्षेत्रों के पास स्कूल, छात्रावास और सुरक्षित परिवहन की सुविधा सुनिश्चित की जाए।
3-आर्थिक प्रोत्साहन– छात्रवृत्तियाँ और सशर्त नकद प्रोत्साहन (Conditional Cash Transfers) देकर परिवारों को लड़कियों की शिक्षा के लिए प्रेरित किया जाए।
4-समुदाय की भागीदारी स्कूल प्रबंधन समितियों में आदिवासी महिलाओं की सक्रिय भूमिका सुनिश्चित की जाए और स्थानीय भाषाओं में जागरूकता अभियान चलाए जाएँ।
5-शिक्षक प्रशिक्षण शिक्षकों को आदिवासी भाषा और संस्कृति की समझ दी जाए ताकि वे अधिक संवेदनशील और प्रभावी शिक्षण दे सकें।
6-एकीकृत दृष्टिकोण शिक्षा नीतियों को स्वास्थ्य, पोषण और रोजगार योजनाओं से जोड़कर समग्र विकास सुनिश्चित किया जाए।

### References


1. Nair, P. (2020). *Tribal Women and Education in India: Issues and Challenges. Journal of Social Development Studies*, 15(2), 45–58.
2. Choudhury, A. (2019). *Educational Development among Scheduled Tribes in India: A Study of Disparities. Indian Journal of Human Development*, 13(1), 23–37.
3. Rao, N., & Singh, M. (2017). *Empowering Tribal Women through Education: A Socio-Economic Analysis. Indian Journal of Gender Studies*, 24(3), 412–428.
4. Sharma, P. (2018). *Gender and Tribal Education in India: Barriers and Opportunities. Social Change*, 48(2), 205–220.
5. Planning Commission of India. (2014). *Evaluation Study on Educational Development of Scheduled Tribes*. Government of India.
6. Ministry of Education. (2022). *Unified District Information System for Education Plus (UDISE+ 2021–22)*.

Government of India.
7. Government of India. (2011). *Census of India 2011: Primary Census Abstract for Scheduled Tribes*. Office of the Registrar General and Census Commissioner, New Delhi.
8. National Sample Survey Office (NSSO). (2022). *Education in India: NSS 76th Round (2018–19)*. Ministry of Statistics and Programme Implementation.
9. UNESCO. (2021). *State of the Education Report for India: No Teacher, No Class*. New Delhi: UNESCO.
10. Ministry of Tribal Affairs. (2023). *Annual Report 2022–23*. Government of India.
11. Rao, N., & Singh, M. (2017). *Empowering Tribal Women through Education: A Socio-Economic Analysis*. *Indian Journal of Gender Studies*, 24(3), 412–428.
12. Sen, A. (1999). *Development as Freedom*. Oxford University Press.
13. Dreze, J., & Sen, A. (2013). *An Uncertain Glory: India and its Contradictions*. Princeton University Press.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 156-160
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.28
SJIF (2025) : 8.749



# Medicinal Significance of *Ziziphus jujuba*

Tarannum Fatima[1] and Pramila Pandey[2]
[1] Department of Botany, University of Lucknow, Lucknow – 226 007, U.P. , India
[2] Department of Botany, B.S.N.V.P.G. College, Lucknow- 226 001, U.P., India
pramila28@gmail.com

**Received: 28-10-2025, Accepted: 30-11-2025**

**Abstract:** *Ziziphus jujuba* is traditionally used by the locals to treat dandru , arthritis, chronic constipation, acne, antibacterial, and cardiac diseases. *Ziziphus jujuba* is a safe and e cient herb for human intake and thus should be included in dietary intakes and as active constituents in pharmaceutical formulations. Every part of *Ziziphus jujuba*, the leaves, fruits and seeds demonstrate therapeutic properties. Various biological e ects are summarized and discussed: anti-asthma action, antioxidant, antidiabetic action, hepatoprotective, gastrointestinal, antihypertensive etc. Apart from medicinal uses, the fruits of *Ziziphus jujuba* are edible and used in fresh and dried form.

**Key words-** *Ziziphus jujuba*, antioxidant, herb, biological e ects, medicinal uses

# ज़िज़िफस जुजुबा का चिकित्सकीय संकेत

तरन्नुम फातिमा[1] एवं प्रमिला पाण्डे[2]
[1]वनस्पति विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ– 226 007, उ0प्र0, भारत
[2]वनस्पति विज्ञान विभाग, बी.एस.एन.वी.पी.जी. कॉलेज, लखनऊ– 226 001, उ0प्र0, भारत
pramila28@gmail.com

**सार:–** ज़िज़िफस जुजुबा पारंपरिक रूप से स्थानीय लोगों द्वारा डैंड्रफ, गठिया, पुरानी कब्ज, मुँहासे, जीवाणुरोधी और हृदय रोगों के इलाज के लिए उपयोग किया जाता है। ज़िज़िफस जुजुबा मानव सेवन के लिए एक सुरक्षित और कुशल जड़ी बूटी है और इस प्रकार इसे आहार सेवन में और दवा निर्माण में सक्रिय घटकों के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। ज़िज़िफस जुजुबा का हर हिस्सा, पत्ते, फल और बीज, चिकित्सीय गुणों को प्रदर्शित करते हैं। विभिन्न जैविक प्रभावों को संक्षेप में प्रस्तुत किया जाता है और उनकी चर्चा की जाती है: एंटी–अस्थमा एक्शन, एंटीऑक्सीडेंट, मधुमेहरोधी क्रिया, हेपेटोप्रोटेक्टिव, गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल, एंटीहाइपरटेंसिव आदि। औषधीय उपयोगों के अलावा, ज़िज़िफस जुजुबा के फल खाद्य होते हैं और ताजा और सूखे रूप में उपयोग किए जाते हैं।

**बीज शब्द–** ज़िज़िफस जुजुबा, एंटीऑक्सीडेंट, जड़ी बूटी, जैविक प्रभाव, औषधीय उपयोग।

1. **परिचय–** *Rhamnaceae* परिवार का एक सदस्य, ज़िज़िफस जुजुबा एक मध्यम आकार का, कांटेदार पेड़ है जिसका फल जैतून या बकथॉर्न जैसा दिखता है। इसका उपयोग दुनिया भर में होता है[1,2]। इसे चीनी खजूर और बड़ा बेर भी कहते हैं। यह एक फल वाला वृक्ष है जो अपने पौष्टिक और औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है। प्राचीन काल से, पौधों का उपयोग न केवल भोजन के लिए किया जाता है, बल्कि जानवरों और लोगों को ठीक करने के लिए भी किया जाता है। कई पौध प्रजातियाँ समय के साथ अपने मूल स्थान से बहुत दूर चली गई हैं। बहुत से अध्ययन ज़िज़िफस जुजुबा की रासायनिक सामग्री पर हुए हैं। ट्रिप्टोफैन जैसे अमीनो एसिड में समृद्धि मस्तिष्क की वृद्धि और मानसिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। चीन में, जुजुबा को अक्सर विभिन्न कारणों से बहु–औषधीय काढ़े में अनुशंसित किया जाता है और इसका उपयोग केवल एक फल के रूप में नहीं किया जाता है। एस्कॉर्बिक एसिड, महत्वपूर्ण खनिज और कार्बोहाइड्रेट बेर फल में प्रचुर मात्रा में होते हैं, जिसे अक्सर ताजा खाया जाता है।[3,4] फलों का रंग उम्र के साथ बदलता है और पकता है, हरे से पीले से चॉकलेट भूरे रंग में जाता है। इसके अलावा, इसका उपयोग बीमारियों में थकावट के साथ–साथ महिला रोगियों में हिस्टीरिया के इलाज के लिए किया जा सकता है।[5]

जुजुबा को चाय में बनाया जाता था और पारंपरिक चीनी चिकित्सा में अनिद्रा को कम करने के लिए उपयोग किया जाता था। जुजुबे में फ्लेवोनोइड्स, ट्राइटर्पेनिक एसिड, एमिनो एसिड, फेनोलिक एसिड और पॉलीसेकेराइड्स जैसे कई पदार्थ पाए जाते हैं। ज़िज़िफस

प्रजातियाँ दुनिया के उष्णकटिबंधीय, उपोष्णकटिबंधीय और ठंडे क्षेत्रों में पाई जाती हैं।[6] जीनस ज़िज़िफस में लगभग 135–170 प्रजातियां हैं, जिनमें से 17 भारत के लिए स्वदेशी हैं।[7–11] ऑस्ट्रेलिया, अफगानिस्तान, बर्मा, फ्रांस, ईरान, सीरिया, संयुक्त राज्य अमेरिका, बर्मा और रूस, में छोटे या पर्याप्त बेर बागान हैं।[12–15]

जुजुबा में उत्कृष्ट चिकित्सीय गुण हैं, जो विभिन्न प्रकार के द्वितीयक मेटाबोलाइट्स के लिए जिम्मेदार हैं। इस पौधे में कुल 64 एल्कलॉइड, 16 ग्लाइकोसाइड और फ्लेवोनोइड, 14 टेरपेनॉइड और अन्य फाइटोकेमिकल्स होते हैं। प्रत्येक घटक की विशिष्ट और जटिल विशेषताएँ होती हैं। हजारों वर्षों से, जुजुबे को इसके स्वास्थ्य लाभों के कारण एक पसंदीदा फल के रूप में माना जाता रहा है। जुजुबा अधिकतर उपयोग की जाने वाली सामग्री में से एक है जिसे हर्बल खाना पकाने के अभ्यास में एक पौष्टिक या उत्तेजक प्रकार का भोजन माना जाता हैं। जुजुबा का उपयोग पौधे के विभिन्न हिस्सों से कई बीमारियों को ठीक करने के लिए किया गया है, जिसमें कार्डियोवैस्कुलर, और जननांग प्रणाली की बीमारियां, गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल मुद्दे (कोलाइटिस, यकृत रोग और कब्ज) और श्वसन संबंधी बीमारियां (खांसी और अस्थमा) सम्मिलित हैं।[16]

2. वर्गीकरण

Class: Magnoliopsida
Order: Rosales
Family: Rhamnaceae
Genus: *Ziziphus*
Species: *Ziziphus jujuba*

चित्रः पत्ते और छाल के साथ ज़िज़िफस जुजुबा का फल

3. **एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि**– एंटीऑक्सीडेंट गतिविधियाँ 15 अलग–अलग परीक्षण विधियों और गतिविधि सूचकांकों के आधार पर पारंपरिक दवाओं के चिकित्सीय लाभ के पीछे के तंत्र में गहन परीक्षा का केंद्र रही हैं। कई शोधों ने जुजुबे की संभावित एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि का प्रदर्शन किया है। 2013 में, जुजुबे पौधे के पत्तों के मेथनोलिक अर्क का एंटीऑक्सीडेंट क्षमता के लिए परीक्षण किया गया था। विश्लेषण के अनुसार, मेथनोलिक अर्क में कुल 2.8% फेनोलिक सामग्री थी। एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि के लिए अलग– अलग संभावित परिणाम दो परीक्षण विधियों–डीपीपीएच और फेरिक आयन कमी क्षमता द्वारा दिखाए गए थे। एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि कुल पॉलीफेनॉल सामग्री के साथ सीधे सहसंबद्ध थी। यह पता चला कि जुजुबे पॉलीसेकेराइड अंश सुपरऑक्साइड आयनों को साफ करने में अधिक कुशल थे। फिर भी, यह पता चला कि अम्लीय पॉलीसेकेराइड्स चीलेटिंग लौह आयनों में बेहतर थे।[17]

4. **एंटी–एजिंग एक्शन**– यह प्रदर्शित किया गया है कि जुजुबे फल में एंटी–एजिंग गुण होते हैं। जुजुबे के फलों का सेवन जीवन प्रत्याशा को बढ़ाने और ड्रोसोफिला के स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए दिखाया गया है। परिणामों से पता चला कि जुजुबे फल पाउडर ने जीवनकाल में वृद्धि की और 150 मिलीग्राम/एमएल की खुराक पर ड्रोसोफिला के स्वास्थ्य में सुधार किया।[18]

5. **एंटीहाइपरटेंसिव का प्रभाव**– विभिन्न खुराक स्तरों पर ज़िज़िफस जुजुबा फल हाइड्रो–अल्कोहलिक अर्क का दीर्घकालिक प्रशासन एनजी–प्रेरित उच्च रक्तचाप (एलएनएएमई, या नाइट्रो–एल–आर्जिनिन मिथाइल एस्टर) को कम करता है। नाइट्रिक ऑक्साइड (एन. ओ.) का बढ़ा हुआ उत्पादन जो उच्च रक्तचाप की शुरुआत के लिए आवश्यक है, इस प्रभाव का कारण हो सकता है।[19]

6. **मधुमेहरोधी क्रिया**– जीएलयूटी स्थानान्तरण के माध्यम से, ज़िज़िफस जुजुबा निकालने से ट्राइटरपेनोइड्स को एल 6 मायोट्यूब में ग्लूकोज की खपत बढ़ाने के लिए पाया गया।[20] ज़िज़िफस जुजुबा के मादक अर्क के साथ उपचार की एक विस्तारित अवधि के बाद, ग्लूकोज का स्तर कम हो गया, संभवतः इंसुलिन रिसेप्टर संवेदनशीलता या इंसुलिन उत्पादन में वृद्धि के परिणामस्वरूप।[21] काबाबटा एट अल द्वारा किए गए मानव शोध के अनुसार, ज़िज़िफस जुजुबा फल का सेवन लिपिड प्रोफाइल, और कुछ हद तक टाइप 2 मधुमेह वाले लोगों में एंटीऑक्सीडेंट स्थिति पर सकारात्मक लाभ देता है।[22]

7. **एंटी–अस्थमा गतिविधि**– जुजुबा के अर्क में एलर्जी–रोधी, एंटीहिस्टामिनिक, एंटी–एनाफिलेक्टिक, एंटी–इंफ्लेमेटरी और इम्यूनोमॉड्यूलेटरी गुण दिखाई दिए, और उन्होंने दमे के एपिसोड को बहुत कम कर दिया। नतीजतन, कई अध्ययनों ने पारंपरिक दावे को मान्य किया और सुझाव दिया कि जुजुबा अर्क का उपयोग अस्थमा की रोकथाम और उपचार के लिए चिकित्सीय दवाओं के रूप में किया जा सकता है।[23] जुजुबा का अर्क एक अस्थमा–रोधी एजेंट हैं।[24]

8. **रोगाणुरोधी गतिविधि**– अनुसंधान ने एक औषधीय पौधे के रूप में ज़िज़िफस जुजुबा के चिकित्सीय गुणों का प्रदर्शन किया है, और जुजुबा आवश्यक तेलों के रोगाणुरोधी गुणों पर विभिन्न जांचों ने अनुकूल जीवाणुरोधी गतिविधियों की सूचना दी है।[25] नतीजतन, जुजुबा आवश्यक तेलों में जीवाणुरोधी गुण होते हैं और पौधों के विभिन्न भागों जैसे पत्तियों में चिकित्सीय लाभ होते हैं। दरअसल, जुजुबा फल के जीवाणुरोधी और एंटिफंगल गुण ही हैं जो इसे इसके जैविक गुण देते हैं।[26–28]

वैनकोमाइसिन जैसी पारंपरिक दवाओं की तुलना में फल के बेहतर जीवाणुरोधी गुणों के एक उदाहरण के रूप में, एक अध्ययन में पाया गया कि जुजुबा फल के कच्चे अर्क का ग्राम–पॉजिटिव और ग्राम–नेगेटिव बैक्टीरिया और कवक दोनों पर अच्छा रोगाणुरोधी प्रभाव पड़ता है। नतीजतन, इस अध्ययन से पता चला है कि जुजुबा निकालने में ग्राम–पॉज़िटिव और ग्राम–नेगेटिव बैक्टीरिया के साथ–साथ कवक दोनों के खिलाफ जीवाणुरोधी गुण होते हैं, और यह संक्रामक विकारों के इलाज में उपयोगी है, विशेष रूप से बच्चों में संक्रमण।[29–31]

9. **जठरांत्र प्रणाली की सुरक्षा**– जुजुबा फल की पानी में घुलनशील कार्बोहाइड्रेट सांद्रता, जिसमें ग्लूकोज, फ्रुक्टोज, पेक्टिन पॉलीसेकेराइड और हेमिसेलुलोज शामिल थे, का उपयोग हैम्स्टर की आंतों की स्थिति को सुधारने के लिए एक अध्ययन में किया गया था। इस प्रभाव को अमोनिया जैसे खतरनाक रसायनों के लिए आंतों के श्लेष्मा के संपर्क में कमी के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।[32]

10. **कब्ज में सहायक**– एक प्रश्नावली–आधारित अध्ययन के माध्यम से, लगातार कब्ज के लिए ज़िज़िफस जुजुबा अर्क की प्रभावशीलता और सुरक्षा की जांच की गई। कब्ज वाले रोगियों ने जुजुबा के तरल पदार्थों का सेवन किया। जांच के अनुसार, जुजुबा अर्क उन लोगों के लिए एक सुरक्षित और कुशल उपचार है जो लगातार कब्ज का अनुभव करते हैं।[33]

11. **गुर्दे की पथरी और हाइपरयूरिसेमिया का उपचार**– जुजुबा का उपयोग जिनसेंग पेस्ट में एक सहायक के रूप में भी किया जाता है ताकि हाइपरयूरिसेमिया के उपचार में सुधार किया जा सके। यह यूरिक एसिड के अधिक उत्पादन के कारण होने वाली बीमारी है। यह दिखाया गया कि जिनसेंग – जुजुबा जोड़ी सीसीएल2, टीएनएफ–α, आईएल–1β और वीईजीएफए के साथ बातचीत के माध्यम से बीमारी पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। गुर्दे की पथरी की रोकथाम/उपचार पर जुजुबा के पत्तों के हाइड्रोअल्कोहलिक अर्क के प्रभाव का मूल्यांकन किया गया और कैल्शियम ऑक्सालेट क्रिस्टल के गठन को कम करने के लिए पाया गया।[34] जुजुबे का उपयोग जापान में पुराने हेपेटाइटिस और छाती और पसलियों के दर्द को ठीक करने के लिए भी किया जाता है। जुजुबा फल इथेनोलिक अर्क का उपयोग विवो जीवाणुरोधी, एंटीडायरियल और एंटी–इंफ्लेमेटरी गतिविधियों की जांच करने के लिए किया गया था। अध्ययनों के परिणामों से पता चला है कि जुजुबा के इथेनोलिक अर्क ने चूहों में एडीमा को काफी बाधित किया, और दाएं और बाएं पंजे दोनों की मोटाई प्रभावित हुई।[35]

12. **खाद्य पदार्थों में अनुप्रयोग**– जुजुबा के फलों का शेल्फ–जीवन बहुत छोटा होता है, लगभग 10 दिन तक रहता है जब वे ताजा होते हैं। ज्यादातर लोग जुजुबा का गूदा ताजा खाते हैं, लेकिन इसके फल को सुखाकर भी खाया जा सकता है और इसे कुछ और खाने के लिए मिलाया जा सकता है। ज़िज़िफस जुजुबा, अपनी उल्लेखनीय उपचार क्षमता के कारण तेजी से लोकप्रिय होता जा रहा है। जब यह अंतर्गर्भाशयी रूप से लिया जाता है, तो फ्लेवरप्रोफाइल्स बढ़ जाते हैं और बहुत से स्वास्थ्य लाभ मिलते हैं, जो इसे आधुनिक और पारंपरिक आहार संदर्भों दोनों में अधिक लोकप्रिय बनाते हैं।[36] इसे स्वाद में सुधार करने या पोषण मूल्य बढ़ाने के लिए जोड़ा जा सकता है। चीनी वैकल्पिक चिकित्सा में, जनसंख्या की जरूरतों को पूरा करने वाले कार्यात्मक खाद्य पदार्थों पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। लैक्टोबैसिलस ब्रेविस एल–32 का[37] उपयोग करके ज़िज़िफस जुजुबा के जोड़े गए किण्वित बीजों के साथ दही का अध्ययन किया। परिणामस्वरूप किण्वित पेय में γ–एमिनोब्यूटेरिक एसिड अधिक था जो नींद को बढ़ावा देता है। इसके अलावा, ज़िज़िफस जुजुबा फलों के गूदे से निकाले गए पॉलीसेकेराइड्स के अलावा बकरी पनीर में कैसिइन मैट्रिक्स संरचना के घनत्व और दृढ़ता को बढ़ाता है।[38–39]

13. **एंटीमेलानोजेनिक प्रभाव**– फेरा हाइपरपिग्मेंटेशन के इलाज के लिए, जुजुबा सिरप अच्छी तरह से काम करता है और सुरक्षित है। कई परीक्षणों में जुजुबा सिरप को त्वचा को चमकदार बनाने के लिए प्रभावी दिखाया गया है। एक अध्ययन में 46 व्यक्तियों को आठ सप्ताह

के लिए दिन में दो बार जुजुबा सिरप दिया गया।[40] परिणामों से पता चला कि त्वरित परिस्थितियों में फेनोलिक्स और कुल फ्लेवोनोइड्स का स्तर स्थिर था। एक अन्य शोध ने जुजुबे के बीज से प्राप्त पांच फ्लेवोनोइड ग्लाइकोसाइड्स के एंटी–मेलेनोजेनिक प्रभाव को देखा।[41]

14. **निष्कर्ष**– हर्बल खाना पकाने में अक्सर उपयोग की जाने वाली सामग्री में से एक जुजुबा है, जो एक पौष्टिक या उत्तेजक प्रकार का भोजन माना जाता है। इसे रोजाना एक काढ़े के रूप में खा सकते हैं या एक स्वादिष्ट सूप बनाने के लिए अन्य भोजन के साथ मिलाकर खा सकते हैं। जुजुबा में प्रोफिलैक्सिस को चिकित्सीय और पूरक बनाने की अच्छी क्षमता है, साथ ही सूजन और आयरन या विटामिन की कमी को दूर करने की भी अच्छी क्षमता है। आधुनिक और पारंपरिक दोनों चिकित्सा स्रोतों ने घाव भरने पर जुजुबा का लाभ बताया है। जुजुबा विभिन्न पोषण मूल्यों और औषधीय गुणों के लिए एक प्रसिद्ध औषधीय पौधा है। जुजुबे के मौखिक सेवन से गंभीर दुष्प्रभावों या विषाक्तता की कोई रिपोर्ट नहीं है। मानव शरीर इस सुखद स्वाद वाले फल से लाभ उठाता है। पौधे के फल, बीज और पत्तियां उन भागों में से हैं जो महत्वपूर्ण स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। जिज़िफस पादप प्रजातियाँ आम तौर पर मनुष्यों के लिए सुरक्षित और गैर–विषाक्त होती हैं।

## References


1. H Soni, AK. Singhai, Recent updates on the genus coleus: a review, Asian J. Pharm. Clin. Res. 5 (1) (2012) 12–17, a.
2. A recent update of botanicals for wound healing activity, Int. Res. J. Pharm. 3 (7) (2012) 1–7, b.
3. Ber: International Centre for Underutilized Crops, University of Southampton, 2001.
4. YL Huang, Yen GC, F Sheu, CF. Chau, Effects of watersoluble carbohydrate concentrate from Chinese *jujube* on different intestinal and fecal indices, J. Agric. Food Chem. 56 (5) (2008) 1734–1739, https://doi.org/10.1021/jf072664z. PMID 18251499.
5. PM. Lyrene, The *jujube* tree [*Zizyphus jujuba* Lam], Fruit Var J. (United States) (1979).
6. MB Islam, MP. Simmons, A thorny dilemma: testing alternative intrageneric classifications within *Ziziphus* (Rhamnaceae), Syst. Bot. 31 (4) (2006, October 1) 826–842, https://doi.org/10.1600/036364406779695997.
7. G. Watt, A Dictionary of the Economic Plants of India, Cosmo Publications, 1883.
8. LH. Bailey, The standard cyclopaedia of horticulture, Macmillan, and Company (1947).
9. NP Singh, S Karthikeyan, P Lakshminarasimhan, PV. Prasanna, Flora of Maharashtra State-dicotyledons-vol. 2, Bot. Surv. India Calcatta (2000) 898.
10. MK Sebastian, MM. Bhandari, Edible wild plants of the forest areas of Rajasthan, India, 11. AB. Rendle, The Classification of Flowering Plants, Cambridge University Press., 1959.
12. S. Pareek, Nutritional composition of *jujube* fruit, Emirates J. Food Agric. 25 (6) (2013) 463–470, https://doi.org/10.9755/ejfa.v25i6.15552.
13. P. Munier, Le jujubier et sa culture, Fruits 28 (5) (1973, January 1) 377–388.
14. Thomas CC. The Chinese *jujube*. US Department of Agriculture Bulletin no. 1215; 1924.
15. JM. Riley, The Chinese *jujube*. Rare Fruit Growers [yearbook], 1970, p. 35. Vol. 1.
16. SK. Mukherjee, Horticulture research in the USSR, Indian J. Hortic. 24 (1967) 1–11.
17. X Ji, C Hou, Y Yan, M Shi, Y. Liu, Comparison of structural characterization and antioxidant activity of polysaccharides from jujube (*Ziziphus jujuba* Mill.) fruit, Int. J. Biol. Macromol. 149 (2020, April 15) 1008–1018, https://doi.org/ 10.1016/j.ijbiomac.2020.02.018. PMID 32032709.
18. S Ghimire, MS Kim, Jujube (*Ziziphus jujuba* Mill.) fruit feedingextends lifespan and increases tolerance to environmental stresses by regulating aging-associated gene expression in Drosophila, Biogerontology 18 (2) (2017) 263–273, https://doi. org/10.1007/s10522-017-9686-8. PMID 28251407.
19. R Mohebbati, K Bavarsad, M Rahimi, H Rakhshandeh, A Khajavi Rad, MN Shafei, Protective effects of long-term administration of *Ziziphus jujuba* fruit extract on cardiovascular responses in L-NAME hypertensive rats, Avicenna J. Phytomed. 8 (2) (2018) 143–151. PMID 29632845.
20. PB Ninave, SD. Patil, Antiasthmatic potential of *Zizyphus jujuba* Mill and Jujuboside B. Possible role in the treatment of asthma, Respir. Physiol. Neurobiol. 260 (2019, February 1) 28–36, https://doi.org/10.1016/j.resp.2018.12.001. PMID 30521862.
21. SR Naik, S Bhagat, PD Shah, AA Tare, D Ingawale, RR. Wadekar, Evaluation of anti-allergic and anti-anaphylactic activity of ethanolic extract of *Zizyphus jujuba* fruits in rodents, Rev. Bras. Farmacognosia. 23 (5) (2013, September 1) 811–818. https://doi.org/10.1590/S0102-695X2013000500014.
22. K Kawabata, K Kitamura, K Irie, S Naruse, T Matsuura, T Uemae, et al., Triterpenoids isolated from *Ziziphus jujuba* enhance glucose uptake activity in skeletal muscle cells, J. Nutr. Sci. Vitaminol. (Tokyo) 63 (3) (2017) 193–199, https://doi.org/10.3177/jnsv.63.193. PMID 28757534.
23. HR Jamshidi, MH Mosaddegh, AR Vahidi, M Ghasemian, Haj Mohammadi N. The effect of *Ziziphus Jujuba* Fruit extract in diabetic and nondiabetic rat, Iran J. Diabetes Obes. 6 (1) (2014, March 10) 34–40.
24. Z Yazdanpanah, A Ghadiri-Anari, AV Mehrjardi, A Dehghani, IIZ Zardini, A. Nadjarzadeh, Effect of *Ziziphus jujube*

fruit infusion on lipid profiles, glycaemic index and antioxidant status in type 2 diabetic patients: a randomized controlled clinical trial. Phytother. Res. 31 (5) (2017, May) 755–762, https://doi. org/10.1002/ptr.5796. PMID 28271568.

25. Al-Reza SM, Yoon JI, Kim HJ, Kim JS, Kang SC. Anti inflammatory activity of seed essential oil from *Zizyphus jujuba*. Food Chem Toxicol. 2010;48(2):639-643. doi:10.1016/j.fct.2009.11.045
26. Cruz ZN, Rodriguez P, Galindo A, et al. Leaf mechanisms for drought resistance in *Zizyphus jujuba* trees. Plant Sci. 2012;197:77-83. doi:10.1016/j.plantsci.2012.09.006
27. Li JW, Ding SD, Ding XL. Comparison of antioxidant capacities of extracts from five cultivars of Chinese jujube. Process Biochemistry. 2005;40(11):3607-3613. doi:10.1016/j. procbio.2005.03.005
28. Xue Z, Feng W, Cao J, Cao D, Jiang W. Antioxidant activity and total phenolic contents in peel and pulp of Chinese jujube (*Ziziphus jujuba* Milll) fruits. J Food Biochem. 2009;33(5):613-629. doi:10.1111/j.1745-4514.2009.00241.x
29. Ansari MJ, Al-Ghamdi A, Usmani S, et al. Effect of *jujube* honey on Candida albicans growth and biofilm formation. Arch Med Res. 2013;44(5):352-360. doi:10.1016/j. arcmed.2013.06.003
30. Ahmad I, Beg AZ. Antimicrobial and phytochemical studies on 45 Indian medicinal plants against multi-drug resistant human pathogens. J Ethnopharmacol. 2001;74(2):113-123. doi:10.1016/S0378-8741(00)00335-4
31. Ahmad B, Khan I, Bashir S, Azam S, Hussain F. Screening of *Zizyphus jujuba* for antibacterial, phytotoxic and haemagglutination activities. Afr J Biotechnol. 2011;10(3):2514-2519. doi:10.5897/AJB10.768
32. Kubota H, Morii R, Kojima-Yuasa A, Huang X, Yano Y, Matsui-Yuasa I. Effect of *Zizyphus jujuba* extract on the inhibition of adipogenesis in 3T3-L1 preadipocytes. Am J Chin Med. 2009;37(3):597-608. doi:10.1142/s0192415x09007089
33. Naftali, T., Feingelernt, H., Lesin, Y., Rauchwarger, A., Konikoff, F.M., 2008. *Ziziphus jujuba* Extract for the Treatment of Chronic Idiopathic Constipation: A Controlled Clinical Trial. Digestion 78, 224–228. https://doi.org/10.1159/000190975.
34. Hoshyar, R.; Mohaghegh, Z.; Torabi, N.; Abolghasemi, A. Antitumor activity of aqueous extract of *Ziziphus jujube* fruit in breast cancer: An in vitro and in vivo study. Asian Pac. J. Reprod. 2015, 4, 116–122.
35. Mesaik, A.M., Poh, H.W., Bin, O.Y., Elawad, I., Alsayed, B., 2018. In Vivo Anti Inflammatory, Anti-Bacterial and Anti-Diarrhoeal Activity of *Ziziphus Jujuba* Fruit Extract. Open Access Maced. J. Med. Sci. 6, 757–766. https://doi.org/10.3889/oamjms.2018.168.
36. Rashwan, A.K.; Karim, N.; Shishir, M.R.I.; Bao, T.; Yang, L.; Chen, W. Jujube fruit: A potential nutritious fruit for the development of functional food products. J. Funct. Foods 2020, 75, 104205.
37. Bae, G.Y.; Ahn, Y.; Hong, K.B.; Jung, E.J.; Suh, H.J.; Jo, K. Sleep-enhancing effect of water extract from jujube (*Zizyphus jujuba* Mill.) seeds fermented by Lactobacillus brevis L32. Foods 2023, 12, 2864.
38. Feng, C.; Wang, B.; Zhao, A.; Wei, L.; Shao, Y.; Wang, Y. Quality characteristics and antioxidant activities of goat milk yogurt with added jujube pulp. Food Chem. 2019, 277, 238–245.
39. Wang, W.; Jia, R.; Hui, Y.; Zhang, F.; Zhang, L.; Liu, Y. Utilization of two plant polysaccharides to improve fresh goat milk cheese: Texture, rheological properties, and microstructure characterization. J. Dairy. Sci. 2023, 106, 3900–3917.
40. E Aafi, MR Shams Ardakani, S Ahmad Nasrollahi, M Mirabzadeh Ardakani, A Samadi, M Hajimahmoodi, et al., Brightening effect of Ziziphus jujuba (jujube) fruit extract on facial skin: a randomized, double-blind, clinical study, Dermatol. Ther. 35 (7) (2022, July) e15535, https://doi.org/10.1111/dth.15535. PMID 35460145.
41. IMN Molagoda, KT Lee, AMGK Athapaththu, YH Choi, J Hwang, SJ Sim, et al., Flavonoid glycosides from *Ziziphus jujuba* var. inermis (bunge) Rehder seeds inhibit -melanocyte-stimulating hormone-mediated melanogenesis, Int. J. Mol. Sci. 22 (14) (2021, July 19) 7701, https://doi.org/10.3390/ijms22147701. PMID 34299326.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 161-163
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.29
SJIF (2025) : 8.749



# *Withania somnifera* and its properties

Divyanshi Rawat[1] and Pramila Pandey[2]
[1]Department of Botany, University of Lucknow, . Lucknow-226 007, UP, India
[2]Department of Botany, B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226 001, UP, India
pramila28@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 28-11-2025**

**Abstract-** *Withania somnifera* commonly known as ashwagandha or Indian ginseng, is a medicinal shrub of the Solanaceae family widely used in Ayurvedic medicine. It synthesizes a class of steroidal lactones called withanolides together with alkaloids and other constituents that underline its diverse pharmacological activities notably adaptogenic, anti-inflammatory, neuroprotective, immunomodulatory and anticancer effects.

**Key words-** *Withania somnifera*, ashwagandha, withanolides, immunomodulatory, adaptogenic

# विथानिया सोम्नीफेरा और इसके गुण

दिव्यांशी रावत[1] और प्रमिला पांडे[2]
[1]वनस्पति विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226 007, उ0प्र0, भारत
[2]वनस्पति विज्ञान विभाग बी.एस.एन.वी. पी.जी कॉलेज,लखनऊ–226 001, उ0प्र0, भारत
pramila28@gmail.com

**सार**– विथानिया सोम्नीफेरा, जिसे आमतौर पर अश्वगंधा या भारतीय जिनसेंग के नाम से जाना जाता है, सोलानेसी परिवार का एक औषधीय पौधा है, जिसका आयुर्वेदिक चिकित्सा में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। यह विथानोलाइड्स नामक स्टेरॉयडल लैक्टोन के एक वर्ग को एल्कलॉइड और अन्य घटकों के साथ संश्लेषित करता है, जो इसकी विविध औषधीय गतिविधियों–विशेष रूप से एडाप्टोजेनिक, सूजनरोधी, तंत्रिका–सुरक्षात्मक, प्रतिरक्षा–नियंत्रक और कैंसर–रोधी प्रभावों का आधार हैं।

**बीज शब्द**– विथानिया सोम्नीफेरा, अश्वगंधा, विथानोलाइड्स, प्रतिरक्षा–नियंत्रक, एडाप्टोजेनिक

1. **परिचय**– विथानिया सोम्नीफेरा भारत, उत्तरी अफ्रीका और मध्य पूर्व के सूखे क्षेत्रों का मूल निवासी एक छोटी लकड़ी का झाड़ी है, खेती की गई किस्में और रसायन प्रकार मेटाबोलाइट प्रोफाइल (पत्ती बनाम जड़ रसायन प्रकार) में मापने योग्य अंतर के साथ उपस्थित हैं। पौधा छोटे बेल के आकार के फूल पैदा करता है जो फुले हुए वाह्यदलपुंज और गोलाकार, नारंगी–लाल जामुन से घिरे होते हैं। पारंपरिक भारतीय प्रणालियों (आयुर्वेद) ने जड़ और पूरे पौधे की तैयारी को एक कायाकल्प टॉनिक और एडाप्टोजेन के रूप में उपयोग किया है। इसकी कम विषाक्तता और चिकित्सीय लचीलेपन के कारण विथानिया सोम्निफेरा का उपयोग, हर्बल फॉर्मूलेशन और समकालीन न्यूट्रास्यूटिकल्स में अधिक से अधिक किया जा रहा है।[1–7]

2. **विथानिया सोम्निफेरा की विशेषताएं**–

- यह केवल 1–2 फीट तक पहुंचता है, लेकिन कभी–कभी 6 फीट तक भी।
- हालाँकि यह एक बारहमासी पौधा है, इसकी खेती वार्षिक रूप में भी की जा सकती है।
- फलों और पौधों का स्वरूप चीनी लालटेन जैसा होता है।
- इन्हें अक्सर घोस्ट गूजबेरी, विंटर चेरी आदि के रूप में जाना जाता है।
- युवा जड़ें शंक्वाकार आकार की, सीधी, बिना शाखा वाली और लंबाई में भिन्न होती हैं।
- जड़ों की मोटाई उम्र के साथ बदलती रहती है।
- बाहरी सतह अनुदैर्ध्य रूप से झुर्रीदार और पीली है। इसमें श्लेष्मा और तीखा स्वाद होता है।

3. **वर्गीकरण और वितरण**– कई रसायन प्रारूपों और किस्मों की सूचना दी गई है; भौगोलिक उत्पत्ति और खेती का अभ्यास द्वितीयक

मेटाबोलाइट सामग्री (जड़ों और पत्तियों के बीच विथेनोलाइड्स की मात्रा और अनुपात) को दृढ़ता से प्रभावित करता है। आणविक और ट्रांसक्रिप्टोमिक अध्ययनों ने ऊतक–विशिष्ट अभिव्यक्ति पैटर्न की पहचान की है, जो इन कीमोटाइपिक अंतरों को समझाते हैं। वैज्ञानिक वर्गीकरण साम्राज्य–प्लांटे आदेश–सोलानेसी जीनस–विथानिया प्रजाति–सोम्नीफेरा

इसकी वितरण और खेती भारत के कई शुष्क क्षेत्रों में किया जाता है। यह नेपाल, श्रीलंका, चीन और यमन में भी पाया जाता है। यह धूप से लेकर आंशिक छाया वाली सूखी, पथरीली मिट्टी को पसंद करता है। इसे शुरुआती वसंत में बीजों से या बाद के वसंत में हरी लकड़ी की कटिंग से प्रचारित किया जा सकता है।

4. **फाइटोकेमिस्ट्री यौगिकों के प्रमुख वर्ग व प्रमुख जैवसक्रिय घटक हैं–**

1.विथेनोलाइड्स: स्टेरायडल लैक्टोन (उदाहरण के लिए, विथेफेरिन ए, विथेनोलाइड ए) – मुख्य रूप से सूजनरोधी, कैंसररोधी और एडाप्टोजेनिक क्रियाओं के लिए जिम्मेदार माना जाता है।
2. एल्कलॉइड ट्रोपेन–प्रकार और अन्य एल्कलॉइड कम से मध्यम मात्रा में मौजूद होते हैं।
3. सिटोइंडोसाइड्स और सैपोनिन्स ग्लाइकोसाइड्स जिन्हें एडाप्टोजेनिक और एंटीऑक्सीडेंट प्रभावों में शामिल किया गया है।
4. फेनोलिक्स और फ्लेवोनोइड्स: एंटीऑक्सीडेंट क्षमता में योगदान करते हैं।

फाइटोकेमिकल और मेटाबॉलिक समीक्षाएं विथेनोलाइड्स की संरचनात्मक विविधता और उनके ऊतक–विशिष्ट वितरण (जड़ें बनाम पत्तियां) का सारांश देती हैं और अर्क के लिए मानकीकरण चुनौतियों पर जोर देती हैं।

5. **औषधीय गुण**– एडाप्टोजेनिक और तनाव–विरोधी प्रभाव– कई प्रीक्लिनिकल मॉडल और मैकेनिस्टिक अध्ययनों से संकेत मिलता है कि विथानिया सोम्निफेरा अर्क हाइपोथैलेमिक–पिट्यूटरी–एड्रेनल (एचपीए) अक्ष को व्यवस्थित करता है और तनाव मार्करों (जैसे, जानवरों/मनुष्यों में कॉर्टिकोस्टेरोन/कोर्टिसोल) को कम करता है, जो पारंपरिक एडाप्टोजेनिक दावों का समर्थन करता है।

6. **न्यूरोप्रोटेक्टिव और संज्ञानात्मक प्रभाव**– इन विट्रो और पशु अध्ययनों में एंटीऑक्सीडेंट, सूजन–रोधी और न्यूरोट्रॉफिक क्रियाओं (जैसे, न्यूराइट के विकास को बढ़ावा देना और न्यूरोट्रांसमीटर सिस्टम का मॉड्यूलेशन) की रिपोर्ट दी गई है, जो न्यूरोडीजेनेरेटिव रोग मॉडल और संज्ञानात्मक हानि में संभावित भूमिकाओं का समर्थन करते हैं।

7. **सूजन–रोधी, इम्यूनोमॉड्यूलेटरी और मेटाबॉलिक प्रभाव**– विथेनोलाइड्स और अन्य घटक सूजन मध्यस्थों का निषेध, प्रतिरक्षा मॉड्यूलेशन और पशु मॉडल में मेटाबोलिक सिंड्रोम के मार्करों पर लाभकारी प्रभाव दिखाते हैं (ग्लूकोज से निपटने में सुधार, लिपिड प्रोफाइल), सूजन और चयापचय स्थितियों के लिए सहायक चिकित्सा के रूप में क्षमता का सुझाव देते हैं।

8. **कैंसर विरोधी गतिविधि**– प्रीक्लिनिकल अध्ययन एपोप्टोसिस इंडक्शन, एंटीएंजियोजेनेसिस और कैंसर कोशिका प्रवासन के निषेध सहित तंत्रों के माध्यम से कई कैंसर सेल लाइनों के खिलाफ कुछ विथेनोलाइड्स (विशेष रूप से विथेफेरिन ए) की साइटोटॉक्सिसिटी दिखाते हैं। ये आशाजनक है लेकिन प्रारंभिक हैं और इनके लिए सावधानीपूर्वक अनुवादात्मक कार्य की आवश्यकता है।

9. **नैदानिक साक्ष्य (मानव परीक्षण)**– नैदानिक अनुसंधान ने तनाव/चिंता में कमी, नींद में सुधार और चयनित चयापचय शारीरिक प्रदर्शन परिणामों पर ध्यान केंद्रित किया है। उल्लेखनीय यादृच्छिक नियंत्रित परीक्षणों में शामिल हैं। जिसमें पाया गया कि एक मानकीकृत उच्च–सांद्रता जड़ अर्क (दिन में दो बार 300 मिलीग्राम) ने लंबे समय से तनावग्रस्त वयस्कों में तनाव और सीरम कोर्टिसोल बनाम प्लेसीबो को कम कर दिया। नियंत्रित परीक्षणों में चिंता और सूजन के मार्करों में कमी की सूचना दी। व्यवस्थित समीक्षाएँ और कथात्मक समीक्षाएँ इन परीक्षणों का सारांश प्रस्तुत करती हैं और निष्कर्ष निकालती हैं कि जबकि कई मानव अध्ययन सकारात्मक हैं, अर्क मानकीकरण, खुराक और समापन बिंदुओं में विविधता निश्चित निष्कर्षों को सीमित करती है।

10. **सुरक्षा और विषाक्तता**– विथानिया सोम्नीफेरा, के अर्क को आमतौर पर सामान्य नैदानिक खुराक पर अल्पकालिक अध्ययनों में अच्छी तरह से सहन किया जाता है, हल्के प्रतिकूल घटनाओं (गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल परेशान, उनींदापन) के बारे में शायद ही कभी रिपोर्ट किया जाता है, हालाँकि, लंबे समय तक, उच्च खुराक के उपयोग के लिए सुरक्षा डाटा सीमित है और गर्भावस्था, ऑटोइम्यून स्थितियों और शामक या इम्यूनोमॉड्यूलेटरी दवाओं के समवर्ती उपयोग में सावधानी बरतने की सलाह दी जाती है।

व्यावसायिक तैयारियों के लिए मानकीकरण और संदूषक परीक्षण महत्वपूर्ण हैं ।

11. अनुसंधान अंतराल और भविष्य की दिशाएँ–

1. गैर–मानकीकृत परिणाम पौधे अनुभाग और निष्कर्षण तकनीक के आधार पर भिन्न होते हैं।
2. कमजोर नैदानिक साक्ष्य बहुत से मानव परीक्षणों की अवधि कम होती है और नमूने का आकार छोटा होता है।
3. सीमित फार्माकोकाइनेटिक जानकारी सक्रिय पदार्थों के अवशोषण, चयापचय और जैवउपलब्धता के बारे में बहुत कम जानकारी है।
4. दीर्घकालिक सुरक्षा अज्ञात है क्योंकि कुछ शोध दवा के अंतःक्रिया या निरंतर उपयोग का मूल्यांकन करते हैं।
5. रासायनिक परिवर्तनशीलता विथेनोलाइड सामग्री आनुवंशिक और पर्यावरणीय चर से प्रभावित होती है।
6. बड़े, सावधानीपूर्वक नियोजित नैदानिक परीक्षणों में वस्तुनिष्ठ बायोमार्कर का उपयोग करें।
7. भविष्य की सुरक्षा और दवा के अंतःक्रियाओं की जांच करें।
8. निरंतर फाइटोकैमिस्ट्री प्रदान करने के लिए, स्थिर, आनुवंशिक रूप से सजातीय किस्मों का निर्माण करें।
9. प्रत्येक चिकित्सा क्षेत्र को एक मानक परिणाम माप निर्दिष्ट करें।

12. निष्कर्ष

विथानिया सोम्नीफेरा, एक वैज्ञानिक रूप से आशाजनक औषधीय पौधा है, जिसका एक लंबा पारंपरिक इतिहास है और इसमें एडाप्टोजेनिक, न्यूरोप्रोटेक्टिव, एंटी–इंफ्लेमेटरी और कैंसर विरोधी गुणों के बढ़ते आधुनिक प्रमाण हैं। निरंतर प्रगति के लिए प्रीक्लिनिकल वादे को मान्य नैदानिक उपयोगों में अनुवाद करने के लिए कठोर फाइटोकेमिकल मानकीकरण, यंत्रवत अध्ययन और उच्च गुणवत्ता वाले नैदानिक परीक्षणों की आवश्यकता होती है। अश्वगंधा पर शोध अभी भी जारी है इसके संभावित चिकित्सीय अनुप्रयोगों को स्थापित करने के साथ–साथ सर्वोत्तम खुराक और उपयोग के समय की पहचान करने के लिए अतिरिक्त अध्ययन की आवश्यकता है। अश्वगंधा की सुरक्षा को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए ।

**References**


1. Bashir A, et al. An updated review on phytochemistry and molecular aspects of *Withania somnifera*. Front Pharmacol. 2023. — recent review summarizing phytochemical diversity and therapeutic evidence.
2. Chandrasekhar K, Kapoor J, Anishetty S. A prospective, randomized double-blind, placebo-controlled study to evaluate safety and efficacy of a high-concentration fullspectrum Ashwagandha root extract in reducing stress and anxiety in adults. Indian J Psychol Med. 2012;34(3):255–262. — randomized clinical trial showing cortisol and stress reduction.
3. Dhar N, Meena AK, Datta A, et al. A Decade of Molecular Understanding of Withanolide Biosynthesis. (Review) - molecular and biosynthetic perspectives on withanolide formation. 2015.
4. Gupta P, et al. De Novo Assembly, Functional Annotation and Comparative Transcriptome Analysis of *Withania somnifera* Leaf and Root. PLoS ONE. 2013;8(11):e62714. — transcriptomic resource describing tissue-specific genes relevant to withanolide biosynthesis.
5. Lopresti AL, Smith SJ, Malvi H. An investigation into the stress-relieving and pharmacological properties of Ashwagandha in randomized controlled trials. 2019 — clinical data showing reductions in anxiety, cortisol and inflammation in chronic stress.
6. Mikulska P, et al. Ashwagandha (*Withania somnifera*)—Current Research on Mechanisms, Uses and Safety. Narrative review (2023) — up-to-date overview of clinical and preclinical evidence.
7. Mishra LC, Singh BB, Dagenais S. Scientific basis for the therapeutic use *of Withania somnifera (*Ashwagandha): a review. J Altern Complement Med. 2000;6(4): 295–304. — foundational review summarizing chemistry, therapeutic benefits and safety.

खण्ड-13, अंक-1, वर्ष-2025, मु0प्र0 164-169
D.O.I.: https://doi.org/10.22445/avsp.v13i1.30
SJIF (2025) : 8.749



# Ancient Indian Patiganita and Arithmetic Operations

Priti Bajpai
Department of Mathematics, BITS Pilani, Dubai Campus, UAE
dr.priti.bajpai@gmail.com

**Received: 30-10-2025, Accepted: 26-11-2025**

**Abstract-**It is a well known fact that in ancient India Mathematics was quite developed. The base of all mathematics was believed to be Arithmetic. Those days all calculations were done on a wooden plank called falak or pati. For big calculations it obviously had space limitations. According to Brahmgupta (628 AD), only a person who knew twenty Arithmetics operations and eight determinations was a true mathematician. In this article out of those twenty, main eight operations will be studied and we will see how they were done on a pati. It is tried to understand how they are different from European style of calculations.

**Key words-** Ganita, Pati, Patiganita, Arithmetic operations

# प्राचीन भारत की पाटीगणिता एवं अंकगणितीय संक्रियाएँ

प्रीति बाजपेई
गणित विभाग, बिट्स पिलानी, दुबई परिसर, यू0ए0ई0
dr.priti.bajpai@gmail.com

**सार**– यह तो सभी जानते हैं कि प्राचीन भारत में गणित बहुत विकसित थी। संपूर्ण गणित का आधार अंकगणित को माना जाता था। उस समय सभी गणनाएँ फलक या पाटी पर की जाती थी। बड़ी गणनाओं के लिए पाटी की अपनी सीमितता थी। ब्रह्मगुप्ता (628 AD) के अनुसार बीस अंकगणितीय संक्रियाएँ (Arithmetic operations) व आठ निर्धारणों को जानने वाला सच्चा गणितज्ञ था। इस लेख में बीस में से मुख्य आठ को पाटी पर कैसे किया जाता था, यह भी समझने का प्रयास होगा कि वे यूरोपिय तरीकों से कैसे भिन्न हैं।

**बीज भाब्द**– गणिता, पाटी, पाटीगणिता, अंकगणितीय संक्रियाएँ

**1. परिचय**– प्राचीन भारत में सभी गणनाएँ एक लकड़ी के पट्टे यानि फलक पर पाण्डुलेखा (खड़िया, स्वेतवरनी) से लिखकर होती या पाटी पर धूलि, राख और बारीक बालू बिछाकर तर्जनी अंगुली से लिखकर की जाती और यही कारण है कि उस समय की गणित को पाटीगणिता या धूलिकरमा कहते थे। सम्पूर्ण गणना को एक ही बार पाटी पर करने के लिए जिन अंको की भूमिका समाप्त हो जाती उन्हें मिटा कर ताजे या नए अंक लिखे जाते। इस प्रकार परिणाम एक ही पंक्ति में आ जाता। यह यूरोपीय तरीके से भिन्न था, जहाँ सारी गणनाएँ लिखी जाती और यह स्वाभाविक है वो बहुत जगह लेती। पाटी पर गणना करने का तरीका बड़ा अनोखा था। हम जिन आठ संक्रियाओं को देखेंगे वह इस प्रकार हैं। (1) समकालिता (Addition), (2) व्यवकालिता (Subtraction), (3) गुणन (Multiplication), (4) भागहर (Division), (5) वर्ग (Square), (6) वर्गमूल (Squareroot), (7) घन (Cube), (8) घनमूल (Cuberoot)। बख्शाली पांडुलिपी (200 AD) से लेकर 1658 AD की पाटीसार में सभी संक्रियाओं का उल्लेख व प्रयोग देखने को मिलता है। प्राचीन भारत के गणितज्ञों के अनुसार सभी संक्रियाओं का आधार समकालिता व व्यवकालिता है व बाकी संक्रियाएँ इन्हीं के विभिन्न रूप हैं।[1,2,3]

**2. समकालिता (सम + कलित) / समकन (Addition)**– आर्यभट्ट II (950AD) के अनुसार

"संख्यावतां बहुनामेकीकरणं तदैव संङ्कलित"

यानि कई संख्याओं से एक संख्या बनाना ही समकालिता है।[5] प्राचीन काल में भारत में स्थानिक मान का प्रयोग करा जा रहा था। समकन की क्रिया दो प्रकार से की जाती थी (i) क्रम (Direct), (ii) उत्क्रम (Inverse)। जहाँ क्रम में इकाई के अंको से शुरू करते हैं वहीं उत्क्रम में बाई तरफ से। लीलावती में भास्कराचार्या कहते हैं–

"क्रमादुत्क्रमतोऽथवाऽङ्कयोगो यथा स्थानकमंतरं वा"

जिसका अर्थ है समकलिता या व्यवकालिता स्थान के अनुसार दाई या बाई तरफ से करना चाहिये या इसका उल्टा।' यदि क्रम लें तो इकाई से शुरू कर जोड़ने पर यदि मान दो अंको का है तो इकाई वाला अंक लिखकर बाकी बिंदु लगा दहाई के जोड़ में जोड़ते और स्तम्भ को मिटा देते। इस प्रकार मान एक ही पंक्ति में आ जाता। उदाहरण के तौर पर यदि 19 व 13 को जोड़ना है तो

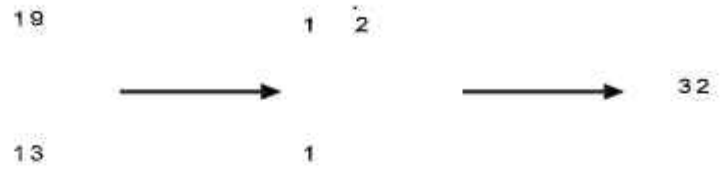


यदि 395 और 25 को क्रम में जोड़ना है तो

उत्क्रम में

3. व्यवकालिता (वि + अब + कलित) (Subtraction)– आर्यभट्ट II (950AD) के अनुसार

"यदपास्तं सर्वधनात् तद्ववकलिंत तु शेषकं शेश्म"

यानि सर्वधन से किसी संख्या को निकाले तो उसे व्यवकालिता कहते हैं। बची संख्या को शेष कहते हैं। व्यवकालिता में यदि घटाया जाने वाला अंक किसी स्थान में बड़ा है, तो अगले 10 से घटाते हैं (Borrow) करना।' क्रम व उत्क्रम दोनो का प्रयोग प्रचलित था। यदि 465 से 274 को घटना है तो इस प्रकार किया जाता

5 – 4 = 1, इकाई का स्तम्भ मिटाकर 1 लिखा। दूसरे स्तम्भ में 6, 7 से छोटा है तो 10 अगले 4 से लिया। 10 + 6 = 16, 16 – 7 = 9। अब 4 तो 3 बन गया और दूसरा रतम्भ मिटा 9 लिखा। 3 – 2 = 1। गंगाधर के अनुसार क्रम समकालिता व उत्क्रम व्यवकालिता में ज्यादा उपयोगी है।'

4. गुणन (Multiplication)– गुणन शब्द वैदिक काल से चला आ रहा है। प्राचीन भारत में गुणन को समकालिता का ही रूप मानते थे। जितने अंक गुणक में होते उतनी बार जोड़ा जाता। इसे बख्शाली में पारसपराक्रतम कहा गया है, यानि कई बार जोड़ना। ब्रह्मगुप्ता ने चार विधियाँ दी हैं।

(i) गौमुत्रिका (ii) खण्ड (iii) भेद (iv) इस्तागुणा। वहीं श्री धराचार्या (750 AD) ने निम्न चार का उल्लेख किया है। (i) कपाटसंधि (ii) वस्था (iii) रूप विभाग (iv) स्थान विभाग। उस समय यह माना जाता था कि बुद्धिमान व्यक्ति और कई गुणन के तरीके निकाल सकता है। यहाँ हम दो तरीके देखेंगे।

4.1 **कपाटसंधि**– यह विधि बख्शाली के समय से प्रयोग में थी। श्रीधराचार्या ने इसको करने का निम्न तरीका दिया है। उनके अनुसार गुणक को ऊपर और गुण्य को नीचे रखकर गुणा करना है। हर प्रक्रिया के बाद गुणक को खिसकाते हैं। जिन अंको का प्रयोग हो चुका उन्हें हटा दिया जाता था। यही कारण है कि गुणन को हनन, वध इत्यादि भी कहते थे।' आर्यभट्ट II (950 AD) के अनुसार गुणक के पहले अंक को गुण्य के आखिरी अंक के नीचे रखा जाता है। यदि 125 X 98 का मान निकालना है तो इस प्रकार करते हैं।

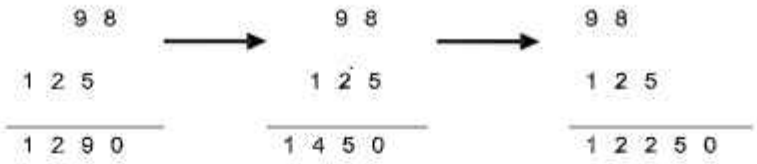

```
  9 8    →     9 8    →    9 8
1 2 5        1 2̇ 5        1 2 5
_____        _____        _______
1 2 9 0      1 4 5 0      1 2 2 5 0
```

अब इसकी गणना देखें।

5X8=40, 5X9=45, 45+4=49, 4 चढ़ाया, 2X8=16, 9+6=15, 9 को हटाकर 5 लिखा और 1 चढ़ाया, 2X9=18, 8 को 2 के नीचे लिखा 18+4+1+1=24, 4 को हटा 2 के नीचे लिखा, 2 को चढ़ाया, 1X98=98, 9+3=12

4.2 गणेशा (1545 AD) में एक आसान तरीका दिखाया है। यदि हम ऊपर वाला ही उदाहरण ले तो पहले अंको के अनुसार 3X2 की मैट्रिक्स बनाते हैं। 125 को ऊपर 98 को बगल में लिखे। हर खाने को कर्ण से विभाजित करें।

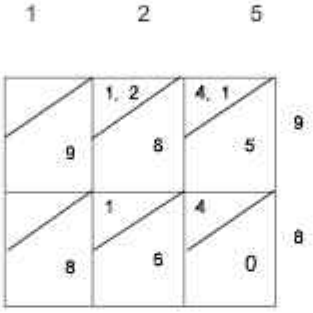




पहले 125 को 9 से गुणा किया। 9X5=45, 9X2=18, 9X1=9, 5, 8 व 9 इकाई के अंको को नीचे के त्रिकोण में लिखा और दहाई वाले ऊपर अब 125 को 8 से गुणा किया और ऊपर का तरीका अपनाया। अब तिर्यक रूप से अंको को जोड़ा। दाई तरफ से शुरू करें।

0 , 5+4+6=15 (1 ऊपर खाने में चढ़ाया)

1+4+8+1+8=22 (2 को ऊपर चढ़ाया), 2+1+9=12 जोड़ मिलता है : 12250

5. **भागहर (Division)**– भागहर प्राचीन भारत में बहुत आसान तरीके से किया जाता था। तरीका इतना सहज था कि आर्यभट्ट I ने उसका सीधे प्रयोग बिना चर्चा के किया। आर्यभट्ट II (950 AD), भास्कराचार्या (1150 AD) जैसे महान गणितज्ञों ने इस प्रकार किया है। भाजक को भाज्य के नीचे लिखा जाता फिर भाज्य के बाई ओर के अंक से शुरू करते। भाजक का सही गुणज लेकर उसे भाज्य से घटाया जाता। गुणज किनारे लिखा जाता। अगले चरण के लिये भाजक को बाई ओर खिसका देते। यही क्रिया आगे चलती। किनारे लिखे अंक मान देते। उदाहरण के तौर पर यदि 12180 को 29 से भाग देना हो तो इस प्रकार करेंगे।

```
12180
          .   4    (121–29X4=5)
29

 580
          .   2    (58–29X:2=0)
29
 00
          .   0
29
```

परिणाम 420

6. **वर्ग (Square)**– वर्ग निकालने का महत्व वर्गमूल के कारण अधिक था क्योंकि वर्ग, वर्गमूल का व्युत्क्रम है। सबसे पहले वर्ग का उल्लेख ब्रह्मस्फुटा सिद्धांत में है। आर्यभट्ट I ने वर्गमूल निकाला है जो कि बताता है उन्हें वर्ग का ग्यान था। यहाँ हम श्रीधराचार्या का तरीका

देखेंगे। उनके अनुसार दी संख्या के बाईं तरफ के पहले अंक का वर्ग करेंगे, इस अंक को मिटा देगें। वर्ग को ऊपर लिखेगें। अब पहले अंक के दुगने को नीचे लिखेगें। नीचे लिखे अंक से मूल संख्या के बचे अंको को गुणा करेगें। मूल संख्या के अंको को दाई ओर खिसकाया। एक प्रक्रिया पूरी हुई। अगले चरण में मूल संख्या के पहले अंक का वर्ग किया और ऊपर लिखा और दो गुना नीचे। यह प्रक्रिया तब तक चलेगी जब तक मूल संख्या के सब अंक प्रयोग में न आ जाये।[8] यदि 241 का वर्ग निकालना है तो

241 , 2 का वर्ग 4 और 2X2=4

4

241 , 4X41=164

4

564

41 41 को खिसकाया, 4 का वर्ग 16 ऊपर लिखा और 4X2=8 नीचे

580

1 8X1=8, 1 को ऊपर लिखा

8

5808

1 1 का वर्ग 1 के ऊपर लिखा

58081, यही परिणाम है। वैसे तो कई सर्वसंक्रिकाएँ भी प्रयोग होती थी। यहाँ उनका जिक्र नही करेंगे।

7. घन **(Cube)**– 5 AD से पहले भी गणितज्ञ घन निकाल रहे थे। बाद में ब्रह्मगुप्त, महावीर सभी ने अपने तरीकों का प्रयोग किया। यहाँ हम भास्कराचार्य के तरीके को समझेगें। सबसे पहले बाई ओर के पहले अंक का घन निकाला फिर उसके वर्ग को अगले अंक से गुणा किया और इसी तीन गुणा लिया। अब दूसरे अंक के वर्ग को पहले अंक से गुणा किया और इसका तीन गुना किया। आखिर में दूसरे अंक का घन लिया। यह सब जोड़ लिया। इस प्रक्रिया मे पहले दो अंको का घन मिल गया। अगले चरण में पहले दो अंको को एक मान लिया, यही प्रक्रिया चलेगी।

यदि संख्या abc है तो हम पहले चरण में $a^3+3a^2b+3b^2a+b^3$ निकाल रहे हैं। दूसरे चरण में $(ab)^3+3(ab)^2c+3(ab)c^2+c^3$ यह हमे घन देगा। यदि हमे 234 का घन निकालना है तो**:**

$2^3 = 8$, $3X2^2X3 = 36$, $3X2X3^2 = 54$, $3^3 = 27$, जोड़ने पर

```
8
3 6
  5 4
    2 7
-----------
1 2 1 6 7
```

यह $23^3$ है।

अगले चरण के लिये

$23^3 = 12167$

$3.23^2.4 = 6348$

$3.23.4^2 = 1104$

$4^3 = 64$

जोडने पर

```
1 2 1 6 7
    6 3 4 8
      1 1 0 4
          6 4
---------------
1 2 81 2 9 0 4
```

घन निकालने के लिए भी श्रेणी व सर्वसंक्रियाओं का प्रयोग होता था।

8. **वर्गमूल (Squareroot)**– वर्गमूल निकालने का अर्थ है वह अंक पता लगाना जिसका वर्ग ज्ञात हो। आर्यभटिया में सबसे पहले इसे निकालने का तरीका देखने को मिलता है। बाद के गणितज्ञों ने करीब–करीब वही तरीका अपनाया। भास्कराचार्य ने कुछ इस प्रकार वर्गमूल निकाले हैं। सबसे पहले दी गई संख्या के अंको को इकाई से शुरू कर, सम और विषम स्थानो को ऊर्ध्व व क्षितिज–रेखाओं के चिन्हों से अंकित करते हैं। अब संख्या के सबसे पहले ऊर्ध्व चिन्ह वाले अंक से शुरू करते हैं। जो सबसे बड़ी वर्ग संख्या हो सकती है उसे उससे घटाते हैं। पहले अंक को मिटा उसकी जगह शेष संख्या लिखिते हैं। वर्गमूल को दो गुणा से भाग देते हैं। भागफल के वर्ग को संख्या के बचे अंक से घटाते हैं और उसके दुगने को पंक्ति में लिखते हैं। यही दोहराया जाता है। यदि शेषफल शून्य है तो एक प्रक्रिया खत्म हो जाती है। अंत में पंक्ति की संख्या को दो से भाग देते हैं। यदि हमें 529 का वर्गमूल निकालना हो तो–

| – |      – |      |<br>
5 2 9 ⟶ 1 2 9 ⟶ 09 ⟶ 0    पंक्ति    46<br>
4

46 / 21=23 वर्गमूल है।

9. **घनमूल (Cuberoot)**– घनमूल निकालने का तरीका सबसे पहले आर्यभटिया में देखने को मिलता है। आर्यभट्ट I के अनुसार दाई तरफ से एक घन (ऊर्ध्व) व दो अघन (क्षितिज) के चिन्ह लगाते हैं। फिर बाई तरफ से शुरू कर पहले घन चिन्ह वाली संख्या से सबसे बड़ा घन जो संख्या से छोटा हो उसे घटाते हैं। घनमूल को पंक्ति में रख लेते हैं। ऊपर से अगला अघन अंक उतारा और शेष के साथ रखा इसे 3 x घनमूल का वर्ग इससे भाग दिया। शेषफल लिख भागफल को पंक्ति में लिखा। अब अगला अघन उतारा शेषफल के साथ रखा अब इस संख्या को 3 x पुराना भागफल x नया भागफल का वर्ग इससे भाग दिया शेषफल लिखकर घन को उतारा इस संख्या को नए भागफल के घन से भाग देते हैं। यदि शेषफल शून्य है तो एक प्रक्रिया खत्म हो जाती है। यदि 12167 का घनमूल निकालना है तो

$$
\begin{array}{cccccccc}
 & & | & & & | & & \\
 & \bar{1} & 2 & \bar{1} & \bar{6} & 7 & & \\
8 & & & & | & & & \\
4 & \bar{1} & \bar{6} & 7 & & & & \\
 & & & & & & | & \\
 & & 5 & 6 & 7 & & & \\
 & & & & & & | & \\
 & & & 2 & 7 & & & \\
 & & & & 2 & & 7 & \\
 & & & & & 0 & &
\end{array}
$$

घनमूल 2 को पंक्ति में रखा। 41 को 3 x घनमूल 2 के वर्ग से भाग दिया। भागफल 3 आया। अब पंक्ति 23 और शेषफल 5 है। 56 को 3 x 2 x 3 के वर्ग से भाग दिया। 27 को 3 के घन से भाग दिया। शेषफल 0 है। घनमूल 23 है।

10. **निष्कर्ष**– यदि इन संक्रियाओं को यूरोपीय तरीके, जो आज भी प्रयोग मे है, से तुलना की जाए तो सबसे पहले यह देखने को मिलता है कि भारतीय संक्रियाएँ क्योंकि पाटी पर की जाती बहुत संक्षिप्त तरीके से होती थीं। समकालिता व व्यवकालिता क्रम व उत्क्रम दोनो तरीको से होती थी। गणना के सात से ज्यादा तरीके थे। जबकि यूरोपीय एक ही लम्बे तरीके से हो रहा था और गणना जगह लेती। भागहर को जहाँ यूरोपीय बहुत कठिन मानते वहीं भारत में वह इतने सहज तरीके से हो रहा था कि उसके नियमों का भी उल्लेख नहीं होता। यही वर्गमूल व घनमूल के साथ था। सारे हल एक ही पंक्ति में आ जाते। पर कुछ कमियाँ भी थीं। गणना के सभी संक्रियाएँ के नियम याद किये जाते थे। बहुत गणनाएँ मन में की जाती या उंगुली पर। इससे गलती होने का डर अधिक रहता था। त्रुटि होने पर हमें शुरू से करना पड़ता क्योंकि अंको को गणना में काम आने के बाद हटा दिया जाता था। कुछ भी कहें विकसित स्थानिक प्रणाली भारत से ही अरब से होती हुई यूरोप पहुँची। 1202 AD में फिबोनाची (Fibonacci) की लाइबर अबासी (Liber Abaci) ने हिन्दी–अरबी संख्या प्रणाली को यूरोप में प्रचलित किया। पर यह तो मानना पड़ेगा भारतीय पाटी गणित संक्षिप्त थी तो पढ़ने वालो के लिये आसान थी। कोई टीमटाम की आव यकता नही थी। एक पाटी या धूलि पर की जा सकती थी। दूसरा गणित का उपयोग खगोल, नक्षत्रशास्त्र, अंक ज्योतिष, धार्मिक संस्कारों, रीति सभी जगह प्रयोग होने के कारण एक हद तक सभी जानते थे।

आभार– लेखिका श्री टी0एन0 मिश्र व श्री अखिलेश वर्मा जी के सहयोग के लिए बहुत आभारी है।

**References**

1. Bibhutibhushan Datta, Avadesh Narayan Singh, History of Hindu Mathematics, Bharatiya Kala Prakashan, Delhi, Vol I and II, 2001, 2004.
2. K. S. Shukla. The Patiganita of Sridharacarya, Department of Mathematics and Astronomy . Lucknow University, 1959.
3. S Dwevedi, History of Mathematics, Banares, 1910.
4. Krisnaji Shankara Patwardhan, Somashekhara Amrita Naimpally, Shyam Lal Singh, Lilavati of Bhaskaracarya, Motilal Banarsidass Publishers Private Limited, Delhi.
5. K. S. Shukla, K. V Verma, Aryabhatiya of Aryabhat, India National Science, New Delhi, Vol I, 1976.
6. S. K. Bag. Mathematics in Ancient and Medieval India. Chaukhamba Orientalia, 1979.

# बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय(के0के0वी0)
## (लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)
## स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ- 226001, उ0प्र0, भारत

# बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

**https://bsnvpgcollege.ac.in/vp/VigyanParishad.aspx; www.anushandhan.in**

## परिषद के कार्य

1. विज्ञान की विभिन्न धाराओं में समय- समय पर **संगोष्ठी का आयोजन** कराना,
2. छात्र/छात्राओं हेतु ग्रीष्मकालीन/शीतकालीन **कार्यशालाओं** का आयोजन,
3. वर्ष में एक बार **"अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)"** का प्रकाशन,
4. मेधावी छात्रों को विज्ञान शोध के क्षेत्र में प्रोत्साहन,
5. समाज व छात्र/छात्राओं को विज्ञान विषय का हिन्दी में अध्ययन की प्रेरणा,
6. वैज्ञानिक शोध को हिन्दी में प्रोत्साहित करना,
7. समाज में विज्ञान हेतु जागरुकता पैदा करना आदि।

## लक्ष्य

**अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)**, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद, लखनऊ, द्वारा क्रियेटिव कॉमन्स(सी.सी.) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियर रिव्यूड/रेफ्रीड, वार्षिक, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका है। जिसका मुख्य उद्देश्य वैज्ञानिक सोच को हिन्दी में व्यक्त करने तथा वैज्ञानिक शोध को हिन्दी में प्रस्तुत करने की रूचि रखने वाले शोधार्थियों, शिक्षकों एवं वैज्ञानिकों को एक ऐसा मंच प्रदान करने का है जहाँ से उनके कार्य को राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सराहा जा सके। वर्तमान में एक वर्ष में केवल एक अंक के प्रकाशन का लक्ष्य है जिसे भविष्य में आवश्यकता अनुसार एक वर्ष में दो अंक के प्रकाशन तक बढ़ाया जा सकता है। पत्रिका में विज्ञान की सभी धाराओं(**भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, गणित, प्राणि विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, सांख्यिकी, कम्प्यूटर विज्ञान, अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी, पर्यावरण विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान आदि) व समीचीन विषयों में प्राप्त पत्रों को उपयुक्त समीक्षा उपरांत स्वीकृत** होने पर प्रकाशित किया जायेगा।

प्रकाशन हेतु प्रस्तुत भाग–1 से भाग–4 के सभी प्रकार के शोध पत्रों/लेखों में **सार/ऐब्स्ट्रेक्ट हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं** में दिया जाना आवश्यक है। सभी भाग में संदर्भ को लेख में क्रमीकृत/अंकित करना आवश्यक है।

भाग-1- शोध पत्र/आलेख

भाग-2- समीक्षा- तकनीकी लेख, सम्मानित शोध ग्रंथ सारांश, शोध परियोजना, शोध प्रकाशन, शोध विद्या आदि।

भाग-3- महत्वपूर्ण विषयों पर आधारित वैज्ञानिक लेख(**लेख के अंत में प्रयुक्त सामग्री का संदर्भ भी दें**)

भाग-4- पुस्तक समीक्षा, संगोष्ठी/कार्यशालाओं संबंधित आख्या, व्यावहारिक विज्ञान से जुड़ी खबरें, वरिष्ठ वैज्ञानिकों के शोध अनुभवों पर आधारित साक्षात्कार/जीवनी/उपलब्धियां, राष्ट्रीय प्रयोगशाला/शोध संस्थान, नवीन वैज्ञानिक विषयों पर शोध विमर्श, साइंटून्स, शैक्षिक विज्ञापन आदि।(**लेख के अंत में प्रयुक्त सामग्री का संदर्भ भी दें**)

इस पत्रिका की प्रिंट- प्रति एवं ई- प्रति दोनों प्रकाशित होंगी।

## प्रकाशन हेतु शोध पत्र की प्रस्तुतियां

## आचार नीति(एथिक्स पॉलिसी)

**विज्ञान शोध पत्रिका** में प्रकाशन हेतु इच्छुक छात्र/छात्राओं, शोध छात्र/छात्राओं, शिक्षकों, वैज्ञानिकों व अन्य शिक्षाविदों से प्रस्तुतियां इस आशय के साथ आमंत्रित हैं कि वह किसी अन्य पत्रिका में प्रकाशन हेतु न तो स्वीकृत हैं और न ही प्रकाशन हेतु समीक्षारत हैं। पत्रिका में प्रकाशित शोध पत्रों/समीक्षा लेखों/वैज्ञानिक लेखों का कॉपीराइट लेखक का होगा। प्रत्येक लेखक को पत्र प्रस्तुतिकरण के साथ सहमति पत्र (नियमावली के अंत में संलग्न) प्रस्तुत करना होगा। एक लेखक पत्रिका के प्रत्येक भाग में प्रकाशन प्रस्तुतियाँ प्रेषित कर सकता है। प्रकाशन हेतु प्रस्तुत सभी शोध पत्रों/शोध समीक्षाओं/वैज्ञानिक लेखों के अंत में संदर्भ दिया जाना आवश्यक है। पत्रिका के किसी भी भाग में प्रकाशन हेतु पत्र (एम0 एस0 वर्ड फाइल) ई–मेल के माध्यम से **संपादक–डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव**, प्रोफेसर, गणित विभाग, बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ, को उनके ई–मेल पते dksflow@hotmail.com पर प्रेषित किये जायेंगे। लेखकों द्वारा अपने शोध पत्र व आलेख शोध पत्रिका की वेबसाइट : www.anushandhan.in पर भी ऑनलाइन सब्मिट किये जा सकते हैं। समीक्षा उपरांत स्वीकृत होने पर पत्रिका के प्रारूप के अनुसार पत्र की एम0 एस0 वर्ड में .डॉक फाइल इसी ई–मेल पते पर प्रकाशन हेतु पुनः मांगी जायेगी। जिसे पुनः पत्रिका के प्रारूप के आधार पर जाँच करने के उपरांत अंतिम बार लेखक को अवलोकनार्थ भेजा जायेगा तथा इसे कम से कम समय (दो से तीन दिन के अंदर) में पुनः अंतिम प्रकाशन हेतु प्रस्तुत करना होगा।

## समीक्षा नीति(रिव्यू पॉलिसी)

**अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)**, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद, लखनऊ, द्वारा क्रियेटिव कॉमन्स (सी.सी.) एट्रीब्यूशन 4.0 इंटरनैशनल लाइसेंस के अंतर्गत हिन्दी में प्रकाशित ओपेन एक्सेस, पियररिव्यूड/रेफ्रीड, वार्षिक, अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान शोध पत्रिका है। यह शोध पत्रिका डी.ओ.ए.जे.(डायरेक्ट्री ऑफ ओपेन एक्सेस जर्नल), इंडेक्स कोपरनिकस और क्रॉस रेफ(यू0एस0ए0) में अनुक्रमित है। सभी शोध पत्र व लेख हेतु समकक्ष विद्वत समीक्षा प्रक्रिया है। हिन्दी में वैज्ञानिक शोध प्रकाशन हेतु अंतर्राष्ट्रीय मानकों को बनाये रखने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए समीक्षा प्रक्रिया का अक्षरशः कड़ाई से अनुपालन किया जाता है। शोध मानकों को बनाये रखने में, त्रुटियों को समाप्त करने में तथा शोध पत्र की गुणवत्ता को बढ़ाने में यह समीक्षा प्रक्रिया अत्यन्त सहायक है। समीक्षक की टिप्पणी के आधार पर पत्र स्वीकृत, पुनः प्रस्तुत व अस्वीकृत किया जाता है। किसी भी परिस्थिति में, लेखक को इसकी सूचना प्रेषित की जाती है परन्तु अस्वीकृत पत्र/लेख लेखक को वापस नहीं किये जाते हैं। समीक्षा प्रक्रिया पूर्ण होने के उपरांत पत्रिका ऑनलाइन तथा ऑफलाइन (हार्ड प्रति) दोनों प्रारूपों में छपती है। चूँकि किसी भी पत्रिका की ऑफलाइन प्रति(हार्ड प्रति) छापना एक खर्चीला कार्य है, अतः प्रत्येक लेखक को उसके पत्र के प्रकाशन के पूर्व 25 रि–प्रिंट्स का मूल्य, रू0 650/–, अनिवार्य रूप से जमा करने होंगे।

पत्रिका किसी भी प्रकार का पत्र प्रस्तुतिकरण शुल्क या प्रकाशन शुल्क लेखक से नहीं लेता है।

## लेखक हेतु नियम एवं शर्तें

1. आजीवन सदस्यता शुल्क-रू0 2000/-; संस्थाओं/पुस्तकालयों की आजीवन सदस्यता हेतु शुल्क रू0 3000/–; विद्यार्थियों/शोध छात्र-छात्राओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क रू0 1000/- एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क रू0 300/- । सभी लेखकों के लिए विज्ञान परिषद की सदस्यता प्राप्त करना अनिवार्य है।
2. वार्षिक व सत्रवार सदस्यता शुल्क-रू0 500/-
3. 10 मुद्रित पृष्ठों वाले शोध पत्रों/लेखों की छपाई हेतु कोई प्रोसेसिंग शुल्क नहीं लगेगा, तत्पश्चात् प्रति पृष्ठ रू0 50/- देय होंगे।
4. सभी पत्र/लेख हिन्दी के कृति देव 010 फांट एवं 12 पॉइंट साइज में तैयार किये जायें।

5. भाग–1, भाग–2, भाग–3, भाग–4 के सभी शोध पत्रों/लेखों में प्रयुक्त सामग्री का क्रम निम्नवत होना चाहिए–

अंग्रेजी में शीर्षक,
अंग्रेजी में लेखक का नाम, विभाग एवं संस्था का पता(सेवानिवृत्त होने की स्थिति में घर का स्थायी पता) ई–मेल पते सहित,
अंग्रेजी में सारांश(एब्स्ट्रेक्ट)
की वर्ड
हिन्दी में शीर्षक,
हिन्दी में लेखक का नाम, विभाग एवं संस्था का पता(सेवानिवृत्त होने की स्थिति में घर का स्थायी पता) ई–मेल पते सहित,
हिन्दी में सारांश,
बीज शब्द
प्रस्तावना/भूमिका
सामग्री एवं विधि
परिणाम/चर्चा
निष्कर्ष
आभार(यदि देना चाहें तो)
संदर्भ(संदर्भों को लेख में ही क्रमीकरण करते हुए उचित स्थान पर पंक्ति के ऊपर 1,2,3,..... इत्यादि अंकित करके लिखें जैसे जैन व शर्मा[1],श्रीवास्तव एवं अन्य[2])

6. शोध पत्र व पुस्तकों के संदर्भ इस प्रकार तैयार किये जायें–

सक्सेना, पी0 डी0 तथा शर्मा, ए0 के0(1991) मेडिसिनल प्लांट आफ वाटर, ज0आफ बायो0, खण्ड 21, अंक 3, मु0पृ0 121–132।
श्रीवास्तव, डी0 के0(2013) ज्यामिति, पियरसन एजुकेशन, प्रथम संस्करण, नई दिल्ली, पृ0 121।

7. लेखकों को अपने शोध पत्रों, समीक्षा लेखों, तकनीकी लेखों एवं वैज्ञानिक लेखों की मौलिकता सम्बन्धी सहमति प्रमाण पत्र बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद को निर्धारित प्रारूप (नियमावली के अंत में संलग्न) पर देना आवश्यक होगा।
8. सभी छपे हुए लेखों के **25 रि-प्रिंटस लेने अनिवार्य होंगे जिनका शुल्क रू0 650/-** होगा।
9. पत्रिका पूर्ण रूप से ओपेन एक्सेस पियर रिव्यूड/रेफ्रीड सिस्टम पर आधारित होगी जिससे कि कोई भी पाठक छपे हुए पत्रों को पढ़ सकता है तथा शुल्क मुक्त रूप से शैक्षिक उपयोग हेतु डाउनलोड कर सकता है।
पत्रों के कॉपीराइट अधिकार लेखक के पास सुरक्षित रहेंगे।
10. स्वीकृत पत्रों की उपलब्धता के आधार पर विज्ञान की सभी धाराओं के पाठकों की रूचि को ध्यान में रखते हुए सभी धाराओं का कम से कम एक पत्र अवश्य छापा जायेगा। यदि किसी एक धारा में एक वर्ष में कई पत्र छपने हेतु स्वीकृत किये जाते हैं तब उन्हें वरीयता के आधार पर पत्रिका के दूसरे अंक में छपने हेतु सुरक्षित रखा जायेगा।
11. पत्रिका का क्रय मूल्य- रू0 300/-
12. सभी प्रकार के भुगतान "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**" या "**B.S.N.V. Vigyan Parishad**"के नाम पर, चेक/डीडी के माध्यम से होंगे, जो कि **लखनऊ** में देय होगा। किसी भी प्रकार की अन्य जानकारी प्राप्त करने हेतु पत्राचार- **डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव (सचिव, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद) प्रोफेसर, गणित विभाग, बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ (उ0 प्र0)- 226001, भारत,** पर उनके ई-मेल: dksflow@hotmail.com या मोबाइल– **09935623044** पर किया जा सकता है।
13. शुल्क के एन.ई.एफ.टी. अंतरण हेतु बचत खाते का विवरण– "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**", बैंक–**यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, तेलीबाग, लखनऊ, उ0प्र0, भारत**, बचत खाता सं0–**520331000278453**, आई.एफ.एस. कोड– **UBIN0906948**, एम.आई.सी.आर. कोड–**226026086**

# बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय
## स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ- 226001, भारत

## बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद
**https://bsnvpgcollege.co.in/vp/VigyanParishad.aspx; www.anushandhan.com**

**सदस्यता प्रारूप** **पासपोर्ट फोटो**

1. नाम(प्रो0 / डॉ0 / श्री / श्रीमती) :
2. पत्राचार वाला पता :
3. फोन / फैक्स / मो0 / ई- मेल / वेब पता :
4. वर्तमान पद :
5. संस्था / सम्बद्धता :
6. जन्म तिथि / आयु :
7. शैक्षिक योग्यता :
8. विषय विशेषज्ञता :
9. पुरस्कार / मान्यताएं :
10. अन्य :
11. भुगतान विवरण :
(नकद / चेक / डी. **डी.** नं0, दिनांक, रू0 में सदस्यता शुल्क, बैंक सूचना)

**नोट:-**

- सभी प्रकार के शुल्क "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**" के नाम से **लखनऊ** पर देय होंगे।
- आजीवन सदस्यता शुल्क रू0 2000 / - एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क रू0 500 / -, विद्यार्थियों / शोध छात्र- छात्राओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क रू0 1000 / - एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क रू0 300 / -
- भारत के बाहर के सभी देशों हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क $ 100 एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क $ 40, विद्यार्थियों / शोध छात्र- छात्राओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क $ 30 / - एवं वार्षिक सदस्यता शुल्क $ 10
- विद्यार्थी / शोध छात्र- छात्राएं सदस्यता प्रारूप के साथ अपनी वर्तमान संस्था द्वारा प्राप्त पहचान पत्र की प्रति अवश्य संलग्न करें।
- सदस्यता प्रारूप व्यक्तिगत रूप में या डाक के माध्यम से **डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव**, प्रोफेसर, गणित विभाग(सचिव, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद), बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज(के0 के0 वी0), स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ(उ0 प्र0)- 226001, के नाम से प्रेषित किये जायें।
- एन.ई.एफ.टी. अंतरण हेतु बचत खाते का विवरण– "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**", बैंक–**यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, तेलीबाग, लखनऊ, उ0प्र0, भारत,** बचत खाता सं0–**520331000278453**, आई.एफ.एस. कोड– **UBIN0906948**, एम.आई.सी.आर. कोड–**226026086**

**दिनांक:** **हस्ताक्षर**

# बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय
## स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ- 226001, भारत

## बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद
**https://bsnvpgcollege.co.in/vp/VigyanParishad.aspx; www.anushandhan.com**

## संस्था सदस्यता / पुस्तकालय सदस्यता प्रारूप(आजीवन)

1. संस्था का नाम :
2. पत्राचार वाला पता :
3. फोन / ई- मेल / वेब पता :
4. शैक्षणिक संस्था / शोध संस्थान :
5. सम्बद्धता(वि0वि0 अथवा अन्य) :
6. अन्य :
7. भुगतान विवरण :
   (चेक / डी0डी0 नं0, दिनांक, रू0 में सदस्यता शुल्क, बैंक सूचना)

**नोट:-**

- सभी प्रकार के शुल्क "**बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद**" के नाम से **लखनऊ** पर देय होंगे।
- संस्थाओं हेतु आजीवन सदस्यता शुल्क–**रू0 3000/- (तीन हजार मात्र)**। वार्षिक सदस्यता शुल्क–**रू0 1000/–(एक हजार मात्र)**।
- भारत के बाहर के सभी देशों हेतु संस्थाओं का आजीवन सदस्यता शुल्क–**$100(एक हजार डॉलर)**। वार्षिक सदस्यता शुल्क–**$30(तीस डॉलर)**।
- सभी आजीवन सदरय संस्थाओं को "**विज्ञान शोध पत्रिका**" की एक प्रति शुल्क मुक्त रूप से उनके डाक वाले पते पर रजिस्टर्ड पार्सल / एयर मेल से भेजी जायेगी।
- सदस्यता प्रारूप व्यक्तिगत रूप में या डाक के माध्यम से **डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव**, प्रोफेसर, गणित विभाग(सचिव, बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद), बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज(के0 के0 वी0), स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ(उ0प्र0)- 226001, के नाम से प्रेषित किये जायें।
- एन.ई.एफ.टी. अंतरण हेतु बचत खाते का विवरण– **"बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद"**, बैंक–**यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, तेलीबाग, लखनऊ, उ0प्र0, भारत**, बचत खाता सं0–**520331000278453**, आई.एफ.एस. कोड– **UBIN0906948**, एम.आई.सी.आर. कोड–**226026086**

**दिनांक:**

**संस्था के सक्षम अधिकारी के हस्ताक्षर**
**नाम व मोहर सहित**

# लेखक सहमति पत्र

सेवा में,

दिनांकः

**सचिव**
बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज(के0के0वी0)
लखनऊ–226001

**महोदय,**

प्रमाणित किया जाता है कि मेरा शोध पत्र/समीक्षा लेख/वैज्ञानिक लेख(वि0शो0प0–खण्ड– अंक–1, वर्ष– ) जिसका कि शीर्षक .....
.....
..... है, एक मौलिक लेख है जो अन्य किसी पत्रिका/जर्नल में न तो छपा है, न ही स्वीकृत है।

सधन्यवाद

प्रार्थी/प्रार्थिनी

(डॉ0/श्री/श्रीमती/प्रो0 )

पता–

ई–मेल–

मो0–

# SCIENTOON

Our old tradition of using earthen pots like ***Ghada***, ***Surahai*** is vanishing fast. Can't we think of these ecofriendly, green and clean concepts once again?

The water kept in them is naturally cold and is never harmful for you, contrast to refrigerator water.

This will also provide jobs to many people who make these items.

*"I liked the water, it was very sweet, cold and tasty. But how do you cool it. Where did you install* ***compressor, thermostat*** *and* ***regulator*** *in this. Can you show me please."*

## GLYCO-SCIENTOONS

**A group of US Scientists have isolated the gene found in Guar gum (*Cyamopsis tetragonoloba*) which is used in making ice cream as it is responsible for giving creaminess required for the ice cream. Guar gum retards ice crystal growth non-specifically by slowing mass transfer across solid/liquid interface.** They have successfully transferred this **ICE CREAM GENES** into the popular US crop ***soyabean.***

"You have used that guar gum in this. What a tasty ice cream! Look! Cancel all my program to conferences on Coal, Cement, Heavy industries etc., and accept all invitations for Carbohydrate conferences."

**Courtesy :** Dr. Pradeep Kumar Srivastava

# नोबेल पुरस्कार विजेता – वर्ष 2025

## चिकित्सा

मैरी ई. ब्रंको
(जन्म-1961, पोर्टलैंड, ओरिगन, अमेरिका)

फ्रेड रैम्सडेल
(जन्म-1960, एल्महर्स्ट, इलिनॉइस, अमेरिका)

साइमन साकागुची
(जन्म-1951, नागाहामा, शीगा, जापान)

## भौतिक विज्ञान

जॉन क्लार्क
(जन्म-1942, कैम्ब्रिज, इंग्लैंड)

मिशेल एच. डेवोरेट
(जन्म-1953, पेरिस, फ्रांस)

जॉन एम. मार्टिनिस
(जन्म-1958, अमेरिका)

## रसायन विज्ञान

सुसुमु कितागावा
(जन्म-1957, क्योटो, जापान)

रिचर्ड रॉबसन
(जन्म-1937, ग्लुसबर्न, यू0के0)

उमर एम0 याघी
(जन्म-1965, अम्मान, जॉर्डन)

## अर्थशास्त्र

जोएल मोकिर
(जन्म-1946, लीडेन, नीदरलैंड्स)

फिलिप अघियन
(जन्म-1956, पेरिस, फ्रांस)

पीटर होविट
(जन्म-1946, गुएल्फ, कनाडा)

## साहित्य

लास्लो क्रास्नाहोरकाइ
(जन्म-1954, ग्यूला, हंगरी)

## शांति

मारिया कोरिना मचाडो
(जन्म-1967, वेनेज़ुएला)